Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शैवधर्मप्रतिपादकं नन्दिकेश्वर-सनत्कुमारसंवादमयं

श्रीमद्शिवधर्मपुराणम्

(शैवधर्मसम्मत उपपुराण)

(मूलपाठ और मोहनबोधिनी हिन्दी टीका सहित)

सम्पादक एवं अनुवादक
डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'
प्रो. भँवर शर्मा

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चौखम्बा संस्कृत सीरीज
१५४

शैवधर्मप्रतिपादकं नन्दिकेश्वर-सनत्कुमारसंवादमयं

श्रीमद्शिवधर्मपुराणम्

(शैवधर्मसम्मत उपपुराण)

(मूलपाठ और मोहनबोधिनी हिन्दी टीका सहित)

सम्पादक एवं अनुवादक
डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'
प्रो. भँवर शर्मा

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, विक्रम सम्वत् २०७०, सन् २०१४

ISBN : 978-81-7080-431-4

© डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के. ३७/९९, गोपालमन्दिर लेन, गोलघर (मैदागिन) के पास
पोस्ट बॉक्स नं० १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : आफिस : ०५४२-२३३३४५८
आवास : ०५४२-२३३४०३२ एवं ०५४२-२३३५०२०
फैक्स : ०५४२-२३३३४५८
E-mail : cssoffice@sify.com
www.chowkhambasanskritseries.com

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
के. ३७/११८, गोपालमन्दिर लेन
निकट गोलघर (मैदागिन), पोस्ट बॉक्स नं० १११८
वाराणसी - २२१००१ (भारत)
दूरभाष : ०५४२-२३३५०२०

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Chowkhamba Sanskrit Series
154

SHRI SHIVDHARMPURANAM

(The mythological text)

(Along with text & Mohanbodhini Hindi commentary)

Edited with own sufficient
Notes & translation

By
Dr. Shrikrishna 'Jugnu'
Prof. Bhanvar Shama

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
VARANASI

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Publisher : Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi
Edition : First, 2014

ISBN : 978-81-7080-431-4

© Dr. Shri Krishna 'Jugnu'

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi-221001 (India)
Phone : Office : 0542-2333458,
Res. : 0542-2334032 & 0542-2335020
Fax : 0542-2333458
E-mail : cssoffice@sify.com
www.chowkhambasanskritseries.com

Also can be had from :
CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin), Post Box No. 1118
Varanasi-221001 (India)
Phone : 0542-2335020

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अलख, आनन्द, लक्ष्मी
अध्यात्म गुरु एवं माता-पिता की पुण्य स्मृति में
पुराण शास्त्र के अनुवाद का यह पुष्प.......

- भँवर शर्मा

परम श्रद्धेय पिताश्री व सद्गुरु नित्यलीलालीन
पण्डितप्रवर श्रीमद् मोहनलालजी चौहान
की पुण्यस्मृति में....

- श्रीकृष्ण

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विनम्र निवेदन

भगवान् शिव आशुतोष हैं। आशुतोष इसलिए कि वे शीघ्र प्रसन्न होने वाले हैं। भारतीय संस्कृति के संवाहक-संधारक ग्रन्थों में उनकी महिमा में अनेकों स्थल और प्रसंग मिलते हैं। शिव के लोकाख्यान भी अनेक हैं और पुराणों में उनके विविध प्रसंग प्राप्त होते हैं। वैसे जनकण्ठ पर उनके चमत्कार और कृपावर्षण के भी अनेक संस्मरण सुलभ होते हैं। जितने शैव व्रतों का उल्लेख शास्त्रों में नहीं मिलता, उससे अधिक व्रतोपवास के विधान लोकाश्रय में मिलते हैं। यह शिव के प्रति अतिशय आस्था और भावभरी भक्ति का ही प्रताप है कि न केवल भारत बल्कि मारीशस इत्यादि अनेक देशों में शिव का माहात्म्य प्रचुर रूप से विश्रुत है। भारत को उन्होंने अपने द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग स्वरूप में शिवमय बना रखा है : *सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्। उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारममलेश्वरम्॥ परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशङ्करम्। सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने॥ वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे। हिमालये तु केदारं घुश्मेश च शिवालये॥*

शिव जन-जन के ध्यातव्य और योगियों के भी आराधनीय चरण कमल वाले परमेश्वर हैं : *देवदेव महाभाग योगिध्येयपदाम्बुज।* रुद्र के रूप में वेदों से लेकर ब्राह्मण ग्रन्थों, स्मृतियों में भी वे आदिदेव के स्वरूप में स्मरणीय रहे हैं। रुद्र शब्द की निरुक्ति के अनुसार वे दुःख-दारिद्र्य विनाशक, पापपुञ्जहन्ता और ज्ञानप्रदाता है। रुद्रसूक्त, शतरुद्रिय आदि में उनके स्वरूप के अनुसार ही नामों के साक्ष्य-सन्दर्भ मिलते हैं : गिरीश, अधिवक्ता, सुमङ्गल, नीलग्रीव, सहस्राक्ष, कपर्दी, मीढुष्टम, हिरण्यबाहु, सेनानी, हरिकेश, अन्नपति, जगत्पति, क्षेत्रपति, वनपति, वृक्षपति, औषधीपति, सत्त्वपति, स्तेनपति, गिरिचर, सभापति, श्वपति, गणपति, व्रातपति, विरूप, विश्वरूप, भव, शर्व, शितिकण्ठ, शतधन्वा, ह्रस्व, वामन, बृहत्, वृद्ध, ज्येष्ठ, कनिष्ठ, श्लोक्य, आशुषेण, आशुरथ, कवची, श्रुतसेन, सुधन्वा, सोम, उग्र, भीम, शम्भु, शङ्कर, शिव, तीर्थ्य, व्रज्य, नीललोहित, पिनाकधारी, सहस्रबाहु, ईशान, महच्छिर, नीललोहित आदि-आदि। शिव के लोक में भी अनेक नाम प्राप्त होते हैं और रुद्रसूक्त जैसे शास्त्रों में तो उनके अपरिमित क्रोध, उनके अचूक बाणों और बाणधारी भुजाओं तक को प्रणाम किया गया है : *ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषव नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः॥*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिव की महिमा में अनेक आगमों और पुराणों की रचना हुई है। महापुराण ही नहीं, पुराण, उपपुराण और स्थल पुराण भी मिलते हैं। पुराणों में कदाचित ही कोई पाठ होगा जिसमें शिव की महिमा नहीं आई हो, अन्यथा त्रिदेवों के वर्णन में शिव सर्वत्र अपनी सुव्याप्ति लिए हैं। यह सच है कि पुराणों में सर्वाधिक स्थलों पर शिव का माहात्म्य वर्णित मिलता है। कहा यह भी जाता है कि जैसे एक की विधि-बाधा से अन्य की विधि-बाधा होती है, वैसे ही अन्य देवताओं के अल्पत्व के कारण उन्हें महादेव माना गया है। ब्रह्मादि तीनों ही देवताओं के निवास स्थान अश्वत्थवृक्ष में सबसे ऊपर शिव की स्थिति बताई गई है। कल्याण स्वरूप होने के कारण वे शिव है और पापसंघात के हरण करने के कारण हर हैं : *एकस्य विधिबाधाभ्यामन्यबाधाविधी यथा॥ अन्येषामल्पदेवत्वान्महादेवस्ततः स्मृतः। देवत्रयाश्रयेऽश्वत्थे उपर्यास्ते स्थितिस्तव॥ शिवस्त्वं शुभरूपत्वादघौषहरणाद्धरः। (स्कन्दपुराण श्रावणमास माहात्म्य 1, 33-35)*

शिव के श्रेष्ठत्व में किसे सन्देह हो सकता है : *महेशान्नापरो देवो।* सबको विरक्ति की शिक्षा देने के ध्येय से शिव को श्मशान और पर्वतवासी कहा गया है। महर्षियों ने उनके लिए पुरुषसूक्त में आए 'उतामृतत्वस्येशानो' मन्त्र के द्वारा प्रतिपादित अपनी प्रतिष्ठित प्रज्ञा का परिचय दिया है। 'ॐ नमः शिवायः' इस षडक्षर के रूप में उनका स्मरण महामन्त्र का जाप कहा गया है। रुद्राक्ष, भस्मादि धारण करना उनकी भक्ति का परिचायक है। भागवतीय वैष्णव परम्परानुसार वे ही प्रथम वैष्णव है। उनकी धारणा शक्ति का प्रबल प्रताप है कि जगत का संहार करने में सर्वदृष्टिसमर्थ हलाहल को उन्होंने गले में धारण किया, महाप्रलय की कालाग्नि को अपने मस्तक पर धारण किया और काम जैसे शत्रु का अपूर्व विनाशकर परमध्येय को स्थापित किया। शिव के कई प्रसंग उन्हें महिमामय महादेव सिद्ध करते हैं। सभ्यताओं के चरण जिस-जिस स्थल पर पड़े, वहां से शिव की पूजा के प्रमाण मिले हैं। शिवलिंग के रूप में उनके स्वरूप की सर्वत्र प्राप्ति हुई है। शिल्पशास्त्रों में शिव के प्रासाद और स्वरूप निर्माण का प्रभूत वर्णन मिलता है। वे मानव के परम सहयोगी रहे, पशुओं के भी हितैषी और संरक्षणकर्ता रहे हैं। पशुपति के रूप में उनकी ख्याति हजारों वर्षों से बनी हुई है। यह सिद्ध करता है कि जन-गण से लेकर जीव मात्र के संरक्षक देव के रूप में शिव सुख्यात रहे हैं।

शिव का अपना पूजन विधान रहा है। उनका अपना आश्रययोग्य मत रहा है। इस मत के आधार ग्रन्थ के रूप में 'शिवधर्मपुराण' का विशिष्ट स्थान रहा है। इसको स्वयं नन्दिश्वर प्रोक्त कहा गया है। यह शिवशास्त्र माना गया है क्योंकि इसमें शिवधर्म

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

का मूलाधार प्रवर्तित किया गया है। सनत्कुमार ने जो-जो प्रश्न जन-मन की ओर से प्रस्तुत किए, नन्दिश्वर शिव ने उनका यथेष्ट समाधान किया है। इसमें शिवस्वरूपों, शिवालयों के निर्माण, शिवलिंग की पूजा, स्नान-अभ्यंगादि पूर्वक अर्चना, कथा-यात्रा, उत्सव, व्रतोपवास, रुद्राक्ष, कौपीन, कपालादि धारण करने, उनके व्यपोहन स्तव, शैवतीर्थों के माहात्म्य, दान-पुण्यादि का यथेष्ट और प्रारम्भिक वर्णन किया है। शिवधर्म की स्थापना, पालन और उसके आश्रय के क्रम में इसमें पर्याप्त विचार किया गया है। शिवसालोक्य या शिवलोक की प्राप्ति के उपाय के रूप में अनेक विधानों का निर्देश किया गया है। यह परवर्ती शैव पुराणों के लिए आधारभूत सामग्री प्रस्तुत करने वाला अतीव महत्व का ग्रन्थ रहा है। हेमाद्रि जैसे अभूतपूर्व विद्वान के निबन्ध ग्रन्थ के लिए शिवधर्मपुराण की बड़ी सहायता रही है। उन्होंने इसे प्रामाणिक शिवशास्त्र के रूप में स्वीकार किया है, अतः यह हम सबके लिए भी एक प्रामाणिक शिव शास्त्र है।

विडम्बना है कि यह लघुकाय ग्रन्थ अद्यावधि प्रकाशित नहीं हुआ है। यद्यपि इस पर प्रो. राजेन्द्रचन्द्र हाजरा प्रभृति विद्वानों ने परिचयात्मक लेखादि अवश्य लिखे हैं जबकि पुराणों में उपपुराण के रूप में इसको महत्वपूर्ण बताया गया है। इसी कारण इसके सानुवाद प्रकाशन का विचार हुआ। अड्यार पुस्तकालय से प्राप्त मातृका के आधार पर इसका पाठ हेमाद्रि के चतुर्वर्गचिन्तामणि के व्रतखण्ड, लिंगादि पुराणों के पाठमतों से अनुसम्मत कर सम्पादित किया है। अन्यत्र उपलब्ध पाठों का और पाठान्तरों का भी इसमें यथास्थान पाद-टिप्पणियों के रूप में उपयोग करते हुए ग्रंथ को प्रामाणिकता देने का प्रयास किया गया है। इसमें प्रो. हाजरा की मान्यताओं पर आधारित पुराने लेख को भी श्रद्धापूर्वक शामिल किया जा रहा है, उनके प्रति नमन्। यह लेख उपलब्ध कराने के लिए मैं बड़ौदा ऑरियंटल इंस्टीट्यूट, बड़ोदरा के निदेशक श्री मुकुन्दलाल जी. वाडेकर का आभारी हूँ। इस पाठ के अनुवाद में मेरा सहयोग प्रो. भँवरजी शर्मा ने किया है। उनके प्रति धन्यवाद क्या कहूं, वे कृपालु हैं। शिव की कृपा उनके रूप में मेरे साथ रही है। अन्य ग्रन्थों के अनुवाद की तरह ही उनका अनुग्रह मेरे लिए पाथेय बना है और हमारा यह कार्य आप सबके करकमलों तक पहुँचा है।

इस कार्य में सहधर्मिणी पुष्पा चौहान, पुत्री शोधार्थी अनुभूति, अनुकृति, पुत्र गौरव और अनुज अरविन्द चौहान का सहयोग नित्य की तरह स्मरणीय है, जो सन्दर्भों के शोधन से लेकर त्रुटिशोधन तक के कार्य में मेरे सहयोगी रहे हैं। इस कार्य को मैं नित्यलीलास्थ पिताश्री मोहनलालजी चौहान और गोलोकवासी महतारी सन्तोषदेवीजी के अक्षय आशीर्वाद का अवदान स्वीकारता हूं। इसके प्रकाशन का दायित्व चौखम्बा

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

संस्कृत सीरिज ऑफिस, वाराणसी के संचालक श्रीमान् ब्रजमोहनदासजी गुप्ता ने सहर्ष ग्रहण किया है, उनके प्रति अनेकशः आभार। इस ग्रन्थ की जो कुछ अच्छाइयां हैं, वे आनन्द-कन्द, नन्द-नन्दन प्रभु श्रीनाथजी की कृपा का सुफल है और जो त्रुटियां हैं, वे मुझ अल्पज्ञ की हैं। विद्वज्जन इसे एक प्राचीन शैवपुराण के रूप में स्वीकार कर शोध-साधना में स्थान देंगे, यह कामना है।

और अन्त में, इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः। अर्पिता तेन देवेशः प्रीयता मे सदाशिवः॥ तव तत्त्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर। यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः॥

श्रावण शुक्ला पंचमी, 2070
11 अगस्त, 2013 ई.
उदयपुर (राजस्थान)

विद्वद्वशंवदः
श्रीकृष्ण 'जुगनू'

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

THE ŚIVA-DHARMA

Dr. R.C. HAZRA

This is a short work still preserved in mauscripts[1]. It consists of twelve chapters only and deals exclusively with the religious rites and duties of *Śiva*-worshippers. Like the *Viṣṇu-*

---

1 As this work has not yet been published, our analysis of tis contents is based mainly on the palm-leaf manuscript No. G3852 preserved in the Library of the Asiatic Society, Calcutta. For a description of this manuscript, which is written in Newari script, of the twelfth century' A.D. and consists of six different works on Śaivism (viz., *Śiva-dharma, Śiva-dharmottara, Śiva-dharma-saṃgraha, Umā-maheśvara-saṇvāda, Śivopaniṣad,* and *Uttarottara-tantra)*, see Haraprasad Shastri, *Descriptive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Government Collection under the Care of the Asiatic Society of Bengal,* Vol. V, No. 4085, pp. 723-744.

For other manuscripts of this work see :

(i) Haraprasad Shastri, *Descriptive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Government Collection under the Care of the Asiatic Society of Bengal,* Vol. V, pp. 714-715, No. 4082 (Ms. No. G 9967-incomplete, containing the sixth chapter only; written on Nepalese paper in Bengali characters; and dated Śaka 1563); and pp. 718-723, No. 4084 (Ms. No. G4077-written on palm-leaf in Newari script; and containing nine different works on Śaiva Dharma, of which the first six are the same as those in Ms. No. G3852 mentioned above, the seventh is the *Vṛṣa-sāra-saṃgraha,* and the eighth and the ninth are both named *Lalita-vistara*).

In Ms. No. G4077 the eight work, styled *Lalita-vistara*, has a post-colophon statement, according to which one, 'Kula-putra-Ratna-siṃha' copied in 'संवत् अ५म' (i.e., Newari year 156 = 1036 A.D.) during the victorious reign (vijaya-rājye) of 'Parama-bhaṭṭāraka-mahārājādhi-rāja-parameśvara-śrī-Lakṣmīkāmadeva'.

(ii) *Catalogue of the Sanskrit Mss. in the Adyar Library,* Part I, p. 159, Ms, No. 46 (styled *'Siva-dharm-opapurāṇa'* and written in Grantha script).

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

dharma it calls itself a 'Śāstra' or 'Dharma-śāstra'[2] and never a 'Purāṇa', or 'Upapurāṇa', and it has been mentioned as such by the *Bhaviṣya*[3] and the *Saura-purāṇa*,[4] both of which clearly distinguish it from the Purāṇic works. Yet its name has been

---

(iii) Haraprasad Shastri, *Catalogue of Palm-leaf and Selected Paper Manuscripts belonging to the Durbar Library, Nepal,* pp. 128-129, No. 1376 (incompletet, containing the Śānty-adhyāya only; written in Newari script; dated Newari Era 522). See also p. 55.

(iv) R.L. Mitra, *Notices of Sanskrit Manuscripts,* VI, pp. 272-274, No. 2208 (containing the *Śiva-dharma* and the *Śiva-dharmottara;* written in Bengali characters).

(v) A.C. Burnell, *Classified Index to the Sanskrit Manuscripts in the Palace of Tanjore*, p. 138 (written in Grantha characters).

2 In most of the chapter-colophons the name '*Śiva-dharma-śāstra*' occurs. See also the line :

'uktaṃ ca dvādaśādhyāyaṃ dharma-śāstraṃ śivātmakam' occurring in Chap. 12 (fol. 39 a).

3 The relevant verse of the *Bhaviṣya-purāṇa* is as follows :

aṣṭādaśa purāṇāni rāmasya caritaṃ tathā.
viṣṇudharmādi-śāstrāṇi śivadharmāś ca bhārata..
(*Bhaviṣya-p.*, Veṅkaṭeśvara Press ed., i. 4. 87b-88a).

This verse has been quoted in Aparārka's commentary on the *Yājñavalkya-smṛti,* p. 15, Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi* (Bibl. Ind.ed.) II. i. pp. 19-20, Caṇḍeśvara Ṭhakkura's *Kṛtya-ratnākara* (Bibl. Ind. Ed.), p. 30, Narasiṃha Vājapeyin's *Nityācāra-pradīpa* (Bibl. Ind. Ed.), p. 22, Raghunandana's *Smṛti-tattva* (Jīvānanda Vidyāsāgara's ed.) I, p. 71, and so on.

The printed edition of the *Bhaiṣya-p.* reads '*viṣṇu*-dharmādayo dharmāḥ' for 'viṣṇudharmādi-śāstrāṇi'.

4 The relevant verses of the *'Saura-purāṇa'*, as quoted n Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi*, I, pp. 539-540, are the following :

Anyāny upa-purānāṇi sa-hiranyāni parvaṇi.
Likhitvā yaḥ prayacchet tu sa vidyā-pārago bhavet..
Śiva-dharmādi-śāstrāṇi yaḥ prayacchati punyadhiḥ.
So Ananta-phalam āpnoti śiva-dharma-prakīśanāt..

These two verses do not occur in the printed editions of the *Saura*-p.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

included in all the lists of eighteen Upapurāṇas except those contained in *Skanda-purāṇa* V. iii (Revā-khaṇḍa). I. 46-52, *Devī-bhāgavata* i. 3. 13-16, *Vindhyamāhātmya,* Chapter 4, and *Ekāmra-purāṇa,* Chap. I. On the other hand, Caṇḍeśvara Ṭhakkura of Mithilā takes it to be a 'Smṛti' work,[5] the *Revā-māhātmya* calls it a part of the *Vāyupurāṇa* and thus looks upon it as a Purāṇic work,[6] the Vāyavīyasaṃhitā (ii. 24. 170) of the *Śiva-purāṇa* regards it both as a 'Śāstra' and as a 'Purāṇa',[7] and Devaṇa-bhaṭṭa mentions it as a 'Śāṣtra' on one occasion and as a 'Purāṇa' on another[8]. From these it is evident that this work began to be recognised as an Upapurāṇa much earlier than 1000 A.D., but its original character was not lost sight of at least by a section of people.

That originally the *Śivā-dharma* was not meant for passing as a Purāṇic work, is also shown by its content, which are given below.

Chap. 1—Salutation to Śaṃbhu in a verse (which is the same as the first introductory verse of Bāṇabhaṭṭa's *Harṣa-carita).*

While Nandikeśvara was sitting at ease on the Mount Meru in the midst of a number of sages, Sanatkumāra, son of Brahmā, rose up from among them and requested Nandikeśvara to speak on that excellent Dharma (paramaṃ dharmam), called

---

5 See Caṇḍeśvara's *Kṛtya-ratnākara,* p.30.

6 Theodor Aufrecht, *Catalogus Codicum Manuscriptorum Sanscriticorum Bibliothecāe Bodleianāe,* p. 65-

caturthaṃ śiva-dharmākhyaṃ purāṇe vāyu-saṃjñite

(which is one of the lines of the *Revā-māhātmya* on the list of eighteen Upapurāṇas).

7 *Śiva-p.,* V (Vāyavīya-saṃhitā). ii. 24. 170-

śāstraṃ ca śiva-dharmākhyaṃ dharmākhyaṃ ca tad-uttaramI
śaivākhyaṃ śiva-dharmākhyaṃ purāṇaṃ śruti-saṃmatamII

8 See *Smṛti-candrikā* (Mysore ed.) II, pp. 539 (*śivārcana-phalaṃ tu śivadharma-śāstre darśitam,* etc.) and 553 (*phalam āha purāṇe nandikeśvaraḥ).*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

'Śiva-dharma', which is eternal, easy to perform, and productive of all the ends of life, because, Sanatkumāra said, the Angiṣṭoma and other Vedic sacrifices, being highly elaborate, expensive and tiresome but of doubtful efficacy, could not be undertaken by people of little resources.[9] Consequently, Nandikeśvara praised 'Śiva-dharma' (religious duty of Śiva), which, he said, was originally spoken out by Śiva or Pārvatī, Ṣaṇmukha (the six-faced god Kārttikeya), Nandikeśvara and other gods for the deliverance of those who were steeped in nescience. Nandikeśvara then spoke on the following topics :

Praise of Śiva-worship, by which one may attain heaven (svarga) as well as final emancipation (apavarga). Mention and praise of eight types ('aṣṭāṅgī', 'aṣṭa-vidhā') of Bhakti manifested in loving the devotees of Śiva, encouraging Śiva-worship, personally worshipping the diety, listening to discourses on Śiva, constantly remembering him, and so on.

Praise of devotees of Śiva and of honouring them with gifts, etc., Praise of devotion, worship, donation, Homa, knowledge, austerities, etc. meant for the pleasure of Śiva. Devotional service to Śiva always and by all means.

Chap. 2—Going to describe the means of attaining immortality Sanatkumāra speaks on the merits of establishing a Liṅga of Śiva, constructing a temple for it, cleansing the temple and besmearing it with cow-dung, lustrating the Liṅga, bathing it with water, honey, sugarcane-juice, etc., offering of 'argha' to it, making donations of gold, gems, cows, horses, elephant, servants, cultivable land, village, town, etc., and making all kinds of devotional service of Śiva.

Chap. 3—Sanatkumāra's narration of the following story of the origin of Liṅga:

---

9 *Śiva-dharma*, Chap. 1 (fol. 1b) :

agniṣṭomādayo yajñā babu-vitta-kriyānvitāḥ.
nātyanta-phala-bhūyiṣṭhā bahv-āyāsa-samanvitāḥ..
na śakyante yataḥ kartum alpa-vittair dvijātibhiḥ.
sukhopāyam ato bruhi sarva-kām-ārtha-sādhakam..
hitāya sarva-martyānāṃ śiva-dharmaṃ sanātanam..

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

When everything was under the waters of the ocean, there was a quarrel between Brahmā and Viṣṇu, both of whom claimed agency and lordship of the universe. In order to settle their dispute there appeared between them a great Liṅga of light (jyotir-liṅga), the ends of which neither Brahmā nor Viṣṇu could discover. As they eulogised this huge Liṅga, they found in it another small spiritual Liṅga, only a 'prādeś' (i.e. the span between the thumb and the forefinger) in length, which was Śiva himself (śivātmaka).[10] Śiva (here called Mahādeva) was pleased to grant boons to Brahmā and Viṣṇu and disappeared after declaring himself to be the cause of the universe. Thence forward Brahmā, Viṣṇu and others worshipped the Liṅga, which comprises all gods, Brahmā remaining at its right side, Viṣṇu at its left, Gāyantrī in its heart, and the Vedas, together with the Aṅgas, on its head.

Results of disregarding a Liṅga. Construction of Liṅgas with different materials (viz., stone, gems, gold, silver, brass, sapphire, bell-metal, earth, crystal, copper, etc.) and the effects derived by gods, Nāgas, Asuras and others by worshipping them, viz., Brahmā became the creator by worshipping a Liṅga of stone, Indra's position was due to his worship of a Liṅga of gems, Dhanada became the god of wealth by worshipping a golden Liṅga, the Viśvedevas became so by worshipping a Liṅga of silver, Vāyu worshipped a Liṅga of brass to attain his position, Viṣṇu's status was due to his worship of a Liṅga of sapphire, Buddha attained his supreme knowledge and the state of peace by worshipping a Liṅga of gold[11], Ārhata became a venerable Yogin by worshipping a Liṅga of topazes[12],and so on.

---

10 *Śiva-dharma*, Chap. 3 (fol. 3a) :
liṅga-madhye paraṃ liṅgaṃ sthitaṃ prādeśa-saṃmitam.
samādhi-stotra-saṃpannau dṛṣṭavantau śivātmakam..
naiva tat kāñcanaṃ raupyaṃ tāmraṃ sphaṭika-mauktikam.
la+mātraṃ sthitaṃ śāntaṃ kevalaṃ tac-chivātmakam..

11-12 *Ibid.*, Chap. 3 (fol. 3b) :
Buddhen-ābhyarcitaṃ liṅgaṃ jambūnadamayaṃ śubham.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Effects and praise of worshipping the Tribhuvaneśvara Liṅga; fateful results of doing otherwise. Results of establishing a Liṅga.

Chap. 4—Characteristics of Śiva-bhaktas (who should be energetic, pious, disregardful of all opposites such as happiness and sorrow, light and darkness, heat and cold, and so on).

Śiva as the best recipient of gifts. Praise of constructing a Śiva-temple and of sweeping, whitewashing and repairing it annually, of besmearing it with cow-dung, of colouring its pavement, of furnishing it with pictures painted on walls,[13] and so on.

Praise of Rudra as the highest god, the best knowledge and the best austerities.

Chap. 5—Results and praise of rendering various kinds of service to Śiva in the form of a Liṅga; viz; bathing the Liṅga with milk, curd, ghee, honey, sugarcane-juice, etc.; offer of eight kinds of materials of worship (aṣṭāṅgārgha) to it in dishes of gold, silver or some other metal; fanning it with fans made of palm-leaf, peacock-feathers, etc.; worshipping the deity with various kinds of flowers; offer of various articles of food, burning lamps, looking glass, etc.; holding a burning lamp on the head or forehead; saluting by lying prostrate before the Liṅga; eulogy of the god.

Results and praise of lighting series of lamps (dīpamālikā) in the month of Kārttika, decorating the Liṅga as well as the temple with flags and banners, sounding drums and various other musical instruments, arranging song and dance, especially of females, before the Liṅga, spreading a white or coloured canopy[14]

Tena buddhatvam āpnoti sadā śāntam avasthitam..
Ārhatas tu sadā-kālaṃ puṣpa-liṅg-ārcanāt param.
ten-ārhattvam avāpnoti yogaṃ cāpi sudurlabham..

13 Ibid., Chap. 4 (fol. 6 b) :
Kārayec citra-śāstrajñair yatnāc citraṃ śivālaye.

14 For description of the canopy see *ibid.,* Chap. 5 (fol. 11b):
vitānaṃ sita-padmābhaṃ madhye padma-vibhūṣitam.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

over it, constructing with bricks a house for Rudra having the form of the sacred fire, decorating the floor and yard with Svastika, Padma and various other paintings, digging tanks, wells, etc. near Śiva-temples, and so on. Praise of places of Śiva-worship as being equal to Kuru-kṣetra, Naimiṣa and Puṣkara.

Chap. 6—Propitiation (śānti) of Śiva, Umā, Vināyaka, Mahākāla and many other divine and non-divine beings by eulogising them for averting evils. In this connection the following deities and others have been described :-

Ambikā; Vināyaka (who is said to be a son of Rudra and to have a big belly, a huge body, a bright collyrium-dark complexion, a tusk, the head of an elephant, and a snake as his sacred thread)[15]; Mahākāla; Viṣṇu; Brahmāṇī (who has four faces)[16], Rudrāṇī, Kaumārī, Vaiṣṇavī, Aindrī, Vārāhī, Cāmuṇḍā and others; the various mother-goddesses (Mātaraḥ, such as Ākāśa-mātaraḥ, Loka-mātaraḥ, Bhūta-mātaraḥ, etc.); the Gaṇas living in different directions; the king of gods (i.e., Indra) living in the city of Amarāvatī lying in the east;[17] Agni living in the city of Tejovatī situated in the south-east (āgneye dig-vibhāge);

---

vicitram eka-varṇaṃ vā nava-vastr-opaśobhitam..
kiṅkiṇī-ravak-opetaṃ candrakaiś copaśobhitam.
lambakaiḥ sūtra-dāmaiś ca ghaṇṭā-ruta-vibhūṣitam..
etc. etc.

15 *Ibid.*, Chap. 6 (fol. 13 b) :
Mahodaro mahākāyaḥ snigdhāñjana-caya-cchaviḥ.
Eka-daṃṣtr-otkaṭo devo gaja-vaktro mahābalaḥ..
Nāga-yajñ-opavītī ca nāg-ābharaṇṇa-bhūṣitaḥ.
Sarvārtha-saṃpad-ādhāro gaṇ-ādhyakṣo vara-pradaḥ.
Rudrasya tanayo devo nāyako'tha vināyakaḥ..

16 *Ibid.*, Chap. 6 (fol. 14 a) :
padma-rāga-prabhā devī catur-vadana-paṃkajā.
akṣa-māl-ārpita-karā kamaṇḍalu-dharā śubhā..
brahmīṇī saumya-vadanā śiva-pūjā-parāyaṇā..

17 Ibid., Chap. 6 (fol. 15a) :
amarāvatī nāma purī pūrva-bhāge vyavasthitā.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Ananta (i.e., Śeṣa Nāga) living in Vaivasvatī Purī in the south; Nirṛti, a Rakṣas, living in the city of Kṛṣṇā in the south-west; Varuṇa[18] living in the city of Śuddhavatī in the west; Pavana[19] (Wind) living in the city of Gandhavatī in the north-west; Kuvera[20] residing in the city of Mahodayā in the north; Iśāna[21] living in the city of Yaśovatī in the north-east; Sarasvatī, who is said to have a body possessing stainless halo and looking as white as the ray of the autumnal moon;[22] Śrī; Jayā Devī; Aparājitā; the Planets; the Nakṣatras (mentioned in the order from Kṛttikā to Bharaṇī); the Rāśis (zodical signs); the sages Kaśyapa, Gālava, Gārgya, Viśvāmitra, Manu, Dakṣa, Vasiṣṭha, Mārkaṇḍeya, Pulaha, Kratu, Nārada, Bhṛgu, Ātreya, Bharadvāja, Aṅgiras, Vālmīki, Kauśika, Kaṇṭha, Śākalya, Punarvasu, Śālankāyana, and others; wives of sages; the Daitya kings (such as Śaṅkukarṇa, Mahājambha, Hayagrīva, Prahlāda, Tāraka and others) who are said to worship Hāṭakeśvaradeva regularly; the Nāgas (such as Karkoṭaka, Kulika and, others); the Rivers (such as Gaṅgā, Yamunā, Narmadā, Gotamī, Kāverī, Varaṇā, Devikā, Chandrabhāgā, Godāvarī, Sarayū, Gaṇḍakī, Kaūśikī, Sarasvatī, Nairañjīnā, Śoṇa, Mandākinī, etc.); the Yakṣas (such as Vaiśravaṇa, Maṇibhadra, Suviroma, Pāñcika, Vibhāṇḍaka,

---

18 For description of Varuṇa see *ibid.*, Chap. 6 (fol. 15 b) :
Bhadra-mauktika-saṃkāśaḥ paripiṅgala-locanaḥ.
Śukla-vastra-parīdhānaḥ pāśa-hasto mahābalaḥ..

19 For description of Pavana see *ibid.*, Chap. 6 (fol. 15 b) :
Tatra tāmreṇa dehenu kṛṣṇa-piṅgala-locanaḥ.
paṭa-vyāpt-āntar-ālīno dhvaja-yaṣṭy-āyudh-odyataḥ..

20 For description of Kuvera see *ibid.*, Chap. 6 (fol. 15 b) :
Tatra devo gadā-bastaś citra-srag-vastra-bhūṣaṇaḥ.
hrasva-bīhur mahā-tejāḥ paripiṇgala-locanaḥ..

21 For description of Īśāna see *ibid.*, Chap. 6 (fol. 15 b) :
Tatra mauktika-saṃkāśaḥ śaśāṃka-kṛta-bhūṣaṇaḥ.
tri-netraḥ śānta-rūp-ātmā akṣa-mālā-dharo dharaḥ..

22 *Ibid.*, Chap. 6 (fol. 16 a) :
śarac-candr-āṃśu-gaureṇa-dehen-āmala-tejasā.
sarasvatī śive bhaktā.................. ..

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Dhṛtarāṣṭra, Virūpākṣa and others); the Mountains (viz., Meru, Mandara, Kailāsa, Malaya, Gandhamādana, Śrīparvata, Mahendra and Himakūṭa); the eight Dvīpas including Gomathyo (?); the Oceans; and the Rākṣasas, Ḍākinīs, Bhūtas, Piśācas, evil demons (supposed to seize upon children), etc.

Praise of this chapter on propitiation (śānti).

Chap. 7—Praise of worshipping Śiva in a Liṅga on particular days (viz., full-moon day, new-moon day, the eighth day of the bright half of a month, the thirteenth and fourteenth days of the dark half of a month, and other Parvan days) and in different parts of the day. Such worship is said to be more effective than the Agnihotra, Aśvamedha and other sacrifices.

Rudra, Brahmā and Viṣṇu—the three Mātrās of Śiva.[23]

Benefits of muttering the sectarian Mantra 'oṃ namaḥ śivāya' said to be the six-syllabled 'Śiva-sūtra', of which the Bhāṣya was later spoken out by the omniscient and self-born Śiva himself.[24]

Praise of devotees of Śiva as being far superior to those who observe celibacy, or regularly study the Vedas, or perform the Agnihotra and other sacrifices, or have mastered all the branches of learning.

---

23 Ibid., Chap. 7 (fol. 21a-b) :
Rudro brahmā hariś caiva mātrās tisraḥ prakīrtitāḥ..
dakṣiṇe 'nge' bhavad brahmā harir vāmāṅga-saṃbhavaḥ.
hṛdayānnirgato rudro brahma-viṣṇu-śivātmakaḥ..
jagat-sṛṣṭi-karo brahmā viṣṇu (r) *loka-vimohakaḥ..*
anugraha-karo nitya-līlo rudra-śivātmakaḥ..
tribhir etair jagad vyāptaṃ kāraṇair ātma-karmabhiḥ.
tisro mātrāḥ śivasyaitāḥ sarva-loka-prapūjitāḥ..
etā eva trayo lokā etā eva trayo 'gnayaḥ.
trayo guṇāś trivargaś ca yac cānyaj jagati sthitam..

24 *Ibid.*, Chap. 7 (fol. 21 b) :
Sarv-ārtha-sādhakaṃ mantraṃ śiva-sūtraṃ ṣaḍ-akṣaram.
bhāṣyam asy-aiva sūtrasya sarvajñena svayaṃbhuvā..
paścāt parāparāṇīha vyakt-ārtha-gaditāni tu..

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Eulogy of Śiva.

Chap. 8—Description and praise of various kinds of devotional service to Śiva in the form of a Liṅga, in which all the sacred places and temples of deities are believed to lie hidden. Bathing of the Liṅga with ghee for a day and night with song, dance, etc.; ceremonious Liṅga-worship during Parvan days; performance of the Car-festival of Śiva; giving to Śiva a vessel of ghee, a copper vessel full of gold (in the Soma-vrata during the full-moon day in the month of Vaiśākha), a secred thread (during the full-moon day in the month of Āṣāḍha), a milch cow and a bull, a white bull, and a particular kind of cow called Kapilā (the milk of which a Śūdra is not permitted to drink without initiation to Śiva-worship).[25]

Praise of cows, which are said to be as sacred as Brahmins and to have emitted the Vedas together with the six ancillary sciences (gobhir vedāḥ samudgīrṇāḥ sa-ṣaḍ-aṅga-pada-kramāḥ), and in which all the deities and holy places are said to dwell permanently.

Performance of Go-śānt, in which Śiva is invoked to save the cows from mortality.

Gift of horses, elephants, male and female servants, villages, hamlets, towns, land, etc.

Evil consequences of dispossessing one of landed property given to him previously by the dispossessor himself or by any other person.

Consequences of taking illegal possession of property belonging to a deity or a Brahmin.

Chap. 9—Description and praise of the Śiva-liṅga-vrata (which is said to have been performed by Brahmā, Viṣṇu, Devī, Skanda and other deities, sages, and leaders of Gaṇas, and which consists of bathing the Liṅga with water mixed with white sandal

---

25 *Ibid.*, Chap. 8 (fol. 24 b):
kapilāṃ yaḥ pibec chūdraḥ śiva-saṃskāra-varjitaḥ.
sa prayāti mahāghoraṃ narakaṃ nātra saṃśayaḥ..

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

paste, placing it on a faultless lotus, worshipping it with white lotuses, Bilva leaves, etc., giving of fine cloth, various kinds of food and other things to it, and praying to it for forgiveness.

Chap. 10—Merits of observing fast and worshipping Śiva with the mention of his different names on the eighth and fourteenth days of both the fortnights during the different months of a year. Such fast is said to yield more merit than that earned by a person peforming a long-continued sacrifice (Satra) or speaking the truth or visiting holy places or performing the Agnihotra or any other sacrifice.

Description and praise of Nakta-bhojana-vrata, Umā-maheśvara-vrata, Kṛṣṇa-caturdaśī-vrata, Śūla-dāna-vrata, Gandha-vrata, Śaiva-mahāvrata, Kailāsa-vrata, and Śiva-ratha-vrata.

Construction of earthen, wooden, stone or brick temples for Śiva and furnishing them with all requisites. Ten cows and an ox, bed, and other things are to be given to Śiva on these and other occasions.

Chap. 11—Nandikeśvara's statement that the 'Śiva-dharma', declared by Śiva, is meant for yielding all the ends of life (including final emancipation) to those females and members of the four castes, who resort to the 'Śivāśrama' (stage of life in which Śiva is worshipped with all seriousness).

Construction of an ideal hermitage for Śiva-worship, which is to have a beautiful flower-garden on its north as well as a fire-sanctuary (agnyāgāra) and a guest-house for devotees of Śiva (śivabhaktābhyāgatālaya).

Absence of hiṃsā in plucking flowers for Śiva-worship.

Praise of devotees of Śiva and of rendering service to them when they are tired, ill or otherwise. Praise of making gifts of necessary things to Śiva-bhaktas.

Denouncement of anger, and praise of tolerance (kṣamā), ahiṃsā, truth, non-stealing, etc.

Chap. 12—Nandikeśvara's enumeration of the various duties of the devotees of Śiva; praise of worshipping a long-neglected Liṅga without accepting anything; respect to be shown

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

to Śiva-liṅgas, the Śiva-yogins, and to the flowers, garlands, etc. offered to Śiva; praise of gift of clothes, making of gardens, digging of wells, etc.; praise of feeding Śiva-worshipping Brahmins in Śrāddha and other ceremonies for the pleasure of Śiva; praise of Śiva bhaktas (who are said to be much superior to veda-knowing Brahmins), Śiva-yogins, Rudrākṣas and Śiva-dharma.

Enumeration of (i) the eight famous places (sthānāṣṭakam), called Rudra-kṣetras, viz., Bhastrāpada (Vastrāpatha?) Rudrakoṭi, Avimukta, Mahodaya, Gokarṇa, Bhadrakarṇa) Suvarṇākṣa and Sthāṇvīśvara; (ii) the eight holy places (pavitrāṣṭakam), viz., Chagalānta, Durantāśva, Mākoṭa, Maṇḍaleśvara, Kālañjara, Śaṅkukarṇa, Sthaleśvara and Sthūleśvara; (iii) the eight secret placs (guhyāṣṭakam) viz., Gayā, Kurukṣetra, Nakhala, Kanakhala, Vimaleśvara, Dahāsa (?), Mahendra and Bhīma; (iv) the eight most secret places (guhyātiguhyam aṣṭakam), viz., Śrīparvata, Hairścandra, Jalpa, Āmrātikeśvara, Madhyama, Mahākāla, Kedāra and Bhairava; and (v) the eight places of religious merit (puṇyātmikāṣṭakam), viz., Āmreśvara, Prabhāsa, Naimiṣa, Puṣkara, Āṣāḍhi, Diṇḍi-muṇḍi, Bhārabhūti and Nakulīśvara.

From the summary of contents given above it is evident that the *Śiva-dharma* has nothing of any of the five characteristics of Purāṇas, nor does it name Vyāsa or Sūta as a speaker. It is purely a religious manual for the guidance of Śiva-worhsippers, and as such it is rightly called a 'Dharma-Śāstra' and described as 'an eight-branched tree of religious duties having its origin from Śiva'.[26] Yet it came to be widely recognised as an Upapurāṇa, and this new character of the work was clearly due to the religious purpose for which it was intended like the other Pūrāṇic works of comparatively late dates.

The *Śiva-dharma*, sometimes called a 'Saṃhitā', in its chapter-colophons,[27] inculcates the worship of Rudra-Śiva in a

---

26 *Ibid.*, Chap. 11 [fol. 36 b]:
eṣa dharma-drumaḥ śrīmān aṣṭa-śākhaḥ śivodbhavaḥ.

27 See, for instance, the colophons (*iti śiva-dharma-śāstre*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Liṅga, lays special stress on Bhakti, and says that it it Yoga, proceeding from Jñāna, which puts an end to all sufferings.[28] In its opinion, that Mleccha is the best Brahmin, a sage and an anchorite who has developed the eight types of Bhakti in him.[29] It advocates the maintenance of fire by Śiva-worshippers for the performance of Vedic rites and Śiva-worship, prescribes bath and painting of the sectarian mark Tripuṇḍra with ashes, calls Śiva 'mahāyogin', 'yogeśvara', 'nirañjana', 'nirākāra', etc., regards him (sometimes called Rudra) as the highest deity and the supreme Brahma, and takes Brahmā, Viṣṇu and the inferior Rudra as his three Mātrās. It is remarkable that Śiva is not called 'Paśupati' anywhere in the whole work, nor is there any mention of the study of the Śatarudrīya section (of the *Yajurveda)* or the *Śvetāśvatara-upaniṣad* by the Śiva-worshippers. On the other hand, on one occasion a Śiva-worshipper has been called 'Māheśvara',[30] and on another a 'devotee of Maheśvara' has been praised. The sectarian Mantra of six syllables (viz., oṃ namaḥ śivāya) has been called a six-syllabled Śiva-sūtra, the Bhāṣya of which is said to have been spoken out later by the all-knowing self-born being (Svayaṃbhū).[31] The word 'vāmācāra', used twice with respect to Śiva,[32] need not be taken to connect the Śaivism

---

nandikeśvara-proktāyāṃ saṃhitāyām.....adhyāyaḥ..) of Chaps. 3 and 4 of the Asiatic Society (Calcutta) Ms. No. G 3852.

28 *Śiva-dharma,* Chap. 10, fol. 30 a :
tan nirvedāc ca vairāgyaṃ vairāgyāj jñāna-saṃbhavaḥ..
jñānat pravartate yogo yogād duḥkhāntam āpnuyāt..

29 *Ibid.,* Chap. 1, fol. 2 a:
Bhaktir aṣṭa-vidhā (cai) ṣā yasmin mlecche' pi vardhate.
sa viprendro muniḥ śrīmān sa yatiḥ sa ca paṇḍitaḥ..

30 *Ibid.,* Chap. 11, fol. 34b:
Sudūram api gantavyaṃ yatra māheśvaro janaḥ.

31 *Ibid.,* Chap. 7, fol. 21b. For the relevant lines see foot-not 24 above.

32 *Ibid.,* Chap. 4, fol. 6b:
Vāmāya vāma-rūpāya vāmācārāya bhāvine.
Vāma-kāntārdha-dehāya anantāya namo'stu te..

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

professed by the present work with the left-hand school of the Tantriks. This word simply means 'one of perverse activities', and nothing more.

We have already adduced reasons to show that the *Śiva-dharma*, originally a 'Śāstra', began to be looked upon as an Upapurāṇa much earlier that 1000 A.D. This early date of the work can be supported by various other evidences, some of which are noted below. There are inscriptional evidences which show that in South India the *Śiva-dharma* was often recited for popular instruction during the reign of the Colas from 1070 to 1279 A.D.[33] In the Library of Asiatic Society, Calcutta, there is a Newari Ms. Containing six different works including the *Śiva-dharma* and the *Śiva-dharmottara*, and this Ms. is dated by Mm. Haraprasad Shastri in 'the twelfth century' A.D. from the nature of its script. In the same Library there is another Newari Ms containing nine different works (including the *Śiva-dharma* and the *Śiva-dharmottara*), the eigth of which, called *Lalita-vistara,* has a post-colophan statement which informs us that it was copied in the Napali Saṃvat 156 (= 1036 A.D.) during the reign of Lakṣmīkāma-deva.[34] The *Śiva-dharma* has been mentioned in Caṇḍeśvara's *Kṛtya-ratnākara* (p.30) as well as in the *Śiva-purāṇa* (Vāyavīya-saṃhitā ii. 24.170)[35] and the '*Saura-purāṇa*' as known to Hemādri[36]; and its name has been included in the lists of Upapurāṇas contained in the *Kūrma-purāṇa, Garuḍa-purāṇa,*

Also Chap. 10 [fol. 28 a] :

Sarva-velām atikramya naktam uttama-bhojanam.
Vāmācāro mahādevo naktenoddharate narān..

33 See K.A. Nilakanta Sastri, *The Colas*, II,i.p. 481

34 See foot-note 1 above.

35 The Vāyavīya-saṃhitā of the *Śiva-purāṇa* has also incorporated verses of the *Śiva-dharma*. For instance, the verse 'liṅga-vedī bhaved devī', which is ascribed to the *Śiva-dharma* in Raghunandana's *Smṛtitattava* I, p. 132 and which occurs in Chap. 5 of the present text of the *Śivadharma,* is the same as *Śiva-purāṇa,* Vāyavīa-Saṃhitā, ii. 27.13.

36 For the relevant verses of the *Saura-purāṇa* as quoted in Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi* I, pp. 539-540, see foot-note 4 above.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Skanda-purāṇa, Bṛhaddharmapurāṇa, Parāśara-upapurāṇa, etc.[37] A good number of verses of this work has been quoted in Nilakaṇṭha's *Ācāra-mayūkha*, Kṛṣṇānanda Āgamavāgīśa's *Tantra-sāra*, Raghunandana's *Smṛti-tattva*, Narasiṃha Vājapeyin's *Nityācara-pradīpa*, Vācaspati Miśra's *Kṛtya-cintāmaṇi*, Rudradhara's *Varṣa-kṛtya*, Vidyāpati Upādhyāya's *Gaṅgā-vākyāvalī*, Mādhavācārya's commentary on the *Parāśara-smṛti*, Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi*, Devaṇabhaṭṭa's *Smṛti-candrikā*, and so on; and most of quoted verses are found in the present text of the *Śiva-dharma* (see Appendic I). So, the *Śiva-dharma* must be dated either than 800 A.D. We shall show on another occasion that the *Śiva-dharmottara* was composed later than the *Śiva-dharma* but earlier than 800 A.D. So,the *Śiva-dharma* can by no means be dated later than 700 A.D. The facts that the *Bhaviṣya-purāṇa*[38] mentions the *Śiva-dharma* in One of its original chapters and that the Nakṣatras have been mentioned in the latter work In the order from kṛttikā to Bharaṇī[39] tend to indicate that the *Śiva-dharma* was composed earlier than 550 A.D. From the mention of the Buddha and the Ārhata as worshipping Śiva-liṅgas[40] and of the names of the zodiacal

---

37 For these lists see my article in *Annals of the Bhandārkar Oriental Research Institute*, XXI, 1940, pp. 38ff.

38 For the date of the original chapters of the Brāhma Parvan of the printed *Bhaviṣya-purāṇa* see R.C. Hazra, *Purāṇic Records on Hindu Rites and Customs*, pp. 170-172.

39 See *Śiva-dharma*, Chap. 6, fols. 16b-17a.

It is to be noted that the old arrangement of the Nakṣatras from Kṛttikā to Bharaṇī was in vogue at least some time after the beginning of the third century A.D. When this order of the Nakṣatras was changed we do not know definitely. It is only as late as about 550 A.D. that we find in the *Bṛhat-saṃhitā* of Varāhamihira the new order of the Nakṣatras from Aśvinī to Revatī to be an established fact in all parts of India. So, it is highly probable that the old order of the Nakṣatras held ground at best down to the latter half of the fifth century A.D.

40 For the relevant verses of the *Śiva-dharma* see foot-notes 11-12 above.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

signs[41] (rāśi) it appears that the *Śiva-dharma* was written later than the *Yājñavalkya-smṛti*. So, this work is to be dated between 200 and 500 A.D.; and this early origin of the work explains why it is totally free from Tantric influence.

The opening verse (*namas tuṅga-śiraś-cumbi*°, etc.) of our Ms., which is the same as the first introductory verse of Bāṇabhaṭṭa's *Harṣa-carita*, need not be taken to go against the above date of the *Śiva-dharma*. This verse, which does not occur in all Mss. of the *Śiva-dharma*, might have been added to it sometime between 650 and 1000 A.D.

It is difficult to say anything definitely about the provenance of the *Śiva-dharma*. From the mention of the names of moutains, rivers and holy places mostly belonging to Northern India it appears that this work was composed somewhere in that part of the country. The occurrence of the text of the *Śiva-dharma* mostly in Newari Mss. or on Nepalese paper and the mention of the Devikā, a small river in Southern Kashmir, and of the Candrabhāgā as a highly sacred river,[42] seem to point to Southern Kashmir or the Northern Punjab as the place of origin of the *Śiva-dharma*.[43]

The similarity between the names of the *Śiva-dharma* and the *Śiva-dharmottara* has sometimes confused the Smṛti-writers in quoting verses from the one or the other. In his *Caturvarga-cintāmaṇi* I, p. 467, II. ii, p. 396 and II. ii, pp. 887-889 Hemādri wrongly ascribes to the *Śiva-dharmottara* three extracts of 3, 6

---

41 See *Śiva-dharma*, Chap. 6 (fol. 17a).

The familiarity of ancient people with the Tithis, Nakṣatras and planets but the total absence of the term 'rāśi' in all early works down to the time of the *Yājñavalkya-smṛti*, tends to show that the Indians were not familiar with the Rāśis earlier than the second century A.D.

42 *Ibid.*, Chap. 6 (fol. 18a).

43 In my article on the *Viṣṇu-dharmottara*, published in *Journal of the University of Gauhati*, III, 1952, pp. 39-64, I have shown that this work has composed either in Southern Kashmir or in the northern most part of the Punjab.

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

and 37 verses on 'vṛṣabhādhika-go-śata-dāna', Umā-maheśvara-vrata and Śiva-liṅga-vrata respectively which really occur in *Śiva-dharma,* Chaps. 10 and 9. The verse

> *"saṃskṛtaiḥ prākṛtair vākyair yaḥ śiṣyam anurūpataḥ.*
> *deśa-bhāṣādy-upāyaiś ca bodhayet sa guruḥ smṛtaḥ.."*

Which really belongs to *Śiva-dharmottara,* Chap. 2, has been wrongly ascribed to the *Śiva-dharma* in Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi* III. I, p. 353 and Raghunandana's *Smṛti-tattva* I, p. 657.

An examination of the extracts and verses qouted in different works from the *Śiva-dharma*, shows that there has not been any serious change in the text of this work at least for a long time. Besides a few isolated verses mostly on Liṅga-worship, there is a long extract of 69 metrical lines on Mauna-vrata (Vow of Silence), which, though spoken out by Nandikeśvara and ascribed to the *Śiva-dharma* in Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi* II. ii, pp. 879-883, is not found in the present *Śiva-dharma*. But the number of such untraceable verses is rather small in comparison with that of the traceable ones.

*****

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

APPENDIX I

VERSES ASCRIBED TO THE *ŚIVA-DHARMA* OR *ŚIVA-DHARMA-ŚĀSTRA*

1. In *Smṛti-candrikā* (of Devaṇabhaṭṭa)	In *Śiva-dharma*
ii., p. 539	… Chap. 7 (2 verses on fol. 20b).
p. 553	… Chap. 7 (same 2 verses as mentioned above).
pp. 553-561	… Chap. 5 (74 verses on fols. 7a-11a).
2. In *Caturvarga-cintā-maṇi* (of Hemādri)	In *Śiva-dharma*
I, p. 467	… Chap. 10 (2 verses on fol. 33a).
pp. 508-9	… Chap. 8 (17 metrical lines on fol. 26a).
p. 593	… Chap. 8 (1 verse on fol. 26a)
pp. 637-8	… Chap. 8 (4 verses on fol. 26a)
p. 915	… Chap. 10 (4 verses on fol. 32b).
II, i., p. 235	… Chap. 5 (5 verses on fol. 7b). Of the 7 verses quoted by Hemādri, the last two (from 'payo-dadhi-ghṛta etc.'), are not found in the *Śiva-dharma*.
pp. 235-6	… Chap. 5 (1 verse on fol. 8a).
II. ii, p. 154	… Chap. 10 (4 verses on fol. 30b).
pp. 240-241	… Chap. 8 (9 metrical lines on fol. 24a).
p. 241	… Chap. 10 (3 verses on fol. 30b).
pp.252-3	… Chap. 10 (5 verses on fol. 30b).
p. 395	… Chap. 10 (10 verses on fols. 29b-30a).

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

p. 843	… Chap. 8 (4 verses on fol. 24a-b).
pp. 848-853	… Chap. 10 (105 metrical lines on fols. 30b-32b).
pp. 887-9 (wrongly ascribed to The *Śiva-dharmottara)*	… Chap. 9 (37 lines on Śiva-liṅga-vrata on fols. 26b-27a)
pp. 911-912	… Chap. 8 (6 verses on fol. 23a-b).
pp. 1030-31	… Chap. 8 (12 verses on fol. 25b).
III. ii, pp. 881-2	… Chap. 8 (4 verses on fol. 24a-b).
3. In Mādhavācārya's commentary on the *Parāśarasmṛti* (ed. V.S. Islampurkar, Bombay)	In *Śiva-dharma*
I i, pp. 375-6	… Chap. 7 (I verse on fol. 20 b). The second quoted verse (sākṛt pūjayate yas tu) is not found in the *Śiva-dharma.*
4. In *Gaṅgāvākyāvalī* (of Vidyāpati Upādhāya, Calcutta Sanskrit College Ms. No. Smṛti-117)	In *Śiva-Dharma*
Fol. 25a-bcf.	… Chap. 5 (1 verse on fol. 12 b).
Fol. 47 a	… Chap. 8 (2 verses on fol. 24 b).
5. In *Varṣa-Kṛtya* (of Rudradhara)	In *Śiva-dharma*
p. 151	… Chap.7 (2 verses on fol. 20 b).
6. In *Smṛti-tattva* (of Raghunandana)	In *Śiva-dharma*
I. p. 132	… Chap. 5 (I verse on fol. 10a).
7. In *Ācāra-mayūkha* (of Nīlakaṇṭha, ed.	In *Śiva-dharma*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

Gujarati Printing
Press, Bombay)

p. 96 ... Chap. 5 (I verse 'liṅgānulepanaṃ, etc.' on fol. 8b).
The other two quoted verses are not found in the *Śiva-dharma*.

p.97 ... Chap. 5 (I verse on fol. 10a).

Verses from the *Śiva-dharma* have also been quoted in the following works :

Mitra Miśra's Vīramitrodaya (ed. Chowkhambha Sans. Series, Benares), Paribhāṣā-prakāśa, p. 114.

Anantabhaṭṭa's *Vidhāna-pārijāta* (ed. Bibl. Ind.) II, p. 543; III, pp. 188, 236,386, 440-2, 446.

APPENDIX II

The verses ascribed to the *'Śiva-dharma'* in the following works are not found in the present *Śiva-dharma* :

1) *Caturvarga-cintāmaṇi* I, pp. 44, 109; II. i, p. 44; II. ii, pp. 879-883 (on Mauna-vrata).
2) Mādhavācārya's commetary on the *Parāśara-smṛti,* I, i, p. 190.
3) *Gaṅgāvākyāvalī* (of Vidhyāpati Upādhyāya), fols. 25b, 47a, 47b.
4) *Kṛtya-cintāmaṇi* (of Vācaspati Miśra), p. 46.
5) *Nityācāra-pradīpa* (of Narasiṃha Vājapeyin), p. 138.
6) *Smṛti-tattva* (of Raghunandana), I, pp. 129-130, 131-407.
7) *Tantra-sāra* (of Kṛṣṇānanda Āgamavāgiśa) I, p. 46.
8) *Ācāra-mayūkha* (of Nīlakaṇṭha), p. 94.

(Courtesy-The journal of the Ganganath Jha Research Institute, Vol. X; 1952-53; Parts 1-4)

*****

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवधर्मपुराण : पृष्ठभूमि और स्वरूप

भारतीय पुराण वाङ्मय बहुत विस्तृत है। प्रधान देवताओं की लीलाओं के आधार पर ही नहीं, तारक-श्राद्ध तीर्थों, पंचमहाभूतों और पुण्यसलिलाओं की विषयवस्तु को लेकर भी हमारे यहाँ पुराणों के प्रणयन की सुदीर्घ परम्परा रही है। सूत वचनों से निस्रत-विवृत्त-विस्तृत होते हुए भी इनको व्यासकृत कहा गया है। इनमें सृष्टिसर्गानुसार कथाख्यानों के पाठरूप भी मिलते हैं, इससे आशय है कि इनकी रचना अथवा सम्पादन किसी एक काल और एक ही व्यक्ति का कार्य नहीं है, वरन यह एकाधिक काल और एकाधिक व्यक्तियों का अवदान है। गुप्तकाल और गुप्तोत्तरकाल तक आते-आते पुराणों के लक्षणों का निर्धारण हो गया था। पुराणों में पंचलक्षणों की अपरिहार्यता रही है :

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वतराणि च।
वंश्यानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥
ब्रह्मविष्ण्वर्करुद्राणां माहात्म्यं भुवनस्य च।
ससंहारप्रदानां च पुराणे पञ्चवर्णके॥
धर्मश्चार्थश्च कामश्च मोक्षश्चैवात्र कीर्त्यते।
सर्वेष्वपि पुराणेषु तद्विरुद्धं च यत् फलम्॥
सात्त्विकेषु पुराणेषु माहात्म्यमधिकं हरेः।
राजसेषु च माहात्म्यमधिकं ब्रह्मणो विदुः॥
तद्वदग्रेषु माहात्म्यं तामसेषु शिवस्य च।
सङ्कीर्णेषु सरस्वत्याः पितॄणां च निगद्यते॥ *(मत्स्य. 53, 64-68)*

किन्तु, ऐसा कई बार लगता है प्रारम्भ में जिन सम्प्रदायाधारित धर्म-निर्देश शास्त्रों का प्रणयन हुआ, उन्हीं को काल विशेष में आवश्यक लक्षणों से युक्त कर पुराणों का स्वरूप प्रदान किया गया। तथापि यह सच है कि उपपुराणों का प्रणयन होता रहा, लेकिन विषय वस्तु का आधार पुरातन ही रहा, इसी कारण वे पुराण कहे गए, नवीन नहीं :

पुरातनस्य कल्पस्य पुराणानि विदुर्बुधाः।
धन्यं यशस्यमायुष्यं पुराणानामनुक्रमम्। *(उपर्युक्त. 53, 72)*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इसके पीछे सोच यह था कि भारतीयों ने नवीन धारणाओं को बहुत कठिनता से मान्यता दी, ऐसे में हर नवीन विचार को भी प्राचीनता का सहारा लेकर प्रवर्तित किया गया। प्रवक्ता-श्रोता तक नवीन नहीं, पौराणिक पात्रों को ही आधार बनाया गया। इस नवाचार में स्थल-स्थल पर नवीनता को पुरातन परम्परा के विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया गया। यथा—यज्ञों से होने वाले फलों को दान, पूजनोपवास जैसे कृत्यों की फलश्रुति के रूप में प्रस्तुत किया गया।

कुछ ऐसे ही विषयों को अपने अंक में लिए है 'शिवधर्मपुराण'। मूलतः इसका नाम 'शिवधर्मशास्त्र' है और इसी नाम से इसकी मातृकाएँ मिलती हैं, किन्तु पुराणकारों ने इसको उपपुराण के रूप में स्वीकृत किया है। इसमें महेश्वर प्रोक्त शैवधर्म की मान्यताओं का प्रतिपादन हुआ है और यह शिवावतारी नन्दिकेश्वर और ब्रह्मा के आदि मानसपुत्र सनत्कुमार संवाद के रूप में लिखा व सम्पादित किया गया है। सनत्कुमार प्रश्नकर्ता है और उनके प्रत्येक प्रश्न का सार्थक उत्तर भगवान् नन्दिकेश्वर ने प्रस्तुत किया है। प्रथम अध्याय से ही विदित होता है कि नन्दिकेश्वर वे ही विषय कह रहे हैं जिनको पूर्व में नन्दीश्वर भगवान् शिव ने कहा था। शिव स्वयं ही इस पुराण के प्रवाचक हैं।

संवादकर्ता नन्दिकेश्वर-सनत्कुमार :

नन्दिकेश्वर का परिचय लिंगपुराण में आया है। वह शालंकायन पुत्र शिलाद के पुत्र थे। शिलाद ने दीर्घकालीन तपस्या से महादेव को सन्तुष्ट किया। शिव ने प्रसन्न होकर उनको सर्वज्ञ तथा समस्त शास्त्रों के रहस्यों का पारगामी विद्वान् पुत्र प्रदान किया। शिलाद ने उनसे अयोनिज तथा मृत्युहीन पुत्र चाहा था। शिव ने उनसे कहा कि देवताओं सहित ब्रह्मा ने अवतार ग्रहण करने के लिए तपस्या से उनकी आराधना की थी, अतः नन्दी के नाम से शिलाद के यहां अयोनिज पुत्र के रूप में जन्म लिया। उनका जन्म यज्ञशाला के अंगण में हुआ। वे प्रलयाग्नि के समान प्रभावान थे। प्रकृति ने मंगलाचार किया, उनके जन्म से कुल के पूर्वजों को रुद्रलोक मिल गया। बालरूप में शिवावतारी नन्दी की मुनि शिलाद ने स्तुति की थी। जब शिलाद ने नन्दी के साथ कुटी में प्रवेश किया तब उन्होंने अपना दैविक स्वरूप छोड़कर मनुष्य रूप ग्रहण कर लिया, उनकी दिव्य स्मृति नष्ट हो गई। शालंकायनपुत्र शिलाद ने जातकर्मादि संस्कार करवाए और वैदिक शाखाओं सहित आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्व विद्या, अश्वलक्षण, हस्तिलक्षण, नर लक्षणादि की शिक्षा प्रदान की।

उनके सातवें वर्ष में ही मित्रा-वरुण मुनि ने यह कह दिया कि नन्दी अल्पायु

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वाला है। यह सुनकर पिता-पितामह संज्ञाशून्य हो गए। इस पर नन्दी ने रुद्रजप आरंभ किया और शिव साक्षात् हुए। शिव ने उन्हें अजर-अमर, अव्यय रहने का वरदान दिया और कहा कि तुम मेरे प्रिय गणेश्वर, मेरे समान तेज और पराक्रम वाले होओ। शिव ने कुशेशमयी कण्ठी उनके कण्ठ में बाँध दी जिससे वह तीन नेत्रों और दस भुजाओं वाले, दूसरे शंकर हो गए। शिव ने जटोदका नामक पवित्र नदी निकालकर नन्दी को उसका पुत्र बनाया और शंख के समान श्वेत अश्रुबूंदों से अभिसिंचित किया। जटोदका नदी तीन धाराओं वाली हो गई। शिव ने उसका नाम त्रिस्रोतस् नाम रखा। अभिषेक के जल से सोने की नदी बन गई जिसका नाम स्वर्णोदका रखा गया, विश्वकर्मा के बनाए सोने के मुकुट के जल से जाम्बूनदी प्रकट हुई— ये पांचों ही नदियां जप्येश्वर के समीप जाने वाली बताई गई है। यह पंचनद प्रदेश में बताई गई है। शिव ने ही भूतों के स्वामी नन्दीश्वर का अभिषेचन किया, उन्हें 'गणेन्द्र' नाम वाला कहा। पार्वती की इच्छा पर शैलादि पुत्र को सभी लोकों का स्वामित्व और गणेश्वत्व प्रदान किया। अन्य देवताओं ने भी उनका अभिषेक किया। परमेष्ठी की आंज्ञा से उन्होंने विवाह रचाया, मरुतों की पुत्री सुयशा उनकी भार्या हुई। नन्दी ने शिव से सभी के लिए पाशुपत आज्ञा प्राप्त की। देवादिगणों ने नन्दिकेश्वर से पाशुपत दीक्षा ग्रहण की। इस प्रकार नन्दिकेश्वर पाशुपत शिवदीक्षा के प्रवक्ता बने। *(लिंगपुराण पूर्व. अध्याय 43-44)*

अपनी स्थिति और स्वरूप स्वयं नन्दिकेश्वर ने बताया है : महादेव के दाहिनी ओर स्थित, हजारों देदीप्यमान अग्नि के समान वर्ण वाला, बालचन्द्रमा को मुकुट के रूप में शीश पर धारण करने वाला, वानर के तुल्य मुख वाला, चार भुजाओं वाला, पुष्पों के हाथ धारण करने वाला, सौम्य स्वरूप और समस्त प्रकार के अलंकरण धारण करने वाला— ऐसा स्वरूप था। उनके उत्तर भाग में नन्दिकेश्वर की पुण्यमयी, स्वर्ण के समान आभा वाली, सुन्दर, कीर्तिशालिनी, पतिव्रता तथा पार्वती के चरणों के मण्डन में निरन्तर तत्पर रहने वाली देवी रूपिणी पत्नी सुयशा विराजमान थी। *(उपर्युक्त, पूर्व. अध्याय 27, 19-21)* नन्दिकेश्वर ही माहेश्वर योग के प्रवक्ता हुए थे। नन्दिकेश्वर ने देवताओं, ऋषियों तथा पितरों की सन्निधि में सनत्कुमार को इस योग के विषय में बताया था। *(उपर्युक्त पूर्व. 7, 7)*

लिंगपुराण में सनत्कुमार का परिचय मिलता है। ब्रह्मा ने आरम्भ में अपने ही समान मानस-पुत्रों का सृजन किया। इनमें से सबसे पहले उत्पन्न और सभी के पूर्वज ऋभु और सनत्कुमार हुए। यद्यपि ब्रह्मा ने मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि और वसिष्ठ नामक नौ मानस पुत्रों को भी उत्पन्न किया किन्तु ऋभु व

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सनत्कुमार सबके पूर्वज थे। दोनों ही ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी थे। आठवां कल्प बीतने पर प्राचीन तथा लोकसाक्षी वे दोनों वाराहकल्प में अपने तेज को संयमित करके धरती पर अधिष्ठित हुए। मोक्ष के लिए कर्म परायण दोनों मानसपुत्र आत्मा को अपने में स्थिर करके प्रजा, धर्म तथा काम का त्याग करके वैराग्यवान हुए। सनत्कुमार जिस रूप में उत्पन्न हुए थे, वैसे ही कुमार-रूप में विद्यमान बताए जाते हैं, अतएव उनका नाम सनत्कुमार हुआ। *(पूर्व. 70, 170-175 एवं 191-194)* वायुपुराण में सनत्कुमार को प्रमुख महर्षियों में माना गया है : सनत्कुमारप्रमुखास्ते चैव परमर्षयः। *(वायु. 30, 86)*

शिवधर्मपुराण उक्त दोनों अर्थात् शिवावतारी नन्दिकेश्वर और ब्रह्मा के मानसपुत्र सनत्कुमार के मध्य संवाद रूप में शैवधर्म का प्रवचनपरक ग्रन्थ है। इसमें शैव मान्यताओं, पूजनविधियों, व्रतों, और शैवाचारों का यथेष्ट वर्णन है। इसमें कहीं वेदों के मन्त्रों, ऋचाओं के प्रयोग का निर्देश नहीं है, जैसा कि लिंगादि अन्यान्य पुराणों में शिवपूजन में वैदिक मन्त्रों, यथा : रुद्रसूक्त (शुक्ल यजुर्वेद अ. 19 के 66 मन्त्र), पावमानी ऋचाएँ, यो रुद्र इत्यादि त्वरित नामक मन्त्र, तरत्समन्दी इत्यादि आद्याक्षर वाले मन्त्र (ऋग्वेद 9, 58), शं नो मित्र आदि दो मन्त्र (यजुर्वेद 36, 9-10), शान्तिधर्मक शं नो देवी (शुक्ल यजुर्वेद 36, 12) इत्यादि के प्रयोग के नाना निर्देश मिलते हैं। यह स्वतन्त्र और सहज-सरल शिवधर्म के आचार-विचार और व्यवहार का प्रवर्तन करने वाला ग्रन्थ है। जटिलताओं का इसमें स्थान नहीं है। यह संवाद शैव पुराणों के सृजन का आधार बना है। स्कन्द, लिंग, शिवादि पुराणों में सनत्कुमार-ईश्वर शिव के संवाद रूप में कई अध्यायों का मिलना यही सिद्ध करता है।

प्रधान उपपुराणों में परिगणित :

शिवधर्मपुराण को उपपुराणों की सूची में महापुराणकारों ने रखा है और यह भी लगता है कि उनकी विषयवस्तु को अनेकत्र महापुराणकारों ने उपन्यस्त किया है। महापुराणकारों ने इसका स्मरण भी किया है। उस काल में पाद-टिप्पणियाँ तो देने का चलन था नहीं, किन्तु कथा प्रोक्ता सूतों ने पूर्ववर्ती परम्पराओं का स्मरण करते हुए इन उपपुराणों के कई प्रसंगों का यथास्थल उद्धरण दिया है। व्यास परम्परा की यह मोटी विशेषता है। इसी कारण पुराणों को व्यासवचन अर्थात् विस्तारित अथवा उपबृंहण भी कहा गया है, प्रस्तुत पुराण तक व्यास वचन की परम्परा देखने में नहीं आती।

शिवपुराण की वायवीयसंहिता में जो सन्दर्भ आया है उसमें इसे शास्त्र के रूप में कहा गया प्रतीत होता है किन्तु यह इसके पूर्ण नाम के रूप में प्रयुक्त हुआ है और स्पष्टतः 'शिवधर्मशास्त्र' और 'शिवधर्मोत्तर' संज्ञक दोनों ही उपपुराणों के नाम हैं और

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दूसरी पंक्ति में इसको शैवपुराण के रूप में वेद सम्मत कहा गया है और बताया गया है कि कामिकागम इत्यादि जो चार शैवागम हैं, उनमें विशेषकर शिव की अर्चना उपलब्ध होती है—

शास्त्रं च शिवधर्माख्यं धर्माख्यं च तदुत्तरम्।
शैवाख्यं शिवधर्माख्यं पुराणं श्रुतिसम्मतम्॥
शैवागमश्च ये चान्य कामिकाद्याश्चतुर्विधाः।
शिवाभ्यामविशेषेण सत्कृत्येह समर्चिताः॥

(वाय. उत्तर. 31, 165–166)

इस प्रकार इसे शिवधर्मोत्तर सहित पुराण श्रृंखला के अन्तर्गत माना गया है। मलमासतत्त्वकार ने कूर्मपुराण से जो श्लोक उद्धृत किए हैं, उनमें उपपुराणों की सम्पूर्ण सूची आई है और पुराणों की तरह ही इनकी संख्या 18 बताई गई हैं। इसी सूची को परवर्ती कोशकारों और परिचयकोशकारों ने उद्धृत किया है। यथा—

रोमहर्षण उवाच—

अन्यान्युपपुराणानि मुनिभिः कथितानि तु।
अष्टादशपुराणानि श्रुत्वा संक्षेपतो द्विजाः॥
आद्यं सनत्कुमारोक्तं$_1$ नारसिंहमतः$_2$ परम्।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं$_3$ कुमारेण च भाषितम्॥
चतुर्थं शिवधर्माख्यं$_4$ साक्षान्नन्दीशभाषितम्।
दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं$_5$ नारदीयमतः$_6$ परम्॥
कापिलं$_7$ मानवं$_8$ चैव तथैवोशनसेरितम्$_9$।
ब्रह्माण्डं$_{10}$ वारुणञ्चैव$_{11}$ कालिकाह्वयमेव$_{12}$ च॥
माहेश्वरं$_{13}$ तथा साम्बं$_{14}$ सौरं$_{15}$ सर्वार्थसञ्चमम्।
पराशरोक्तं$_{16}$ मारीचं$_{17}$ तथैव भार्गवाह्वयम्$_{18}$॥

(कूर्मपुराण पूर्व. 1, 16–20 तुलनीय दानखण्ड अध्याय 7, पृष्ठ 532–533)

अर्थात् रोमहर्षण बोले— हे द्विज! अठारह पुराणों के विषय में संक्षिप्त रूप से सुनने उपरान्त अन्य उपपुराणों के विषय में तुमसे कहता हूँ जिनको मुनियों ने कहा है। इनमें से पहला उपपुराण सनत्कुमार द्वारा कहा गया है। उसके बाद नारसिंह पुराण है। तृतीय उपपुराण कुमार कार्तिकेय का कहा गया है जिसका स्कन्दपुराण नाम है। चतुर्थ शिवधर्म नामक उपपुराण है जिसे साक्षात् नन्दीश्वर शिव द्वारा कहा गया है। इसके बाद मुनि दुर्वासा द्वारा कहा गया है और उसका नाम आश्चर्यपुराण है। इसके उपरान्त

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नारदीयमत का नारदीय उपपुराण का क्रम है। इसके पश्चात कापिल नामक उपपुराण, फिर मानवोपुराण, तत्पश्चात औशनस अर्थात् शुक्राचार्य द्वारा कहा गया उशना उपपुराण है। इसी क्रम में ब्रह्माण्डपुराण, वारुणपुराण तथा फिर कालिकापुराण के नाम आते हैं। इसी प्रकार माहेश्वरपुराण, साम्बपुराण तथा समस्त अर्थों से संचित सौरपुराण है। तदोपरान्त पराशर प्रोक्त पराशरपुराण, मारीच उपपुराण और अन्तिम भार्गव नामक उपपुराण है।

मुनि प्रणीत उपपुराण :

शब्दकल्पद्रुमकार ने स्पष्ट किया है कि भगवान् व्यास ने अठारह पुराणों की रचना की है और इस प्रकार मुनियों ने अठारह उपपुराणों को लिखा है : व्यासकृताष्टादशपुराण सदृशनानामुन्यादि प्रणीताष्टादशपुराणम्। कोशकार ने 'माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्' श्लोकार्ध की अपेक्षा यह पाठ दिया है : 'माहेश्वरं तथा कल्की दैवं सर्वार्थसिद्धिदम्। पराशरोक्तमपरं मारीचं भास्कराह्वयम्।' यहाँ 'दैवं' का आशय देवीपुराण मानकर उपपुराणों में परिगणित किया गया है। *(शब्दकल्पद्रुम भाग 1, पृष्ठ 257)* उक्त कोशकार रघुनन्दनकृत स्मृतितत्त्व के अन्तर्गत आए मलमासतत्त्व भाग में उद्धृत श्लोकों के आधार पर शिवधर्म को उपपुराणों की कोटि में ही स्वीकारता है। यही सूची वीरमित्रोदय के परिभाषाप्रकाश (ब्रह्मवैवर्तपुराण मतानुसार, पृष्ठ 14), भक्तिरत्नाकर, सौरसंहिता, गरुडपुराण (पूर्व., 223, 17-20), बृहद्धर्मपुराण (1, 25, 23-26), पाराशरोपपुराण (1, 28-31), मधुसूदन सरस्वतीकृत प्रस्थानभेद, वारुणोपपुराण (प्रथम अध्याय पन्द्रहवें क्रम पर) आदि में भी मिलती है। इसी प्रकार की एक सूची हमें स्कन्दपुराण के पूर्वपाठ के रूप में स्वीकृत 'सूतसंहिता' में प्राप्त होती है। इसमें संख्याओं के उल्लेख सहित उपपुराणों का नाम बताया गया है—

अष्टादश पुराणानि श्रुत्वा सत्यवतीसुतात्॥
अन्यान्युपपुराणानि मुनिभिः कीर्तितानि तु।
आद्यं सनत्कुमारेण प्रोक्तं वेदविदां वराः॥
द्वितीयं नारसिंहाख्यं तृतीयं नान्दमेव च।
चतुर्थं शिवधर्माख्यं दौर्वासं पञ्चमं विदुः॥
षष्ठं तु नारदीयाख्यं कापिलं सप्तमं विदुः।
अष्टमं मानवं प्रोक्तं ततश्चोशनसेरितम्॥
ततो ब्रह्माण्डसञ्ज्ञं तु वारुणाख्यं ततः परम्।
ततः कालीपुराणाख्यं विशिष्टं मुनिपुङ्गवाः॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ततो वासिष्ठलैङ्गाख्यं प्रोक्तं माहेश्वरं परम्।
ततः साम्बपुराणाख्यं ततः सौरं महाद्भुतम्।
पाराशरं ततः प्रोक्तं मारीचाख्यं ततः परम्।
भार्गवाख्यं ततः प्रोक्तं सर्वधर्मार्थसाधकम्॥

(सूतसंहिता 1, 13-18)

उपर्युक्त सूची में कूर्मपुराण की पूर्वोक्त मान्यता ही मिलती है कि 18 पुराण सत्यवती के पुत्र व्यास द्वारा सुनाए गए हैं और अन्य उपपुराण मुनियों द्वारा कहे गए हैं। इनमें क्रमशः प्रथम उपपुराण सनत्कुमारपुराण, दूसरा नारसिंहपुराण, तीसरा नान्दीपुराण, चौथा शिवधर्मपुराण, पाँचवाँ दुर्वासापुराण, छठवाँ नारदीयपुराण, सातवाँ कापिलपुराण, आठवाँ मानवपुराण, नवाँ उशनापुराण, दसवाँ ब्रह्माण्डपुराण, ग्यारहवाँ वारुणोपपुराण, बारहवाँ कालीपुराण, तेरहवाँ वासिष्ठलैङ्गपुराण, चौदहवाँ साम्बपुराण, पन्द्रहवाँ सौरपुराण, सोलहवाँ पाराशर प्रोक्त पराशर पुराण, सत्रहवाँ मारीचपुराण और अठारहवाँ भार्गवपुराण है। ये सभी धर्म, अर्थ के साधक उपपुराण हैं।

इसी प्रकार का सूचीकरण देवीभागवत में भी किया गया है और वहाँ भी इन उपपुराणों को मुनियों द्वारा कथित बताया गया है—

तथैवोपपुराणानि शृण्वन्तु ऋषिसत्तमाः।
सनत्कुमारं प्रथमं नारसिंहं ततः परम्॥
नारदीयं शिवं चैव दौर्वाससमनुत्तमम्।
कापिलं मानवं चैव चौशनसं स्मृतम्॥
वारुणं कालिकाख्यं च साम्बं नन्दिकृतं शुभम्।
सौरं पाराशरप्रोक्तमादित्यं चातिविस्तरम्॥
माहेश्वरं भागवतं वासिष्ठं च विस्तरम्।
एतान्युपपुराणानि कथितानि महात्मभिः॥ (स्कन्ध 1, 3, 13-16)

इस सूची में नारदीय उपपुराण के उपरान्त शिव(धर्म, मतान्तर से शिवपुराण) का नाम आया है और यह सूची कूर्मपुराणादि के सन्दर्भ के समरूप ही है। इन सूचियों से यह विदित होता है कि पुराणों का प्रणयन व्यास परम्परानुसम्मत माना जाता रहा है जबकि उपपुराणों के प्रणयन का श्रेय विभिन्न मुनियों को दिया गया है। इनमें से कुछ उपपुराणों का नामकरण तो मुनियों के नाम पर हुआ भी है। यह ध्वनित होता है कि पुराणों का नामकरण प्रमुख देवताओं अथवा उनके अवतारों के नामानुसार प्रमुखता से हुआ है जबकि उपपुराणों का नामकरण मुनियों के नाम पर लगता है। अतः यह मान्यता

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विकसित हुई कि उपपुराण मुनियों के रचे हुए हैं, यद्यपि शिवधर्मपुराण साक्षात् नन्दीश शिव द्वारा कहा गया स्वीकारा गया है तथापि किसी मुनि द्वारा रचित है।

यह धर्मशास्त्र इस अर्थ में है कि पुराणों की एक धारा धर्म और धर्मोत्तर के रूप में भी रही है। यथा :

विष्णपुराण > विष्णुधर्मपुराण > विष्णुधर्मोत्तरपुराण।
शिवपुराण > शिवधर्मपुराण > शिवधर्मोत्तरपुराण।
सौरपुराण > सौरधर्मपुराण > सौरधर्मोत्तरपुराण।

इसी प्रकार 'ब्रह्मपुराण' के बाद ब्राह्मधर्म और ब्राह्मधर्मोत्तर पुराण होने की परिकल्पना भी की जा सकती है, यद्यपि इनके पाठ अभी तक नहीं खोजे जा चुके हैं और इसका कारण यह भी हो सकता है कि ब्रह्मा के धर्म-मत के ह्रास के कारण ये ब्राह्मधर्म और ब्राह्मधर्मोत्तर पुराण रचे भी नहीं हों किन्तु भविष्यपुराण और भविष्योत्तर पुराण में पुनः यह परम्परा हमें मिलती है, ऐसे में पुराणकारों में धर्म और धर्मोत्तर पुराणों के सृजन की परम्परा अवश्य रही है, यह विश्वास किया जाना चाहिए। *(विशेष दृष्टव्य : मीरायन, त्रैमासिक, चित्तौड़गढ़, 2010 में प्रकाशित मेरा लेख : धर्मोत्तरपुराणों की परम्परा और शिवधर्मोत्तरपुराण)*

पूर्वमध्यकाल में सम्पादित हुए बृहद्धर्मपुराण में धर्मपुराण और धर्मोत्तरपुराणों का उल्लेख एक ही साथ मिलता है, इससे यह प्रतीत होता है कि अठारह उपपुराणों के अन्तर्गत ही उक्त दोनों पुराण-धाराओं का परिगणन स्वीकार्य हो चुका था। पुराणकार ने धर्मपुराण, विष्णुधर्मोत्तरपुराण, शिवधर्मपुराण, विष्णुधर्मपुराण और बृहद्धर्मपुराण का स्पष्टतः उल्लेख किया है—

ततो धर्मपुराणञ्च विष्णुधर्मोत्तरं तथा।
शिवधर्मं विष्णुधर्मं वामनं वारुणं तथा॥
नारसिंहं भार्गवञ्च बृहद्धर्मन्तथोत्तमम्।
एतान्युपपुराणानि संख्यावष्टादशैव तु॥ *(बृहद्धर्म. 25, 25-26)*

मत्स्यपुराण के सम्पादनकाल तक उपपुराणों की उपलब्धता थी किन्तु सम्पादक ने उनकी सम्पूर्ण सूची नहीं दी है तथापि यह स्पष्ट किया है कि उस समय तक जो लोक में प्रतिष्ठित हो चुके थे, उनमें मुख्य उपपुराणों का नामोल्लेख उनकी विषयवस्तु और प्रोक्ता के साथ लिखा गया है—

उपभेदान् प्रवक्ष्यामि लोके ये सम्प्रतिष्ठिताः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पाद्मे पुराणे यत्रोक्तं नरसिंहोपवर्णनम्।
तच्चाष्टादशसाहस्त्रं नारसिंहमिहोच्यते॥
नन्दाया यत्र माहात्म्यं कार्तिकेयेन वर्ण्यते।
नन्दीपुराणं तल्लोकैराख्यातमिति कीर्त्यते॥
यत्र साम्बं पुरस्कृत्य भविष्यति कथानकम्।
प्रोच्यते तत् पुनर्लोके साम्बमेतन्मुनिव्रताः॥
एवमादित्यसंज्ञा च तत्रैव परिगण्यते। *(मत्स्य. 53, 59-62)*

अर्थात्— भगवान् मत्स्य ने ऋषियों से कहा कि मैं उन उपपुराणों के सम्बन्ध में कहता हूँ जो लोकांचल में ख्यातिलब्ध हो चुके हैं। पद्मपुराण में जहाँ कि नरसिंह का वर्णन है, उसको पृथक् से 'नारसिंहपुराण' कहा जाता है। उसका श्लोक प्रमाण अठारह हजार है। नन्दा के जिस माहात्म्य को कार्तिकेय ने कहा है, उस विषय वस्तु पर आधारित नन्दीपुराण लोक में ख्याति लिए हुए है। जिसमें भविष्य के विमर्श के साथ-साथ साम्ब का कथानक प्रस्तुत हुआ है, वह साम्बपुराण के नाम से लोक प्रसिद्ध है। ऐसे ही आदित्य संज्ञक पुराण भी उक्त उपपुराणों में गिना जाता है। इस तरह से अठारह पृथक् (उप) पुराण बताए गए हैं।

उक्त श्लोक अत्यल्प पाठान्तर के साथ स्कन्दपुराण के प्रभासक्षेत्र माहात्म्य खण्ड (अध्याय 1, 79-82) में भी उद्धृत मिलते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों में राजागण अपने आपको नरसिंह की तरह स्थापित करने में लगे हुए थे, वे म्लेच्छ या वर्णसंकरादि शक्तियों को हिरण्यकश्यप मानकर संहार करने में लगे हुए थे, अतः 'नारसिंहपुराण' की लोकोचित प्रतिष्ठा हुई; कार्तिकेय को शिवपुत्र के रूप में देवसेनापति स्वीकारा जा चुका था और हिमाचलस्थ नन्दाक्षेत्र विकसित होने लगा था, अतः उस स्थलाधारित पुराण को लोकाश्रय मिला। इसी प्रकार मगब्राह्मणों का पूर्व से पश्चिम तक विस्तार हो चुका था और बड़ी संख्या में सूर्यायतनों या सौर मन्दिरों का निर्माण होने लगा था, संवत्सर-कथनकर्ता, भविष्यफल और जातकादि ग्रन्थों प्रवक्ता होने के कारण मगों-शाकद्वीपीय विप्रों को लोकसम्मान मिल रहा था, ऐसे में उनके आख्यान और आराधन आधार के रूप में 'साम्ब' और 'आदित्य' जैसे उपपुराणों का प्रचार-प्रसार जोरों पर था। साम्ब नामक उपपुराण की उद्देशानुक्रमणिका से यह ध्वनित होता है कि लोगों ने उस पुराणाख्यान को जो कि साम्ब ने सूर्य से सुना था, सुनने की अतीव जिज्ञासा प्रकट की थी—

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

हरिपुत्रकृतं चात्र न त्वया कथितं मुने।
न मे कर्णसुखं मौनं प्रीणात्यमृतसस्मितम्॥
भास्करस्य पुराणं यत् पृष्टं साम्बेन धीमता।

(साम्बपुराण 1, 12-13)

फिर,. यह सच है कि हेमाद्रि, अपरार्क, लक्ष्मीधर प्रभृति मध्यकालीन निबन्धकारों ने आदित्यपुराण के श्लोक बहुत सम्मान के साथ उद्धृत किए हैं। साम्बपुराण का ताना-बाना उन्हीं विषयों को लेकर गूंथा जाता रहा जिनकी ओर तत्कालीन भारतीय समाज बढ़ता जा रहा था। अरबयात्री अलबीरुनी के सन्दर्भ भी इसकी पुष्टि करने वाले हैं।

मत्स्यादि पुराणों के पूर्वोक्त वर्णन ये यह भी विदित होता है कि पुराणों के अन्तर्गत ही उपपुराणों की विषयवस्तु का समावेश होने लग गया था। यह भी हो रहा था कि बृहद् पुराणों में आख्यान-प्रसंग जुड़ते हुए पृथक् पुराण बनते रहे थे। पद्मपुराण के अन्तर्गत नारसिंहोपुराण को सम्मिलित किया गया है, स्कन्दपुराण के अन्तर्गत नान्दिपुराण जुड़ा, पद्मपुराण में भटहरचरित का समावेश किया गया। इसी प्रसंग में यह भी कहा गया है कि अठारह पुराणों से पृथक् जो पुराण हैं, उन्हें इन्हीं में से निकले हुए समझने चाहिए : अष्टादशभ्यस्तु पृथकं पुराणं यत् प्रदिश्यते॥ विजानीध्वं द्विजश्रेष्ठास्तदेतेभ्यो विनिर्गतम्। *(मत्स्य. 53, 62-63)*

यह अवश्य स्मरणीय है कि सभी उपपुराण पुराणों से नहीं निकले, बल्कि पुराणों का कलेवर बनाने में उपपुराणों की महत्ती भूमिका रही। लिंगपुराण, शिवपुराण, शिवरहस्य आदि के विकास और विस्तार में शिवधर्मशास्त्र ने महत्वपूर्ण योगदान किया है और इन पुराणों ने उपपुराणों के महत्व को स्वीकार भी किया है। लिंगपुराण में आया है कि उसके काल तक ब्रह्मादि अठारह पुराण एवं सौरादि उपपुराण अस्तित्व में आ चुके थे। शिवधर्म भी विद्यमान था और इसकी गणना इतिहासादि पुण्य ग्रन्थों के साथ होती थी—

अष्टादशपुराणानां ब्रह्माद्यानां तथैव च।
तथा चोपपुराणानां सौरादीनां यथाक्रमम्॥
पुण्यानामितिहासानां शैवादीनां तथैव च।

(लिंगपुराण पूर्व. 26, 27-28)

लिंगपुराण में शिवधर्मपुराण के कई श्लोक-प्रसंग उपन्यस्त किए गए हैं, इस

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उपपुराण के प्रस्तुत पाठ में इसकी पुष्टि में यथास्थान इंगितियाँ भी की गई है। इनमें वर्षकृत्य, व्रतादि के विधान और शिवाश्रमवासियों के कृत्यादि मुख्य और विशिष्ट हैं जिनको लिंगपुराणकार पूर्ववर्ती परम्परानुमत ही स्वीकार कर पुनर्स्थापित करता है।

धर्मपुराणों की परम्परा :

जैसा कि पूर्व में कहा गया है कि हमारे यहाँ धर्मपुराणों की एक विशिष्ट परम्परा भी देखने में आती है। यद्यपि पुराणकारों ने इसका कोई वर्गीकरण नहीं किया है, हाँ सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण इन तीन गुणों और वर्णक्रम के आधार पर एकाध कोटिरेखा अवश्य खींचने का उपक्रम किया गया है।

प्रस्तुत पुराण को भविष्यपुराण में धर्मसम्मत पुराण के रूप में विष्णुधर्म (पुराण) के साथ गिना गया है :

जयोपजीवी यो विप्रः स महागुरुरुच्यते।
अष्टादशपुराणानि रामस्य चरितं तथा॥
विष्णुधर्मादयो धर्माः शिवधर्माश्च भारत।
कार्ष्णं वेदं पञ्चमं तु यन्ममहाभारतं स्मृतम्॥
सौरा धर्माश्च राजेन्द्र! नारदोक्ता महीपते।
जयेति नाम एतेषां प्रवदन्ति मनीषिणः॥

(भविष्यपुराण ब्राह्मपर्व 4, 86–88)

उक्त श्लोकों में सुमन्तू द्वारा शतानिक के प्रश्न के उत्तर में कहा गया है कि जय अर्थात् पुराणाख्यान परम्परा सम्मत ग्रन्थ से जो जीविका उपार्जित करता है, वह महागुरु कहा जाता है। जय कोटि के ग्रन्थों में अठारहों पुराण, रामायण, विष्णुधर्म, शिवधर्म और कृष्णद्वैपायन का पाँचवाँ वेद जिसको महाभारत के नाम से जाना जाता है और सौरधर्म— इन सबको पण्डितजन जय के अन्तर्गत बताते हैं।

ये ही श्लोक हेमाद्रि कृत चतुर्वर्ग चिन्तामणि में उद्धृत मिलते हैं—

अष्टादश पुराणानि रामस्य चरितं तथा।
विष्णुधर्माणि शास्त्राणि शिवधर्म्माश्च भारत॥
कार्ष्णाञ्च पञ्चमोवेदो यन्महाभारतं स्मृतम्।
सौराश्च धर्म्मा राजेन्द्र मानवोक्ता महीपते॥
जयेति नाम चै तेषां प्रवदन्ति मनीषिण इति॥

(व्रतखण्ड प्रथम अध्याय पृष्ठ 19–20)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इन श्लोकों से पूर्व इनके भाव को प्रस्तुत करते हुए हेमाद्रि का मत पठनीय है— मन्वादि स्मृतीनां षड्विंशत्वमुक्तम्, तच्चानन्तरोक्ताभिरेव पूर्य्यते। यानि पुनर्महाभारत रामायण विष्णुधर्म्म शिवधर्म्म प्रभृतीनि गृहपरिशिष्टानि च तानि च स्मृत्यन्तरेषु चेत्यनेनैवोक्तानि। इस मत में कहा गया है कि मनु इत्यादि छब्बीस स्मृतियाँ कही गई है, इनके अनन्तर भी महाभारत, रामायण, विष्णुधर्म, शिवधर्म प्रभृति गृहपरिशिष्ट इत्यादि स्मृत्यानन्तर ग्रन्थ है— इन ग्रन्थों में धर्माचरण का विवेचन मिलता है।

चतुर्वर्ग चिन्तामणि की एक मातृका में विष्णुधर्माणि के स्थान पर 'वायवीयश्च' पाठान्तर भी मिलता है जिसका आशय वायवीय संहिता अथवा वायुपुराण भी प्रतीत होता है। *(उपर्युक्त पृष्ठ 19)* यह श्लोक अपरार्क ने भी याज्ञवल्क्यस्मृति (पृष्ठ 15) में उद्धृत किया है। इसी प्रकार चण्डेश्वर ठाकुर ने कृत्यरत्नाकर (पृष्ठ 30), नरसिंह वाजपेयी ने नित्याचारप्रदीप (पृष्ठ 22) और रघुनन्दन ने स्मृतितत्त्व (भाग 1, पृष्ठ 71) में उद्धृत दिया है।

इसका आशय है कि शिवधर्म को भी धर्म पुराण के समान मान्यता रही है। इसमें विष्णुधर्मपुराण, शिवधर्मपुराण और सौरधर्मपुराण इन उपपुराणों का स्पष्टतः उल्लेख है। इसी प्रकार हेमाद्रि ने दानखण्ड के अन्तर्गत सौरपुराण के श्लोकों को (तदेव पुराण) उद्धृत करते हुए स्पष्ट किया है कि पर्वों के अवसर पर जो सुवर्ण सहित उपपुराणों का लिखकर दान करता है वह विद्यावान होता है। इन दानयोग्य शास्त्रों में शिवधर्मादि भी सम्मिलित हैं, जिसके प्रभाव से पुण्यप्रज्ञ को अनन्त फल मिलता है, विशेषकर शिवधर्म के प्रकाशन करने से इस दान का प्रभाव जानना चाहिए—

अन्यान्यपुपुराणानि सहिरण्यानिपर्वणि।
लिखित्वा यः प्रयच्छेत्तु स विद्यापारगो भवेत्॥
शिवधर्म्मादि शास्त्राणि यः प्रयच्छति पुण्यधिः।
सोऽनन्तफलमाप्नोति शिवधर्म्मप्रकाशनात्॥

(दानखण्ड अध्याय 7, पृष्ठ 539-540)

सौरपुराण के इस श्लोकोद्धरण में निश्चित ही शिवधर्मशास्त्र को उपपुराण के रूप में गिना गया है और उपपुराणों के दान के क्रम में ही इस ग्रन्थ के दान को बताया गया है। हालांकि सौरपुराण के वर्तमान पाठ के पुराणादानकथन नामक नवें अध्याय में उक्त उक्त श्लोक नहीं मिलता हैं किन्तु यह अवश्य सूचित किया गया है कि खिल और उपपुराण सूरियों अर्थात् मुनीश्वरों के कहे हुए हैं जिनमें सौरपुराण भी सम्मिलित हैं जो

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कि ब्रह्मपुराण का खिल भाग है— खिलान्युपपुराणानि यानि चोक्तानि सूरिभिः ॥ इदं ब्रह्मपुराणस्य खिलं सौरमनुत्तमम्। संहिताद्वयसंयुक्तं पुण्यं शिवकथाश्रयम्॥ (सौरपुराण 9, 12-13)

उक्त श्लोकों के आगे का अंश सम्भवतः स्कन्दपुराण के रेवाखण्ड में उपलब्ध होता है किन्तु वहां उपपुराणों की सूची किंचित परिवर्तन के साथ मिलती है और ये स्कन्दपुराण के वर्तमान पाठ के सम्पादन काल, 12वीं सदी में प्रचलित रही होंगी, हालांकि इस पुराण के अन्तिम प्रभासखण्ड में यह सूची पूर्वोक्त अन्य पुराणों की सूची से मेल खाती है। इसमें सनत्कुमारोक्त के स्थान पर उस सौर उपपुराण का उल्लेख है जो सनत्कुमार नाम से विख्यात, सनत्कुमार और सूर्यभाषित— इन दो संहिताओं और शिवकथाश्रय वाला था। ब्रह्मपुराण के खिल के रूप में यह ख्यात रहा। द्वितीय, नारसिंह के स्थान पर 'द्वितीय नारसिंह च पुराणं पाद्मसंज्ञितं' शब्दों का प्रयोग मिलता है। तीसरे स्कान्द के स्थान पर शौकेयं (पाठान्तर से नन्दापुराणं तृतीयं वैष्णवं मतम्) वैष्णव पुराण का नाम है। चतुर्थ, शिवधर्म पुराण के स्थान पर बार्हस्पत्य, वायु संज्ञक पुराण का नाम आया है। पांचवें दुर्वाससोक्तमित्यस्य के स्थान पर दौर्वाससोक्तं भागवतं स्मृतम्, छठवें नारदीय के स्थान पर भविष्य नारदोक्तञ्च, सत्रहवें मारीच के स्थान पर भागवत और अठारहवें भार्गव के स्थान पर कौर्म का नाम आता है। इससे प्रतीत होता है कि या तो यह सूची त्रुटित है अथवा यह उन पुराणों की सूची की ओर संकेत करती हैं, जो रेवाखण्डकार को उपलब्ध थी—

तथैवोपुराणानि यानि चोक्तानि वेधसा ॥
इदं ब्रह्मपुराणस्य खिलं सौरमुत्तमम्।
संहिताद्वयसंयुक्तं पुण्यं शिवकथाश्रयम्॥
आद्या सनत्कुमारोक्ता द्वितीया सूर्यभाषिता।
सनत्कुमारानाम्ना हि तद्विख्यातं महामुने॥
द्वितीय नारसिंहं च पुराणे पाद्मसञ्ज्ञिते।
शौकेयं हि तृतीयं तु पुराणे वैष्णवेमतम्॥
बार्हस्पत्यं चतुर्थं च वायव्यं सम्मतं सदा।
दौर्वाससं पञ्चमं च स्मृतं भागवते सदा॥
भविष्ये नारदोक्तं च सूरिभिः कथितं पुरा।
कापिलं मानवं चैव तथैवोशनसेरितम्॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ब्रह्माण्डं वारुणं चाथ कालिकाद्वयमेव च।
माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्॥
पाराशरं भागवतं कौर्मं चाष्टादशं क्रमात्।
एतान्युपपुराणा नियमोक्तानि यथाक्रमम्॥ *(रेवाखण्ड 1, 46-52)*

इसी स्कन्दपुराण में एक सूची प्रभासखण्ड में आई है जिसमें शिवधर्म का उपपुराण के रूप में स्पष्टतः उल्लेख है, यह सूची प्रामाणिक लगती है क्योंकि यह अन्य पुराणानुसम्मत सूचियों के अनुसार ही है, यद्यपि कुछ पुराणों के नाम नए भी हैं। इस सूची में 1. सनत्कुमारोक्तम्, 2. नारसिंहम्, 3. नान्दम्, 4. शिवधर्मम्, 5. दौर्वासम्, 6. नारदीय, 7. कापिलम्, 8. मानवम्, 9. उशनसेरितम्, 10. ब्रह्माण्डम्, 11. वारुणम्, 12. अतिकालिकापुराणम्, 13. माहेश्वरम्, 14. साम्बपुराणम्, 15. सौरम्, 16. पाराशरम्, 17. मारीचम् और 18. भार्गवम् नाम आए हैं—

अन्यान्युपपुराणानि मुनिना कथितानि तु।
तानि वः कथयिष्यामि संक्षेपादवर्धायताम्॥
आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतः परम्।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं कुमारेणानुभाषितम्॥
चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम्।
दुर्वाससोक्तमाचार्य्यं नारदोक्तमतः परम्॥
कापिलं मानवं चैव तथैवोशनसेरितम्।
ब्रह्माण्डं वारुणं चान्यत्कालिकाह्वयेमव च॥
माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्।
पराशरोक्तं परमं मारीचं भार्गवाह्वयम्॥
एतान्युपपुराणानि कथितानि द्विजोत्तमाः॥

(स्कन्दपुराण प्रभासखण्ड 1, 10-15)

शिवधर्मपुराण को 'संहिता' के रूप में भी कहा गया है। एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता की मातृका (जी-3852) के दो अध्यायों की समापन पुष्पिका में आया है—

इति शिवधर्मशास्त्रे नन्दिकेश्वर प्रोक्तं संहितायां तृतीयोऽध्यायः। *(मातृका जी-3852)*

इसी प्रकार चतुर्थ अध्याय के अन्त में आया है—
इति शिवधर्मशास्त्रे नन्दिकेश्वर प्रोक्तं संहितायां तृतीयोऽध्यायः। *(उपर्युक्त)*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इससे यह भी लगता है कि इस उपपुराण का स्वरूप प्रारम्भ में विकीर्ण था और संकलन के साथ इसको संहिता रूप में स्थापित किया गया था ताकि इसमें विषय-प्रसंगों की क्रमबद्धता हो जाए और एकाधिक ग्रन्थ पृष्ठों पर निर्भरता की अपेक्षा एक ही ग्रन्थ में आवश्यक विषय सुलभ हो जाए।

प्रस्तुत ग्रन्थ की पाण्डुलिपियाँ :

शिवधर्म की अब तक चार पूर्ण मातृकाओं का पता चला है। इनमें से एक प्रति अड्यार पुस्तकालय की प्रति है जिसके आधार पर प्रस्तुत पाठ तैयार किया गया है, यह अपेक्षाकृत प्राचीन और शुद्ध प्रति प्रतीत होती है। वहाँ यह संख्या 46 पर पंजीकृत है और शिवधर्म उपपुराण के नाम से संगृहित है। यह ग्रन्थलिपि में है। *(कैटलॉग ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्टव इन द अड्यार लाइब्रेरी, भाग प्रथम, पृष्ठ 159)* 26 जून, 1956 को इसकी देवनागरी प्रतिलिपि तैयार की गई।

प्रसिद्ध पुराणवेत्ता प्रो. राजेन्द्रचन्द्र हाजरा ने अन्य मातृकाओं की सूचना जर्नल ऑफ द गंगानाथ झा रिसर्च इंस्टीट्यूट के 1952-53 *(भाग 10, अंक 1-4, नवंबर से अगस्त, पृष्ठ 1-2)* में जो सूचनाएँ दी हैं, उसके अनुसार इसकी मातृकाएँ निम्नानुसार मिलती है—

1. एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता में विद्यमान ताड़पत्रीय प्रतिलिपि (संख्या जी-3852)। यह नेवारी लिपि में लिखी हुई है और ईसा की 12वीं सदी तैयार की गई है। इस मातृका के साथ छह ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ हैं, जो क्रमशः 1. शिवधर्म, 2. शिवधर्मोत्तर, 3. शिवधर्म संग्रह, 4. उमा-महेश्वर संवाद, 5. शिवोपनिषद और 6. उत्तरोत्तरतन्त्र। इसकी सर्वप्रथम सूचना महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने 'डिस्क्रिप्टीव कैटलॉग ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्टव इन द गवर्नमेन्ट कलेक्शन अण्डर द केयर ऑफ द एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल', भाग 5, संख्या 4085, पृष्ठ 723-744 पर दी है।

2. नेपाल में प्राप्त मातृका। हरप्रसाद शास्त्री ने ही नेपाल के काठमाण्डू में इसकी मातृका को खोजा था। यह अधूरी मातृका है और इसमें छह अध्याय ही हैं। यह नेपाली कागज पर बंगाली अक्षरों में शक संवत् 1563 में लिखी गई है। *(डिस्क्रिप्टीव कैटलॉग ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्टव इन द गवर्नमेन्ट कलेक्शन अण्डर द केयर ऑफ द एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल', भाग 5, संख्या 4082, पृष्ठ 714-715, मातृका क्रमांक जी-9967)*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

3. उपर्युक्त सूची में पृष्ठ 718-723 पर एक अन्य मातृका की सूचना दी गई है जो क्रमांक 4084 और संख्या 4077 वाली है। यह ताड़पत्रीय मातृका नेवारी लिपि में लिखी गई है। इसमें शिवधर्म को मिलाकर नौ अन्य ग्रन्थ भी है, इनमें से छह ग्रन्थ पूर्वानुसार मातृका जी-3852 के ही है जबकि सातवाँ ग्रन्थ 'वृषसारसंग्रह' और आठवें-नवें ग्रन्थ का नाम 'ललितविस्तर' है। मातृका जी-4077 में आठवें ग्रन्थ ललितविस्तर में जो परवर्ती पुष्पिका है, उसमें लिखा है कि कुलपुत्र रत्नसिंह द्वारा यह प्रतिलिपि संवत् अ५प अर्थात् नेवारी संवत् 156 अर्थात् 1036 ई. में तैयार की गई है। यह पद्मभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्रीलक्ष्मीकामदेव के शासनकाल (विजय राज्ये) में लिखी गई थी। इस प्रकार यह लगभग एक हजार वर्ष पुरानी मातृका मानी जा सकती है।

4. हरप्रसाद शास्त्री ने नेपाल के दरबार पुस्तकालय में इसकी एक मातृका होने की सूचना दी है। *(कैटलॉग ऑफ पामलीव एण्ड सेलेक्टेड पेपर मैन्यूस्क्रिप्ट बिलोंगिंग टू द दरबार लाइब्रेरी, नेपाल, पृष्ठ 128-129, संख्या 1376)* यह अधूरी मातृका है और इसमें केवल शान्त्याध्याय ही आया है। यह नेवारी लिपि में लिखी गई और नेवारी संवत् 522 तद्नुसार 1401 ई. में लिखी गई है।

5. इसकी एक प्रतिलिपि राजेन्द्रलाल मित्रा को मिली थी जो बंगाली लिपि में थी। *(नोटीसेज ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट्स, भाग 6, पृष्ठ 272-274, संख्या 2208)* इसमें शिवधर्म के साथ शिवधर्मोत्तर की भी प्रतिलिपि की गई है।

6. ए. सी. बर्नेल को इस ग्रन्थ की एक मातृका तंजावुर के सरस्वती महल पुस्तकालय में मिली जो ग्रन्थलिपि में थी। *(क्लासिफाइड इण्डेक्स टू द संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट इन द पैलेस एट तंजावुर, पृष्ठ 138)*

इस प्रकार 'शिवधर्म' की मातृकाएँ उत्तर से लेकर पूर्व और दक्षिण तक सुलभ होती है। कहीं आधी-अधूरी है तो कहीं पूर्ण। कहीं इसके अध्याय की उपयोगिता को देखते हुए सम्बन्धित अध्याय को ही लिपिकृत किया गया भी मिलता है। पुराणकारों ने इसके अंशों को उद्धृतकर अपने ग्रन्थ को प्रतिष्ठा देने का प्रयत्न किया है।

ग्रन्थ का रचनाकाल :

पुराणों और उपपुराणों के रचनाकाल और सम्पादनकाल को निश्चित करना बहुत कठिन माना जाता है। व्यास और मुनि परम्परा में होने से इनके रचनाकारों ने

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कभी श्रेय लेने का प्रयास नहीं किया। उन्होंने अपने नाम, स्थान और काल तक के सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं दी है। ऐसा लिखे जाने के कई खतरे थे और ग्रन्थ को परवर्ती माना जा सकता था। पुराणों को पुरातन सिद्ध करना ही उचित समझा जाता था। निरुक्तकार का मत है— पुरा नवं भवति, प्राचीनमपि यन्नवं भवति तत्पुराणम्। *(निरुक्त 3, 19)* और पुराणों का मत है— यस्मात् पुरा ह्यनतीदं पुराणं तेन तत्स्मृतम्। *(वायु. 1, 203)*, ब्रह्माण्डपुराणकार का मत है— यस्मात् पुरा ह्यभूच्चैतत्पुराणं तेन स्मृतम्। *(ब्रह्माण्ड. 1, 1, 173)*, मत्स्यपुराणादि का मत है— पुरातनस्य कल्पस्य पुराणानि विदुर्बुधाः। *(पा. सू. 4, 3, 23)* पद्मपुराण में स्पष्ट कहा है— पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन स्मृतम्। *(पद्म. 9, 2, 53)* यह परम्परा पुराणों ही नहीं, महाकाव्यों के सम्बन्ध में भी ज्ञेय है।

एच. एच. विल्सन, एफ. ई. पार्जीटर, बर्नेल, थियोडोर आफ्रेख्ट जैसे विदेशी विद्वानों को भी पुराणों के कालक्रम को लेकर अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। भारतीय विद्वानों में इस तरह का अध्ययन करने वालों में डॉ. राजेन्द्रचन्द्र हाजरा का नाम शीर्ष पर लिया जाता है जिन्होंने 'स्टडीज़ इन द पुराणिक रिकॉर्ड ऑफ हिन्दू राइट् एण्ड कस्टम्स' और 'स्टडीज इन द उप पुराणाज़' पुस्तकों में पुराणों के कालक्रम पर पर्याप्त विचार किया गया है। कुछ पुराणों, उपपुराणों पर प्रो. सुरेशचंद्र कांटेवाला ने भी विचार किया है।

हाजरा ने शिवधर्म को एक शास्त्रस्वरूप मानते हुए उपपुराण के रूप में 1000 ई. से पूर्व की रचना स्वीकृत किया है। इसके मूल में उनका विचार है कि इसमें बाणभट्ट के हर्षचरित का आरम्भिक श्लोक आया है—

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे॥

हाजरा का विचार है कि इस श्लोक के कारण यह सम्राट हर्षवर्धन के पूर्व की रचना नहीं हो सकती है। हर्ष का समय विद्वानों ने 606 से 648 ई. तक स्वीकृत किया है। ऐसे में यह 7वीं सदी के बाद की रचना सिद्ध होती है। बाणभट्ट अपने कुल से शिवपूजक था। उसने अनेकत्र शिव की आराधना सूचक वाक्यों और श्लोकों का प्रणयन किया है। कादम्बरी, हर्षचरित, चण्डीशतक और पार्वतीपरिणय में यह लक्षित होता है। इनके अतिरिक्त उसने शिवशतक अथवा शिवस्तुति की रचना भी की थी, जिसके कुछ पद्य स्फुट संग्रहों में मिलते हैं। *(चण्डीशतक, जोधपुर, 1968 ई., गोपालनारायण बहुरा की भूमिका, पृष्ठ 1-2)*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कादम्बरी के मंगलाचरण में त्रिगुणात्मक अज की स्तुति के उपरान्त बाण शिव का स्तवन करता है —

जयन्ति बाणासुरमौलिलालिताः दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः।
सुरासुरधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदंस्त्र्यम्बकपादपांसवः॥

(कादम्बरी, मंगलाचरण)

इसके अन्तःसाक्ष्यों पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि शिवधर्मपुराण में 'स्थाणेश्वर' या 'स्थाण्वीश्वर' का उल्लेख है जो कि हर्षवर्धन की राजधानी था और तब तक शिव के एक तीर्थ के रूप में ख्यातिलब्ध हो चुका था। वहाँ 7वीं सदी में शिवपूजा का प्रचार घर-घर था : गृहे-गृहे भगवानपूज्यत खण्डपरशुः। (उच्छ्वास 3, 100) वहाँ पाशुपतधर्म के प्रचार का बाण ने बड़ा सजीव चित्र खींचा है। शिवभक्त गूगल जलाते थे। (उपर्युक्त 100, 103, 153) शिव को दूध से स्नान करवाया जाता था : क्षीरस्नपन। (उपर्युक्त 56) और पूजा में बिल्वपल्लव चढ़ाए जाते थे। शिवपूजा के अन्य साधनों में सोने का स्नपन कलश, अर्घपात्र, धूपपात्र, पुष्पपट्ट : यत्र वस्त्रेषु पुष्पाणि सूत्रैः क्रियन्ते स पुष्पपट्टः। (शंकर टीका 100), यष्टिप्रदीप, ब्रह्मसूत्र और शिवलिंग पर चढ़ाए जाने वाले मुखकोश प्रधान थे। *(हर्षचरित का सांस्कृतिक अध्ययन : वासुदेवशरण अग्रवाल, पृष्ठ 56)* शिव के नाम पर ही यह प्रदेश श्रीकण्ठ कहा जाता था। हालांकि बाण ने अन्यत्र इस नाम वाले नाग के नाम पर भी उक्त प्रदेश के नामकरण की बात उसी के मुँह से कहलाई है।

शिवोपासकों, भक्तों द्वारा गुगल का प्रयोग करने का जिक्र प्रस्तुत पुराण में आया है, बाणभट्ट के विवरण से भी ऐसा विदित होता है कि शिवभक्त गुगल जलाया करते थे। यहाँ तक कि सिर पर भी गुगल की बत्ती जलाकर भक्तगण अपना मांस और हड्डी को जला दिया करते थे— दग्ध गुग्गुलवः रौद्राः, और— शिरोर्घधृत दग्ध गुग्गुल सन्ताप स्फुटित कपालास्थि। *(हर्षचरित द्वितीय उच्छ्वास 11 एवं तृतीय उच्छ्वास 103, 153)*

उपर्युक्त स्थाण्वीश्वर के वर्णन में बाण ने तृतीय उच्छ्वास में जो कुछ लिखा है, वह शिवधर्मपुराण से तुलनीय है कि तब चारों और पौंडों के खेत थे। खूब ईख होता था। जंगल गोधन से भरापूरा रहता था और गायों के गले में बँधी टल्लियाँ बजती रहती थीं। सभी ओर सुन्दर जलाशय और महाघोषों अर्थात् बड़े-बड़े पशुगोष्ठों से दिशाएँ भरी-पूरी दिखाई देती थीं। यद्यपि हर्ष के समय दुरित और अधर्म, आधि और व्याधि, दुर्दैव और ईति, अपमृत्यु तथा उपद्रव नहीं थे किन्तु इनसे भय अवश्य रहता था।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इसीलिए लोग उपाय के रूप में व्यपोहन स्तवादि का पाठ करते रहे होंगे, जो कि इस पुराण में आया है। हवन, यज्ञ, महादान और वेदघोष की धूम मची रहती थी। वृषोत्सर्ग होता था और तब वाद्य वादन करने की परम्परा थी। यह मध्यदेश का वर्णन है जिसका उल्लेख इक्षु-शालि-गो-महिषी सम्पन्न मध्यदेश के रूप में विनय पिटकादि बौद्ध ग्रन्थों में भी मिलता है।

इसी प्रकार हर्षचरित कहता है कि वहाँ मुनियों के तपोवन थे। मन्दिरों के निर्माण के लिए टाँकियों से पत्थर गढ़े जाते थे। संगीतशालाएँ थीं, विद्यार्थियों के गुरुकुल, विदग्धों की विट्-गोष्ठियाँ, वैदेहक या व्यापारी आदि थे। पास के प्रीतिकूट नामक ग्राम जिसे दधीचि और सरस्वती के पुत्र सारस्वत ने बसाया और जहाँ च्यवनाश्रम की सीमा थी, बाण का जन्मस्थान था। ब्राह्मणों की बहुलता के कारण बाण ने उसे ब्राह्मणाधिवास लिखा है। इस काल तक भारतीयों का सात सागरों में सात द्वीपों वाली पृथ्वी का परिचय द्वीपान्तरों के साथ सम्पर्क के कारण हो चुका था, ऐसे में जहाँ सप्तसागर दान की परिकल्पना कर ली गई थी, वहीं साहित्य में 'चतुःसागरा' पृथ्वी के लिए इस प्रकार का सम्बोधन दिया जाने लगा था। वायुपुराण में आया है : यैरियं पृथिवी सर्वा सप्तद्वीपसमन्विता॥ सप्तसमुद्रा करवती प्रतिवर्षं निवेशिता। और, सप्तद्वीपे तु वक्ष्यामि जम्बुद्वीपानन्तरम्। *(वायु 33, 4-5 एवं 31)* बाण ने भी मन्दाकिनी के लिए सप्तसागर राजमहिषी का उल्लेख किया है। शिवधर्मपुराण में भी आया है—

सप्तद्वीपसमुद्रायाः क्षितेरधिपतिर्भवेत्॥ *(शिवधर्म 3, 71; 8, 22)*

इक्कीस कुलों-पीढ़ियों की मान्यता

व्यक्ति के इक्कीस कुलों की मान्यताएँ पुराणकाल में कुछ अधिक ही प्रचलित थीं। शिवधर्मकार ने शिवधर्म के प्रभाव से शैव व्रती के इक्कीस कुलों के उद्धार की अवधारणा को प्रश्रय दिया है। पुराण में कुछ सोलह बार इस संख्यात्मक शब्द का प्रयोग हुआ है। ये कुल माता के कुल, पिता के कुल और पत्नी के कुल को मिलाकर गिने गए हैं— मातृतः पितृतश्चैव यतश्चाद्वहते स्त्रियम्। कुलैकविंशमुत्तार्य$_{21}$ रुद्रलोके महीयते॥ *(उपर्युक्त 3, 69)* इस गणना के अनुसार माता के कुल से नाना, दादा नाना और दादामह नाना तथा स्वयं, पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र— इस प्रकार 7 कुल होते हैं, पुनः पिता के कुल से पिता, पितामह और प्रपितामह सहित स्वयं, पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र— इस प्रकार 7 होते हैं तथा पत्नी के कुल से श्वसुर, दादा श्वसुर, दादामह श्वसुर होते हैं और फिर स्वयं, पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र— इस प्रकार 7 होते हैं। इनको मिलाकर कुल 21 पीढ़ियाँ होती हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कहीं-कहीं पूर्वा-पर अर्थात् पूर्व के और बाद के कुलों के रूप में भी इनकी गणना की गई है— कुलं तस्योद्धरत्येव दशपूर्वं दशापरम्॥ *(10, 13)* इस गणना से अपने पूर्व की 10 और बाद की 10 तथा स्वयं को मिलाकर 21 संख्या होती है किन्तु अग्नि इत्यादि पुराणों में प्रपितामह और प्रपौत्र से अधिक सम्बन्धों की संज्ञाएँ नहीं मिलती हैं। ऐसे में पूर्व में हो चुके अज्ञात पूर्वजों और बाद में होने वाले अज्ञात वंशजों की परिकल्पना भी की गई है। इक्कीस की संख्या संज्ञाकोशों में औचित्यभेद (औचित्यविचार चर्चा 8-10), ताल (संगीत ग्रन्थ), दृश्यकाव्य (अग्निपुराण), नक्षत्र (बृहत्संहिता, ज्योतिषरत्नमाला), योग (वशिष्ठसंहिता, रत्नकोश) सहित संसार चक्र विनिर्मुक्ति लक्षण *(उत्तराध्ययन सूत्र 31, 10)* के रूप में मिलती है। इस प्रकार इक्कीस की संख्या का महत्व रहा है, पुराणकार ने इसे कुलों के रूप में स्वीकार किया है।

उभयमुखी दान की मान्यता :

उभयमुखी के दान की परम्परा इस काल की विशिष्ट परम्परा थी। यद्यपि किसी प्राचीन प्रतिमादि में इस प्रकार का प्रमाण नहीं मिला है, लगता है यह परम्परा प्राचीन रही हो। याज्ञवल्क्यस्मृति जो लगभग इसी काल की रचना मानी जाती है, में इस दान की महिमा आई है। शिवधर्मपुराण में इसी दान के फलस्वरूप सात द्वीपों वाली पृथ्वी के दान के बराबर फल मिलने का वर्णन आया है—

यो दद्यादुभयमुखीं शिवायातीव शोभनम्॥
सप्तद्वीपां क्षितिं दत्वा यत्पुण्यं तदवाप्नुयात्। *(शिवधर्म. 10, 228)*

यही श्लोक खण्डित रूप में भविष्यपुराण के ब्राह्मपर्व में भी मिलता है। उभयमुखी गाय वह होती है जो प्रसूत होने वाली हो, बछड़े का आधा सिर और दो पाँव बाहर दिखाई दे रहे हों। वराहपुराण में भी उभयमुखी के दान का माहात्म्य आया है। इस प्रकार प्रारम्भिक पुराणादि में यह वर्णन रहा है, भविष्यपुराण ने पूर्ववर्ती पाठ को ही उठाया है।

अट्ठाइस करोड़ देवताओं की मान्यता :

पुराण के रचनाकाल में अठाइस करोड़ देवताओं की मान्यताएँ थी— अष्टाविंशद्देवकोट्यो रोमकूपेषु संस्थिताः॥ *(शिवधर्म. 8, 82)* यह बाद में तैंतीस करोड़ मान ली गई, कहीं-कहीं छत्तीस करोड़ संख्या भी मिलती है। पद्मपुराण के उत्तरखण्ड में देवांगनाओं और अपने-अपने गणों के साथ तीनों ही लोकों में विद्यमान देवताओं की संख्या तैंतीस करोड़ बताई गई है— सदारा विबुधाः सर्वे स्वानां-स्वानां गणैः सह।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

त्रैलोक्ये तत् त्रिंशत्कोटिसंख्या यथा भव॥ *(पाद्मोत्तरखण्ड, शब्दकल्पद्रुम, भाग द्वितीय, पृष्ठ 742)* मध्यकालीन एकलिंगपुराण में यही संख्या आई है— तत्र देवास्त्रयोस्त्रिंशत्कोटयो ऋणमोचने॥ *(एकलिंगपुराण 16, 13)*

लिंगपुराण में अट्ठाइस करोड़ रुद्रों का वर्णन मिलता है। एक स्थल पर तैंतीस देवताओं का वर्णन है जिनमें आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य और दो अश्विनी बताए हैं, ये यज्ञीय देवता हैं। इन देवताओं के पुत्र-पौत्र के रूप में तैंतीस सौ और तैंतीस हजार देवताओं को चन्द्रमा का पान करने वाला कहा गया है। *(लिंग. पूर्व. 56, 10-14)* वाल्मीकि ने तैंतीस देवताओं की ही गणना की है जिनमें इन्द्रादि सम्मिलित थे— तच्छृणवन्तु त्रयस्त्रिंशद् देवाः सेन्द्रपुरोगमाः। *(वाल्मीकीय रामायण 2, 11, 13)* इन देवताओं के भेद-प्रभेद रूप ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव— इन तीन, तीन सौ तथा तीन हजार तीन देवताओं का उल्लेख भी आया है। *(उपर्युक्त 102, 17-22)* तैंतीस तन्तु देवता ही तैंतीस अहर्गण है। एक हजार गौओं से ही तैंतीस अहर्गण बनते हैं। तीस से भाग देने पर एक हजार अहः के तैंतीस अहर्गण हो जाते हैं। मार्कण्डेय पुराण *(82, 11-12)* में इस प्रकार की गणित आई है जो वेद की अहर्गण विद्या के निकट है।

शिव के साथ अट्ठाईस की संख्या का विशेष जोड़ देखने को मिलता है। लिंगपुराण में अट्ठाइस व्यास, अट्ठाइस योगाचार्यों की नामावलि मिलती है। *(लिंग. पूर्व. 7, 14-20 एवं 30-34)* सात पुण्यलोकों के नीचे माया तक अट्ठाइस कोटि के नरकों की मान्यता का भी उक्त पुराण में प्रतिपादन किया गया है। *(उपर्युक्त 53, 44)* जबकि वायुपुराणकार का मत है कि यह एक मन्वन्तर के देवताओं की संख्या है : मन्वन्तरे तथैक। वहाँ कहा गया है कि जो बीत गया है, वह सनातन कल्प था, वह हजार चतुर्युग के अन्त में मन्वन्तर परिमित ब्राह्मदिवस के अन्त के साथ बीत गया। उस समय कल्प के अवसान होने पर और प्रलयकालीन दाहकाल के आ जाने पर जितने विमान विहारी देवता, नक्षत्र, ग्रह, तारामण्डल सूर्य व चन्द्रादि ग्रह थे, वे सुकृतात्मा देवादि मिलाकर अट्ठाइस करोड़ थे : क्षीणे कल्पे तदा तस्मिन्दाहकाले ह्युपस्थिते। तस्मिन्कल्पे तदा देवा आसन्वैमानिकास्तु ये॥ नक्षत्रग्रहतारास्तु चन्द्रसूर्यग्रहाश्च ये। अष्टाविंशतिरेवैताः कोट्यस्तु सुकृतात्मनाम्॥ *(वायु. 7, 15-16)* तैंतीस की संख्या वाले कल्पों के नाम लिंगपुराण में आए है जो अव्यक्त ब्रह्मा के बताए गए हैं— भवोद्भव, तप, भव्य, रम्भ, क्रतु, ऋतु, वह्नि, हव्यवाह, सावित्र, शुद्ध, उशिक, कुशिक, गान्धार, ऋषभ, षड्ज, मज्जालीय, मध्यम, वैराज, निषाद, मुख्य, मेघवाहन, पञ्चम, चित्रक, आकूति, ज्ञान, मन, सुदर्श, बृंह, श्वेतलोहित, रक्त, पीतवासा, असित एवं सर्वरूपक। *(लिंग. पूर्व 4, 45-49)* ऐसा

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लगता है कि कालक्रम से जनता की अभिवृद्धि के साथ-साथ देवताओं की संख्या भी बदलती रही है। शिवधर्मपुराण के काल तक अट्ठाइस करोड़ संख्या ही प्रचलित रही होगी। अतः यह वायुपुराण की मान्यता का अनुवर्ती पुराण ज्ञात होता है।

शिवाश्रम, यति और शिवयोगियों का उल्लेख :

शिवधर्मपुराण में शिवाश्रम के यतियों, शिवयोगियों का उल्लेख आया है। हर्षचरित में आए प्रसंग इस सम्बन्ध में तुलनीय है। वहाँ बिल्ववाटिका में ठहरे शैवसाधक भैरवाचार्य के मुख्य शिष्य परिव्राट्, जिसका नाम टीटिभ मस्करी साधु था, का जो चित्र बाणभट्ट ने खींचा है, उससे तत्कालीन शैवों की वेशभूषा तथा स्वरूप का अवबोध हो सकता है : उसकी भुजाएँ घुटनों तक थीं। अंग लटे हुए होने पर भी हड्डियां मोटी थीं। सिर चौड़ा, माथा ऊंचा-नीचा था। गालों में गड्ढे पड़े हुए थे। पुतलियां शहद की बूँद की तरह पीलापन लिए थीं। नाक कुछ टेढ़ी थी। कान की एक पाल लम्बी थी। अधर घोड़े के निचले होठ की तरह लटका हुआ था। लम्बी ठोड़ी के कारण मुँह और भी लम्बोतरा जान पड़ता था। उसके कन्धे से लटकता हुआ लाल योगपट्ट सामने वैकक्षक की तरह पड़ा हुआ था। शरीर पर गेरुए कपड़े का उत्तरासंग था, जिसकी गाँठ छाती के बीच में लगी हुई थी : हृदयमध्य निबद्ध ग्रन्थिना धातु रसारुणेन कर्पटेन कृतोत्तरासङ्गम्। (101)

इसी प्रकार एक सिरे से बायें हाथ में पकड़े हुए बाँस के दूसरे सिरे से कन्धे के पीछे लटकती हुई झोली (योगभारक 102) थी। झोली का ऊपरी सिरा बालों की बटी हुई रस्सी से बँधा था। उसी में मिट्टी छानने के लिए बाँस की पतली तीलियों की बनी चलनी बँधी थी। (सम्भवतः यह स्नानोपयोगी भस्म को छानने के लिए प्रयोग में लाई जाती थी) बाँस के सिरे पर कौपीन लटका था। झोली के भीतर खजूर के पत्तों के पिटार में भिक्षा-कपाल रखा था : खर्जूरपुट समुद्गगर्भीकृत भिक्षाकपाल। (101) लकड़ी के तीन फट्टों को जोड़कर बने हुए त्रिकोण के भीतर कमण्डलु रखा हुआ था और उस त्रिकोण के तीन फट्टों में तीन डण्डियाँ लगी थीं जिनसे वह बाँस लटका हुआ था : दारव फलक त्रयत्रिकोण त्रियष्टि निविष्ट कमण्डलुना। (101) झोली के बाहर खडाऊँ लटक रही थी। कपड़े की मोटी किनारी की डोरी से बँधी पोथियों की पूली योगभारक में रखी हुई थीं : स्थूलदशासूत्रनियन्त्रित पुस्तिका पूलिकेन। उसके दाहिने हाथ में वेत्रासन (बेंत की चटाई) थी। *(हर्षचरित का सांस्कृतिक अध्ययन, पृष्ठ 57)*

हर्षचरित में बिल्ववाटिका का जो प्रसंग आया है, वह सिद्ध करता है कि वाटिका शक्त्यायतन के उत्तर में और सरस्वती किनारे पर स्थित थी और उसमें

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवसाधक आसन लगाकर बैठते थे। शिवधर्मपुराण में शिववाटिका बनाने का पुण्य लिखा गया है। इस समय तक अष्टपुष्पिका द्वारा शिवार्चन होता था। 'वैखानस' शब्द पारिभाषिक माना जा सकता है, इस काल में यह वृत्त्यान्तर्गत था। वैखानसवृत्ति धारण करके जनक द्वारा चन्द्रद्वीप के तपोवन में कुछ अवधि व्यतीत करने का वर्णन उत्तररामचरित के चौथे अंक में आया है। शिवधर्मपुराण में भी यह शब्द आया है : शिववैखानसो ज्ञेयः शिवार्चनपरो भवेत्॥ निवृत्तः सर्वरागेभ्यः शिवध्यानरतः सदा। इसी प्रकार शिव की प्रसन्नता के लिए कृष्णपक्ष की चतुर्दशी का वर्णन प्रस्तुत पुराण में आया है, हर्षचरित का भैरवाचार्य इसी दिन को साधना के लिए उचित बताता है। साधना के लिए शैवविधि से दीक्षित होना पड़ता था। पुष्यभूति ने यह दीक्षा ली थी।

हर्षचरित में तत्कालीन शिवसाधकों के स्वरूप और क्रियाओं का वर्णन मिलता है। बाणभट्ट के अनेक शब्दों का प्रयोग प्रस्तुत ग्रन्थ में हुआ है। शैव मतावलम्बियों के स्वरूप और साधनाओं के जो चित्र बाणभट्ट ने खींचे हैं, उनसे शिवधर्मपुराण में प्रयुक्त शब्दावली के अर्थ को आत्मसात करने में सुविधा मिलती है। भैरवाचार्य का जो वर्णन बाण ने किया है, शैवाचार्यों का स्वरूप प्रकट करने में समर्थ है। वह बहुत से साधुओं से घिरा रहता था, प्रातः स्नान और अष्टपुष्पिका द्वारा शिवार्चन करता था। अग्निहोत्र से निवृत्त होकर भस्म की लकीर के घेरे में बिछे बाघचर्म पर बैठता था, काला कम्बल ओढ़े रहता था। उसके सिर पर जटाएँ रुद्राक्ष और शंख की गुरियों से बँधी रहती थी। ललाट पर भस्म लगी रहती थी। कान की पालियों में स्फटिक के कुण्डल लटका करते थे : प्रलम्ब श्रवणपाली प्रेङ्खितस्फटिक कुण्डल। (103) दाहिने हाथ में रुद्राक्ष की माला और दूसरे हाथ में लोहे के कड़े में पिरोया गया शंख का टुकड़ा था जिसमें जड़ी-बूटी, मन्त्र और सूत्र के अक्षर लिखकर बाँधे हुए थे। वक्ष पर दाढ़ी-कूर्चकलाप लहराती थी। वह क्षौम का कौपीन धारण करता था, वह पर्यंक-बँध में बैठा रहता था और टाँगों को योगपट्ट से कसकर बाँधे रखता था। पैरों के पास सफेद खड़ाऊ का जोड़ा रखा रहता था। पास में बैसाखी की दण्ड था जिसके सिरे पर टेढ़ी लोहे की कीथ जड़ी हुई थी, मानो अंकुश हो : शिखरनिखातकुब्जकालायस कण्टकेन वैणवेन विशाखिकादण्डेन। *(104, तत्रैवोद्धत)*

इस काल में पुण्ड्र देश के बने हुए दुकूलपट्ट बहुत प्रसिद्ध थे। यह उत्तरी बंगाल, सुम्ह या राढ़ का क्षेत्र था, यद्यपि पाठान्तर से वौंड्र या कपास के बने हुए वस्त्र भी ज्ञात होते हैं किन्तु पुण्ड्र देश के दुकूलपट्ट थान के रूप में आते थे और उनसे श्वेत वस्त्र तैयार किए जाते थे। वायुपुराण जो कि शैवपुराण माना जाता है, का वाचक सुदृष्टि

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यही पोशाक धारण करता था। (हर्षचरित तृतीय उच्छ्वास) यह वस्त्र बहुत कम लोगों को ही मिल पाता था, ऐसे में इसके वस्त्रों के दान का माहात्म्य लिखा गया है।

पुस्तक की रचना और ब्राह्मीलिपि का साक्ष्य :

शिवधर्म के रचनाकाल तक ग्रन्थ के लिए पुस्तक शब्द प्रचलन में आ चुका था। यह समय बाणभट्ट का ही था। हालांकि मृच्छकटिकं में पोत्थअ शब्द (पृष्ठ 76, 101) सम्भवतः पुस्तक के सन्दर्भ में ही आया है जो साहित्यिक दृष्टि से पुस्तक शब्द का प्रथम प्रयोग माना जाता है। शिवधर्म के काल में पुस्तकों के दान की महिमा लिखी जाने लगी थी : शिवज्ञानाभियुक्ताय यो दद्यात्पुस्तकं महत्॥ (शिवधर्म. 12, 97) इस काल तक तालपत्र पर काली और लाल स्याही का लिखने के लिए प्रयोग चलन में था— धूमरकालक्तकाक्षरतालपत्र कुहकतन्त्र मन्त्र पुस्तिका संग्राहिणा। *(कादम्बरी 226)* हरे पत्तों के रस में कोयला घोटकर एक प्रकार की स्याही बनाई जाती थी और उसका लोग लिखने के लिए प्रयोग करते थे, जैसा कि बाणभट्ट ने लिखा है— हरितपत्ररसाङ्गारमषीमलिन शम्बूकवाहिना। *(कादम्बरी, उपर्युक्त)*

इस काल तक ब्राह्मीलिपि का प्रयोग होता था, मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल के आसपास यह लिपि अपने किंचित परिवर्तित रूप में प्रचलित थी। हालांकि उसे गुप्तलिपि नाम भी दिया गया है। इस पुराण में ब्रह्माक्षरों का स्पष्टतः उल्लेख आया है :

ब्रह्मा ब्रह्माक्षरैर्दिव्यैः लिङ्गं पूजयते सदा। *(शिवधर्म. 3, 29)*

ईसा की प्रारंभिक सदियों में सम्पादित और 308 ई. में चीनी में अनूदित बौद्धग्रंथ 'ललितविस्तर' में उन 64 लिपियों का उल्लेख है जो प्राचीन भारत में व्यहृत थी, उनमें सर्वप्रथम ब्राह्मीलिपि का उल्लेख आता है। *(ललित विस्तर : संपादक पी. एल. वैद्य, पृष्ठ 97-98; अनुवादक शान्तिभिक्षु शास्त्री, पृष्ठ 251-252)* इनके अतिरिक्त जैन ग्रन्थ पन्नवणासूत्र और समवायांगसूत्र में आई अठारह लिपियों में ब्राह्मी का नाम मिलता है। भगवतीसूत्र के आरम्भ में भी बंभी (ब्रह्माक्षर) को नमस्कार किया गया है। इन उल्लेखों के उपरान्त शिवधर्मपुराण में ही ब्राह्मीलिपि या ब्रह्माक्षरों का नामोल्लेख मिलता है, यह महत्वपूर्ण हैं। ईस्वी सन् 668 में बौद्ध विश्वकोश 'फा युअन् चु लिन्' बना जिसमें ललितविस्तर के अनुसार चौसठ लिपियों में सर्वप्रथम ब्राह्मी के उल्लेख के साथ कहा गया है कि लिखने की कला का शोध तीन दैवी शक्ति वाले आचार्यों ने किया, उनमें से सबसे प्रसिद्ध ब्रह्मा है। यह लिपि बाईं ओर से दाहिनी ओर पढ़ी जाती है। ब्रह्मा ने यह लिपि देवलोक से पाई। *(भारतीय प्राचीन लिपिमाला : गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, द्वितीय अध्याय)*

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ऐसे में यह लिपि दिव्याक्षरों वाली सिद्ध होती है जैसा कि शिवधर्मपुराण में आया भी है। यह लिपि इस देश की स्वतन्त्र और सार्वदेशिक लिपि होने से जैन और बौद्धों के ग्रन्थ भी उसी में लिखे जाने लगे और इसी से उन्होंने लिपियों की नामावलि में इसको प्रथम स्थान दिया, जैसा कि ओझा का मत है किन्तु शिवधर्म से ज्ञात होता है कि इसमें पुराणों जैसे संस्कृत ग्रन्थों का भी लेखन हुआ है। इस प्रकार यह ग्रन्थ गुप्तकाल से पूर्व अस्तित्व में आ गया होगा। फिर, यह भी है कि इस ग्रन्थ में नक्षत्रों की गणना कृतिकादि से की गई है। विष्णुपुराण, महाभारतादि ग्रन्थों में कृतिकादि से ही नक्षत्रों की गणना मिलती है। नक्षत्रों का अश्विन्यादि क्रम वराहमिहिर (505-587 ई.) ने किया था : क्रमशोऽश्विन्यादीनां। *(बृहत्संहिता नक्षत्रकर्मगुणाध्याय 98, 2)* हालांकि उसने भी अनेक अध्यायों, यथा कूर्मविभागाध्याय, नक्षत्रव्यूहाध्यायादि में कृतिका से ही गणना की है क्योंकि ईसापूर्व रचित 'गर्गसंहिता' के मतों को स्वीकारना उसकी बाध्यता रही है। लिंगपुराण में अश्विन्यादि क्रम से गणना की गई है, जो स्पष्ट ही परवर्ती है— अश्विनी भरणी चैव कृतिका रोहिणी तथा...। *(लिंग. 82, 77 इत्यादि)*

आलोच्य पुराण में नक्षत्रों की स्थिति दिशानुसार बताई गई है, यह कूर्मचक्र का परिचायक है। गर्ग ने कृतिकादि से ही तीन-तीन नक्षत्रों के एक-एक वर्ग से भारतवर्ष को मध्य स्थित कल्पना करते हुए तथा अन्य देशों को पूर्वादि क्रम में रखकर नौ भागों को किया था : कृत्तिकाद्यैस्त्रि नक्षत्रैर्भवगैर्नवभिः क्षितिः। कल्पिता मध्यदेशादौ प्रागादिक्रम योगतः॥ कृतिकाद्यस्त्रिनक्षत्रो मध्यदेशे गणो यदा। पापैरुपहतो हन्ति मध्यदेशाखिलांस्तदा॥ रौद्राधिको हन्ति पूर्वां सर्पाद्यः पूर्वदक्षिणाम्। आर्यम्णाद्यस्तथा याम्यां स्वात्याद्यो दक्षिणापराम्॥ ज्येष्ठाद्यः पश्चिमामाशां वैश्वाद्यश्चापरोत्तराम्। वारुण्याद्यो हन्ति सौम्यां पौष्णाद्यः शूलिनो दिशम्॥ *(सविवृत्तिबृहत्संहिता 14, 1 पर उद्धृत)*

तथापि इस पुराण में मेष-वृषभादि राशियों का उल्लेख भी आया है जो कि गुप्तकाल तक वर्तमान रूप प्राप्त महाभारतादि ग्रन्थों में नहीं मिलता है। पुराणों में राशियों का उल्लेख कदाचित सर्वप्रथम मार्कण्डेयपुराण में हुआ है किन्तु उसमें भी नक्षत्रों की गणना कृतिकादि से की गई है। *(तत्रैव 55, 6-53 एवं 55, 75-79)* ऐसे में जिस काल में मार्कण्डेय जैसे पुराणों का प्रणयन हुआ, उसके आसपास ही शिवधर्म भी अस्तित्व में आ चुका था किन्तु इसमें कृतिकादि तीन-तीन नक्षत्र पूर्वादि दिशानुमत है जबकि मार्कण्डेयपुराण में मध्य देशस्थ बताए गए हैं। यही स्थिति राशियों की भी हैं। राशि विषयक मान्यताओं का मेसोपोटामिया में पल्लवन और भारत में प्रवेश और प्रयोग तीसरी-चौथी शताब्दी कल्पित किया जा सकता है, यह फलित के विकास की

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

देन है, यूनान से रोम में फलित ज्योतिष लगभग ईसापूर्व द्वितीय सदी में पहुँचा, तभी से यूनान एवं रोम के घर-घर में राशियों की चर्चा होने लगी थी। कैटो ने अपने कृषि सम्बन्धी ग्रन्थ में चाल्डियनों के ज्योतिषज्ञान के विरुद्ध रूपरेखा प्रस्तुत की और 139 ईसापूर्व एक आदेश निकाला जिससे चाल्डिया के लोग इटली से निर्वासित कर दिए गए। पहली सदी में हुए पेट्रोनियस ने अपने 'सैटिरिकन' उपन्यास में रात्रि के स्नेहभोज के वर्णन में एक ऐसे थाल का वर्णन किया है जिसमें बाहरों राशियों के आकार बनाए गए थे और प्रत्येक के साथ एक विशेष व्यंजन रखा गया था, जैसा कि लेखक विल डूराँ ने 'सीजर एण्ड क्राइस्ट' में उल्लेख किया है। *(धर्मशास्त्र का इतिहास : पाण्डुरंग वामन काणे, चतुर्थ भाग, पृष्ठ 273)*

ऋग्वेद में यद्यपि ऋत के एक ऐसे चक्र का संकेत आता है जिसमें बारह तीलियाँ बताई गई हैं, इस चक्र का निर्माण राजा वरुण द्वारा करना बताया गया है जिसमें सूर्य परिक्रमा करता हुआ थकता नहीं है— उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ। *(ऋग्वेद 1, 24, 8)* द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्ति चक्रं परि द्यामृतस्य। *(ऋग्वेद 1, 164, 11)* किन्तु, यहाँ बारह राशियों की मान्यता स्पष्ट नहीं है। वैसे राशियों की आकृतियों की पूरी सूची बेबिलोन में लगभग ईसापूर्व छठवीं शताब्दी में प्रचलित हो गई थी और ईसापूर्व तीसरी शताब्दी से बेबिलोन व भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध था, ऐसे में यह माना जाता है कि सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात भारत ने, जहाँ नक्षत्र ज्योतिष का विकास हो चुका था, बेबिलोनी स्मारक चिह्नों पर अंकित राशियों की आकृतियों को लेकर अपने अनुरूप बना लिया था। यह पहचान तो ईसापूर्व पहली सदी में ही हो चुकी थी क्योंकि बोधगया के सीमा स्तम्भों पर वृष से तुला, धनु एवं मकर की आकृतियां उत्कीर्ण मिली है, तथापि यह अवश्य है कि भारतीय दैवज्ञों ने जब मेषादि राशियों का प्रयोग आरम्भ किया तो वे राशियों की गणना में कृतिकादि नक्षत्रों की अपेक्षा अश्विन्यादि नक्षत्रों से गणना करने लगे थे : मेषाश्विप्रथमा नवर्क्षचरणाश्चक्रस्थिता राशयो राशिक्षेत्रगृहर्क्षभानि भवनं चैकार्थ सम्प्रत्ययाः॥ *(बृहज्जातक 1, 4)* शिवधर्मपुराण में कृतिका से गणना का मिलना यह सिद्ध करता है कि पारम्परिक कृतिकादि नक्षत्र से गणना करने की परिपाटी की लम्बे समय तक अनदेखी नहीं हुई होगी और वह भी पूर्वादि दिशा स्थिति के अनुसार की जाती रही थी। बौद्धग्रन्थों में कृतिका, रोहिण्यादि को पूर्वदिशीय बताया गया है जो अपने लोकपालों व अधिष्ठाताओं के साथ हैं। *(ललितविस्तर 1314)*

पुराण में यवन शब्द नहीं आया है किन्तु म्लेच्छ शब्द का प्रयोग हुआ है जिसे

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अभारतीय सन्दर्भ में प्रयुक्त किया गया है और कहा गया है कि जो आठ प्रकार की शिवभक्ति को करता है, वह श्रीमान्, ब्रह्मराज, मुनि, यति और पण्डित के समान कहा जा सकता है— भक्तिरष्टविधा ह्येषा यस्मिन्म्लेच्छेऽपि वर्तते। स विप्रेन्द्रो मुनिः श्रीमान्स यतिः स च पण्डितः ॥ *(शिवधर्म. 1, 29)* वराहमिहिर ने म्लेच्छ शब्द उन लोगों के अर्थ में प्रयुक्त किया है जो अभारतीय थे किन्तु यदि वह ज्योतिष जैसी विद्या का जानकार है तो ऋषि और ब्राह्मण की तरह ही पूज्य होता है— म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्। ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः ॥ *(बृहत्संहिता 2, 30)* भारतीय समाज में यह मान्यता गुप्तकाल के आसपास ही विकसित हुई थी जब यवनों, हूणों, आभीरों ने समूहों के साथ भारत में प्रवेश किया था। वराहमिहिर, सत्याचार्य जैसे दैवज्ञों ने भी यवनों के मत का प्रचारित करना आरम्भ कर दिया था। शकों का भारतीयकरण भी इसी समय के आसपास हुआ था, जैसा कि हरिवंश के बाद भविष्यपुराण संकेत करता है। हालांकि विदेशियों के शासित प्रदेशों और उनके दरबार में धर्मप्रचारकों को भेजकर सांस्कृतिक सम्बन्धों की स्थापना के प्रयास के उल्लेख अशोक मौर्य के काल से मिलने आरम्भ हो जाते हैं। अशोक ने सीरिया के राजा ऐण्टीओकस (अन्तियोग), मिस्र के टालमी द्वितीय (तुरमय), मैसीडोनिया के अन्तिकिन (एण्टिगोनस), सीरिन के मगस (मगा) और इपिरस के अलिकसुन्दर के पास धर्मदूत भेजे थे।

ऋषि, यक्ष, नाग संस्थान :

ऋषियों में काश्यप, गालव, गार्ग्य, महामुनि विश्वामित्र, मनु, दक्ष, वसिष्ठ, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, नारद, भृगु, आत्रेय, भारद्वाज, अंगिरा, वाल्मीकि, कौशिक, कण्व, जाबालि, पुनर्वसु, शालंकायन इत्यादि की गणना की गई है जो पुरानी है जबकि लिंगादि पुराणों में अगत्स्य, वसिष्ठ, अंगिरा, भृगु, काश्यप, नारद, दधीच, च्यवन और उपमन्यु के नाम आए हैं। *(लिंग. 82, 65-66)* शिवधर्म में धनपति यक्षों के स्वरूप और उनके अनेक नाम आए हैं *(6, 200-221)*, यह मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक प्रचलित यक्षपूजा की परम्परा का द्योतक है। अर्थशास्त्र से लेकर गुप्तकालीन स्रोतों में यक्षों की पूजा की परम्परा के कई विवरण मिलते हैं।

पुराण में नागों का वर्णन नागसंस्थान के साथ विशेष रूप से आया है। भारत में नाग पूजा आज तक होती आई है। जातकों, बौद्ध ग्रन्थों में भी अनेक स्थलों पर नागपूजा के साक्ष्य मिलते हैं और उनके प्रमुखों में विरुपाक्ष को पश्चिम दिशा का संरक्षक बताया गया है— तेषां चाधिपती राजा विरुपाक्षेति तं विदुः। स सर्वनागाधिपतिर्वरुणेन

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सह रक्षतु॥ *(ललितविस्तर 1361)* विरुपाक्ष शिव का नाम भी है। विधुर पण्डित जातक के अनुसार नागों की राजधानी का नाम भोगवती था, नागराज की सहधर्मिणी का नाम विमलदेवी था। *(भरहुत स्तूप : अलेक्जेण्डर कनिंघम, पृष्ठ 22)* स्कन्दपुराण के श्रावणमास माहात्म्य में नागकुल का उल्लेख आया है और अनन्त, वासुकि, शेष, पद्मनाभ, कम्बल, कर्कोटक, अश्व, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालीय तथा तक्षक के नाम आए हैं और उनकी माता कद्रू बताई गई है। *(श्रावणमास माहात्म्य 14, 6-8)* उनके वल्मीक के पूजन का भी निर्देश किया गया है और मिलने वाले पुण्य का कथन का वर्णन है : मनोरथांस्तस्य सर्वान्कुरुतः परमेश्वरौ। नागलोके तु तान्भोगान्भुक्त्वा तु विविधान्बहून्॥ ततो वैकुण्ठमासाद्य कैलासं वापि शोभनम् शिवविष्णुगणो भूत्वा लभते परमं सुखम्॥ *(उपर्युक्त 14, 32-33)*

शिवरात्रि व्रतोल्लेख नहीं :

इस पुराण में शिव सम्बन्धी अनेक व्रतों का वर्णन है किन्तु उनके साथ तिथि की जटिलताओं का कोई प्रसंग नहीं मिलता है। यद्यपि अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावस्या जैसी तिथियों के साथ पर्वों, चैत्रादि मासों, संवत्सर पर्यन्त व्रतों का उल्लेख मिलता है किन्तु वार-व्रत जैसी स्थितियाँ इसमें नहीं है। पारणों के विषय में भी कोई वर्णन नहीं मिलता है। नक्तव्रत, चान्द्रायण जैसे स्मृतिकालीन व्रतों का उल्लेख अवश्य है जो प्रारम्भिक व्रतों में गिने जाते हैं। तब तक व्रतों के साथ निर्णय सम्बन्धी उहाओं का समावेश नहीं हुआ था किन्तु इसके तत्काल बाद अग्नि, मत्स्य, विष्णुधर्मोत्तर जैसे पुराण में व्रतों की शृंखलाओं को ही लिखा जाने लगा था। लिंगपुराण के कतिपय व्रतों के वर्णन में शिवधर्मपुराण के मत उद्धृत मिलते हैं।

शिव के व्रतों-उपवासों में शिवरात्रि का कोई वर्णन आलोच्य पुराण में नहीं मिलता है। सम्भवतः तब तक यह व्रत प्रचारित नहीं हुआ होगा। यह व्रत परवर्ती पुराणों की देन है और मध्यकालीन निबन्धों में ही अधिक मिलता है। यह व्रत फाल्गुन, पूर्णिमान्त की गणना से माघ की चतुर्दशी को करने की परम्परा है। इस तिथि को महाशिवरात्रि कहा जाता है। हेमाद्रि (1260-1271 ई.) का मत है कि शिवरात्रि को प्रदोष व्यापिनी चतुर्दशी ग्रहण करना चाहिए, इस रात्रि में जागरण करें और व्रत के बाद पारणा करें। गरुडपुराण *(आचारकाण्ड अध्याय 126)*, स्कन्दपुराण *(1, 1, अध्याय 32)*, अग्निपुराण *(अध्याय 193)* और पद्मपुराण *(6, अध्याय 240)* और शिवपुराण *(कोटिरुद्रसंहिता अध्याय 37-40)* में इस व्रत का वर्णन मिलता है। कामिकागम से एक श्लोक 'कालनिर्णय' या 'कालमाधव' में माधवाचार्य (1340-1260 ई.) ने उद्धृत

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

किया है जिसमें कहा गया है कि माघ मास के कृष्णपक्ष में चतुर्दशी की रात्रि को शिवरात्रि कहा जाता है, वह सर्वपुण्यदायी एवं शुभावह है : माघमासेऽसिते पक्षे विद्यते या चतुर्दशी। तद्रात्रिः शिवरात्रिः स्यात्सर्वपुण्यशुभावहा। *(कालमाधव चतुर्थप्रकरण, पृष्ठ 363)*

इनके अतिरिक्त ईशानसंहिता के आधार पर कालनिर्णय, तिथितत्व, निर्णयसिन्धु, कृत्यतत्त्व, वर्षक्रियाकौमुदी आदि में इस व्रत का विवरण उपलब्ध है—

शिवरात्रिव्रतं नाम सर्व पाप प्रणाशनम्।
आचाण्डालमनुष्याणां भुक्तिमुक्ति प्रदायकम्॥
अर्धरात्रादधश्चोर्ध्वं युक्ता यत्र चतुर्दशी।
तत्तिथावेव कुर्वीत शिवरात्रिव्रतं व्रती॥
शिवरात्रिव्रतं कार्यं भूतान्वितमहानिशि।
शिवरात्रिव्रतं देव करिष्ये शिवसन्निधौ॥
निर्विघ्नं कुरु मे देव भक्तग्राह्यमहेश्वर॥ *(चतुर्थप्रकरण पृष्ठ 371)*

और इन व्रतों में एकराय का अभाव-सा है जबकि शिवधर्म में वर्णित व्रतों के सम्बन्ध में सभी निबन्धकार एकमत हैं। सभी प्रकार के व्रतों के सामान्यधर्म जो शिवधर्मपुराण ने प्रतिपादित किए हैं, वे परवर्ती शैव, वैष्णव, सौर और अन्य पुराणों के लिए आदर्श बने हैं। इनमें सामान्यतया मानवीय मूल्यों की धारणाएँ परिलक्षित होती हैं और ये ही मूल्य प्रत्येक व्यक्ति को एक व्रतार्थी के रूप में परिभाषित करता है। ये व्रत और यज्ञमूलक भारतीय जीवनादर्श के सूचक भी हैं—

क्षमा सत्यन्दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
शिवपूजाग्निहोमश्च सन्तोषस्नेहभावनम्॥
सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधास्मृतः।
(शिवधर्म. 10, 142-143 एवं व्रतखण्ड अध्या. 28, पृष्ठ 849)

लिंगपुराणकार ने भी इनको उद्धृत किया है। *(पूर्व. 84, 22)* और गरुडपुराण ने भी अल्प पाठान्तर के साथ इन दस व्रतधर्मों को ससम्मान उपन्यस्त करने का उपक्रम किया है—

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः॥
देवपूजाग्निहवने सन्तोषोऽस्तेयमेव च।
सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः॥
(आचारकाण्ड 128, 8-9)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgao

रुद्राक्ष का वर्णन :

शिवभक्तों में रुद्राक्ष के प्रति अगाध आस्था पाई जाती है। आजकल रुद्राक्ष के प्रति आस्था लक्ष्मी प्राप्ति के ध्येय को लेकर भी दिखाई देती है। एकमुखी से लेकर चौदहमुखी तक रुद्राक्ष का वर्णन पुराणों में मिलता है। शिवपुराण के पूर्वार्द्ध में यह वर्णन विस्तार से मिलता है, किन्तु शिवधर्मपुराण में एकाधिक मुखी रुद्राक्षों का कोई वर्णन नहीं है। शिवभक्तों के लिए रुद्राक्ष धारण की महिमा आई है। सिर से लेकर भुजाओं तक रुद्राक्ष धारण करने पर जोर दिया गया है किंतु एक से अधिक मुखी रुद्राक्ष का कोई फलाफल नहीं बताया गया है। यह शिवपुराण, पद्मपुराणादि जैसे उत्तरकालीन पुराणों की ही देन माना जा सकता है।

आलोच्य पुराण में यही कहा गया है कि रुद्राक्ष को शिवयतीन्द्र धारण करते हैं। वे सदा भस्मनिष्ठ और जितेन्द्रिय होते हैं। वे अपने हाथों में रुद्राक्ष के कंकण धारण करते हैं और अपने सिर पर एक जटा रखते हैं। शिवाश्रम में शिवलिंग भी भस्म और त्रिपुण्ड जैसा तिलकधारक होता है। ऐसे शिवयतीन्द्र के सिर पर करोड़ रुद्राक्ष, कानों में हजार तथा गले में शतकोटि और बाहुओं के मध्य में हजार रुद्राक्ष बँधे हुए होते थे। रुद्राक्ष को धारण करने के फल के सम्बन्ध में पुराण में कहा गया है कि इसके असंख्य फल मिलते होते हैं। कण्ठ चाहे झूठे बोलने वाला और व्यक्ति सभी पापों से युक्त क्यों न हो, रुद्राक्ष का स्पर्श करने से वह सभी पापों से छूट जाता है। यह तक कहा गया है कि यदि रुद्राक्ष को श्वान के गले में भी धारण करवा दिया जाए तो वह रुद्रत्व को प्राप्त हो जाता है, फिर मानव की तो बिसात ही क्या है! जो कोई हाथ में और सिर पर उपवीत अथवा रुद्राक्ष धारण करता है, वह सभी सत्वों-प्राणियों के लिए अगम्य रुद्रलोक में जाता है। *(शिवधर्म. 11, 19-25)*

शिवपुराण में रुद्राक्ष की महिमा में कहा गया है कि यह शिव को अत्यन्त प्रिय है, इसके दर्शन, स्पर्शन और माला के रूप में जप करने से यह सभी पापों का विनाश करता है : शिवप्रियतमो ज्ञेय रुद्राक्षः परपावनः। दर्शनात्स्पर्शनाज्जप्यात्सर्वपाप-हरः स्मृतः॥ *(शिव. विद्येश्वरसंहिता 25, 2)* पुराणकार ने मत व्यक्त किया है कि पूर्वकाल में शिव ने पार्वती के समक्ष रुद्राक्ष की महिमा कही थी। इनको शिव की आंखों से गिरे आंसुओं की गौड़देशीय उपज बताया गया है। बाद में मथुरा, अयोध्या, लंका, मलयाचल, सह्याद्रि और काशी में उत्पन्न किए जाने लगे। इनको वर्णानुसार धारण करने, एक से लेकर चौदहमुखी रुद्राक्षों का निर्देश भी फलाफल सहित

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवपुराण में ही आया है। ऐसे में यह परवर्ती वर्णन प्रतीत होता है जबकि शिवधर्मपुराण में ऐसा वर्णन अनुपलब्ध है।

शिवकथाओं के श्रवण की परम्परा :

इस काल तक शिव सम्बन्धी कथाओं का अपेक्षित विस्तार नहीं हुआ था लेकिन शिव को कृपालु, दयालु देव के रूप में स्थापित किया जा चुका था और सहजतम विधि जो कि अष्टांगिकपद वाली थी, से प्रजा को शैवमार्ग में दीक्षित-शिक्षित किए जाने के प्रयास हो रहे थे। यह प्रचारित किया जाता था कि इससे गाणपत्य जैसा पद मिलता है। यद्यपि शिवकथा के प्रति अनन्य आसक्ति रखने का निर्देश शिवधर्मपुराण में आया है : नित्यं शिवकथासक्तो नित्यं शिवपरायणः। अर्चयित्वा यथान्यायं गाणपत्यमवाप्नुयात्॥ *(11, 62)* किन्तु, वे शिवकथाएँ कौनसी थी, यह ज्ञात नहीं होता। शिव की कथा से आशय प्रस्तुत पुराण भी हो सकता है। इस काल तक अन्य कोई शिवकथाएँ प्रचलन में रही होगी, अवश्य पुराण संकेत करता है। इनमें लिंगोद्भव आख्यान अवश्य पुराना है— यह कालान्तर में मूर्तिकारों के लिए भी अनुकरणीय बना किन्तु यह काल बहुत बाद का है।

शिव के अवतार सम्बन्धी आख्यान लिंगपुराण के काल तक विस्तार पा चुके थे किन्तु इनकी उपलब्धता वायुपुराण *(अध्याय 23)* में मिलती हैं : इत्येतद्वै मया प्रोक्तमवतारेषु लक्षणम्। मन्वादि कृष्णपर्यन्तमष्टाविंशयुगक्रमात्॥ *(उपर्युक्त 23, 225)* ऐसे में वायुपुराण के पठन-पाठन की परम्परा रही होगी। इस समय तक योगसाधना से ब्रह्मज्ञान पाकर रुद्रलोक गमन की मान्यता का विकास हो गया था : प्राप्यं योगं तथा ज्ञानं ब्रह्म चैव सनातनम्। रुद्रलोकं गमिष्यन्ति पुनरावृत्तिदुर्लभम्॥ *(वायु. 23, 122)* इसी प्रकार माहेश्वर योग का फल कहा गया है : प्राप्य माहेश्वरं योगं रुद्रलोकाय ते गताः॥ *(उपर्युक्त 23, 193 एवं 213, 217, 225)* वायुपुराण में *(अध्याय 24, 91 से)* शिव के नाना नामों वाले स्तोत्र में शिव की विभूतियों का जो वर्णन मिलता है, उन एक-एक नाम की कथा भी कथाकार कहता रहा होगा। पुराणोक्त शार्वस्तव का आरम्भ भी कथा के साथ हुआ है। इसी प्रकार 27वें अध्याय में ब्रह्मा द्वारा नीललोहित शिव के रुद्र, भव, शिव, पशुपति, ईश, भीम, उग्र और महादेव इन आठ नामों के रखने की कथा आई है। तीसवें अध्याय में तो दक्ष यज्ञध्वंस प्रसंग में रुद्र के आठ हजार नामों से स्तुति करने का प्रसंग आया है : नाम्नामष्टसहस्रेण स्तुतवान्वृषध्वजम्॥ *(उपर्युक्त 30, 180)* इसके अतिरिक्त भुवनविन्यास संज्ञक अध्यायों में भी अनेकत्र शिव, शिवावास स्थलों, उनके गणों की कथाओं का अवबोध होता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इससे लगता है कि वायुपुराण में शिव विषयक कथाओं की उपलब्धता थी और उनका व्याख्यान, विवेचन होता था। पुराण श्रवण की परम्परा तब तक प्रचलन में आ चुकी थी। हर्षकालीन बाणभट्ट स्वयं वायुपुराण का श्रोता था और उसने इसका वर्णन किया है। हर्षचरित के पहले उच्छ्वास (85) से ज्ञात होता है कि पुराणपाठ सुदृष्टि करता था जिसका गला बहुत मधुर था। बाण जब हर्ष के दरबार से लौटा तो सुदृष्टि ने उसको वायुपुराण की कथा सुनाई थी : पवमानप्रोक्तं पुराणं पपाठ। उसके पीछे बैठे हुए मधुकर, पारावत जैसे वंशीवादक संगीत छेड़ते थे। बाण ने शिव की अष्टपुष्पिका पूजा का उल्लेख किया है जिसमें ध्रुवागीति का सन्दर्भ दिया है। इस काल तक कथाकार होते थे। इनको कथक कहा जाता था।

उपर्युक्त साक्ष्य, सन्दर्भों से यह विदित होता है कि शिवधर्मपुराण हर्षवर्धन के काल से पूर्व ही रचा जा चुका था। इसका रचनाकाल की सीमा गुप्तकाल के आसपास, अधिकतम 6वीं सदी ज्ञात होती है। जिन शिवतीर्थों का वर्णन इसमें आया है, वे बहुत पुराने हैं। उनके नाम से भी प्राचीनता प्रदर्शित होती है। यह ग्रन्थ परवर्ती शैव सम्प्रदाय के ग्रन्थों के महत्वपूर्ण आधार प्रस्तुत करने वाला माना जा सकता है।

*****

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विषयानुक्रमणिका

प्रथमोऽध्यायः 1

पुराणपाठपरिपाट्यानुमितस्मरणम् — 1

निर्विघ्नग्रन्थसमाप्तिप्रचयगमनार्थं शिष्टाचारपरम्परानुमितागमनिगमबोधित-कर्तव्यताककर्माभिमतशिवदेवताऽऽशीषरूपं मङ्गलाचरणम् — 1

सनातनपुराणकथास्वरूपारम्भाह — 2

सनत्कुमार जिज्ञासया — 2

श्रीनन्दिकेश्वर कथनम् — 3

श्रीभगवानुवाच अष्टांग शिवभक्ति प्रवर्तनम् — 6

श्रीनन्दिकेश्वरः — 7

द्वितीयोऽध्यायः 9

ग्रन्थ स्वरूपार्थ सनत्कुमारस्य प्रश्नरूपेणवतरणम् 9

तृतीयोऽध्यायः 12

पूर्वमेकार्णवे लिङ्गोद्भवाख्यानं — 12

हरिधातृकृत लिङ्गोत्पत्तिस्तवम् : 13

अथ लिंगस्वरूपाणि— 21

पार्थिवलिंगपूजनस्य शताधिकपुण्यफलवर्णनम् — 23

शालिपिष्टलिंगपूजनविधिमाह — 24

तस्य पूजनफलमाह — 24

इत्यमन्तर शिवस्तोत्र — 26

चतुर्थोऽध्यायः 28

शिवभक्तलक्षणं श्रीनन्दिकेश्वर वचनात् — 28

इत्यमनन्तर प्रासादनिर्माणफलमाह — 30

चतुर्विधशिवायतनं विधानमाह — 31

शिवायतनं दर्शनफलम् — 34

तत्रैव मार्जनोपलेपनञ्च फलमाह — 34

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शङ्खदानफलमाह — 72
वितानादीनां निवेदनफलमाह — 73
वस्त्रपूजाफलमाह — 73
रुद्राग्रे इष्टिकागारफलम् — 74
अर्घ्यादीनां फलमाह — 75
दधिभक्तमयलिंगार्चनाविधानमाह — 75
शिवमाख्यापनयनमार्जनादीनां फलम् — 76
शिवस्य मण्डलोक्तपूजाफलमाह — 76
वर्णकपिष्टात् भूमिशोभाफलमाह — 77
रुद्रयज्ञोपकरणदानादीनां फलमाह — 77
आरामादीनां निर्माणकाले प्रभावितभूतानिदशाह — 77
शिवक्षेत्रेदेहोत्सर्जनफलमाह — 78
शिवगङ्गेस्नानफलमाह — 79
शिवस्थाने दीर्घिका वा कूपनिर्माणफलमाह — 79
इत्यमनन्तर शिवपूजननिर्देशं सफलमाह — 79
प्रसंगोचित स्तोत्रम् — 80
अध्यायान्ते इदं पुण्यफलमाह — 81
षष्ठोऽध्यायः.. 82
श्रीनन्दिकेश्वर उवाच — 82
महेश्वरध्यानम् — 82
शिवार्धाङ्गिनीध्यानम् — 83
षण्मुखध्यानम् — 83
नन्दीशध्यानम् — 84
विनायकध्यानम् — 84
महाकालध्यानम् — 85
गणमाताम्बिकाध्यानम् — 85
महामहिषमर्दनीध्यानम् — 85
भृङ्गिरिटिध्यानम् — 86
चण्डेश्वरध्यानम् — 86
नीलकण्ठध्यानम् — 86

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वृषपतिधर्मध्यानम् — 87
पितामहध्यानम् — 87
विष्णुध्यानम् — 87
लक्ष्मीदेवीध्यानम् — 88
ब्रह्माणीध्यानम् — 88
शिवादेवीध्यानम् — 88
कौमारीध्यानम् — 88
वैष्णवीध्यानम् — 89
वाराहीध्यानम् — 89
ऐन्द्रीध्यानम् — 89
चामुण्डाध्यानम् — 90
आकाशस्थ च लोकमातरादीनां — 90
तथा च रौद्रश्च सौम्यस्थानस्थमातरः — 91
ऐन्द्र्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 91
आग्नेयादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 92
याम्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 92
नैर्ऋत्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 92
वारुण्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 93
वायव्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 93
कौबेर्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 93
ऐशान्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 94
अथाधोभागस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 94
ऊर्ध्वभागस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह — 94
प्रसंगोचित अन्य वर्णनम् — 95
देवपुर्यानिवासिनलोकपालध्यानम्, पूर्वदिशस्थामरावतीपुर्यामिन्द्रध्यानाह — 95
अथाग्नेयदिशस्थ तेजोवतीपुर्यामनलध्यानाह — 96
दक्षिणदिशस्थ वैवस्वतीपुर्यास्थ यमध्यानाह — 97
नैर्ऋत्यदिशस्थ शुद्धवतीपुर्यास्थ नैर्ऋत्यध्यानाह — 97
वारुण्यदिशस्थ नीरवतीपुर्यास्थ वरुणदेवध्यानाह — 98
वायव्यदिशस्थ गन्धवतीपुर्यास्थ पवनदेवध्यानाह — 99

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उत्तरदिशस्थ महोदयानामपुर्यास्थ कुबेरस्य ध्यानाह — 100
ऐशान्यादिशस्थ यशोवतीपुर्यास्थ ईशानध्यानाह — 100
इत्यमनन्तर भूभुवस्वादि नानालोकस्थ देवादीनां — 101
गिरिगुह्यादिनिवसस्थदेवप्रत्याभ्यर्थनाह — 102
सरस्वत्यात् याचनाह — 102
श्रीदेव्यात् याचनाह — 102
अपराजितादेवीप्रति याचनाह — 102
सूर्यादि नवग्रहध्यानश्च याचनाह — 103
अङ्गारकध्यानमाह — 103
बुधध्यानमाह — 103
बृहस्पतिध्यानमाह — 103
शुक्रध्यानमाह — 104
शनिश्चरध्यानमाह — 104
राहुध्यानमाह — 104
केतुध्यानमाह — 104
छायासूर्यसुते देविभद्राध्यानमाह — 105
तिथ्यानुसारेण भद्राकालमाह — 105
तिथीनामीशशस्तिथीशाः सिद्धायामाह — 106
पञ्चदशतिथिनां क्रमणेशाः स्वामिनस्तानाह — 106
योगनामानि — 107
पूर्वादि दिशाक्रमादृक्षेशा स्थितिश्च ध्यानाह — 108
दक्षिणदिशस्थ नक्षत्रमाह — 109
पश्चिमदिशस्थ नक्षत्रमाह — 109
उत्तर दिशस्थ नक्षत्रमाह — 110
राशिश्च राश्याधिपध्यानमाह — 110
सप्तऋष्यार्थ ध्यानमाह — 111
तथान्य वर्णनम् — 111
सिद्धगणादीनां ध्यानमाह — 112
नानासुरगणार्थ प्रार्थनामाह — 112
इत्यमनन्तर नागसंस्थानमाह — 113

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथान्तरिक्षादीनां नागनागिन्यनागकन्यानागकुमारिकाह — 115
अथ पवित्रदेवनद्यादीनां नद्यातभ्यर्थनाह — 116
इत्योपरान्त तीर्थात् प्रार्थनाह — 117
अत्रैव धनदयक्षादीनां — 117
तस्य यक्षिण्यादीनां — 117
तत्रैव सुवीरवञ्चिकविभण्डकधृतराष्ट्रादीनां यक्षाह — 118
तथा च पूर्णभद्रविरूपाक्षादीनां यक्षयक्षिण्याह — 119
पर्वतगणाह — 120
तथोदधिगणाह — 120
नानास्थलस्थ राक्षसगणादीनां — 120
भैरवस्यस्मरणमाह — 121
योगिन्याडाकिन्यादीनां — 121
नानालोकस्थ पिशाचगणादीनां — 122
महारूपाभूतगणाह — 122
नानारूपधारीप्रेतगणाह — 122
इत्यमनन्तर ज्वरग्रहादीनां — 123
तत्रैव शिवस्तोत्र — 123
इत्योपरान्त शान्याऽध्याय पाठफलमाह — 125
प्रसंगोचित वर्णनम् — 126

सप्तमोऽध्याय: **128**

ईशानपूजार्चनमाहात्म्यमाह। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच — 128
मासश्च तिथ्यावसरेणार्चनफलमाह — 128
दानादिपूर्वक पर्वकालेन शिवपूजनाह — 129
पर्वकालर्चनपुण्यफलमाह — 130
विषुवादिसङ्क्रान्त्यार्चनफलमाह — 130
कार्तिकपूर्णिमावसरे पूजाफलमाह — 130
माघादीनां मासपर्यन्तशिवार्चनाफलमाह — 131
शिवपूजनफलमाह — 131
प्रातर्कालेपूजनफलमाह — 133
मध्याह्नेपूजनफलमाह — 133

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सूर्यास्तकालेपूजनफलमाह — 133
अर्धरात्रेपूजनफलमाह — 133
लिंगप्रति नमस्कारस्पर्शार्चनञ्च फलमाह — 133
सर्वस्थाने शिवपूजननिर्देशमाह — 134
समन्त्रार्चनफलमाह — 135
षडक्षरमन्त्रस्वरूपश्च माहात्म्याह — 135
नमस्कारनिर्देशाह — 137
शिवमन्त्रस्मरणफलमाह — 137
शैवदेशेपि वसेदयमाह — 139
रुद्रमन्त्राद्दीक्षितकृतार्चनफलमाह — 140
इत्यमनन्तर शिवभक्त वैशिष्ट्यमाह — 140
शिवभक्तगुणमाह — 141
पाठोचित शिवस्तोत्रमाह — 142
इत्योपरान्त स्तोत्रपाठफलमाह — 146

अष्टमोऽध्यायः 147

अध्यायारंभे शिवलिङ्गमाहात्म्याह। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच — 147
पुण्यमासे लिङ्गस्य घृतस्नपनविधिः फलमाह — 149
तस्यावसरे दर्शनं फलमाह — 149
पर्वावसरे महापूजां च रथयात्राऽऽयोजनम् — 150
तत्र छत्र-नाटकादीनां फलमाह — 152
अथैकपादपिष्टमयरूपादिन्यासपूर्वकं पूजनाह — 152
इत्यमनन्तर घृतभाजनव्रतम्, बल्यार्थ सामग्रीप्रमाणादीनां — 153
सोमव्रते ताम्रपात्रे पयदानफलमाह — 154
कार्तिकस्य पौर्णमास्यायां शिवोपवित्रारोपणम् — 155
शिवार्थे वाद्यगीतनृत्तस्य दानफलमाह — 156
शिवार्थ गोमिथुनदानफलमाह — 157
तत्र वृषस्वरूपाह — 157
अथ सुरूपाकपिलाधेनुदानमाह — 157
गोताडननिषेधमाह— 159
अन्य वर्णनम् — 160

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गोसेवामाहात्म्यमाह — 160

गोशरीरेदेवादीनां निवेशस्थलमाह — 161

तस्य महामारी व्यपोहनस्तवनिरूपणम्। गोशान्तिः — 164

गोशान्त्युपायार्थमन्त्रमाह — 165

गोसावित्रीपाठमाहात्म्यमाह — 166

गोधनस्य प्रसन्नार्थोपाय फलञ्च — 166

शिवार्थाश्वदानफलमाह — 166

दासीदानफलमाह — 167

शिवार्थ नागदानफलमाह — 167

सर्वसस्यप्ररोहिणीभूमिदानफलम् — 167

ग्रामदानफलम् — 168

नगरदेशादीनां दानफलम् — 169

भूम्यादीनां हरणफलम् — 169

नवमोऽध्यायः 171

शैवव्रतराज शिवलिङ्गव्रतञ्च पूर्वकर्तावर्णनम्। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच — ... 171

शिवलिंगव्रतविधानमाह — 172

शिवलिंगव्रतस्य माहात्म्यमाह — 174

दशमोऽध्यायः 176

वर्षपर्यन्त प्रत्येकमासे उभयपक्षे चतुर्दश्याष्टम्योपवासपूर्वकं शिवार्चनं फलमाह — 176

तद् प्रसंगे श्रीनन्दिकेश्वर कथनम् — 176

पर्वप्रसङ्गात्पृथ्वीपात्रेभुक्तफलमाह — 176

पञ्चम्याः प्रतिपदव्रतफलम् — 177

नक्ताशीव्रतफलम् — 177

वर्षमेकं पर्वावसरे नक्तव्रतमाह — 178

कपालव्रतधारिणम्प्रतिभोजनफलम् — 178

नक्तव्रतमाहात्म्यमाह — 179

मार्गशीर्षादिमासे नानानामात् शङ्करदेवमर्चनफलादीनां — 180

वर्षमेकं कृष्णाष्टमीव्रतस्य फलमाह — 182

सर्वपुण्योत्सवेषु दानोपवासफलमाह — 182

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रतिमासकरणीयोत्तमशिवव्रतवर्णनफलञ्च।
तत्र पुष्मासेसेवनीयशिवव्रतम् — 183
माघमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 185
फाल्गुनमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 186
चैत्रमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 186
वैशाखमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 187
ज्येष्ठमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 188
तथाषाढमासेशिवव्रतविधानफलञ्च — 188
श्रावणमासेशिवव्रतविधानफलञ्च — 189
ज्येष्ठमासेकरणीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 190
तथाश्वयुजमासेग्रहणीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 190
कार्तिकमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 191
मार्गशीर्षेकरणीयशिवव्रतविधानफलञ्च — 192
व्रतकालेऽन्यानुपालनीयनियमाः — 192
उमामहेश्वरव्रतविधानम्। तत्र उमामहेश्वरनामफलमाह — 193
तत्रैव व्रतविधानफलञ्च — 193
प्रसंगानुकूले अन्य वर्णनम् — 194
अन्यदपि — 195
ईश्वरोक्तमपरमुमामहेश्वरव्रतवर्णनम् — 197
वर्षपर्यन्तकृष्णचतुर्दशीव्रतफलञ्च — 198
त्रिशूलदानव्रतफलञ्च — 199
पौर्णमास्याममावास्यां गन्धव्रतफलञ्च — 200
इत्यमनन्तर स्त्रीलाभार्थे कार्तिकमासे शैवमहाव्रतफलञ्च — 201
सर्वव्रतेषु अनुशीलनीय सामान्यदशधर्माह — 201
इत्यमनन्तर मार्गशीर्षादिक्रमेण प्रतिमासव्रतमाह — 202
मार्गशीर्षेव्रतविधानमाह — 202
पौषमासे व्रतविधानम् — 203
माघमासे रथव्रतफलञ्च — 203
फाल्गुने व्रतविधानफलञ्च — 204
चैत्रमासे व्रतफलञ्च — 204

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वैशाखमासे कैलासव्रतफलञ्च — 205

ज्येष्ठमासे पिष्टलिङ्गार्पणफलञ्च — 205

आषाढमासे शिवार्थेपिष्टमयगृहनिवेदनफलञ्च — 206

श्रावणमासे शिवार्थेतिलपर्वतनिवेदनफलञ्च — 207

भाद्रपदमासे शिवार्थेधान्यपर्वतनिवेदनफलञ्च — 208

अथ महामेरुव्रतविधानफलञ्च — 208

अन्य वर्णनम् — 211

हेमन्तकाले शिवरथव्रतविधिफलञ्च — 212

दानव्रतादीनां प्रसङ्गोपसंहारमाह — 213

शिवशय्याव्रतमाह — 214

वृषभैकादशीदानविधानफलञ्च — 214

सवृषशतगोदानफलमाह — 215

उभयतोमुखीदानफलम् — 216

एकादशोऽध्यायः........ 217

स्वयं सदाशिवप्रवर्तितशिवधर्मम्। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच — 217

शिवाश्रमे दिशानुसारेण नानास्थापत्यरचनापरिकल्पनम् — 217

शिवालयक्षेत्रे अभ्यागतालयनिर्देशम् — 218

नैर्ऋत्यादिकोणेकरणीयनिर्माणम् — 218

त्रिकाले त्र्यम्बकमाग्निकार्य निर्देशमाह — 218

शिवपूजारहितभोजनं निषेधमाह — 218

सर्वकाले शिवपूजानिर्देशमाह — 219

कुत्र पुष्पहिंसानिषेधादीनां — 219

पर्वतिथ्यादीनां शैवपूजनस्वरूपमाह — 219

देवादीनार्थाऽन्नपचनफलम् — 219

शिवपूजार्थ उपार्जितधनभागादीनां — 220

शैवब्रह्मचारीधर्माह — 220

शैववैखानसलक्षणमाह — 221

शिवयतीन्द्रलक्षणम् — 221

रुद्राक्षधारणफलमाह — 221

जटाधारणफलमाह — 222

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रुद्राग्निभस्मात् स्नानफलमाह — 222
शिवशासनसंयुक्तनरस्य माहात्म्यमाह — 224
आचमनभस्मगन्धलेपश्चापि भावशुद्ध्यामहत्वञ्च — 224
पञ्चविधस्नानमाह — 225
ऐतेषां विवरणं पश्चात् स्फुटीभविष्यति — 225
शौचादीनामाचरणम् — 226
वपन वा केशमुण्डनमाह — 226
अन्यदानादीनां— 227
ईशानोक्त महाव्रताष्टकमाह — 227
मनसावाचाकर्मणाशिवपूजानिर्देशमाह — 228
शिवभक्तार्थ शिवाचार वा पालनीयकर्तव्यमाह — 228
शिवभक्तसेवायां फलमाह — 229
संवाहनशय्यादानफलम् — 230
प्रतिश्रयजलदानफलम् — 230
दीपादीनां दानफलम् — 230
संवीजतालवृन्तदानफलम् — 230
क्षुत्पिपासातुररोगीसेवाफलम् — 230
शरणागतादीनां आश्रयफलम् — 231
तथान्नादिदानमहिमाफलञ्च — 231
मधुरवाग्व्यवहारफलमाह — 232
इत्यमनन्तरागतस्वागतकृत्यफलम् — 232
तथा चान्यमूल्यगुणादीनां — 234
क्रोधाऽऽवेशस्य निन्दा — 234
क्षमागुणमाहात्म्यमाह — 234
अहिंसागुणप्रशंसामाह — 235
अभयदानप्रशंसामाह — 235
प्राणिघातनिवारणफलम् — 236
शान्तिलक्षणफलञ्च — 236
सन्तोषलक्षणफलं च — 237
सत्यलक्षणमाह — 237

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अस्तेयलक्षणम् — 238
ब्रह्मचर्यलक्षणम् — 238
द्वादशोऽध्यायः 240
श्रीनन्दिकेश्वर कथनम् — 240
शिवभक्ताः कर्त्तव्यमाह — 240
शिवमुद्दिश्यदानफलम् — 241
शिवालये दर्शनं नमस्कारञ्च — 241
शिवभक्तहेत्वार्थ त्याज्याऽऽहारमाह — 241
वारुणीदोषमाह — 242
भोजनस्पर्शादिनिषेधमाह — 242
नास्पृशेत्ऽऽक्रामेतश्छायानिर्माल्यादीनां — 242
शिवमूर्त्याः निंदानिषेधवचनम् — 244
अष्टम्यादि तिथ्यायां श्मश्रुकर्माञ्जनाभ्यङ्गनिषेधमाह— 244
समन्त्रपूजानिर्देशः — 244
शौचशुद्धिविधानादीनां — 244
त्रिसन्ध्याऽऽचरणफलम् — 245
चातुर्मासकर्त्तव्यफलञ्च — 245
पर्वोत्सवादिकाले रुद्रपूजनफलञ्च — 245
श्राद्धावसरे शिवयोगिनप्रतिभोजनिर्देशः — 246
तत्र ज्ञानवैराग्यश्च लक्षणम् — 246
जितेन्द्रियलक्षणम् — 246
शिवयोगीश्च शिवयोगमाह — 247
शिवयोगीराटस्य श्रेष्ठताप्रतिपादनम् — 247
शिवयोगीभोजफलम् — 248
ऋत्विजश्च यज्ञलक्षणम् — 248
अथाघोरपञ्चलक्षणम् — 249
दानलक्षणम् — 249
भूमिदानलक्षणम् — 249
महीदानलक्षणम् — 249
कन्यादानलक्षणफलञ्च — 249

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गोदानलक्षणम् — 250
वस्त्रदानलक्षणम् — 250
उपवासलक्षणम् — 250
चान्द्रायणव्रतविधिः — 250
तीर्थलक्षणम् — 251
रुद्रावतारस्थानपुण्यक्षेत्रश्च निर्दिशेत् — 251
स्थाणाष्टकं महोदयरुद्रक्षेत्रवर्णनम् — 251
पवित्राष्टकरुद्रक्षेत्रम् — 252
गुह्याष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् — 253
गुह्यातिगुह्याष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् — 253
पुण्यात्मिकाष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् — 254
तथाष्टङ्गपरंपात्रलक्षणम् — 255
शिवधर्मस्यलक्षणम् — 255
शिवपात्रस्यलक्षणम् — 255
शिवयोगीप्रतिभोजफलम् — 255
वंशपात्रस्य दानफलम् — 256
मान्यश्च पूजश्च रक्षानिर्देशम् — 257
क्षणार्धेऽपिशिवनाममाहात्म्यमाह — 257
श्राद्धस्थलस्य पुण्यफलम् — 257
वेत्रास्यासन वा गजदन्तमयासन दानफलम् — 257
कार्पासनिर्मितकौपीनदानफलम् — 257
और्णप्रावरणदानफलम् — 258
व्याघ्रमृगचर्मादिदानफलम् — 258
सत्राणपवित्रजलस्थलदानफलम् — 258
सत्रिपदीकमण्डलुदानफलम् — 259
मृदुवासदानफलम् — 259
भोजनपात्रदानफलम् — 259
दन्तधावनश्चोष्णीषनिवेदनफलम् — 259
योगपट्टोपवीतनिवेदनफलम् — 259
उपानत्काष्ठपादुकानिवेदनफलम् — 260

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवयोगिने लगुडदानफलम् — 260
आतपत्रनिवेदनफलम् — 260
नानावस्तु दानफलम् — 260
पुस्तकदानफलम् — 260
वपनकार्यं फलम् — 261
शिवयोगीदीनां शिवतुल्यताम् — 261
रुद्राक्षदानादीनां फलमाह — 261
यतिप्रतिदानफलम् — 262
शिवयोगीप्रत्याऽऽवसथनिर्माणफलम् — 263
शिवधर्मस्यव्याख्यानस्थले मण्डपनिर्माणनिर्देश — 263
इत्योपरान्त शिवधर्मशास्त्रस्य माहात्म्यमाह — 264
इत्योपरान्त स्तोत्रम् — 266
इदं स्तोत्रमाहात्म्याह— 269
ग्रन्थान्तेमङ्गलकामनाह — 269

श्लोकानुक्रमणिका 270

*****

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लिंगोद्भवमूर्ति : शिवधर्मपुराण वर्णित लिंगोद्भव आख्यान का प्रतिरूपण। अजमेर (राजस्थान के राजकीय पुरातत्व संग्रहालय) में विद्यमान प्रतिमा।

लिंगमध्ये परमलिंगम् – पुराण वर्णित लिंग के मध्य में विराजित परमलिंग का प्रतिरूपण। गंगैकोण्डा का एक मूर्तिशिल्प।

वर्तमान में पूजित भगवान् शिव की चित्तमय छवि।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लंगम् -
मध्य में
रूपण।
शिल्प।

उज्जैन स्थित महाकालेश्वर का स्वरूप।

शिर्वाचन का एक प्राचीन शिल्प।
अरथूना-राजस्थान के एक परमारकालीन
मंदिर में यह मूर्ति विद्यमान है।

वृषभारूढ उमा-महेश्वर का
मूर्तिमय स्वरूप, राजस्थान, ११वीं सदी।

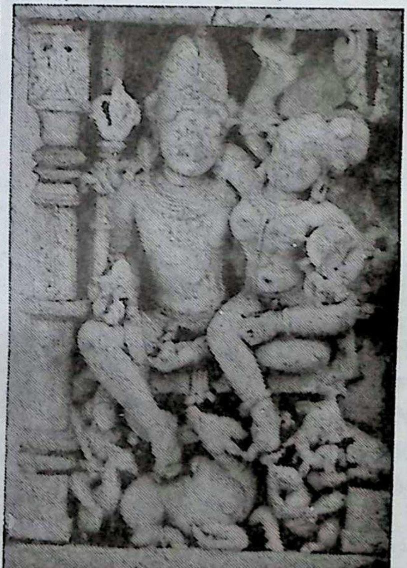

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तांडव मुद्रा – नृत्येश्वर भगवान् शिव।

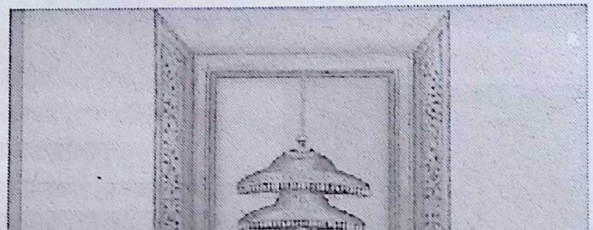

एकलिंगजी – भगवान् शिव का स्वरूप। कैलाशपुरी–उदयपुर, १४वीं सदी।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्रीसाम्बशिवाय नमः ।

श्रीगणेशाय नमः ।

॥ अथ श्रीशिवधर्मपुराणम् ॥

अथ प्रथमोऽध्यायः ॥ 1 ॥

अष्टाङ्ग शिवधर्म का निरूपण और शिवधर्म के पालनकर्ताओं की स्थिति तथा शिवधार्मिकों का माहात्म्य

अथ पुराणपाठपरिपाट्यानुमितस्मरणम् —

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

श्रीमन्नारायण और नरोत्तम नर तथा वाग्देवी सरस्वती एवं व्यासदेव को नमस्कार करने के उपरान्त जय अर्थात् शिवधर्मपुराण को कहना चाहिए।

अथ निर्विघ्नग्रन्थसमाप्तिप्रचयगमनार्थ शिष्टाचारपरम्परानुमितागमनिगमबोधित-कर्तव्यताककर्माभिमतशिवदेवताऽऽशीषरूपं मङ्गलाचरणम् —

सर्वाकारमशेषस्य जगतस्सर्वदाशिवम्।
गोब्राह्मणनृपाणां च शिवं भवतु सर्वदा॥ 1 ॥[1]
शिवमादौ शिवं मध्ये शिवमन्ते च सर्वदा।
सर्वेषां शिवभक्तानां अनुगानां च नः शिवम्॥ 2 ॥

---

1. रॉयल एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता के पुस्तकालय में विद्यमान इस ग्रन्थ की ताड़पत्र पर लिखित नेवारीलिपि की मातृका (संख्या— जी 3852) में आरम्भ में जो श्लोक आया है, वह बाणभट्टकृत 'हर्षचरित' के प्रारम्भ में भी आया है। उक्त मातृका 12वीं सदी की है। इसमें शिवार्चना के रूप में कहा गया है कि त्रिभुवनरूपी नगर के निर्माण के प्रारम्भ के मूल स्तम्भ, जिनके उन्नत, कभी न झुकने वाले, मस्तक पर चन्द्रमा रूपी चँवर की अतीव शोभा है, उन भगवान् शंकर को नमस्कार है— नमस्तुङ्ग शिरश्चुम्बीचन्द्रचामरचारवे। त्रैलोक्यनगरारम्भोमूलस्तम्भाय शम्भवे: ॥ (हर्षचरित ग्रन्थारम्भपाठः 1)

सदी।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यह जगत सदा ही शिवरूप है। इस जगत के सभी आकार व स्वरूप उस अशेष शिव के ही हैं। गाय, ब्राह्मण और राजाओं का सर्वदा शिव (कल्याण) ही होता है। शिव ही आदि स्वरूप हैं, शिव ही मध्य स्वरूप हैं और शिव ही सदैव अन्तिम स्वरूप होते हैं। अस्तु, समस्त शिव-भक्तों और अनुगामियों के और हमारे शिव ही हैं।

सनातनपुराणकथास्वरूपारम्भाह —

मेरुपृष्ठ समासीनं त्र्यम्बकं ससमावृत्तम्।
लोकानुग्राहकं सर्वज्ञं नन्दिकेश्वरम्॥ 3॥
तेषां मध्ये समुत्थाय मुनिर्ब्रह्मसुतोत्तमः।
सनत्कुमारः सुतपाः पृच्छति स्म यथाविधि॥ 4॥

(एक बार की बात है) त्र्यम्बक भगवान् शिव सुमेरु पर्वत पर विराजे हुए और उनको समावृत्त किए हुए लोकानुग्राहक तथा सर्वज्ञ श्री नन्दिकेश्वर थे। इस बीच, शिव सभा में भगवान् ब्रह्मा के उत्तम पुत्र सुतपस्वी सनत्कुमार उठकर उनसे विधिपूर्वक प्रश्न करने लगे।

सनत्कुमार उवाच —

भगवन्सर्वधर्मज्ञ! शिवधर्म परायणम्।
श्रोतुकामाः परं धर्मं इमे सर्वे समागताः॥ 5॥
अग्निष्टोमादयो यज्ञा बहुवित्तक्रियान्विताः।
न शक्यन्तैर्यतः कर्तुं अल्पवित्तैर्द्विजादिभिः॥ 6॥
नात्यन्तफल कष्टा बह्वाया ससमन्विता।
तस्योपायमतो ब्रूहि सर्वकामार्थ साधकम्॥ 7॥

सनत्कुमार बोले कि हे भगवान्! आप समस्त धर्मों के ज्ञाता हैं और शिवधर्म के परायण भी है। अतः हम यहाँ पर सभी आए हुए लोग आप से इस परमधर्म के बारे में सुनने की कामना रखते हैं। यह विदित ही है कि अग्निष्टोम आदि सभी यज्ञ-क्रियाएँ बहुत वित्त-व्ययकारक और बहुत-सी क्रिया युक्त होती हैं। इसलिए जो इनको नहीं कर सकते, ऐसे अल्पवित्त वाले द्विजों के लिए आप जो अत्यन्त फल कष्टप्रद न हो और बहुत आयास प्रयत्न भी जिसमें नहीं करने पड़ते हों, ऐसा इसका कोई उपाय कृपा करके हमें कहें, जिससे साधक की सभी कामनाओं और अर्थ की पूर्ति हो सके।

हिताय सर्वमर्त्यानां शिवधर्मं सनातनम्।
येन सिद्धाः सुरा दैत्या गन्धर्वोरगराक्षसाः॥ 8॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ऋषयः किन्नरा यक्षास्तथा किंपुरुषादयः।
तथा विविधाश्चान्ये शिवधर्म परायणाः॥ 9॥
सम्पूज्याः ससुराः सर्वे तद्भक्ताः शिवधार्मिकाः।

क्योंकि, यह विदित ही है कि शिवधर्म सभी मृत्युलोकवासी प्राणियों के हित के लिए सनातन है। इसी कारण सभी सिद्धगण, देवतागण, दैत्यगण, गन्धर्वगण, नागगण और राक्षसगण, ऋषिगण, किन्नरगण, यक्षगण तथा किंपुरुषादि और अन्य विविध लोग शिवधर्म के परायण हुए एवं देवताओं के साथ पूजा करके वे भक्तिपूर्वक शिवधार्मिक हुए हैं।

श्री नन्दिकेश्वर उवाच —

श्रूयतामभिधास्यामि सुखोपायं महत्तत्फलम्॥ 10॥
परमं सर्वधर्माणां शिवधर्मं शिवो(धि)कम्।
शिवेन कथितं पूर्वं पार्वत्याः षण्मुखस्य च॥ 11॥

सनत्कुमार के प्रश्न पर श्री नन्दिकेश्वर बोले कि सभी ने शिव की पूजा करके महान् सुख का उपाय और उसके महान् फल को पाया, वह सब मैं कहता हूँ, सुनो। सभी धर्मों में शिवधर्म जो कि परमेश्वर शिव का है, परम श्रेष्ठ है, इसे पहले स्वयं भगवान् शिव ने ही देवी पार्वती और षण्मुख कार्तिकेय के प्रति कहा था।

गणानां देवमुख्यानां अस्माकं च विशेषतः।
अज्ञानार्णवमग्नानां सर्वेषां प्राणिनामयम्॥ 12॥
शिवधर्मोडुपः श्रीमान् उत्तारार्थमुदाहृतम्।
[शिवयोगी यति] शिवभक्तैः शिवादिभिः॥ 13॥

इसी प्रकार गणों को और देव-प्रमुखों को तथा विशेष तौर से हमारे लिए कहा। हम सभी प्राणी अज्ञान के गहरे सागर में निमग्न हैं। शिव धर्म से उडुप होकर, तैर करके उत्तीर्ण हो सकें, इसके लिए श्रीमान् हमें वह उपदेश करें जो कि शिवयोगियों, यतियों, शिवभक्तों और शिवादि गणों के लिए हितकर हो।

संसेव्यते परो धर्मः ते रुद्रा नात्र संशयः।
ग्रामे वा यदि वारण्ये जले वापि स्थण्डिलेऽपि वा॥ 14॥
यत्र वा दृश्यते लिङ्गं सर्वतीर्थानि तत्र वै।
ये स्मरन्ति विरूपाक्षं विज्ञेयास्ते गणेश्वरः॥ 15॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वे लोग जो इस प्रकार परम धर्म की सेवा करते हैं, वे रुद्र भगवान् यहाँ किसी प्रकार के शंकाग्रस्त नहीं है चाहे वे ग्रामों में हो, वन में हो, जल में हो अथवा स्थण्डिल पर हों। जहाँ कहीं भी लिंग के दर्शन हों, उन सभी को तीर्थ स्वरूप ही जानें। जो लोग भगवान् विरूपाक्ष शिव का स्मरण करते हैं, वे सभी गणेश्वर के रूप में जाने जाते हैं।

कीर्तयिष्यन्ति ये रुद्रं सकृतप्याशु तेन वा।
सर्वपापैः प्रमुच्यन्ते सप्तजन्म कृतैरपि॥ 16॥

जो भगवान रुद्र का भजन-कीर्तन थोड़ा बहुत भी करते हैं, वे सब अपने समस्त पापों से छूट जाते हैं, चाहे वे पाप सात जन्मों में किए गए ही क्यों न हो।

अर्चयन्ति सदारुद्रं न ते प्रकृतिमानुषाः।
रुद्रलोकात्परिभ्रष्टास्ते रुद्रा नात्र संशयः॥ 17॥

जो लोग सदा रुद्र की अर्चना-पूजा करते हैं, वे साधारण मनुष्य कदापि नहीं हैं। वे तो सभी रुद्रलोक से परिभ्रष्ट होकर आए हुए रुद्र ही कहे जाएँगे— इसमें कोई संशय नहीं है।

जातेनात्मरुद्रुहा ये न नाऽर्चितो भगवांच्छिवः।
स चिरं सञ्चरत्यस्मिन् संसारे दुःखसागरे॥ 18॥

जिस व्यक्ति से जन्म लेकर स्वयं रुद्र रूप होकर के भगवान् शिव की अर्चना नहीं की हो, वह चिरकाल तक इस संसार के दुःख रूपेण सागर में संचरण ही करता रहेगा।

तस्य चित्तं महच्चित्रं स मोहस्सान्धमूकता।
यः क्षणं वा मुहूर्तं वा शिवमेकं न चिन्तयेत्॥ 19॥

ऐसे व्यक्ति का चित्त बड़ा विचित्र ही कहा जाएगा, वह मोहग्रस्त अन्धा और गूँगा है जिसने एक क्षण या एक मुहूर्त भी शिव का एकाग्रता से चिंतन नहीं किया हो।

दुर्लभं प्राप्य मानुष्यं येऽर्चयन्ति सदाशिवम्।
तेषां हि सफलं जन्म कृतार्थास्ते नरोत्तमाः॥ 20॥

इस दुर्लभ मनुष्य जन्म को पाकर जो भगवान् सदाशिव का अर्चन-पूजन करते हैं, इस संसार में उनका ही जन्म सफल है; वे ही नरोत्तम कृतार्थ हैं।

भवभक्तिपरा[1] ये तु भवप्रणत चेतसः।

---

1. 'शिवभक्तिपरा' इति स्यात्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भवसंस्मराणोद्युक्ताः ते न दुःखस्य भाजनम्॥ 21॥

जो व्यक्ति भव अर्थात् शिव की भक्ति से युक्त होता है और भव या शिव को ही प्रणाम करने का चित्त वाला है तथा निरंतर भव-शिव को ही स्मरण करता है, उसे किसी भी दुःख का भाजन नहीं होना पड़ता है।

भवनानि मनोज्ञानि विभ्रमाभरणस्त्रियः।
धनं चादष्टपर्यन्तं शिवपूजाविधेः फलम्॥ 22॥

मनचाहे भवन, विभिन्न प्रकार के आभूषणों से युक्त स्त्रियाँ और इतना धन जितना पहले कभी देखा ही नहीं गया हो, वह सब शिव पूजा विधि के फलस्वरूप प्राप्त होता है।

ये वाञ्छन्ति महाभोगान् राज्यं च त्रिदशालये।
तेऽर्चयन्ति सदाकालं हरस्य चरणाम्बुजम्॥ 23॥

जो लोग महान् भोगों को चाहते हैं और देवताओं के लोक स्वर्ग में राज्य की इच्छा रखते हैं, वे सर्वकाल शिव के चरण-कमलों की अर्चना करते रहते हैं।

सौभाग्यं कान्तिमद्रूपं सत्यं त्यागः प्रभावता।
शौर्यं च जगति ख्यातिः शिवमर्चयतो भवेत्॥ 24॥

सौभाग्य, कान्ति-तेजोमय रूप, सत्य, त्याग, प्रभाव, शौर्य और संसार में ख्याति - ये सब भगवान् शिव के अर्चन-पूजन से ही सम्भव है।

नारुद्रः संस्मरेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमर्चयेत्।
नारुद्रः कीर्तयेद्रुद्रं नारुद्रो रुद्रमाप्नुयात्॥ 25॥

जो रुद्र का भक्त नहीं है, वह रुद्र का संस्मरण नहीं करता, जो रुद्र का भक्त नहीं है, वह रुद्र का अर्चन-पूजन भी नहीं करता। जो अरुद्र अर्थात् शिव का भक्त नहीं है, वह रुद्र का कीर्तन भी नहीं करता, अतः जो रुद्र भक्त नहीं है, वह रुद्र भगवान् को प्राप्त नहीं कर सकता।

शिवधर्मस्य सारोऽयं शिवे भक्तिः सुनिश्चला।
सा चाष्टाङ्गी शिवेनोक्ता कार्या नित्यं प्रयत्नतः॥ 26॥

शिवधर्म का सार यही है, इसी से शिव में निश्चल भक्ति होती है। शिव भक्ति अष्टांगी अर्थात् आठ प्रकार की है। जो भगवान् शिव ने कही है, उसे ही नित्य प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्रीभगवानुवाच —

मद्भक्तजंन वात्सल्यं पूजायामनुमोदनम्।
स्वयमभ्यर्चनं भक्त्या ममार्थे चाङ्गचेष्टितम्॥ 27॥

भगवान् शिव बोले कि मेरे भक्तजनों के प्रति वात्सल्य रखना, मेरी पूजा का अनुमोदन करना, स्वयं द्वारा भक्तिपूर्वक अर्चन-पूजन करना और शिव भक्ति के लिए चेष्टा करना,

मत्कथाश्रवणे भक्तिः स्वरनेत्राङ्ग विक्रिया।
ममानुस्मरणं नित्यं यश्च मां चोपजीवति॥ 28॥

इसी प्रकार मेरी कथा-श्रवण करने में भक्ति रखना, और अपने कथन-दर्शन अंगों की समस्त क्रियाओं का पालन, नित्य मेरे ही स्मरण में लगे रहना – इस प्रकार मेरे ही लिए जीवित रहते हैं।

भक्तिरष्टविधा ह्येषा यस्मिन्म्लेच्छेऽपि वर्तते।
स विप्रेन्द्रो मुनिः श्रीमान्स यतिः स च पण्डितः॥ 29॥

उपर्युक्त भक्ति आठ प्रकार की है। म्लेच्छ लोग भी यदि इसका पालन करते हैं तो वे इसके पालनकर्ता होने से विप्रेन्द्र या ब्राह्मणों में श्रेष्ठ हो जाते हैं। वे ही मुनि हैं, वे ही श्रीमान् है, वे ही यति और वे ही पण्डित हैं।

न मे प्रियश्चतुर्वेदी मद्भक्तः श्वपचोऽपि यः।
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स च पूज्यो यथाह्यहम्॥ 30॥

मुझे चतुर्वेदी (चारों वेदों का ज्ञाता) उतना प्रिय नहीं है, जितना कि मेरा भक्त। चाहे वह श्वपच ही क्यों न हो, उसके साथ आदान-प्रदान करना चाहिए, वह उतना ही पूज्य है, जितना मैं पूज्य हूँ।

[पत्रं पुष्पं] फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥ 31॥[1]

जो भी व्यक्ति भक्तिपूर्वक मुझे पत्र, पुष्प, फल और जल अर्पण करता है, उसे मैं कभी नहीं त्यागता और वह भक्तिमान् भी मुझे नहीं त्यागता है (वह नष्ट नहीं होता)।

नार्चयेद्यः सदात्मस्थं यो मां समयमास्थितः।
समां पर्वत दुर्गेषु मार्गमाणो विपद्यते॥ 32॥

---

1. तुलनीय— पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति। तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥ (गीता 9, 26)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो व्यक्ति सदा आत्मस्थ मुझ शिव की अर्चना नहीं करता, जो मुझे सर्व समय-आत्मा में स्थित को नहीं मानता, वह पर्वतों और दुर्गों को जाते हुए मार्ग में विपत्ति में पड़ता है।

योो मां सर्वत्रगं पश्येत् सर्वं च मयि संस्थितम्।
तस्याहं नित्यमात्मस्थः स च नित्यं मयि स्थितः ॥ 33 ॥[1]

और, जो मुझे सर्वत्र देखता है और सभी को मुझ में ही स्थित देखता है, उसके लिए तो मैं नित्य उसकी आत्मा में स्थित होकर रहता हूँ और वह भी नित्य मुझमें स्थित रहता है।

श्री नन्दिकेश्वर उवाच —

सुदुर्लभा शिवे भक्तिः दुर्लभं च शिवार्चनम्।
सुदुर्लभं शिवे दानं शिवहोमं च दुर्लभम्॥ 34 ॥
सुदुर्लभं शिवज्ञानं तदभ्यासोऽपि दुर्लभः।
सुदुर्लभमिदं ज्ञात्वा शिवे भक्तिं समाश्रयेत्॥ 35 ॥

(भगवान् के वचनों को सुनकर) श्री नन्दिकेश्वर कहने लगे कि भगवान् शिव की भक्ति बड़ी ही दुर्लभ है। भगवान शिव का अर्चन-पूजन करना बहुत ही दुर्लभ है। भगवान् शिव के लिए दान देना भी बड़ा दुर्लभ है और भगवान् शिव के लिए होम करना भी बड़ा दुर्लभ है। इसी प्रकार भगवान् शिव का ज्ञान होना बड़ा दुर्लभ है। उस ज्ञान का अभ्यास करना भी दुर्लभ है। अतएव यह ज्ञान बड़ा दुर्लभ है, ऐसा जानकर के भगवान् शिव की भक्ति का आश्रय ग्रहण करें।

लाभस्तेषां मनुष्याणां ये शिवं शरणागताः।
तेषां दिवा च रात्रो च नित्यं शिवगता स्मृतिः ॥ 36 ॥
नमस्कारादि संयुक्तं शिवायेत्यर्चये त्रयम्।
जिह्वाग्रे वर्तते यस्य सफलं तस्य जीवितम्॥ 37 ॥

जो मनुष्य शिव के शरणागत होते हैं, उनको शिव से लाभ होता है। उनकी दिन-रात नित्य ही शिव में लगी हुई स्मृति बनी रहती है। जो व्यक्ति त्रिकाल में नमस्कारपूर्वक शिव का अर्चन करता हैं और जिसकी जीभ के आगे शिव का नाम ही बसता है, उनका ही जीवन सफल है।

---

1. तुलनीय— समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः। ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥ (गीता 9, 29)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इत्येष वः समासेन शिवधर्मोऽखिलः क्रमात्।
निर्दिष्टः प्रथमाऽध्याये शेषोह्यस्यैव विस्तरः ॥ 38 ॥

संक्षेप में, समस्त शिवधर्म क्रमशः बस इतना ही है। (इस ग्रन्थ के) पहले अध्याय में यह निर्देशित कर दिया गया है, शेष अध्यायों में तो इसका विस्तार मात्र है।

य इदं पठते नित्यं शृणुयाद्वा समाहितः।
विमुक्तः सर्वपापेभ्यः शिवलोके महीयते ॥ 39 ॥

(शिवधर्म विषयक वचनों का माहात्म्य) जो इसे नित्य पढ़ता अथवा समाहित होकर सुनता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर शिव लोक को गमन करता है।

डाकिन्यो विविधाकारा राक्षसाः प्रेतनायकाः।
न तस्य पीडां कुर्वन्ति न तथान्येऽपि हिंसका ॥ 40 ॥

तरह-तरह के आकार वाली डाकिनियाँ, राक्षस और प्रेतों के नायक ऐसे शिव भक्तों को पीड़ा नहीं पहुँचा सकते हैं। इसी प्रकार कोई हिंसक प्राणी भी उसे पीड़ा नहीं दे सकते हैं।

शत्रवो नाशमायान्ति संग्रामे जयमाप्नुयात्।
स न रोगेण बाध्येत न स्पृशन्त्यापदोऽपितम् ॥ 41 ॥

उसके शत्रुओं का नाश होता है और वह संग्राम में विजय प्राप्त करता है। कोई भी रोग उसके लिए बाधक नहीं होता, न उसे कोई आपदा भी छू सकती है।

धनमायुर्यशोविद्याप्रभावैश्चातुलो भवेत्।
शुभेनोपचयं याति नित्यं पूर्ण मनोरथः ॥ 42 ॥

उसको अतुलित धन, आयु, यश, विद्या, प्रभाव (प्रभुत्व) प्राप्त होता है। वह सदा शुभ को प्राप्त करता हुआ पूर्ण-मनोरथ होता है।

इति शिवधर्मपुराणे[1] सनत्कुमार-नन्दिकेश्वर संवादे [अष्टाङ्ग शिवभक्ति प्रवर्तनं नामः] प्रथमोऽध्यायः ॥ 1 ॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में सनत्कुमार-नन्दिकेश्वर संवाद में पहला अध्याय पूरा हुआ।

*****

---

1. 'धर्मशास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥ 2 ॥

शिवलिङ्ग के पूजन, अभ्यांगादि की पुण्य विधि और विविध प्रकारेण पूजादि के फलों के सम्बन्ध में श्रीसनत्कुमार का श्रीनन्दिकेश्वर के प्रति प्रश्न

(सनत्कुमार उवाच—)

लिङ्गार्चन विधिं पुण्यं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः।
त्वत्प्रासादादशेषेण भगवन्नन्दिकेश्वरः! ॥ 1 ॥

(सनत्कुमार बोले) हे नन्दिकेश्वर! आपकी हम पर पूरी कृपा है। मैं आपसे लिङ्ग के पूजन की पुण्य विधि को तत्त्वतः सुनना चाहता हूँ।

यत्पुण्यं स्थापिते लिङ्गे कृते ये च शिवालये।
सम्मार्जने च यत्पुण्यं यत्पुण्यमुपलेपने ॥ 2 ॥
नीराजनौषधीबीजास्नान मङ्गल वादने।
पुण्यं यच्चार्घ्यदानेन तोय स्नाने च यत्फलम् ॥ 3 ॥

(कृपया आप बताएँ) शिवलिङ्ग की स्थापना करने अथवा शिवालय निर्माण कराने का जो पुण्य हो, उसमें झाड़ू-बुहार करने का जो पुण्य हो और वहाँ लेपन करने का जो पुण्य हो; शिवलिङ्ग के नीराजन (आरती) करने का, औषधियों, बीजों से स्नान कराने का, मङ्गलवादन करने का, अर्घ्यदान का और जल से स्नान कराने का जो पुण्य हो (वह सब कृपया कहें)।

पञ्चगव्यपयःस्नाने दधिस्नाने च यद्भवेत्।
घृताभ्यङ्गे च यत्प्रोक्तं घृतस्नाने य यद्भवेत् ॥ 4 ॥
मधुस्नानेन यत्प्रोक्तं पुण्यमिक्षुरसेन च।
उद्वर्तनान्तरास्नानं कुशपुष्पोदकेन च ॥ 5 ॥
सुवर्णरत्नतोयैस्तु गन्धचन्दनवारिभिः।
कर्पूरागरुतोयैश्च स्वच्छतोयेन यत्फलम् ॥ 6 ॥

इसी प्रकार शिवलिङ्ग को पञ्चगव्य और दूध से स्नान कराने का, दही से स्नान कराने का जो पुण्य हो तथा घी का अभ्यंग (मालिश कार्य) का जो फल कहा गया है और घी से स्नान कराने का जो पुण्य होता है (उसे कहिए); शिवलिङ्ग को शहद से

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स्नान कराने का जो पुण्य है और स्नान के साथ जो उबटन किया जाए, कुशा व पुष्पों के जल से, सोने से, रत्नों से युक्त जल से तथा सुगन्धित चन्दन के जल से, कर्पूर, अगरु के जल से और स्वच्छ जल से स्नान कराने का जो फल है (उसे बताइए)।

विलेपनैश्च गन्धाद्यैः विलिप्तेन च यत्फलम्।
तालवृन्त प्रदानेन प्रदाने चामरस्य च॥ 7॥
मुक्तापुष्पार्चने यच्च मालाभिर्लिंगपूरणे।
पुष्पमण्डपिकायां च पुष्पमालावलम्बने॥ 8॥
पूजनोक्तविशेषैश्च वेद्यामालावलम्बने।
पुष्पजातिविशेषेषु धूपदीपे च यत्फलम्॥ 9॥

शिवलिङ्ग पर गन्धादि का लेप करने का जो फल है, तालवृन्त (ताड़ का पंखा) प्रदान करने का और चामर ढुलाने का जो फल है तथा पुष्पों से पूजन करने का तथा माला आदि से शिवलिंग को सजाने का, पुष्पों से मण्डप बनाने का तथा पुष्पों की मालाओं को चढ़ाने का और पूजन में जो विशेष कहा गया है और जिसे मालाओं के अवलम्बन से जाना जाता है तथा विशेष प्रकार की पुष्प-जाति से पूजन करने और धूप-दीप करने का जो फल हो (उसे कहिए)।

वस्त्रालङ्कार दानेन दीपदर्पणदर्शने।
भक्ष्यभोज्यान्नपानादि फलकन्दनिवेदने॥ 10॥
प्रदक्षिण नमस्कार प्रणामस्तोत्रजं फलम्।
छत्रध्वजपताकानां घण्टावादित्र शङ्खयोः॥ 11॥

वस्त्र और आभूषणों का दान करने का, दीपक दर्शन कराने का, दर्पण दिखाने का, भक्ष्य भोजन, अन्न-पान आदि का तथा फल, कन्द अर्पण करने का; प्रदक्षिणा व नमस्कार करने का प्रणाम व स्तोत्र पाठ करने का जो फल है, छत्र, ध्वज, पताका, घण्टा इत्यादि वादित्र व शङ्ख चढ़ाने का जो फल है (वह बताइए)।

वितानवस्त्रपूजायां बलिहोमक्रियासु च।
गवगन्धभृत्यनागानां भूमिदाने च यत्फलम्॥ 12॥
ग्रामखेटपुराणां च देशदाने च यत्फलम्।
स्त्रीणां सङ्गीतदानेन नाट्येनैव विशेषतः॥ 13॥

शिवार्थ वितान, वस्त्र, पूजा, बलि, होम-क्रिया आदि का, गाय, गन्ध, भृत्य

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

और नाग (धातुमय सर्पराज) का तथा भूमिदान करने का जो फल है, ग्राम, खेड़ा, पुर और देश[1] दान करने का जो फल है, स्त्रियों के समूहों द्वारा संगीत के गायन, वादन तथा नाटक आदि की प्रस्तुति आदि से जो विशेष फल होता हो (वह सब कहिए)।

स्वयं माल्योपहारेण पुंसां पुण्यं च यद्भवेत्।
तत्पालनापहारे च पुण्यापुण्यं च यद्भवेत्॥ 14॥
[शिवयोगीभोज]नादि पात्रोपकरणानि च।
दत्वा किं लभते पुण्यं कृत्वा वा तत्प्रतिश्रयम्॥ 15॥

अपने द्वारा बनाई गई माला के उपहार से मनुष्यों को जो पुण्य होता हो और उसकी पालना करने और छोड़ने से जो पुण्य-पाप होता हो; शिवयोगियों को भोजन करवाने, पात्रों, उपकरणों और भवनों एवं सरायों के शिव के प्रति दान से क्या पुण्य लाभ होता है?

नमस्कारे तथा तेषां प्रत्युत्थानाभिवादने।
खट्वा प्रावरणादीनि दत्वा यत्फलभाग्भवेत्॥ 16॥
यदप्यन्यद्भवेत्सूक्ष्मं अज्ञानान्न प्रचोदितम्।
तत्सर्वं कथयाऽस्माकं भक्तानामनुकम्पया॥ 17॥

इसी प्रकार उनको नमस्कार करने का और उठकर अभिवादन करने का तथा खाट, प्रावरण (पर्दा) आदि करने का जो फल होता हो, इसी प्रकार जो भी अन्य सूक्ष्म कार्य हों और यहां जानकारी के अभाव में नहीं कहे गए हों, उन सभी फलों को हम भक्तों पर कृपा करके आप कहिए।

इति शिवधर्मपुराणे[2] (भगवन्नार्थे कृतकार्यस्य पुण्य विषयक प्रश्नं नाम)
द्वितीयोऽध्यायः॥ 2॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में लिंगार्चन विधि पुण्य नामक द्वितीय अध्याय पूरा हुआ।

*****

---

1. यहां खेट, पुर शब्द आए हैं जो इस पुराण के उत्तरी या पश्चिमी भारत में कहीं लिखे गए होने का प्रमाण है।
2. 'धर्मशास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ तृतीयोऽध्यायः ॥ 3 ॥

लिङ्गोद्भावाख्यान, लिङ्गपूजन की पुण्य विधि एवं विविध प्रकार से पूजादि के फलों के सम्बन्ध में श्रीसनत्कुमार के प्रश्न पर श्रीनन्दिकेश्वर का उत्तर

श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

त्वमतीव शिवभक्तः पद्मयोनि सुतोत्तम!।
तेन ते निखिलं वक्ष्ये शृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ 1 ॥

(सनत्कुमार के प्रश्न पर) श्रीनन्दिकेश्वर बोले कि तुम अति ही शिव भक्त हो और पद्मयोनि ब्रह्माजी के उत्तम पुत्र हो। इसलिए मैं तुम्हें वह सब कहता हूँ (जो तुमने पूछा है), उसको तुम एकाग्र मन होकर सुनो।

पूर्वमेकार्णवे घोरे नष्टे स्थावरजङ्गमे।
विवादस्तु महानासीद ब्रह्मविष्ण्वोः परस्परम् ॥ 2 ॥

पूर्वकाल में जब प्रलयवारिधि में समस्त स्थावर और जंगम प्राणी नष्ट हो गए थे तब पितामह ब्रह्माजी और भगवान् विष्णु में परस्पर बड़ा विवाद खड़ा हो गया।

अहं कर्ताह्ययं कर्ता नमतोऽन्यो जगत्प्रभुः।
एवमाहहरिं ब्रह्मा ब्रह्माणं च हरिस्तथा ॥ 3 ॥

'मैं ही कर्ता हूँ', 'मैं ही कर्ता हूँ', 'मेरे अतिरिक्त कोई भी अन्य इस जगत का प्रभु नहीं है'— इस तरह से भगवान् विष्णु और ब्रह्मा एक दूसरे को कह रहे थे।

तयोर्दर्पापहारार्थं प्रबोधार्थं च देवयोः।
मध्ये सम्भवल्लिङ्गं ऐश्वरं तैजसं परम् ॥ 4 ॥

उक्त विवाद के दौरान ही दोनों के अभिमान को मिटाने के लिए और देवताओं को बोध कराने के लिए उन दोनों के मध्य में लिंग का उद्भव हुआ जो भगवान् शिव के ऐश्वर्य और परम तेज से युक्त था।

ज्वालामालावृतं दिव्यमप्रमेयमनूपमम्।
योजनायुत विस्तीर्णं स्थितं तद्विमलेम्भसि ॥ 5 ॥

उस लिंग के चारों ही ओर दिव्य ज्वाला धधक रही थी। वह ज्वाला बड़ी

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अप्रमेय, अनुपम तथा अयुत (दस हजार) योजनों तक विस्तार वाली थी। वह लिंग विमल जल में अवस्थित था।

ज्वालाभिर्मोहितो तस्य लिङ्गस्य सुरसत्तमौ।
ततो विस्मयमापन्नौ पश्यन्तावमराधिपौ॥ 6॥

उस लिंग ने अपनी दैदीप्यमान ज्वाला से सभी देवताओं को मोहित कर दिया। इसी से विस्मित होकर वे देवराज इंद्र की ओर देखने लगे।

शतादूर्ध्वमधस्तस्य सम्प्रधार्य परस्परम्।
अधो द्रष्टुं गतो विष्णुरूर्ध्वं चैव पितामहः॥ 7॥
अदृष्टान्तमधश्चोर्ध्वं तौ समेत्य परस्परम्।
कृताञ्जलिपुटौ भूत्वा लिङ्गं तुष्टुवतुस्तदा॥ 8॥

यह आश्चर्य ही था कि वह लिंग सैकड़ों (योजन) से ऊपर और सैकड़ों (मान प्रमाण) नीचे गया हुआ था अर्थात् उसको ओर छोर नहीं था। (इस पर) उसका नीचे की ओर का प्रमाण देखने के लिए विष्णु गए और ऊपर की ओर उसका प्रमाण जानने के लिए पितामह ब्रह्मा गए; परन्तु उन्हें नीचे और ऊपर उस लिंग का कहीं अन्त नहीं दिखाई दिया। इसलिए ब्रह्मा और विष्णु दोनों ने ही हाथ जोड़कर उस लिंग से ही पूछना चाहा।

हरिधातृकृत लिङ्गोत्पत्तिस्तवम् :

अनादि देव देवेश! विश्वेश्वर! महेश्वर!।
सर्वज्ञ! ज्ञानविज्ञान प्रदायक! नमोऽस्तुते॥ 9॥

हे अनादि देव देवेश! विश्वेश्वर! महेश्वर ! सर्वज्ञ! ज्ञान-विज्ञान के प्रदायक आपको नमस्कार है।

अनन्तकान्ति (सम्पन्न) अनन्तासन संस्थित!।
अनन्तशक्तिसंभोग! परमेश! नमोऽस्तुते॥ 10॥

आप अनन्तकान्ति से सम्पन्न हैं! आप अनन्त आसन पर संस्थित है! आप अनन्त शक्ति का संभोग करने वाले हैं। हे परमेश! आपको नमस्कार है।

परावरपरातीत! उत्पत्तिस्थितिकारण!।
सर्वार्थ साधनोपाय! विश्वेश्वर! नमोऽस्तुते॥ 11॥

आप पर और अपर के अतीत है! उत्पत्ति व स्थिति के कारण आप ही हैं। आप सभी साधनों के उपाय है। हे विश्वेश्वर आपको नमस्कार है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

बहुरूप! महारूप! सर्वरूप! नमोऽस्तुते।
पशुपाशार्णवातीत! वरप्रद नमोऽस्तुते॥ 12॥

आप बहुत रूप वाले हैं! आप महारूप वाले हैं! समस्त रूप वाले हैं! आपको नमस्कार है। आप पशुपाश युक्त सागर से भी अतीत हैं। आप वरदान देने वाले हैं। आपको नमस्कार है।

स्वभाव निर्मलाभोग! सर्वव्यापिन् सदाशिव।
योगयोगिन्महायोगिन् योगेश्वर! नमोऽस्तुते॥ 13॥

आपका स्वभाव ही निर्मल भोग वाला है, आप सर्वव्यापी और सदाशिव है! आप योग व योगियों के भी महायोगी है! योगेश्वर है! आपको नमस्कार है।

निरञ्जन! निराधार! स्वाधार! निरूपप्लवः!।
प्रसन्न परमेशान! योगेश्वर! नमोऽस्तुते॥ 14॥

आप निरंजन हैं! निराधार है! अपने ही आधार से हैं! आप प्रलय से रहित हैं! हे प्रसन्न परम ईशान! हे योगेश्वर! आपको नमस्कार है।

जिह्वा चपलभावेन वेदितव्योऽसि यन्मया।
तत् क्षन्तव्यमनौपम्य! कस्ते स्तौति गुणार्णवम्॥ 15॥

हे प्रभु! मेरे द्वारा जिह्वा की चपलता से जो कुछ भी आपको कहा गया हो, उसे आप क्षमा कर देना। आप गुणों के सागर की स्तुति कौन कर सकता है।

लिङ्गोत्पत्तिस्तवं पुण्यं यः शृणोति नरस्सदा।
नोत्पद्यते स संसार स्थानं प्राप्नोति शाश्वतम्॥ 16॥
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन शृणुयाद्वाचयेत्तथा।
पाप कञ्चुकमुसृज्य प्राप्नोति परमं पदम्॥ 17॥

इस तरह लिंग के स्तवन का पुण्य जो नर सदा सुनता है, वह पुनः इस संसार में उत्पन्न नहीं होता। वह शाश्वत स्थान को प्राप्त कर लेता है। इसलिए समस्त प्रयास करके इस स्तवन को सुनना और सुनाना चाहिए। इससे पापों की केंचुली को छोड़कर व्यक्ति परम पद को प्राप्त कर लेता है।

लिङ्गमध्ये परं लिङ्गं स्थितं प्रादेश संमितम्।
समाधिस्तोत्र सम्पन्नौ दृष्टयन्तौ शिवात्मकौ॥ 18॥
नैव तत्काञ्चनं रौप्यं ताम्रं स्फाटिक मौक्तिकम्।
लक्षमात्रस्थितं शान्तं केवलं तच्छिवात्मकम्॥ 19॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इधर, उक्त दिव्य लिंग के मध्य में प्रादेश या बालिस्त भर प्रमाण का एक परमलिंग विद्यमान था जिसे समाधिस्तोत्र सम्पन्न लोगों ने शिवात्मक रूप में देखा। वह न तो सोने का था, न चाँदी और न ताँबे का था। वह न स्फाटिक, न ही मोती का था। वह तो लक्षमात्र स्थित होकर शान्त केवल शिवात्मक रूप में ही था।

तयोऽस्तुष्टौ महादेवो प्रददौ वरमुत्तमम्।
कारणत्वमनुक्त्वा च तत्रैवान्तरधीयत॥ 20॥

उस स्तवन से महादेव उन पर संतुष्ट हुए और उन्हें उत्तम वरदान दिया। साथ ही कारण नहीं बताते हुए वे अन्तर्धान हो गए।

ततः प्रभृति ब्रह्माद्याः प्रतिष्ठाप्य सुरासुराः।
तल्लिङ्गानुकृतिं लिङ्गं ईडिरे मुनयस्तदा॥ 21॥
परं ग्रन्थ शरीरं च लिङ्ग क्षेत्रमनादिमत्।
यदा ममैश्वरं तेजः तलिङ्गं पञ्चसञ्ज्ञितम्॥ 22॥

तब ब्रह्मादि सभी देवता और असुरों ने पूर्वोक्त जिस लिंग के दर्शन हुए, उसकी अनुकृति बनाई और प्रतिष्ठा की। मुनियों ने पूजन किया— ग्रन्थ शरीर से, अनादि क्षेत्र से, ईश्वर के ऐश्वर्य से, तेज से और लिंग के पाँच नामों से।

कल्पान्ते यस्य लिङ्गस्य लीयन्ते सर्वदेवताः।
दक्षिणे लीयते ब्रह्मा वामतश्च जनार्दनः॥ 23॥
हृदये चैव गायत्री सर्वदेवोत्तमोत्तमः।
लीयन्ते मूर्ध्नि वै वेदाः सर्षिसङ्गपदक्रमाः॥ 24॥
जठरे लीयते सद्यः जगत्स्थावरजङ्गमम्।
पुनरुत्पद्यते तस्माद् ब्रह्माण्डं सचराचरम्॥ 25॥

कल्प के अन्त में सभी देवता इस लिंग में लीन हो जाते हैं। इसके दायें भाग में ब्रह्मा, बायें भाग में विष्णु, हृदय में सभी देवताओं में उत्तमोत्तम गायत्री तथा मुँह में वेद लय को प्राप्त होते हैं तथा ऋषि संगपद में क्रम से लीन होते हैं। पेट में सारा स्थावर-जंगम जगत लीन होता है। पुनः उससे ही यह समस्त ब्रह्माण्ड चराचर सहित समुत्पन्न होता है।

आकाशं लिङ्गमित्याहुः पृथिवी तस्य पीठिका।
आलयः सर्वभूतानां लयनालिङ्गमुच्यते॥ 26॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तस्माल्लिङ्गं प्रतिष्ठाप्य सर्वदेवभवोद्भवम्।
स्थापितं तेन सर्वं स्यात् पूजितं च न संशयः ॥ 27 ॥

आकाश को लिंग कहा गया है जिसकी पीठिका पृथ्वी है जो सभी प्राणियों का आलय अर्थात् निवास स्थान है। लयना अर्थात् लीन होने के करण इसको लिंग कहा गया है।[1] इसलिए लिंग की प्रतिष्ठा करके सभी देवता उत्पन्न हुए, उन सबके द्वारा यह लिंग स्थापित और पूजित हुआ, इस कथन में कोई संशय नहीं है।

कृताञ्जलिपुटो विष्णुः ब्रह्मा च ब्रह्म तत्परः।
पूर्वं लिङ्गं समभ्यर्च्य पश्चात्कार्याणि च क्रतुः ॥ 28 ॥

भगवान् विष्णु ने हाथ जोड़कर और पितामह ब्रह्मा ने ब्रह्म में तत्पर रहकर सर्वप्रथम लिंग की पूजा की। तदोपरान्त अन्य सब कार्य किए।

ब्रह्मा ब्रह्माक्षरैर्दिव्यैः लिङ्गं पूजयते सदा।
गन्धपुष्पादिभिर्नित्यं विष्णुः पूजयते शिवम् ॥ 29 ॥

पितामह ब्रह्मा सदा ही दिव्य ब्रह्माक्षरों (ब्राह्मी लिपि[2]) से लिंग की पूजा करते हैं। गन्ध और पुष्पादि से नित्य प्रति विष्णु शिव का पूजन-आराधन करते हैं।

ब्रह्मा पूजयते नित्यं लिङ्गं शैलमयं शुभम्।
तस्य सम्पूजनात्तेन प्राप्तं ब्रह्मत्वमुत्तमम् ॥ 30 ॥

---

1. लिंगपुराण में कहा गया है कि प्रलयकाल में सारी सृष्टि जिसमें लीन होती है और पुनः सृष्टिकाल में जिससे सर्जन होता है, उसे लिंग कहा जाता है— लयं गच्छन्ति भूतानि संहारे निखिलं यतः। सृष्टिकाले पुनः सृष्टिस्तम्भाल्लिङ्गमुदाहृतम् ॥ (लिङ्ग 99, 8)
इसी प्रकार तन्त्रविशारदों का मत है कि लिंग ही सृष्टि का कारण है— लिंगशब्देन विद्वांसः सृष्टिसंहारकारणम्। (तन्त्रावलोक 4, 131)
2. इस पुराण में कदाचित प्रथम बार ब्राह्म-अक्षरों का नाम आया है। यह महत्वपूर्ण है। ब्रह्मा ने ही पुष्कर क्षेत्र में ब्राह्मीलिपि का आविष्कार किया था। चीन के विश्वकोष 'फा-वान-शू-लिन' में यही मत मिलता है कि ब्रह्मा ने एक विशिष्ट प्रकार की लिपि का अन्वेषण किया था। कोष में ब्राह्मी की ओर संकेत करते हुए कहा गया है कि यह बायें से दाहिनी ओर लिखी जाती थी। नारदस्मृति में आया है कि यदि ब्रह्मा नेत्र के समान उत्तम लेखन-कला की सृष्टि नहीं करते तो इस लोक की यह शुभ गति अथवा शुभ संचरण नहीं होता : नाकरिष्यद्यदि ब्रह्मा लिखितं चक्षुरुत्तमम्। तत्रैयमस्य लोकस्य नाभविष्यच्छुभा गतिः ॥ (नारदस्मृति उपर्युक्त, 4, 1, 70)
पितामह ब्रह्मा द्वारा अपनी लिपि के प्रवर्तन की यह मान्यता धर्मशास्त्रकार नारद की ही नहीं है, ऋग्वेद का एक मंत्र भी यह संकेत देता है कि भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी ब्रह्मा की बनाई हुई है और वह ब्रह्मी थी : तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत् ॥ अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीऋतस्य मातरः। मर्मृज्यन्ते दिवः शिशुम् ॥ (ऋग्वेदसंहिता 9, 33, 4-5)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ब्रह्माजी सदैव शैलमय (पाषाण के) लिंग की पूजा करते आए हैं। उसके पूजन से ही अन्ततः उन्होंने उत्तम ब्रह्मत्व प्राप्त किया है।

इन्द्रनीलमयं लिङ्गं विष्णुः पूजयते सदा।
विष्णुत्वं प्राप्तवांस्तेन सोऽद्भुतैकं सनातनः॥ 31॥

भगवान् विष्णु सदैव इन्द्रनीलमय लिंग का पूजन करते रहे हैं। इसके फलस्वरूप उन्हें विष्णुत्व की सिद्धि हुई। उनकी यह सिद्धि अद्भुत और सनातन है।

शक्रोऽपि देवराजेन्द्रो लिङ्गं मणिमयं शुभम्।
कृत्वा पूजयते नित्यं तेन शक्रत्वमाप्तवान्॥ 32॥

देवताओं के राजा इन्द्र ने शुभ मणिमय लिंग बनाकर उसकी नित्यप्रति पूजा की। इसी के फलस्वरूप उन्हें इन्द्रत्व की प्राप्ति हुई।

लिङ्गं हेममयं कान्तं धनदोऽर्चयते सदा।
तेनासौ धनदो देवो धनदत्वमवाप्तवान्॥ 33॥

धनपति कुबेर ने स्वर्णमय लिंग बनाकर पूजन किया। इसके फलरूप में वह यक्षराज धनद धनदत्व को प्राप्त कर सके।

विश्वेदेवा महात्मानौ रौप्यं लिङ्गं मनोहरम्।
यजन्ते विधिवत्तेन विश्वे देवत्वमाप्नुयुः॥ 34॥

विश्वेदेवों ने चाँदी का मनोहर लिंग बनाकर भक्तिपूर्वक उसका पूजन किया। इसी से उन्हें विश्वेदेवत्व प्राप्त हुआ।

वायुः पूजयते भक्त्या लिङ्गं पित्तलजं शुभम्।
वायुत्वं तेन सम्प्राप्तं अनौपम्यगुणावहम्॥ 35॥

वायुदेव ने मिश्रधातु पीतल का शुभ लिंग बनाकर उसका भक्ति सहित पूजन किया जिससे उन्हें वायुत्व प्राप्त हुआ जो अनुपम गुणों से युक्त है।

वसवः क्षणिकं लिङ्गं पूजयन्ति विधानतः।
प्राप्तास्तेन महात्मानो वसुत्वं सुमहोदयम्॥ 36॥

वसुओं ने क्षणिक लिंग की रचना की और उसका विधि-विधान के साथ पूजन किया। इसी से उन महात्मा को महान् वसुत्व की प्राप्ति हुई।

अश्विनौ पार्थिवं लिङ्गं पूजयन्तौ विधानतः।
तेनतावश्विनौ देवौ दिव्यदेहगतावुभौः॥ 37॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अश्विनीकुमारों ने पार्थिव लिंग की रचना की और विधान सहित उसका पूजन किया। इसके फलस्वरूप वे दोनों देव दिव्यदेह को धारण करने वाले बने थे।

स्फाटिकं निर्मलं लिङ्गं वरुणोऽर्चयते सदा।
वरुणत्वं हि सम्प्राप्तं तेन ऋध्या समन्वितम्॥ 38॥

स्फाटिक का निर्मल लिंग बनाकर वरुण सदा ही उसकी अर्चना करते रहे हैं। इसके फलस्वरूप उन्हें वरुणत्व प्राप्त हुआ जो ऋद्धि से समन्वित है।

लिङ्गमन्नमयं पुण्यं अग्निर्यजति भावितः।
अग्नित्वं प्राप्तवास्तेन तेजोरूप समन्वितम्॥ 39॥

अग्निदेव सदा ही अन्नमय लिंग बनाकर उसकी भावपूर्वक पूजा करते हैं। इसी से उन्हें अग्नित्व प्राप्त हुआ और वे तेजोमय रूप से युक्त हुए।

ताम्रलिङ्गं सदाकालं भक्त्या देवो दिवाकरः।
त्रिकालं यजते तेन प्राप्तं सूर्यत्वमुत्तमम्॥ 40॥

ज्योतिष्मान् सूर्यदेव ने ताम्र का लिंग बनाकर उसका त्रिकाल पूजन किया। इसी से उन्हें उत्तम सूर्यत्व की प्राप्ति हुई।

मुक्ताफलमयं लिङ्गं सोमः पूजयते सदा।
तेन सोमोऽपि सम्प्राप्तः सोमत्वं सततोज्वलम्॥ 41॥

सोम अथवा चन्द्रमा ने मुक्ताफलमय लिंग बनाकर उसकी पूजा की। इसके फलस्वरूप सोम को सतत उज्ज्वल सोमत्व की सम्प्राप्ति हुई।

प्रवालकमयं लिङ्गं यजन्ते पन्नगोत्तमाः।
तेन नागाः सुभोगाढ्याः प्राप्तास्ते परमं पदम्॥ 42॥

नागराज पन्नग प्रवालमय लिंग की अर्चना करते हैं। इससे उन्हें बहुत प्रकार के सुभोगों की प्राप्ति हुई और उन्होंने परमपद प्राप्त किया।

कृष्णायसमयं लिङ्गं पूजयन्तिऽसुरोत्तमाः।
राक्षसाश्च महात्मानः तेन तेऽमित विक्रमाः॥ 43॥

कृष्णायस अर्थात् काले लौह का लिंग बनाकर असुरों ने उसका पूजन किया। इसी के फलस्वरूप वे महात्मन् राक्षस बनें और अमित विक्रमवान हुए।

त्रपुसीसमयं लिङ्गं पिशाचाः पूजयन्तितम्।
तेन ऋद्धिबलोपेताः प्राप्नुवन्ति परं पदम्॥ 44॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

त्रपु या राँगा और सीसे का मिश्रित लिंग बनाकर पिशाचगणों ने उसका पूजन किया। इससे वे ऋद्धिबल के धारक हुए और उन्होंने परमपद की प्राप्ति की।

त्रैलोहिकं सदालिङ्गं यजन्ते गुह्यकादयः।
तेन भोगबलोपेताः प्रयान्ति परमन्दिरम्॥ 45॥

तीन लौह वाले लिंग का यजन गुह्यकादिगणों ने किया। इसके फलस्वरूप वे भोगबल से युक्त हुए और परम मन्दिर (परमधाम) को प्राप्त हुए।

बहुलौहमयं लिङ्गं यजन्ते मातरः सदा।
मातृत्वं प्राप्य तास्सर्वाः प्रयान्ति परमं पदम्॥ 46॥

बहुलौहमय लिंग का सदैव मातरों ने पूजन किया। इससे उन्हें मातृत्व की प्राप्ति हुई और अन्तकाल में उन सभी को परम पद की प्राप्ति हुई।

एवं देवाः सगन्धर्वाः सयक्षोरगराक्षसाः।
पूजयन्ति सदाकालं ईशानं सुरनायकम्॥ 47॥

इसी प्रकार देवता तथा गन्धर्वों ने यक्षों और नागों सहित राक्षसों ने सर्वकाल सुरनायक ईशानदेव की पूजा की।

सर्वोलिङ्गमयो लोकः सर्वं लिङ्गे प्रतिष्ठितम्।
तस्मात्सदार्चयेल्लिङ्गं यदीच्छेत्सिद्धिमात्मनः॥ 48॥

यह समस्त लोक लिंगमय माना जाता है। सभी कुछ लिंग में ही प्रतिष्ठापित हैं। इसलिए अपने लिए सिद्धि के इच्छुक जनों को सदा ही लिंग की अर्चना की जानी चाहिए।

लिङ्गे देवो महादेवः साक्षाद्देवव्यवस्थितः।
अनुग्रहाय लोकानां तस्माल्लिङ्गं प्रपूजयेत्॥ 49॥

लिंग में ही देवों के देव महादेव सदैव निवास करते हैं। अतः लोगों के अनुग्रह के नित्तिम से लिंग की पूजा की जानी चाहिए।

यो न पूजयते मोहात् लिङ्गं त्रिभुवनेश्वरम्।
नासौ स्वर्गस्य मोक्षस्य न च राज्यस्य भाजनम्॥ 50॥

जो व्यक्ति मोह के वशीभूत होकर अथवा बहकाया जाकर त्रिभुवनेश्वर लिंग की पूजा नहीं करता है, वह न तो कभी स्वर्ग का और न ही मोक्ष-राज्य का पात्र होता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यः पूजयति भक्त्या लिङ्गं त्रिभुवनेश्वरम्।
स्वर्गमोक्षे च राज्यानां क्षिप्रं भवति भाजनम्॥ 51॥

इसके विपरीत जो कोई भक्तिपूर्वक त्रिभुवनेश्वर लिंग की पूजा करता है, वह स्वर्ग और मोक्षराज्य का अतिशीघ्र ही पात्र हो जाता है।

तस्मादेकमना भूत्वा यावज्जीवं प्रतिज्ञया।
अर्चयीत महादेवं आपन्नोपि सदा बुधः॥ 52॥

इसलिए बुद्धिमान् लोग एकाग्रचित्त होकर जब तक जीवन रहते हैं, तब तक प्रतिज्ञापूर्वक नित्यप्रति महादेव की अर्चना-पूजा करते हैं।

वरं प्राण परित्याग शिरसोवापि भेदनम्।
नत्वा चाभ्यर्च्य भुञ्जीयाद्भगवन्तं त्रिलोचनम्॥ 53॥

स्थितियां कैसी भी क्यों न हों— चाहे प्राण गँवाना पड़े अथवा सिर कटवाना पड़े, वचन तक से कभी भगवान् त्रिलोचन की पूजा करना नहीं छोड़ना चाहिए।

एवं निर्वहते यस्तु यावज्जीवं प्रतिज्ञया।
मनुष्यचर्मणा बद्धः स रुद्रो नात्र संशयः॥ 54॥

मनुष्य के चमड़े में बँधा हुआ, वह रुद्र शिव ही है, इसमें कोई संशय नहीं है। व्यक्ति को जीवनभर ऐसी प्रतिज्ञा का निर्वाह करना चाहिए।

नास्ति लिङ्गार्चनादन्यत्पुण्यमभ्यधिकं कलौ।
एवं विज्ञाप्य यत्नेन पूजनीयः सदाशिवः॥ 55॥

इस कलिकाल में लिंगार्चन से बड़ा कोई पुण्य नहीं हो सकता है, ऐसा समझकर प्रयत्नपूर्वक सदा ही शिव का पूजन करना चाहिए।

यो लिङ्गं द्वेष्टि सम्मोहात्सर्वलोक नमस्कृतम्।
नरो नरकगामी स्यात् तस्य सम्भाषणादपि॥ 56॥

जो मोहवश लिंग से द्वेष करता है किन्तु समस्त लोकों को नमस्कार भी करता है तो भी वह व्यक्ति नरकगामी होता है। ऐसे व्यक्ति से सम्भाषण करने से भी नरकगामी होते हैं, यह जानना चाहिए।

माहेश्वर परं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्।
ते कृताघ्ना भवन्तीह ये न भक्ता महेश्वरे॥ 57॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यह सच है कि तीन लोकों के चराचर में महेश्वर ही सब कुछ है, इसलिए वे लोग कृतघ्न हैं, जो भक्तिपूर्वक महेश्वर का पूजन नहीं करते।

यस्मात्सर्वेषु भूतेषु गतिर्देवो महेश्वरः।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन शिवमेव समाश्रयेत्॥ 58॥

यह प्रयास हो कि समस्त प्राणियों की गति महेश्वर तक हो। अतएव पूरा प्रयत्न करके शिव का ही आश्रय ग्रहण करना चाहिए।

सागराणां क्षयं व्यन्ति क्षीयते हिमवानपि।
रुद्रलोके क्षयो नास्ति शङ्करे शरणं गते॥ 59॥

यह जानना चाहिए कि समुद्रों का भी क्षय हो सकता है, गिरिराज हिमालय का भी क्षरण सम्भव है परन्तु रुद्रलोक का क्षय नहीं होता, यदि शंकर की शरण मिल जाए तो श्रेष्ठ है। शिव की शरण ही गति है।

एष्टव्या बहवः पुत्राः शिवधर्मानुसारिणः।
समुद्धरन्ति ते गोत्रं रज्जुः कूपाद्घटं यथा॥ 60॥

यह देखा गया है कि बहुत से लोग इष्ट-कामना वाले होते हैं, बहुत से पुत्र शिवधर्म का पालन करने के वाले होते हैं और वे अपने गोत्र (कुल-समूह) का उद्धार ठीक वैसे ही कर लेते हैं जैसे ही रस्सी कूप से घड़े को खींच लाती है।

समुद्धृत्य तथा ह्यन्ते कुलानामेकविंशतिम्₂₁ ।
शिवत्वं यान्ति ते क्षिप्रं धर्माधर्मविवर्जिताः॥ 61॥

ऐसे शिवार्चनकर्ता पुत्र अन्तोगत्वा अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करते हैं और शीघ्र ही शिवत्व को प्राप्त करते हैं जहां धर्म-अधर्म नहीं होते।

अथ लिंगस्वरूपाणि—

लिङ्गद्वयं समाख्यातं चरं चाचरमेव च।
चरं व्यक्तिति विख्यातं अचरं पार्थिवादिकम्॥ 62॥

लिंग दो प्रकार के कहे गए हैं— 1. चर और 2. अचर। चरलिंग व्यक्त रूप में होता है जबकि अचर लिंग पार्थिव-पाषाणमय आदि का होता है।

चरे सदावसत्येव प्रतिच्छन्नो महेश्वरः।
अचरे मन्त्र संस्काराद् वसत्येव सदाशिवः॥ 63॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चरलिंग में सदा महेश्वर प्रतिछन्न रूप में रहते हैं। अचरलिंग में मन्त्र द्वारा संस्कार से सदाशिव का निवास होता है।

स्थावरं जङ्गमं चैव द्विविधं लिङ्गमिष्यते।
स्थावरं स्थापितं लिङ्गं जङ्गमं दीक्षितं विदुः ॥ 64 ॥

प्रकारान्तर से 1. स्थावर और 2. जंगम दो प्रकार के लिंग होते हैं। इनमें से स्थावर लिंग तो स्थापित किए गए होते हैं और जंगम लिंग दीक्षित को कहते हैं।

जङ्गमस्यावमानेन स्थावरं निष्फलं भवेत्।
तस्मालिङ्गद्वयं प्राज्ञो नावमन्येत सर्वदा ॥ 65 ॥

किन्तु यह ज्ञातव्य है कि जंगम लिंग की अवमानना करने से स्थावर लिंग की पूजा भी निष्फल हो जाती है। इसलिए बुद्धिमानों को इन दोनों जंगम और स्थावर लिंगों की कभी अवमानना नहीं करनी चाहिए।

लिङ्गमित्थं प्रतिष्ठाप्य सर्वयत्नैर्विधानतः।
स यत्फलमवाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणु ॥ 66 ॥

(सनत्कुमार से श्रीनन्दिकेश्वर आगे बोले कि) इस तरह से लिंग की प्रतिष्ठा समस्त विधान के साथ करने से व्यक्ति को जो फल मिलते हैं, उन फलों के सम्बन्ध में कहता हूँ, उनको एकाग्र चित्त से श्रवण करो।

सर्व यज्ञ तपो दान तीर्थ वेदेषु यत्फलम्।
तत्फलं कोटिगुणितं स्थाप्य लिङ्गं लभेन्नरः ॥ 67 ॥

सभी प्रकार के दान, यज्ञ, तप, तीर्थ और वेदों से मिलाकर जो फल मिलता है, उस फल का करोड़ गुना फल लिंग की स्थापना करके व्यक्ति प्राप्त कर सकता है।

यो लिङ्गं स्थापयेदेकं विधिपूर्वं सलक्षणम्।
सर्वागमोदितं पुण्यं कोटि-कोटि गुणं लभेत् ॥ 68 ॥

जो एक उचित लक्षणों वाले लिंग की विधिपूर्वक स्थापना करता है, उसे समस्त आगमों में कहा गया पुण्य करोड़ गुना होकर प्राप्त होता है।

मातृतः पितृतश्चैव यतश्चाद्वहते स्त्रियम्।
कुलैकविंशमुत्तार्य$_{21}$ रुद्रलोके महीयते ॥ 69 ॥

ऐसा व्यक्ति अपनी माता के और पिता के यत्नपूर्वक स्त्रियों के द्वारा वहन किए गए इक्कीस कुलों को तारकर रुद्रलोक में जाता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भूतलात्सकलान्भोगान् प्रलये समुपस्थिते।
ज्ञानयोगं समासाद्य स तत्रैव विमुच्यते॥ 70॥

इस भूतल पर उपस्थित सभी भोगों के प्रलयकाल में नष्ट होने पर भी वह ज्ञानयोग का आश्रय लेकर उनसे मुक्त हो जाता है।

अथ वैद्राज्यमाकाङ्क्षेत् जायते स भवान्तरे।
सप्तद्वीप समुद्रायाः क्षितेरधिपतिर्भवेत्॥ 71॥

और, यदि वह वेद्राज्य (वेद वर्णित सप्तसैंधव प्रदेशोचित, एकराट् सम्राट) की आकांक्षा रखता हुआ दूसरे भव में जन्म भी ग्रहण करता है तो वह इस सात द्वीपों और समुद्रों वाली पृथ्वी का अधिपति या राजा होता है।

य कृत्वा पार्थिवं लिङ्गं अर्चयित्वा सवेदिकम्।
इहैव धर्मवाञ्छ्रिमान् सोऽन्ते रुद्रश्च जायते॥ 72॥

जो व्यक्ति पार्थिव लिंग बनाकर उसकी वेदी सहित अर्चना करता है, वह यहीं पर धर्मवान् और श्रीमान् होकर के अन्त में रुद्रलोक को जाता है।

पार्थिवलिंगपूजनस्य शताधिकपुण्यफलवर्णनम् —

त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेद्बिम्बं कृत्वा लिङ्गं तु पार्थिवम्।
शतैकादधिका यावत्त् तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 73॥

इसी प्रकार जो पार्थिव लिंग बनाकर उसके बिम्ब का तीनों संध्याकाल में पूजन-अर्चन करता है, उसके प्राप्तव्य सौ से भी अधिक पुण्यों के फलों को कहता हूँ, सुनियेगा।

अनेनैव स देहेन रुद्रः सञ्चरते क्षितौ।
पापहा सर्वमर्त्यानां दर्शनात्स्पर्शनादपि॥ 74॥

ऐसा पूजनकर्ता मनुष्य इसी देह से रुद्र स्वरूप होकर पृथ्वी पर विचरण करने लगता है अर्थात् वह स्वयं शिव हो जाता है और अपने दर्शन तथा स्पर्श के द्वारा समस्त मर्त्यलोकवासियों के पापों को नष्ट कर डालता है।

उद्धृत्य दिवि संस्थाप्य कुलानामेकविंशति$_{21}$।
सहायैः सहितो नित्यं मोदते दिवि रुद्रवत्॥ 75॥

देवता की स्थापना करके वह अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता हुआ अपने सहायकों के साथ नित्य ही भगवान् रुद्र के समान आनन्द में रहता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शालिपिष्टलिंगपूजनविधिमाह —

शालिपिष्टमयं लिङ्गं सर्वगन्धोपशोभितम्।
कुसुमैस्सर्वगन्धैश्च फलैश्च विविधैस्तथा॥ 76॥
भक्ष्यभोज्यैरनेकैश्च घृतदीपैश्च संयुतम्।
तस्य दक्षिणपार्श्वे तु विन्यसेदगरुं बुधः॥ 77॥
दद्यात्पश्चिमभागे तु शोभनान्तु मनःशिलाम्।
उत्तरे चन्दनं दद्यात् हरितालं तु पूर्वतः॥ 78॥

चावल के आटे का लिंग बनाएँ, जो सभी प्रकार की गन्धों से शोभायमान हो तथा सभी प्रकार के कुसुमों की गन्ध और तरह-तरह के फलों से लकदक हो। उसे अनेक प्रकार के भक्ष्य व भोज्य सामग्री नेवैद्य के रूप में अर्पित करें। पूजा के लिए ज्ञानी को चाहिए कि घी के दीयों को प्रज्वलित करने के साथ ही आजू-बाजू में अगरु की धूप रखें। पश्चिम भाग में शोभायमान मनःशिला को रखें। उत्तर में चन्दन और पूर्व में हरिताल द्रव्य को रखें।

एवं वित्तानुसारेण यः कृत्वा विधिपूर्वकम्।
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां शिवाय विनिवेदयेत्॥ 79॥

इस प्रकार अपनी वित्तीय क्षमता के अनुसार जो भी पूजन की विधि की जाती है, उस सबको कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को भगवान् शिव को अर्पित कर देना चाहिए।

तस्य पूजनफलमाह —

यत्किञ्चित्सकृप्येवं लिङ्गं कुर्याद्विचक्षणः।
यत्फलं लभते सोऽपि तन्मे निगदतः शृणु॥ 80॥

महादेव की इस प्रकार की सेवा जो कोई व्यक्ति थोड़ी-बहुत रूप से भी करता है और जिस फल को प्राप्त करता है, उसे मैं कहता हूं, सुनिये।

सर्वपाप विनिर्मुक्तः सर्वोपद्रववर्जितः।
निष्कलः सर्वगोभूत्वा प्रविशेच्छिवमव्ययम्॥ 81॥

साधक के लिए यह आवश्यक है कि सभी प्रकार के पापों से मुक्त होकर, समस्त प्रकार की चेष्टाओं को छोड़कर, निष्कल और सभी ओर जा सकने के योग्य बनकर अव्यय भगवान् शिव के पूजन-मार्ग प्रवेश करना चाहिए।

अप्यामलकमात्रं वा लिङ्गं कृत्वाऽभिपूज्य च।
यन्मयं तन्मयं कृत्वा शिवलोके महीयते॥ 82॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मात्र आँवले के आकार का शिवलिंग बनाकर भी जो उसका पूजन तन्मय होकर, तद्रूप होकर करता है, वह व्यक्ति शिवलोक को जाता है।

पुण्यक्षयात्क्षितिं प्राप्यं राजा भवति धार्मिकः।
वेद वेदाङ्ग तत्त्वज्ञो ब्राह्मणो वापि जायते॥ 83॥

और, अपने पुण्यों के क्षय होने पर वह पुनः इस पृथ्वीलोक में जन्म लेकर धर्मनिष्ठ राजा[1] होता है अथवा वह वेद-वेदांग के तत्त्व को जानने वाला ब्राह्मण भी हो सकता है।

मृद्भस्मगोमयात्पिण्डैः तथा वालुकयापि वा।
कृत्वा लिङ्गं सकृत्पूज्य वसेत् कल्पायुतं दिवि॥ 84॥

यदि कोई मिट्टी का, भस्म का, गोबर के पिण्ड तथा बालू का भी लिंग बनाकर तत्काल पूजता है, तो वह अयुत (दस हजार) कल्पों तक दिव्यलोक में निवास करता है।

कृशापूतरुकृत्ये वा अप्यङ्गुल्यादिभिर्लिखेत्।
क्रीडायां वालयुतं कल्पं भवेत्सोऽपि गणेश्वरः॥ 85॥

इसी प्रकार कृशापूतरु कृत्य (कुशापुष्प या पत्तों को चढ़ाकर) अथवा अंगुली आदि से लिखकर या फिर बालक की क्रीड़ा करता है तो वह अयुत (दस हजार) कल्पों तक गणेश्वर होता है।

आत्मनो विभजेत्तेन तदप्यत्र च निश्चितम्।
सपुत्र बान्धवैस्सार्धं पुनात्यासप्तमं, कुलम्॥ 86॥

इसके अतिरिक्त अपने आप शिव का भजन करें तो भी यह निश्चित ही है कि वह अपने पुत्र और बन्धुओं सहित सात कुलों को पवित्र कर देता है।

पांसुना क्रियमाणोऽपि लिङ्गं कुर्यात्तु यो नरः।
प्रेत्यान्ते लभते राज्यं सुसम्पन्नमखण्डकम्॥ 87॥

जो व्यक्ति मृदा, पाषाण से लिंग बनाकर भी पूजन करता है तो मरने के बाद पुनः सुसम्पन्न और अखण्ड राज्य को प्राप्त करता है।

---

1. पुराणों में राजा को आठ लोकपालों इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, चन्द्र, कुबेर और ईश्वर का विग्रहस्वरूप माना गया है— अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः॥ तस्मादिन्द्रो ह्ययं वह्निर्यमश्च निर्ऋतिस्तथा॥ वरुणश्चैव वायुश्च सोमो धनद एव च। ईश्वरोहं न सन्देहो नावमन्तव्य एव च॥ (लिंग. पूर्व. 35, 5-6)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

हीनवंशे च ये जाताः पापिष्ठा ये च मानवाः।
भवभाव प्रपन्नास्ते मुच्यन्ते नात्र संशयः॥ 88॥

जो लोग हीन वंश में अर्थात् निम्नतम कुल में पापीष्ठ होकर भी जन्म पाते हैं, वे भव-भाव होने पर से मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

अलिङ्गी लिङ्गीरूपेण यो लिङ्गमुपजीवति।
स पच्यते महाघोरे नरके कालमक्षयम्॥ 89॥

अलिंगी के लिंग रूप में जो व्यक्ति जीवन व्यतीत करता है, वह महाघोर नरक में अनन्त काल पर्यन्त पकाया जाता है अर्थात् नरक की यातना भोगता है।

सूक्ष्मेणापि प्रयोगेन अमेयः पुण्यसञ्चयः।
शिवमर्चयतो यस्मात् तस्मान्नित्यं समर्चयेत्॥ 90॥

अतएव थोड़े प्रयोग से भी अपार पुण्य का संचय होता है, यह जानकर शिव का नित्य पूजन-अर्चन करते रहना चाहिए।

लिङ्गमेवं प्रतिष्ठाप्य सर्वयत्नैर्विधानतः।
आराध्य गन्धपुष्पाद्यैः इदं स्तोत्रमुदीरयेत्॥ 91॥

इस प्रकार से सभी विधानपूर्वक लिंग की ही प्रतिष्ठा करके उसकी गन्ध, पुष्पादि से आराधना करें और इस स्तोत्र का पाठ करें—

अथ शिवस्तोत्र —

अनादि देव देवेश! विश्वेश्वर! महेश्वरः!।
सर्वज्ञ ज्ञान विज्ञान प्रदानैक! नमोऽस्तुते॥ 92॥

स्तोत्र इस प्रकार हैं— "हे अनादि देव! देवेश! विश्वेश्वर! महेश्वर! सर्वज्ञान-विज्ञान के प्रदान करने वाले आपको नमस्कार है।

अनन्तकान्तिसम्पन्न! अनन्तासन संस्थित!।
अन्तशक्तिसम्भोग परमेश! नमोऽस्तुते॥ 93॥

आप अनन्त कान्ति वाले हैं! आप अनन्त आसनों में स्थित रहने वाले हैं! आप अनन्त शक्ति संभोग वाले हैं! आप परमेश को नमस्कार है।

परावर! परातीत! उत्पत्ति-स्थितिकारण!।
सर्वार्थ साधनोपाय! विश्वेश्वर! नमोऽस्तुते॥ 94॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आप परावर हैं! परातीत हैं! सृष्टि के उत्पत्ति, स्थिति और कारण हैं! सर्वार्थ साधन के उपाय हैं! आप विश्वेश्वर को नमस्कार है।

बहुरूप! महारूप! सर्वरूपोत्तमोत्तम्!।
पशुपाशार्णवातीत! वरप्रद! नमोऽस्तुते॥ 95॥

आप बहुत से रूप वाले हैं! आप महारूप हैं! आप सभी रूपों में उत्तमोत्तम रूप वाले हैं! पशुपाश और अर्णव से अतीत हैं! वरदाता हैं! आपको नमस्कार है।

स्वभाव निर्मलाभोग सर्वव्यापिन् सदाशिव!।
योगियोगिमहायोगे योगेश्वर! नमोऽस्तुते॥ 96॥

आप स्वभाव से ही निर्मल भोग करने वाले हैं! आप सर्वव्यापि और सदाशिव हैं! आप महायोग के योगी के भी योगी हैं! आप योगेश्वर को नमस्कार है।

निरञ्जन! निराधार! स्वाधार! निरुपप्लव!।
प्रसन्नपरमेशान! योगीश्वर! नमोऽस्तुते॥ 97॥

आप निरंजन हैं! निराधार हैं! आप अपने ही आधार हैं! आपका प्लव नहीं होता। आप प्रसन्न परमेशान हैं! आप योगीश्वर हैं! आपको नमस्कार है।

जिह्वा चापलभावेन वेदितोऽसि हि यन्मया।
तत्क्षुन्तव्यमनौपम्य कस्ते स्तोतुं गुणार्णवम्॥ 98॥

अपनी जिह्वा के चापल्य भाव के कारण जो कुछ भी मेरे द्वारा कहा गया है, उस सब में जो उपयुक्त नहीं हो, उसे क्षमा कर दीजिएगा क्योंकि आप गुणों के अथाह सागर हैं। मैं आपकी स्तुति कैसे कर सकता हूँ।''

लिङ्गोत्पत्तिस्तवं पुण्यं यः श्रृणोति नरः सदा।
नोत्पद्यते च संसारे स्थानं प्राप्नोति शाश्वतम्॥ 99॥

इस प्रकार यह शिव की लिंगोत्पत्ति का प्रसंग पुण्य स्वरूप है। इसको जो नर सदा सुनता है, वह फिर इस संसार में उत्पन्न नहीं होता है अपितु वह शाश्वत स्थान प्राप्त कर चुका होता है।

तस्मात्सर्व प्रयत्नेन श्रृणुयाद्वाचयेत्तथा।
(पाप कञ्चुक)मुत्सृज्य प्राप्नोति परमं पदम्॥ 100॥

अतएव सभी प्रयत्न करके इस प्रसंग को सुनें और कहें। इसे सुनकर अपने पापों की केंचुली का त्याग करें और परमपद को प्राप्त करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इति शिवधर्मपुराणे[1] लिङ्गोद्भवं नाम तृतीयोऽध्यायः॥ 3॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में लिंगोद्भव नामक तीसरा अध्याय पूरा हुआ।

*****

अथ चतुर्थोऽध्यायः॥ 4॥

शिवभक्तों के विभिन्न लक्षण, उनके आचार– व्यवहार, शिव माहात्म्य सहित शिवालय निर्माण विधान और शिवपूजन के फलाफल के विषय में श्रीसनत्कुमार के प्रति श्रीनन्दिकेश्वर का कथन

अथ शिवभक्तलक्षणं श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

शिवभक्ता महोत्साहाः शिवार्चन परायणाः।
संयता धर्मसम्पन्नाः सर्वार्थां आप्नुयन्ति ते॥ 1॥

(सनत्कुमार के प्रति श्रीनन्दिकेश्वर ने आगे कहा) जो शिवभक्त होते हैं, वे महान् उत्साही होते हैं। वे शिवार्चन परायण होते हैं। वे संयतचित्त और धर्मसम्पन्न होते हैं। इसलिए वे समस्त कामनाओं को पूरा कर पाते हैं।

सर्वद्वन्द्वसहाधीरा नित्यमुद्युक्त चेतसः।
परोपकार निरता गुरुशुश्रूषणे रताः॥ 2॥

वे सब प्रकार के द्वन्द्वों को सह लेते हैं। वे धीर होते हैं। सदैव उद्योगचित्त वाले होते हैं। परोपकार में लगे रहते हैं और निरन्तर गुरु सेवा करते हैं।

मार्दवार्जव सम्पन्नाः अनुकूलाः प्रियं वदाः।
अमानिनो बुद्धिमन्तः त्यक्तस्पर्धा गतस्पृहाः॥ 3॥

वे मधुरता और नम्रता से सम्पन्न होते हैं। सबके अनुकूल रहने वाले और प्रिय भाषाभाषी होते हैं। वे निरभिमानी और बुद्धिमान होते हैं। वे किसी से भी प्रतिस्पर्द्धा नहीं करते और कुछ भी आकांक्षा नहीं रखते जिससे ईर्ष्या रहित होते हैं।

शान्ता स्मितमुखा भद्रा नित्यं स्वागतवादिनः।

---

1. 'शिवधर्मशास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अल्पवाचः सुवक्तारो गुरुभक्ति विशारदाः॥ 4॥

वे शान्तचित्त होते हैं। सदैव प्रसन्नमुख रहते हैं। भद्र व्यवहार करते हुए नित्य स्वागत करने वाले होते हैं। थोड़ा बोलते हैं परन्तु अच्छे वक्ता होते हैं और गुरु भक्ति में पारंगत होते हैं।

शौचाचार समायुक्ता दयादाक्षिण्य गोचराः।
दम्भ मात्स्र्य निर्मुक्ताः यथा तथ्याभिभाषिणः॥ 5॥

वे सदा ही पवित्र आचार-विचार वाले होते हैं। दया करने वाले, दान-दक्षिणा देने वाले दिखाई देते हैं अथवा गायों को घास डालने वाले, दम्भ और मात्स्र्य (चुगलखोरी) से निर्मुक्त होते हैं और तथ्य-सम्मत ही भाषण करते हैं।

संविभागपराः प्राज्ञाः अशठाश्चाप्य कुत्सिताः।
विषयेष्वपि निर्लेपाः पद्मपत्रमिवाम्भसा॥ 6॥

शिवभक्त सबके प्रति बराबर विभाग (समान-व्यहार) करके साथ रखते हैं। वे बुद्धिमान और अशठ हाते हैं। वे अकुत्सित होते हैं और विषयों में निर्लिप्त रहते हैं। जैसे जल में कमलपत्र कभी भीगते नहीं, वैसे ही वे निर्लिप्त रहते हैं।

न दीना नापि मलिना न च रोष वशंवदाः।
भवन्ति भावितात्मानः सुस्निधाः साधुसेविताः॥ 7॥

वे न तो दीन होते हैं न मलीनमन होते हैं। वे कभी रोषपूर्ण वचन करने वाले नहीं होते हैं। वे अपने आत्म स्वरूप में स्थित रहते हैं और स्नेहपूर्ण रहकर साधुजनों-सज्जनों की सेवा में संलग्र रहते हैं।

न पाणि पाद वाक्चक्षु श्रोत्र शिश्न वशं गताः।
चापलानि न कुर्वन्ति सर्वण्यासङ्ग वर्जिताः॥ 8॥

वे कभी अपने हाथ-पाँव, नेत्र, कान और शिश्नेन्द्रिय के वशीभूत नहीं रहते। वे चपलता नहीं करते और सभी प्रकार के संग दोष से मुक्त रहते हैं।

रुद्रात्मानो रुद्रपरा रुद्रांशा रुद्रभाविताः।
एवं विध समाचारा भवन्ति भुवि मानवाः॥ 9॥

वे रुद्रात्मा होते हैं। रुद्र में भक्ति रखने वाले होते हैं। रुद्र के ही अंशस्वरूप होते हैं और रुद्रभाव में ही बने रहते हैं। इसी तरह सम-आचार लिए वे शिवभक्तपरायण मानव संसार में रहते हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एकान्त भक्तिमास्याय गुणेष्वेतेषु वर्तते।
पूजनीयः शिवो नित्यं परापर विभूतये॥ 10॥

वे एकान्त भक्ति में लीन रहकर उपर्युक्त गुणों का वर्तन करते हैं और शिव को नित्य पूजनीय मानकर परापर (पर और अपर) विभूति को समझते हैं।

किञ्चिद्वेदमयं पात्रं किञ्चित्पात्रं तपोमयम्।
आगमिष्यति यत्पात्रं तत्पात्रं तारयिष्यति॥ 11॥

वे अपने यहाँ किसी भी वेदमार्गी साधक को और किसी तपोमय साधक को आया हुआ सुपात्र मानकर उसको तार देने का उपक्रम करते हैं।

सर्वेषामेव पात्राणां अतिपात्रं महेश्वरः।
पतनात्त्रायते यस्माद् अतीव नरकार्णवे॥ 12॥

वे जानते हैं कि सभी पात्रों में अतिपात्र (बड़ा पात्र) तो महेश्वर ही हैं जो हमें पतन से तारते हैं और अतीव नरक सागर से उबार देते हैं।

तस्य पात्रस्य माहात्म्याद् दानमण्वपि चाक्षयम्।
तस्मादस्मै सदादेयं अप्रमेय फलार्थिभिः॥ 13॥

उस पात्र का माहात्म्य यह है कि अणुमात्र यदि दान किया जाए तो भी वह अक्षय बना रहता है। इसलिए हमें उन अप्रमेय फलार्थी लोगों को यह दान सदा-सर्वदा देना चाहिए।

शिवेदत्तं हुतं तप्तं पूजाफल निवेदनम्।
एकं वानन्त फलदं तद्भवेन्नात्र संशयः॥ 14॥

शिव के प्रति दिया गया दान, किया गया हवन, तपा गया तप, पूजा के फल का अर्पण— यदि एक भी हो तो अनन्त फल देने वाला होता है, इसमें संशय नहीं है।

इत्यमनन्तर प्रासादनिर्माणफलमाह —

भक्त्या वित्तानुसारेण कुर्यात्प्रासाद सञ्चयम्।
अल्पे महति वा तुल्यं फलमाढ्य दरिद्रयोः॥ 15॥

(श्रीनन्दिकेश्वर ने आगे कहा कि) भक्तिपूर्वक अपनी वित्तीय क्षमता के अनुसार व्यक्ति को प्रासादों का निर्माण करवाना चाहिए। यह निर्माण चाहे छोटा हो या बड़ा, चाहे दरिद्री बनवाए या धनाढ्य, उसका फल बराबर और महान् होता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वित्तशाठ्येन यः कुर्याद्धर्ममाढ्योऽपि यो नरः।
न स तत्फलमाप्नोति प्रलोभाक्रान्त मानसः॥ 16॥

कंजूसी के कारण जो व्यक्ति धर्म में बढ़ा-चढ़ाकर व्यय करना बताता हैं, उसे इच्छित फल कदापि नहीं मिलता है। क्योंकि, वह व्यक्ति लोभ से आक्रान्त हुए मन से वह सब कार्य करता है।

तस्मात्त्रिभाग वित्तस्य जीवनाय प्रकल्पयेत्।
भागद्वयं च धर्मार्थं अनित्यं जीवितं यतः॥ 17॥

इसलिए व्यक्ति को चाहिए कि वह जीवन में उपार्जित धन के तीन भाग कल्पित करें। इसमें से दो भाग धर्मार्थ हों क्योंकि यह जीवन नितान्त अनित्य हैं।

भक्त्या प्रचोदितः कुर्यादल्पवित्तोऽपि मानवः।
महाविभवसारोऽपि न कुर्याद्भक्तिवर्जितः॥ 18॥

भक्ति से प्रेरित होकर मामूली सम्पदा होने पर भी व्यक्ति को ऐसा प्रबन्धन करना चाहिए। इसे भक्ति रहित महान् वैभव वाला व्यक्ति भी कर सकता है।

सर्वस्वमपि यो दद्याच्छिवे भक्तिविवर्जितः।
न तेन धर्मभाक्सस्याद्भक्तिरेवात्र कारणम्॥ 19॥

भक्ति से विहीन कोई व्यक्ति अपना सर्वस्व भी यदि शिव के प्रति दान कर देता है तो वह धर्मात्मा नहीं हो सकता है क्योंकि इस कार्य में तो भक्ति होना ही मूल कारण माना गया है।

न तत्तपोभिरत्युग्रैः न च सर्वमहामखैः।
गच्छेच्छिवपुरं दिव्यं मुक्त्वा भक्तिं शिवात्मिकाम्॥ 20॥

शिवात्मिका-भक्ति से विमुख होकर व्यक्ति न तो उग्र तप करके और न ही बड़े यज्ञ-सत्र करके दिव्यादिव्य शिवपुर जा सकता है।

चतुर्विधशिवायतनं विधानमाह —

मृद्दारुर्विष्टकशैलं वा यः कुर्याद्वै शिवालयम्।
त्रिस्सप्तकुलमुद्धृत्य$_{21}$ शिवलोके महीयते॥ 21॥

मिट्टी, लकड़ी, ईंट और पत्थर जो शिव प्रासाद का निर्माण करवाता है, वह अपनी इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार करके शिवलोक को जाता है।[1]

---

1. सौरपुराण में आया है कि मृदादि से लेकर रत्नपर्यन्त विविध द्रव्यों से शिवालय बनवाया जा सकता है। इसके

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मृण्मयात्कोटिगुणितं पुण्यं स्याद्दारुभिः कृते।
कोटि कोटि गुणं पुण्यं मृत्काष्ठादिष्टकामये॥ 22॥

मिट्टी के प्रासाद से करोड़ गुना पुण्य काष्ठ का शिवालय बनवाने का होता है। यह जानना चाहिए कि मिट्टी के प्रासाद से करोड़ गुना पुण्य काष्ठ के प्रासाद से और उससे करोड़ गुना पुण्यफल ईंटों के प्रासाद से मिलता है।

इष्टकाद्द्विगुणं पुण्यं शैलके स्याच्छिवालये।
मृच्छैलयोः समं ज्ञेयं पुण्यमाढ्य दरिद्रयोः॥ 23॥

ईंटों से बने हुए प्रासाद की अपेक्षा करोड़ गुना पुण्य शिला निर्मित शिवालय से होता है। धनाढ्य और दरिद्र द्वारा मिट्टी और शिला से बनाए प्रासाद का पुण्य समान होता है।

यत्र क्वापि गतः पुण्यं कृतं शैलेष्टकादिभिः।
नवं पुराण रहितं तथा कुर्याच्छिवालयम्॥ 24॥

यह ज्ञातव्य है कि जहाँ भी जाकर पुण्य के निमित्त शिला और ईंटों से नवीन शिव मन्दिर बनवाए, उसमें पुराना कोई अंश नहीं रखें अर्थात् समस्त सामग्री नई ही होनी चाहिए।

अष्टेष्टका$_{64}$ समायुक्तं प्रकुर्याच्छिवालयम्।
विधूयपाप सञ्जातं सोऽपि गच्छेच्छिवालयम्॥ 25॥

केवल आठ ईंटों से ही कोई शिवालय बनवाता है तो वह अपने पापों को धोकर भगवान् शिव के धाम में पहुँच जाता है।[1]

फलाफल के विषय में कहा गया है कि शिवालय के निर्माण का अनन्तफल होता है। जो लोष्टमय शिवालय बनवाता है, उसको धर्म, काम, अर्थ और मुक्ति मिलती है। शिवार्थ प्रासादों में कैलास, मेरु, मन्दर, तुहिन, निषध, नील, महेन्द्र जैसे मन्दिर भव्यातिभव्य विमानाकार बनाए जाते हैं और ये समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले होते हैं— शृणुध्वमृषयः सर्वे प्रभावं परमेष्ठिनः। शिवालयस्य करणादनन्तफलमुच्यते॥ अपिलोष्टमयं वाऽपि यः करोति शिवालयम्। सर्वयत्नेन विप्रेन्द्रा धर्मकामार्थमुक्तये॥ कैलासाख्यं च यः कुर्यात्प्रासादं परमेष्ठिनः। मेर्वाख्यं मन्दराख्यं वा तुहिनाद्रिमथापि वा॥ निषधाद्रिं च नीलाद्रिं महेन्द्राख्यं द्विजोत्तमाः। स तत्पर्वतसंकाशैर्विमानेः सार्वकामिकैः॥ गत्वा शिवपदं द्विव्यं शिववन्मोदते चिरम्। महाप्रलयपर्यन्तं भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान्॥ तदन्ते विषयांस्त्यक्त्वा शिवसायुज्यमाप्नुयात्। पतितं खण्डितं वाऽपि जीर्णं वा स्फुटितं तथा॥ कारयेत्पूर्ववद्यस्तु सुधाद्यैः सुमनोहरैः॥ प्राकारं मण्डपं वाऽपि प्रासादं गोपुरं तथा॥ कर्तुरभ्यधिकं पुण्यं लभते नात्र संशयः। वृत्त्यर्थं वा प्रकुर्वीत नरः कर्म शिवालये॥ यः प्रयाति न सन्देहः स्वर्गलोके सबान्धवः। यश्चाऽऽत्मभोगसिद्ध्यर्थमपि रुद्रालये सकृत्॥ (सौरपुराण 44, 2-10)

1. यहाँ शिल्पशास्त्रीय अर्थ यह होगा कि शिवालय के लिए चौंसठपद (8 x 8 = 64) वास्तु का विधान करना चाहिए। यह पापों से विमुक्ति और शिवधाम की प्राप्ति का उपाय है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

क्रीडमानोऽपि यः कुर्याद्बालभावे शिवालयम्।
रुद्रलोके लभेत्सोऽपि विमानं सार्वकामिकम्॥ 26 ॥

यदि कोई बाल स्वभाव से खेल-खेल में ही शिवालय बना देता है, तो वह भी रुद्रलोक में सार्वकामिक (इच्छाओं को पूर्ण करने वाले) विमान से गमन करता है।

पुष्पमालापरिक्षिप्तं दिव्यगन्धानु सेवितः।
डोलाविक्षेप संयुक्तं घण्टाचामरभूषितम्॥ 27 ॥

उसमें वह पुष्पों की मालाओं को धारण किए रहता है, दिव्य गन्धानुलेप किए होता है। डोला और विक्षेप के साथ घण्टा-चँवर आदि से विभूषित होता है।

मुक्तादाम वितानेन शोभितं सूर्य सप्रभम्।
अप्सरोगण संयुक्तं सर्वकाम सुखप्रभम्॥ 28 ॥

उस विमान में मोतियों की लड़ियों से लकदक वितान होते हैं। वे सूर्य की

प्रासाद और नगर निवेश में अष्टाष्टपद अथवा चतुषष्टिपद वास्तु का विधान होता है। सौन्दरानन्द महाकाव्य में आया है कि चौंसठ पद के लिए रेखाएँ खींचकर भूमि पर नगर निवेश करना चाहिए— अष्टापदमिवालिख्य निमित्तैः सुरभीकृतम्। तानुवाच मुनिः स्थित्वा भूमिपालसुतानिदम्॥ अस्मिन् धारापरिक्षिप्ते नेमिचिह्नलक्षणे। निर्मिमीध्वं पुरं यूयं मयि याते त्रिविष्टपम्॥ (सौन्दरानन्द 1, 32-33)
हरिवंश (विष्णु. 58, 16) में 'स्थानानि निदधुश्चात्र ब्रह्मादीनां यथाक्रमम्' कहकर इस कला विधान का वर्णन किया गया है। इससे चौकोर या चतुरस्र प्रासाद का निर्माण सम्भव होता है। अपराजितपृच्छा में कहा गय है— चतुरश्राः समाः शुद्धाः कर्णोर्ध्वे च सुवृत्तकाः। सिंहकर्णैर्भूषितोर्ध्वाः पूर्वालङ्कारशोभिताः॥ चतुर्द्वारिषु प्राग्ग्रीवाः सुवितानैर्विभूषिताः। कैलासाद्याः समुत्पन्ना वृत्ताः पञ्चशतानि च॥ (अपराजितपृच्छा 155, 15-16)
लिङ्गपुराण में ऐसे प्रासादों का वर्णन आया है और उसके भेदों का उल्लेख है। प्रासाद की आकृतियों में मन्दर, मेरु, निषध, हिमशैल, नीलशेखर, महेन्द्रशैल— इन कुल सात प्रासादों का नामोल्लेख मिलता और उनके निर्माण के फलों को भी लिखा गया है— कैलासाख्यं च यः कुर्यात्प्रासादं परमेष्ठिनः। कैलास शिखराकारैर्विमानैर्मोदते सुखी॥ मन्दरं वा प्रकुर्वीत शिवाय विधिपूर्वकम्। भक्त्या वित्तानुसारेण उत्तमाधममध्यमम्॥ मन्दराद्रि प्रतीकाशैः विमानैर्विश्वतोमुखैः। अप्सरोगणसङ्कीर्णैर्देवदानवदुर्लभैः॥ गत्वाशिवपुरं रम्यं भुक्त्वा भोगान् यथेप्सितान्। ज्ञानयोगं समासाद्य गाणपत्यं लभेन्नरः॥ यः कुर्यान्मेरुनामानं प्रासादं परमेष्ठिनः। स यत्फलमवाप्नोति न तत्सर्वैर्महामखैः॥ सर्वयज्ञतपोदानतीर्थ वेदेषु यत्फलम्। तत्फलं सकलं लब्ध्वा शिववन्मोदते चिरम्॥ निषधं नाम यः कुर्यात्प्रासादं भक्तितः सुधीः। शिवलोकमनुप्राप्य शिववन्मोदते चिरम्॥ कुर्याद्वा यः शुभं विप्रा हिमशैलमनुत्तमम्। हिमशैलोपमैर्या नैर्गत्वा शिवपुरं शुभम्॥ ज्ञानयोगं समासाद्य गाणपत्यमवाप्नुयात्। नीलाद्रिशिखराख्यं वा प्रासादं यः सुशोभनम्॥ कृत्वा वित्तानुसारेण भक्त्या रुद्राय शम्भवे। यत्फलं सकलं लब्ध्वा सर्वदेवनमस्कृतः॥ रुद्रलोकमनुप्राप्य रुद्रैः सार्धं प्रमोदते। महेन्द्रशैलनामानं प्रासादं रुद्रसंमतम्॥ कृत्वा यत्फलमाप्नोति तत्फलं प्रवदाम्यहम्। महेन्द्रपर्वताकारैर्विमानैवृष संयुतैः॥ गत्वा शिवपुरं दिव्यं भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान्। ज्ञानं विचारितं रुद्रैः सम्प्राप्य मुनिपुङ्गवाः॥ (लिङ्गपुराण 77, 8-21)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रभा के समान देदीप्यमान होते हैं। अप्सराओं और नागगणों के साथ वह सभी कामनाओं को पूर्ण होते पाता है और उस सुख की अनुभूति करता है।

तत्रोषित्वा महाभोगे कोटि कोट्ययुतं सुखी।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजा भवति धार्मिकः॥ 29॥

वह धर्मात्मा वहाँ करोड़ों-करोड़ों अयुत (दस हजार) वर्षों तक सुखों को भोगकर क्रम से संचरित होकर इस लोक में धार्मिक राजा का जन्म प्राप्त करता है।

शिवायतनं दर्शनफलम् —

दूरतः शिखर दृष्ट्वा नमस्कुर्याच्छिवालयम्।
सप्तजन्मकृतं पापं क्षिप्रमेव विनश्यति॥ 30॥

यदि किसी शिवालय का शिखर दूर से ही दिखाई दे तो उसे नमस्कार करना चाहिए। इससे सात जन्मों तक किए गए पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं।

तत्रैव मार्जनोपलेपनञ्च फलमाह —

पश्यन्परिहरञ्जन्त्र(न्तृ!) मार्जन्यात्यति सूक्ष्मया।
शनैः सम्मार्जनं कुर्यात् चान्द्रायणफलं लभेत्॥ 31॥

वहाँ पर (ऐसी गाय आदि के गोबर को लेकर जाएँ जो देखते ही देखते गोबर त्याग रही हो, उससे) बड़ी सावधानी से लिपाई-मंजाई करनी चाहिए। लिपाई-मंजाई का यह कार्य धीरे-धीरे किया जाए तो चान्द्रायण व्रत[1] करने का फल मिलता है।

नाहारवशजीर्णाया वन्ध्यायाः क्षीणवत्सया।
रोगार्ता नवसूता या भोग्यो गोमयमाहरेत्॥ 32॥

इस कार्य के लिए अनाहार रहने से हुए कमजोर या वन्ध्या अथवा मृतवत्सा, रोगार्त या दुःखी अथवा नई पुत्रवती हो— उनको गोमय ले जाना चाहिए।

स्वसंस्थ गोमयं ग्राह्यं स्थाने वा पतितं शुभे।
उपर्यधश्च संत्यज्य प्रत्यग्रं जन्तु वर्जितम्॥ 33॥

---

1. चान्द्रायण संज्ञक व्रत में किसी माह के कृष्णपक्ष में एक-एक ग्रास कम करते हुए और शुक्लपक्ष में एक-एक ग्रास बढ़ाते हुए आहार ग्रहण किया जाता है। अमावस्या के दिन भोजन नहीं किया जाता है। इसमें तीनों ही समय स्नान किया जाता है। (देवीभागवत 11, 23, 51-52) मनु ने कहा है : एकैकं ह्रासयेत्पिण्डं कृष्णे शुक्ले च वर्धयेत्। उपस्पृशंस्त्रिषवणमेतच्चान्द्रायणं स्मृतम्॥ (मनुस्मृति 11, 216)
सम्मार्जन का फल सौरपुराण में इस प्रकार आया है— सम्मार्जनादिभिर्वाऽपि सर्वान्कामानवाप्नुयात्। सम्मार्जनं तु यः कुर्यान्मार्जन्या मृदुसूक्ष्मया॥ चान्द्रायणसहस्रस्य फलं मासेन लभ्यते। (सौर. 44, 12-13)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रायः ऐसा गोबर गिरते ही झेलकर संगृहीत किया जाना चाहिए अथवा किसी शुभ स्थान में गिरा हुआ हो, उसको उठा लें और उसका ऊपर व नीचे का भाग हटा दें और आगे भी देखें कि उसमें कोई कीड़ा नहीं हो।

वस्त्रपूतेन तोयेन यः कुर्यादुपलेपनम्।
पश्यन्परिञ्जन्तृ चान्द्रायणफलं लभेत्॥ 34॥

इसी प्रकार यदि शिवालय की उस जल से धुलाई की जाए जिसे वस्त्र से छाना गया हो और वहाँ से जन्तुओं को देखकर निकाला जाए तो चान्द्रायण व्रत तुल्य फल मिलता है।

यः कुर्यात्सर्वकार्याणि वस्त्रपूतेन वारिणा।
स मुनिः स महासाधुः स योगी स शिवं व्रजेत्॥ 35॥

जो व्यक्ति वस्त्र से छने हुए जल से यह सब कार्य करता है, उसे मुनि ही मानना चाहिए, वह महासाधु होता है। वह शिव को पूजने वाला योगी है।

क्षरन्ति सर्वदानानि यज्ञ-होम-बलिक्रियाः।
न तु क्षरेन्महादानं अभयं सर्वदेहिनाम्॥ 36॥

समस्त दान, होम, यज्ञ, बलिक्रियादि क्षीण होते हैं परन्तु यह श्रमदान कभी क्षीणकाय नहीं होता। यह सभी देहियों को अभयदान देता है।

नैरन्तर्येण यः कुर्यात् पक्ष सम्मार्जनां जनम्।
युगकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते॥ 37॥
तदन्ते स चतुर्वेदं स्वरूपः प्रियदर्शनः।
आढ्यः सर्वगुणोपेतो राजा भवति धार्मिकः॥ 38॥

जो व्यक्ति निरन्तर इस मार्जन पक्ष का कार्य करता है, वह सौ करोड़ युग तक दिव्य शिवलोक में निवास करता है। इसके अन्त में वह चारों वेदों का स्वरूप और प्रिय रूप पाकर धनवान तथा सभी गुणों से सम्पन्न होकर धार्मिक राजा होता है।

सम्पर्केणापि यः कुर्यात् नरः कर्म शिवालये।
सोऽपि देहत्रयाज्ज्ञानं प्राप्य शान्तिमवाप्नुयात्॥ 39॥

ऐसे गुणीजन के सम्पर्क में आकर यदि कोई व्यक्ति शिवालय में ऐसा कार्य करता हैं, वह तीन देहों के ज्ञान (त्रयी) को प्राप्त करके शान्ति पाता है।

शैवज्ञानमाहात्म्यमाह —

रुद्रदेव निकार्येषु कश्चिज्ज्ञानमवाप्नुयात्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कश्चिदेव तु मेदिन्यां लब्ध्वा ज्ञानं विमुच्यते ॥ 40 ॥

रुद्रदेव के निमित्त (मन्दिर में एतद् विषयक) कार्यों के सम्बन्ध में थोड़ा ज्ञान प्राप्त करके और पृथ्वी पर अन्यत्र कहीं से भी ऐसे ज्ञान को पाकर वह मुक्त हो जाता है।

तावद्भ्रमन्ति संसारे दुःखशोक परिप्लुताः।
न भवन्ति शिवे भक्ता यावत्सर्वेऽपि देहिनः ॥ 41 ॥

व्यक्ति तभी तक इस संसार में भ्रमण करता रहता है और दुःख-शोक से घिरा रहता है जब तक कि वह शिवभक्त नहीं हो जाता। यह बात सभी देहधारणकर्ताओं के लिए है।

समासक्तं यथा चित्तं भवेद् विषय गोचरा।
यदि नाम शिवेऽप्येवं को न मुच्यते बन्धनात् ॥ 42 ॥

चित्त को समासक्त चित्त बनाकर जिसे समस्त विषय दिखाई दे जाते हैं और ऐसे में शिव का नाम लें तो कौन ऐसा है, जो बन्धनों से मुक्त नहीं हो जाता है!

शिवालये कुट्टिमभूमिमार्जनचित्रणादीनां फलमाह —

यः कुर्यात्कुट्टिमं भूमिं दर्पणोदर सन्निभम्।
नानावर्णविचित्रं च विचित्र कुसुमोज्वलम् ॥ 43 ॥
क्वचित्कलशविन्यस्तां पङ्कजाद्युपशोभिताम्।
(मनो)रमां च कुसुमां शिवायतन संसदि ॥ 44 ॥
यावद्धस्ता भवेद्भूमिः समन्तादुपशोभिता।
तावद्युगसहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते ॥ 45 ॥

जो शिवालय की भूमि को साफ-सुथरी और पक्की बना देता है तथा उसके आंगन को दर्पण के समान चिकनी, इकसार बना देता है, तदोपरान्त उसे तरह-तरह के रंगों से विचित्र बनाकर सुकुमार पुष्पों से अलंकरण करता है, कहीं पर कलश रखकर तो कहीं कमलों की रचनाकर शोभायमान करता है और फिर मनोरम पुष्पों से शिवालय को सजाता है, तो जितने हाथ प्रमाण भूमि उसके प्रयासों से सजती है, उतने ही सहस्त्र युगों तक वह व्यक्ति रुद्रलोक में निवास करता है।

कारयेच्चित्र शास्त्रज्ञैः यत्नाच्चित्रं शिवालये।
रुद्रावतार क्रीडाद्यैः प्रयोगै रागमोदितैः ॥ 46 ॥
यावन्ति रुद्ररुपाणि स्वरूपाण्यपि लेखयेत्।
तावद्युग सहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते ॥ 47 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो लोग चित्रशास्त्र के जानकार हों अर्थात् चित्रकला के अभ्यासी हों, उनको प्रयास करके शिवालय में चित्रांकन कार्य करना चाहिए। वहाँ बनाए जाने वाले चित्रों के विषयों में रुद्रावतार और उनकी क्रीड़ाएँ मुख्य हैं। इनका प्रयोग अनुराग व प्रसन्नता के साथ किया जाना चाहिए। जितने रुद्र के रूप है, उनको भी चित्र में स्वरूपवान करना चाहिए। इससे वह व्यक्ति उन चित्रों के सहस्र युगों तक रुद्रलोक में निवास करता है।

सुधाविलिप्तकार्यफलमाह —

सुधाविलिप्तं यः कुर्यात् सर्वयत्नैः शिवालयम्।
तावत्पुण्यं भवेत्सोऽपि यावदायतने कृते॥ 48॥
प्रत्यब्धं यः प्रकुर्वीत शम्भोरायतनं बुधः।
तावद्युग सहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 49॥

जो व्यक्ति प्रयत्नपूर्वक शिवालय में चूना-कलई का कार्य (अनुरक्षण) करवाता है तो उसे वही फल मिलता है जो कि शिवालय का निर्माण का कहा गया है। इस कार्य को जो बुद्धिमान व्यक्ति प्रति वर्ष सम्पादित करने का प्रयास करता है, वह उतने ही हजार युगों तक शिवलोक में रहता है।

धवल सूत सुधया यथाशोभं च वर्णकैः।
यावन्त्यब्दानि कुरुते धवलं तच्छिवालयम्॥ 50॥

इसी प्रकार जो व्यक्ति धवल चूने से पुताई करके शिवालय को उज्ज्वल बनाता है और फिर उसे यथाशोभा रंगों से रंगवाता है। जो जितने वर्षों तक वह शिवालय की धुलाई-पुताई की ऐसी व्यवस्था करता है (वह भी पूर्वानुसार शिवलोक का अधिकारी होता है)।

जीर्णोद्धारफलमाह —

खण्डं स्फुटितं संस्कारं यः कुर्वीत शिवालये।
आरामावथे वापि लभते मौलिकं फलम्॥ 51॥

शिवालय के जीर्ण-शीर्ण, खण्डित हुए स्वरूप का और फूटे हुए भाग का जो संस्कार करवाता है, नवनिर्माण करवाता है तथा वहाँ उद्यान-बगीचे लगाता है, वह उसके मूल फल (निर्माण करवाने के पुण्य लाभ) को प्राप्त करता है।

नास्ति रुद्रसमो देवो नास्ति रुद्रसमो गुरुः।
नास्ति रुद्रसमं ज्ञानं नास्ति रुद्रसमः तपः॥ 52॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उसके लिए यह ज्ञातव्य है कि रुद्र के समान कोई देव नहीं, रुद्र के समान कोई गुरु नहीं, रुद्र के समान कोई ज्ञान नहीं और रुद्र के समान कोई तप नहीं है।

एवं शिवाश्रमारामं कृत्वा संस्कारपूर्वकम्।
कृत्वाल्पमपि वा भक्त्या इदं स्तोत्रमुदीरयन्॥ 53॥

इस प्रकार के शिवालय, शिवाश्रम और शिवोद्यान का संस्कार कार्य न्यूनाधिक भी करने पर नीचे दिए हुए स्तोत्र का पाठ अवश्य करना चाहिए—

अथ शिवमाहात्म्यस्तोत्रपाठ —

निर्द्धूतमलदेहाय स्वभावामलमूर्तये।
सितभस्माङ्गरागाय देवेशाय नमोऽस्तुते॥ 54॥

"मलदेह को धोकर स्वभाव से ही निर्मल, मूर्तिरूप, सफेद भस्म को अंगराग की तरह धारण करने वाले देवेश! आपको नमस्कार है।

नीलकण्ठाय शर्वाय अजायामित मूर्तये।
बहुरूपाय कान्ताय शाश्वताय नमोऽस्तुते॥ 55॥

नीलकण्ठ शर्व को, अज और अमित मूर्ति को, बहुतरूप वाले, कान्त स्वरूप को तथा शाश्वत देव को नमस्कार है।

पराय परमेशाय सर्वज्ञाय नमोऽस्तुते।
अतीत गुणसङ्घाय विश्वेशाय नमोऽस्तुते॥ 56॥

पर को, परमेश्वर को और सर्वज्ञ शिव को नमस्कार है। अतीत गुणों के संघ को और विश्वेश को नमस्कार है।

महाभोगीन्द्रभूषाय पिङ्गलोचनरोचये।
विचित्र चरिताढ्याय अनन्ताय नमोऽस्तुते॥ 57॥

महाभोगीन्द्र (सर्पराज) की भूषा धारण करने वाले को, पिंगलोचन (भूरी आंखों वाले) को, विचित्र चरित्रों की भरमार वाले को और अनन्त शिव को नमस्कार है।

सर्वप्रणत देहाय स्वयमपणतात्मने।
पूज्यानामपि पूज्याय नमस्त्र्यक्षाय शूलिने॥ 58॥

सभी प्राणियोंकी देह को, स्वयं की प्रणतात्मा को, पूज्यों में भी पूज्य को, तीन आंखों वाले त्रिनेत्र और त्रिशूलधारी शिव को नमस्कार है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ब्रह्मेन्द्रविष्णुवन्द्याय उत्पत्तिस्थिति हेतवे।
भुक्तिमुक्तिप्रदानाय संस्तुताय नमोऽस्तुते॥ 59॥

ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्र द्वारा वन्दनीय को, उत्पत्ति, स्थिति के हेतु को, भुक्ति व मुक्ति के प्रदाता को, संस्तुत शिव को नमस्कार है।

वामाय वामरूपाय वामचाराय गामिने।
वामकान्तार्धदेहाय ईशानाय नमोऽस्तुते॥ 60॥

वाम को, वामरूप को, वामाचारगामी को, वामभाग में प्रिया पार्वती की अर्धदेह वाले को, ईशान देव को नमस्कार है।''

य इमं कीर्तयेत्पुण्यं प्रासादाध्यायमुत्तमम्।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः शिवसायुज्यमाप्नुयात्॥ 61॥

इस प्रकार यह पुण्यपाठ उत्तम प्रासाद अध्याय कहा गया है जो इसको कहता-पढ़ता है, वह सभी पापों से छूटकर शिव सायुज्य प्राप्त करता है।

इति शिवधर्मपुराणे[1] प्रासादाध्यायो नाम चतुर्थोऽध्यायः॥ 4॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में प्रासादाध्याय नामक चौथा अध्याय पूरा हुआ।

*****

अथ पञ्चमोऽध्यायः॥ 5॥

शिवलिंग की पूजादि के क्रम में नाना द्रव्यों से स्नानादि कृत्य और आराधन के निमित्त नृत्त-गान-वादनादि सहित विविध द्रव्यों के सम्बन्ध में श्रीसनत्कुमार के प्रति श्रीनन्दिकेश्वर का निर्देश

अथ लिङ्गस्नानावसरे कृत्यादीनां। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

लिङ्गमूर्तेर्महेशस्य शिवस्य परमेष्ठिनः।
स्नानकाले प्रकुर्वीत जयशब्दादि मङ्गलम्॥ 1॥

---

1. 'शिवधर्मशास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

(श्रीनन्दिकेश्वर ने सनत्कुमार के प्रति आगे कहा कि हे सनत्कुमार!) भगवान् महेश की लिंगमूर्ति परमेष्ठि को स्नान करवाने की वेला में जयघोष के साथ मंगल सूचक शब्दों को कहना चाहिए।

त्रिशूलवज्र शङ्खाब्ज श्रीवत्सस्वस्तिकादिभिः।
हेमरूप्यादि पात्रेषु कल्पितैर्गोमयादिभिः॥ 2॥

इस अवसर पर शिव के आयुध के रूप में वहाँ त्रिशूल, वज्र, शंख, कमल, श्रीवत्स, स्वस्तिक आदि निवेदित करते हुए सुवर्ण और चाँदी के पात्र में गोमयादि पूजन सामग्री कल्पित की जानी चाहिए।

नानावर्णश्च कुसुमै रक्षितैस्तिलतण्डुलैः।
सिद्धार्थदधिसम्मिश्रैः यथाशोभं च पूरितैः॥ 3॥

वहाँ पर नाना रंगों वाले पुष्पों, अक्षतों, तिल, चावल और सरसों को दधि में सम्मित करके यथाशोभा पूरित करने चाहिए।

उच्चैर्यष्टिप्रदीपाद्यैः चूताश्वत्थादिपल्लवैः।
ओषधीभिश्च मेघ्याभिः सर्वबीजैर्यवाङ्कुरैः॥ 4॥

इसी प्रकार वहाँ ऊँचे काष्ठ के दीवट (दीपस्तम्भ) पर दीपक जलाना चाहिए अथवा मशालों की यष्टि को प्रज्वलित करना चाहिए। आम्र और पीपल आदि के पत्रों तथा मेघ्यादि (विष सूचक) ओषधियों और समस्त बीजों सहित जौ के जवारे निवेदित करने चाहिए।

नीराजनावसर च तत्सामयिककृत्यानि —

अष्टम्यादिषु सर्वेषु दिवेषूत्सवेषु च।
पर्वकालेषु सर्वेषु पुण्य-पौर्णादि पर्वणि॥ 5॥
शङ्खभेर्यादि निर्घोषैः महद्भिर्गेय संयुतैः।
कुर्यान्नीराजनं लिङ्गे शिवमुद्दिश्य मङ्गलैः॥ 6॥

सभी अष्टमी की तिथियों तथा समस्त उत्सव के दिनों में, पर्वकाल[1] में और पुण्य पूर्णिमाओं के दिनों में शंख और भेरी के घोष तथा महागीतों के साथ शिवलिंग का नीराजन अर्थात् आरती करनी चाहिए। इस अवसर पर शिव के मंगल स्वरूप का उद्देश्य रखना चाहिए।

---

1. पर्वतिथियाँ– (14, 8, 15, 30 एवं सङ्क्रान्ति) मानी गई हैं। विष्णुपुराणकार का मत है— चतुर्दश्यष्टमी चैव, ह्यमावस्या च पूर्णिमा। पर्वाण्येतानि राजेन्द्र रविसङ्क्रान्तिरेव च॥ (विष्णु. 3, 11,118)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यावत्पर्वाणि विधिवत् कुर्यान्नीराजनं शिवे।
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 7॥

यह कहा गया है कि जितने पर्वों तक विधिवत भगवान् शिव की आरती की जाती है, उतने ही हजार वर्षों तक आरतीकर्ता रुद्रलोक में निवास करता है।

गेयवादननृत्यादीना फलमाह —

स्नानकाले त्रिसन्ध्यं च यः कुर्याद्गेयवादनम्।
नृत्तं वा मुखवाद्यं वा तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 8॥
यावन्त्यहानि कुरुते गेयनृत्तादि वादनम्।
तावद्वर्ष सहस्राणि शिवलोके महीयते॥ 9॥

शिव के स्नान की वेला में और त्रिसन्ध्या करते समय गीत का गायन और वाद्यों का वादन किया जाना चाहिए। उनके सम्मुख नृत्त (जिसमें संगीत के तीनों प्रकारों का प्रयोग हो) किया जाए अथवा मुख से बजाए जाने वाले वंशी, तुरही-शंख आदि वाद्यों का वादन किया जाना चाहिए। इस प्रकार जो कार्य करते हैं, उनका फल सुनिए। जितने दिनों तक यह कृत्य किया जाता है, उतने ही हजार वर्षों तक कर्ता शिवलोक में निवास करता है।

इत्यमनन्तरं ब्रह्मस्नानवर्णनम् —

कपिला पञ्चगव्येन कुशवारियुतेन च।
स्नापयेन्मन्त्रपूतेन ब्रह्मस्नानं हि तत्स्मृतम्॥ 10॥

शिवलिंग को कपिला गाय[1] के पञ्चगव्य[2] और कुशाजल से स्नापन-मन्त्र सहित जो स्नान करवाया जाता है, उसे 'ब्रह्मस्नान' जानना चाहिए।

एकाहमपि यो लिङ्गे ब्रह्मस्नानं समाचरेत्।
स विधूयाशु पापानि रुद्रलोके महीयते॥ 11॥

---

1. कपिला नामक गाय के लिए कोशकार हेमचन्द्र ने कहा है कि यह गाय स्वर्णवर्ण वाली होती है। महाभारत में कहा गया है कि यह गाय बछड़े सहित पर्वतों में विचरण करती है— कपिला सहवत्सा वै पर्वते विचरत्युत। (महाभारत 3, 84, 82)
2. प्रायः पंचगव्यों में दुग्ध, दधि, घृत, गोमूत्र और गोमय को सम्मिलित किया गया है— गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिर्यथाक्रमम् पञ्चगव्यमिदं प्रोक्तम्॥ (व्रतराज) देवलस्मृति में आया है कि गोमूत्र में वरुण का निवास होता है, गोमय में अग्नि, गोदुग्ध में चन्द्रमा, गोदधि में वायु और गोघृत में सूर्य का निवास होता है— वरुणो देवता मूत्रे गोमये हव्यवाहनः। सोमः क्षीरे दध्नि वायुर्घृते रविरुदाहृतः॥ (देवलस्मृति 62) अन्यत्र इसे ब्रह्मकूर्च भी कहा गया है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो व्यक्ति चाहे एक दिन ही शिवलिंग को ब्रह्मस्नान करवाता है, वह अपने बड़े-बड़े पापों को धोकर रुद्रलोक में निवास करता है।

कपिला पञ्चगव्येन दधिक्षीरघृतेन च।
स्नानं शतगुणं ज्ञेयं इतरस्मान्न संशयः॥ 12॥

कपिला गाय के पंचगव्यों और दही, दूध व घी से स्नान करवाना सौ गुना फल को देने वाला जानना चाहिए, इसमें कोई संशय नहीं है।

देवाकार्यं समुद्दिश्य देहशुध्यर्थमेव च।
कपिलामाहरेद्विद्वान् मुनिदेवादि वन्दिताम्॥ 13॥

देवता का कार्य समझकर देहशुद्धि के प्रयोजन से कपिला गाय को लाना चाहिए। यह गौ प्रजाति मुनियों और देवताओं द्वारा वन्दित है।

कपिलां यः पिबेच्छूद्रः शिव कार्यार्थ निर्मिताम्।
स पच्यते महाघोरे सुचिरं नरकार्णवे॥ 14॥

कपिला गाय शिव कार्यार्थ ही निर्मित मानी गई है। अतः यदि कोई पूजा से पूर्व ही उसके दूध का पान कर जाता है तो वह शूद्र ही है। ऐसा करने वाला बहुत काल तक महाघोर नरक-सागर में पकाया जाता है।

नानापदार्थात्पूजनफलमाह —

वर्षकोटिसहस्त्रेषु यत्पापं समुपार्जितम्।
घृताभ्यङ्गेन लिङ्गस्य दहेत्सर्वं न संशयः॥ 15॥

(घृतादि से अभ्यङ्ग-स्नान के फल) जिस किसी ने भी हजारों-करोड़ों वर्षों तक पापकर्म किए हों, वे सभी (कपिला गाय के) घृत का शिवलिंग पर अभ्यंग करने से जल जाते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

कल्पकोटिसहस्त्रेषु यत्पापं समुपरार्जितम्।
घृताभ्यङ्गेन लिङ्गस्य दहत्यग्निरिवेन्धनम्॥ 16॥

इसी प्रकार हजार कल्पों तक भी जो पापकर्म किए हों, वे सबके सब शिवलिंग का घृताभ्यंग करने से अग्नि में ईंधन की तरह जल जाते हैं।

कृष्णाष्टम्यां घृतस्नानं कृत्वा लिङ्गे सकृन्नरः।
कुलैकविंशमुद्धृत्य$_{21}$ शिवलोके महीयते॥ 17॥

महीने के कृष्णपक्ष की अष्टमी को घृत से स्नान करवाए जाने पर जो सुकृत

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुण्य मिलता है, उससे इक्कीस कुल तर जाते हैं और उस शुभकर्मकर्ता को शिवलोक में निवास मिलता है।

अयुतं योगवान्दद्यात् दोग्ध्रीणां वेदपारगे।
वस्त्रादि हेमयुक्तानां घृतस्नानेन तत्फलम्॥ 18॥

दस हजार की संख्या में वेदपारग विद्वानों को और योगविदों को दूधारू गायें दान करने से तथा सुवर्णाभूषणों के साथ वस्त्रादि दान करने से जो फल मिलता है, वह मात्र शिवलिंग को घृतस्नान कराने से सम्भव है।

सदाढकेन पयसा यो लिङ्ग स्नापयेन्नरः।
राजतेन विमानेन सोमलोके महीयते॥ 19॥

जो व्यक्ति सदा आढ़क[1] प्रमाण दूध से शिवलिंग को स्नान करवाता है, वह विमान पर आरूढ़ होकर सोमलोक में निवास करता है।

स्नाप्य दध्ना सकृल्लिङ्गं विष्णुलोके महीयते।
मधुना स्नापयित्वा तु वह्निलोकं स गच्छति॥ 20॥

दधि से स्नान करवाने पर कर्ता शीघ्र ही विष्णुलोक को प्राप्त होता है और शहद से स्नान करवाने वाला अग्निलोक को गमन करता है।

स्नापयेत्तिलतैलेन हस्तयन्त्रोद्भवेन च।
श्वेतपीतकपिष्टैर्वा वायुलोके महीयते॥ 21॥

हाथ से चलाए जाने वाले कोल्हू से निकाले गए तिल के तेल से शिवलिंग को स्नान करवाने वाला या सफेद-पीत पिष्ट से (अभ्यंग) करवाने पर कर्ता वायुलोक को प्राप्त करता है।

स्नानमिक्षुरसेनापि यो लिङ्गं सकृदाचरेत्।
लभेद्वैद्याधरं लोकं सर्वकाम समन्वितम्॥ 22॥

गन्ने के रस से शिवलिंग को स्नान करवाने जैसा सुकृत्य करने वाला विद्याधरों के लोक को प्राप्त होता है और उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

---

1. भास्कराचार्य ने लीलावती ग्रन्थ में जो गणित दी है, उसके अनुसार यह प्राचीन माप-तौल का प्रमाण माना गया है। तौलादि के ये मान थे— 1 घनहाथ = 1 खारी, 4 कुडव = 1 प्रस्थ, 4 प्रस्थ = 1 आढक, 4 आढक = 1 द्रोण, 16 द्रोण = 1 खारी। (लीलावती परिभाषा. 2-11) इनको तौलों को वर्तमान प्रमाण से देखें तो ज्ञात होगा— 64 × 4 = 256 ग्राम = 1 कुडव, 4 कुडव 1 प्रस्थ, 256 × 4 = 1024 ग्राम = 1 प्रस्थ, 4 प्रस्थ = 1 आढक, 1 आढक = 4 किलो 96 ग्राम, 4 आढक = 1 द्रोण = 16 किलो 400 ग्राम लगभग।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

फलोदकेन यो लिङ्गं भक्त्या संस्नापयेन्नरः।
उत्सृज्य पालकलिलं पितृलोके महीयते॥ 23॥

जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक फलों के रस से शिवलिंग को स्नान करवाता है, वह अपने पापों के कीचड़ को धोकर पितृलोक में निवास करता है।

सितेन भस्मना स्नाप्य सकृल्लिङ्गं प्रमोदते।
चन्द्रांशु निर्मलः श्रीमान् शिववत्सोममण्डले॥ 24॥

सफेद भस्मधूली से शिवलिंग को स्नान करवाकर जो शिव को प्रमुदित करता है, वह श्रीमान् चन्द्रमा की निर्मल किरणों से शिव के समान सोममण्डल में निवास करने का अधिकारी होता है।

वस्त्रपूतेन तोयेन यो लिङ्गं स्नापयेन्नरः।
सर्वकाम सुतृप्तात्मा वारुणं लोकमाप्नुयात्॥ 25॥

वस्त्र से छाने गए जल से जो व्यक्ति शिवलिंग को स्नान करवाता है, वह सर्वकामनाओं से तृप्तात्मा होकर वरुणलोक में निवास करता है।[1]

कुशोदकेन यो लिङ्गं भक्त्या स्नापयते सकृत्।
काञ्चनेन विमानेन ब्रह्मलोक महीयते॥ 26॥

जो शिवलिंग को कुशा के जल से भक्तिपूर्वक स्नान करवाता है, वह सुकृत् सोने के विमान पर आरूढ़ होकर ब्रह्मलोक में जाता है।

गन्धचन्दन तोयेन स्नापयेत्सकृदीश्वरम्।
गन्धर्वलोकमाप्नोति गन्धर्वैश्च स पूज्यते॥ 27॥

सुगन्धित चन्दन के जल से जो ईश्वर शिव को स्नान करवाता है, वह गन्धर्वलोक में जाकर गन्धर्वगणों की तरह पूजा जाता है।

पुष्पोदकेन सावित्र्यं कौबेरं हेमवारिणा।
रत्नोदकेन माहेन्द्रं लोकं प्राप्य स मोदते॥ 28॥

फूलों के जल से स्नान कराने पर सावित्र्यलोक, सोने के जल से स्नान कराने पर कुबेरलोक और रत्नों के जल से शिवलिंग को स्नान कराने वाला इन्द्रलोक को प्राप्त करके आनन्द पाता है।

---

1. तुलनीय— वस्त्रपूतेन तोयेन कार्यं चैवोपलेपनम्। शिवक्षेत्रे मुनिश्रेष्ठा नान्यथा सिद्धिरिष्यते॥ आपः पूता भवन्त्येता वस्त्रपूताः समुद्धृताः। अफेना मुनिशार्दूला नादेयाश्च विशेषतः॥ (लिंग. पूर्व. 78, 1-2)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पाटलोत्पल पद्मानि करवीराणि सर्वदा।
स्नान तोयेषु योज्यानि स्थिराणि सुरभीणि च॥ 29॥
एषामेकतमं स्नानं यः कुर्याद्भक्तितः शिवे।
विधूय पापकलिलं शिवलोके महीयते॥ 30॥

इसी प्रकार पाटल के पुष्पों, उत्पल (श्वेत कमल), पद्म, करवीर आदि के पुष्पों के जल से सदा स्नान करवाने वाला इस पृथ्वीलोक में स्थिर रहता है। भक्तिपूर्वक शिवलिंग को ऐसा एक भी स्नान करवाता है, वह पापों के कीचड़ को धोकर शिवलोक में निवास करता है।

कर्पूरागरुतोयेन यो लिङ्गं स्नापयेत्सकृतम्।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते॥ 31॥

कर्पूर और अगरु मिश्रित जल से जो शिवलिंग को स्नान करवाने का कृत्य करता है, वह सभी पापों से विनिर्मुक्त होकर शिव के लोक को जाता है।

मन्त्राष्टशतजप्तेन$_{108}$ विमलेनाम्भसा शिवम्।
स्नापयित्वा सकृद्भक्त्या शिवलोके महीयते॥ 32॥

स्नापन की वेला में जो शिव के एक सौ आठ मन्त्रों का जाप करता हुआ शिवलिंग को जल से निर्मल करता है, वह इस सुकृत भक्ति से स्नान कराकर शिवलोक में निवास करता है।

पितृमुद्दिश्य यो लिङ्गं स्नापयेच्छीत वारिणा।
तृप्ताः स्वर्गं प्रयास्यन्ति पितरो नरकादपि॥ 33॥

जो पितरों को उद्देश्य करता हुआ शीतल जल से शिवलिंग को स्नान करवाता है, वह पितरों को तृप्त करता है और उन्हें नरक से स्वर्ग में ले आता है।

त्रिविध विशिष्टस्नानमाह —

लिङ्गं शीताम्बुना स्नाप्य धारोष्णपयस ततः।
स्नाप्य पश्चाद्धृतेनापि कृतमेकं विशिष्यते॥ 34॥

शिवलिंग के तीन विशेष स्नान बताए गए हैं— इनमें से क्रमशः प्रथम शीतल जल से स्नान करवाना, फिर धारोष्ण दूध से स्नान करवाना और तदोपरान्त घृत से स्नान करवाना।

एतत्स्नानत्रयं कृत्वा पूजयित्वा च भक्तितः।
अश्वमेध सहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः॥ 35॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

क्रमशः इन तीनों ही स्नानों को भक्तिपूर्वक करवाया जाकर शिवलिंग का पूजन किया जाए तो मानव हजार अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त करता है।

मृत्कुम्भात्ताम्रकुम्भेन स्नानं शतगुणोत्तरम्।
रौप्यं लक्षोत्तरं पुण्यं हैमैः कोट्यधिकं भवेत्॥ 36॥

इनके लिए कौनसे पात्र का क्या फल है, इस सन्दर्भ में कहा गया है कि मिट्टी के कलश से स्नान करवाने की अपेक्षा ताँबे के घट से स्नान करवाने का फल सौ गुना अधिक कहा गया है। ताँबे की अपेक्षा चाँदी के कलश से स्नान करवाने का फल लाख गुना होता है और चाँदी से भी करोड़ गुना अधिक फल सुवर्ण के कलश से करवाने से मिलता है।

घृतस्नानस्य परमश्रेष्ठताज्ञेयम् —

लिङ्गस्य दर्शनं पुण्यं दर्शनात्स्पर्शनं शुभम्।
स्पर्शनादर्चनं श्रेष्ठं घृतस्नान मतः परम्॥ 37॥[1]

शिवलिंग का दर्शन पुण्य-प्रसूत होता है। दर्शन की अपेक्षा उसका स्पर्श करना शुभ है। स्पर्श की अपेक्षा अर्चन श्रेष्ठ माना गया है और घृत से स्नान करवाना तो परमश्रेष्ठ बताया गया है।

इहामुत्रकृतं पापं घृतस्नानेन देहिनाम्।
क्षमते शङ्करो यस्मात् तस्मात्स्नानं समाचरेत्॥ 38॥

घृतस्नान से व्यक्ति द्वारा इहलोक-परलोक में किए गए समस्त पापों को भगवान् शंकर क्षमा कर देते हैं। इस अर्थ में शिव स्नान को करवाना चाहिए।

जलादीनां स्नानमाहात्म्यमाह —

दशापराधं तोयेन क्षीरेण तु शतं तथा।
सहस्रं क्षमते दध्ना घृतेनाप्युतं शिवः॥ 39॥

शिवलिंग को जल से स्नान करवाने से दस प्रकार के अपराधों का निवारण होता है। दूध से स्नान करवाने से सौ पाप नष्ट होते हैं। दधि से स्नान करवाने से हजार पापों का शमन होता है जबकि घृत से स्नान करवाने पर भगवान् शिव अयुत (10,000) पापों को क्षमा कर देते हैं।

---

1. लिंगपुराण में आया है कि अर्चना से बढ़कर कुछ भी नहीं है— लिङ्गस्य दर्शनं पुण्यं दर्शनात् स्पर्शनं वरम्॥ अर्चनाधिकं नास्ति ब्रह्मपुत्र न संशयः। (उत्तर. 26, 28-29)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नैरन्तर्येण यो मासं घृतस्नानं समाचरेत्।
एकविंशत्कुलोपेतः$_{21}$ क्रीडते दिवि रुद्रवत्॥ 40॥

जो कोई प्रतिमास निरन्तर शिवलिंग को घृत से स्नान करवाते हैं, वे अपने इक्कीस कुलों को तारकर देवता बनते हैं और रुद्र के समान ही देवलोक में क्रीड़ा करते हैं।

जलस्नानाभ्यङ्गमहास्नानञ्च —

जलस्नानं पलशतं[1] अभ्यङ्गः पञ्चविंशतिः$_{25}$।
पलानां[2] द्वेसहस्रे तु महास्नानं तु भक्तितः॥ 41॥

शिव को (पूजा की नाना सामग्री के) पच्चीस पल[3] से स्नान करवाएँ तो वह 'अभ्यङ्ग' होता है। सौ पलों जल से स्नान करवाएँ तो वह 'स्नान' होता है। दो हजार पलों से भक्ति सहित स्नान करवाएँ तो वह 'महास्नान' कहा जाता है।

अन्यदप्याह —

घृताभ्यङ्गे घृतस्नाने यत्नालिङ्गं विरूक्षयेत्।
यवगोधूमजैश्चूर्णैः तोषयेद्गन्धयोजितैः॥ 42॥

घृताभ्यंग और घृतस्नान करवाने के उपरान्त शिवलिंग की चिकनाई को दूर करके रुखा करने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए जौ और गेहूँ के आटे का प्रयोग सुगन्धित द्रव्यों को मिलाकर करें और शिव को सन्तुष्ट करने का यत्न करना चाहिए।

सुखाष्णेनाम्भसा चापि स्नापयेत्तदनन्तरम्।
घर्षयेद्बिल्वपत्रैश्च तव पीठं च शोधयेत्॥ 43॥

उक्त कृत्य के उपरान्त सुहाते-सुहाते गर्म जल को लेकर स्नान करवाएँ और बिल्वपत्र लेकर उससे धीरे-धीरे घिसाई करें और शिवलिंग की पीठ को शोधित कर सुखाएँ।

---

1. 'पलशतं ज्ञेयं' इति अर्थपूर्णम्। तुलनीय— स्नानं पलशतं ज्ञेयमभ्यङ्गं पञ्चविंशति॥ पलानां द्वे सहस्रे तु महास्नानं प्रकीर्तितम्॥ (लिंगपुराण पूर्व. 92, 170-171)
2. 'फलानां' इति मातृकायाम्।
3. गणितज्ञ भास्कराचार्य ने लीलावती के अन्तर्गत प्राचीन माप-तौल के प्रमाण बताए हैं— 20 वराटकाः = 1 काकिणी, 4 काकिणी = 1 पण, 16 पण = 1 द्रम्म, 16 द्रम्म = 1 निष्क, 5 गुंजा = 1 माष, 16 माष = 1 कर्ष, 4 कर्ष = 1 पल। वर्तमान प्रमाण के अनुसार 1 माषा = लगभग 1 ग्राम, 16 ग्राम = 1 सुवर्ण, 4 पल = 12 ग्राम = 1 तोला, 64 ग्राम = 1 निष्क या पल, 100 पल 6400 ग्राम या 6 किलो 400 ग्राम। (लीलावती परिभाषा. 2-11)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्र उद्वर्तनफलमाह —

दशकोटिसहस्राणि यद्दत्वा लभते फलम्।
तत्फलं लभते मर्त्यो लिङ्गस्योद्वर्तने कृते॥ 44॥

दस हजार करोड़ (मुद्रादि) के दान करने का जो फल मिलता है, वह फल शिवलिंग को मृत्तिका से उबटन करने से प्राप्त होता है।[1]

अथ नानाविधार्घ्यविधानफलञ्च —

अर्घ्यं पुष्पजलोपेतं यः शिवाय निवेदयेत्।
स पूज्यः सर्वलोकेषु शिववन्मोदते चिरम्॥ 45॥

जो शिवलिंग को पुष्पों के जल से अर्घ्य निवेदित करता है, वह समस्त लोकों में पूज्य होकर शिव के समान ही चिरकाल पर्यन्त आनन्दित रहता है।

गन्धोदकेन सम्मिश्रं उदकार्घ्यं दशोत्तरम्।
पञ्चगव्यसमायुक्तं अर्घ्यं शतगुणं भवेत्॥ 46॥

जल में सुगन्धित द्रव्य मिलाकर शिव को अर्घ्य देने से दस गुना और पंचगव्य के साथ अर्घ्य देने से सौ गुना फल मिलता है।

अर्घ्यमष्टाङ्गमापूर्य लिङ्गमूर्ध्नि निवेदयेत्।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 47॥

अष्टांग मिले जल से शिवलिंग के शिखर पर अर्घ्य निवेदित करने से कर्ता को दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में निवास मिलता है।

आपः क्षीरं कुशाग्राणि दध्याज्यं च सतण्डुलम्।
तिलसिद्धार्थकैश्चैवं अर्घ्योऽष्टाङ्गः प्रकीर्तितः॥ 48॥

1. जल, 2. दूध, 3. कुशाग्र, 4. दधि, 5. घृत, 6. तण्डुल, 7. तिल और 8. सिद्धार्थ या सरसों— यह अर्घ्य अष्टांग कहा जाता है।

अथार्घ्यपात्रम् —

दारुवेण्वर्घ्यं पात्रेण यद्दत्वा लभते फलम्।

---

1. तुलनीय— स्नाप्य लिङ्गं मदीयं तु गव्येनैव घृतेन च॥ विशोध्य सर्वद्रव्यैस्तु वारिभिरभिषिञ्चति। सम्मार्ज्य शतयज्ञानां स्नानेन प्रयुतं तथा॥ पूजया शतसाहस्रमनन्तं गीतवादिनाम्। महास्नाने प्रसक्तं तु स्नानमष्टगुणं स्मृतम्॥ जलेन केवलेनैव गन्धतोयेन भक्तितः। अनुलेपनं तु तत्सर्वं पञ्चविंशत्पलेन वै॥ शमीपुष्पं च विधिना बिल्वपत्रं च पङ्कजम्। अन्यान्यपि च पुष्पाणि बिल्वपत्रं न सन्त्यजेत्॥ (लिंगपुराण पूर्व. 92, 171-175)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तस्माच्छतगुणं पुण्यं मृत्पात्रेण प्रकीर्तितम् ॥ 49 ॥

अर्घ्य देने के लिए काष्ठ और बाँस के बने पात्र का प्रयोग करने का जो फल मिलता है, उससे सौ गुना पुण्यफल मिट्टी के पात्र का प्रयोग करने का कहा गया है।

ताम्रपात्रेऽर्घ्यदानेन पुण्यं शतगुणोत्तरम्।
पलाशपद्मपात्राणां ताम्रपात्रे समं भवेत् ॥ 50 ॥

ताँबे के बने पात्र से अर्घ्यदान करने से सौ गुना पुण्य मिलता है। पलाश और कमल पात्रों से अर्घ्य देना ताँबे के पात्र के बराबर होता है।

रौप्यपात्रेण विज्ञेयं अर्घ्यं लक्षगुणोत्तरम्।
सुवर्णपात्र विन्यस्तं अर्घ्यं कोटिगुणोत्तरम् ॥ 51 ॥

चाँदी के पात्र से अर्घ्य देने से लाख गुना अधिक पुण्य होता है जबकि सुवर्ण निर्मित पात्र में लेकर अर्घ्य देना करोड़ों गुना फल देता है।

धातुपात्रदानफलमाह —

रौप्यपात्रप्रदानेन यत्फलं वेदपारगे।
तस्माच्छतगुणं पुण्यं शिवमृत्पात्र दानतः ॥ 52 ॥

वेद के विद्वान को चाँदी का पात्र दान करने का जो फल होता है, उससे भी सौ गुना पुण्यफल शिव के मिट्टी के पात्र के दान से मिलता है।

हेमपात्राणि यद्दत्वा पुण्यं स्याद्वेदपारगे।
ताम्रपात्रप्रदानेन तस्माच्छतगुणं शिवे ॥ 53 ॥

वेद के विद्वानों को सुवर्ण के पात्र का दान करने का फल होता है, उससे सौ गुना पुण्यफल शिव के लिए ताँबे का पात्र दान करने से मिलता है।

फलं कोटिं सुवर्णस्य यो दद्याद्वेदपारगे।
शिवाय रौप्यपात्रेण तस्य पुण्यं ततोऽधिकम् ॥ 54 ॥[1]

वेदपारग ब्राह्मणों को करोड़ों सुवर्ण के पात्र दान करने का जो फल है, उससे अधिक शिव के प्रति चाँदी के पात्र को दान करने से होता है।

हेमपात्रं तु यो भक्त्या शिवाय विनिवेदयेत्।
न तस्य शक्यते वक्तुं पुण्यानन्त्यं विशेषतः ॥ 55 ॥

---

1. तुलनीय—पलकोटिं सुवर्णस्य गो दद्याद्वेदपारगे। शिवाय रक्तिकामात्रं प्रदत्त्वा(?)वाऽधिकं भवेत्॥ (सौरपुराणम्, शिवार्चनमहिमाकथनम् 65, 16)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो भक्तिपूर्वक शिव को सुवर्ण का पात्र निवेदित करता है, उसका अनन्त पुण्य होता है। उस पुण्य का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

शिवप्रतिदानमाहात्म्यमाह —

तुल्यमेव फलं प्रोक्तं शिवे चाढ्य दरिद्रयोः।
तयोरप्यधिकं तस्य यः शिवे भावनाधिकः॥ 56॥

शिव के प्रति दिया गया दान चाहे वह धनवान द्वारा किया गया हो अथवा गरीब द्वारा, दोनों दानों को समान ही माना जाता है। इनमें भी उसका महत्व माना जाएगा जिसकी शिव के प्रति भावना अधिक हो।

विभवे सति यो मोहान् न कुर्याद्विधिविस्तरम्।
नैव तत्फलमाप्नोति प्रलोभाक्रान्तमानसः॥ 57॥

अपार सम्पत्ति के होने पर भी जो व्यक्ति मोह के वशीभूत होकर दान की विधि को विस्तारपूर्वक नहीं करता, उसको फल नहीं मिलता है क्योंकि उसका मन लोभ से आक्रान्त हुआ होता है।

तावत्पत्रैः फलैः पुष्पैः तोयाद्यैश्चैव यत्कृतम्।
तदनन्तफलं ज्ञेयं भक्तिरेवात्र कारणम्॥ 58॥[1]

जब तक पत्र, पुष्प, फल और जल से जुड़े सुकृत्य किए जाते हैं, तब तक उनके पुण्यफल अनन्त माने जाते हैं क्योंकि इनमें भक्ति ही एकमात्र कारण होती है।

इत्यमनन्तर अनुलेपनमाहात्म्यमाह —

लिङ्गस्यालेपनं कुर्याद् दिव्यगन्धैः सुगन्धिभिः।
वर्षकोटिशतं दिव्यं रुद्रलोके महीयते॥ 59॥[2]

शिवलिंग का अनुलेपन दिव्य गन्ध और सुगन्धों से किया जाना चाहिए। इसके करने से कर्ता सौ करोड़ दिव्य वर्षों[3] तक रुद्रलोक में रहता है।

---

1. तुलनीय— तस्मात्पत्रैः फलैः पुष्पैस्तौयैरपि यजेच्छिवम्। तदनन्तफलं प्रोक्तं भक्तिरेवात्र कारणम्॥ (सौर. 65, 17)
2. तुलनीय— लिङ्गस्य लेपनं कुर्याद्दिव्यैर्गन्धैर्मनोरमैः। वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 18)
3. पुराणों में दिव्य वर्ष की गणना की गई है। इसके अनुसार मानव का 1 मास = पितृ का एक दिन-रात। मनुष्य का एक वर्ष = देवता का 1 दिन-रात। मनुष्य के तीन वर्ष = देवता का 1 मास। मनुष्य के 360 वर्ष = देवता का एक दिव्य वर्ष। 432000 मानव वर्ष = 1200 दिव्य वर्ष = 1 कलियुग। 864000 मानव वर्ष = 2400 दिव्य वर्ष = 1 द्वापर। 1296000 मानव वर्ष = 3600 दिव्य वर्ष = 1 त्रेतायुग। 1728000 मानव वर्ष = 4800

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सुगन्धानुलेपनात्पुण्यं द्विगुणं चन्दनस्य तु।
चन्दनादगरु ज्ञेयं पुण्यमष्टगुणाधिकम्॥ 60॥

यह ज्ञातव्य है कि शिवलिंग के सुगन्धानुलेपन के पुण्य से चन्दन के अनुलेपन का पुण्य दोगुना है। इसी प्रकार चन्दन की अपेक्षा अगरु के अनुलेपन का पुण्य आठ गुना अधिक होता है।

कृष्णागरोर्विशेषेण द्विगुणं फलमिष्यते।
तस्माच्छतगुणं पुण्यं कुङ्कुमस्य विधीयते॥ 61॥

इसमें भी कृष्णागरु का अनुलेपन विशेषतः इसका दोगुना फल प्रदान करता है और इससे भी सौ गुना पुण्य कुंकुम के अनुलेपन का कहा गया है।

चन्दनागरुकर्पूरैः कृष्णापिष्टैः सङ्कुमैः।
लिङ्ग पर्याप्त मालिप्य कल्पकोटिं वसेद्दिवि॥ 62॥

चन्दन, अगरु, कर्पूर, कृष्णपिष्ट और कुंकुम से लिंग का अनुलेपन करने से करोड़ों कल्पों तक देवलोक में निवास करता है।

तालवृन्तदीनां फलमाह —

संवीज्य तालवृन्तेन लिङ्गं गन्धैः प्रलेपितम्।
वर्षकोटिसहस्राणि वायुलोके महीयते॥ 63॥

संवीज्य तालवृन्त (ताड़ का पँखा) से शिवलिंग को हवा व गन्ध का प्रलेपन करें तो करोड़ वर्षों तक वायुलोक में निवास मिलता है।

भक्त्या निवेद्य रुद्राय तालवृन्तं सुशोभितम्[1]।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 64॥

दिव्य वर्ष = 1 कृत युग। इन सबको मिलाकर योग 43, 20, 000 मानव वर्ष = 12000 दिव्य वर्ष = 1 महायुग या चतुर्युगी। इस प्रकार एक चतुर्युगी में 12000 दिव्य वर्ष या 43 लाख 20 हजार मानव वर्ष होते हैं और इसी को महायुग कहा जाता है। इसके अतिरिक्त उक्त प्रत्येक युग में संध्या, मुख्यभाग और संध्यांश नाम से तीन-तीन गणनाएँ की जाती है। यह गणना इस प्रकार होती है, जैसे- कृतयुग में संध्या 400 वर्ष, मुख्यभाग 4000 तथा संध्यांश 400 वर्ष का है। त्रेतायुग में संध्या 300, मुख्यभाग 3000 तथा संध्यांश 300, द्वापर में संध्या 200, मुख्यभाग 2000 तथा संध्यांश 200 और कलिकाल में संध्या 100 मुख्यभाग 1000 तथा संध्यांश 100 वर्ष का माना जाता है। पाश्चात्य विद्वान प्रो. ह्विटने का मत है कि 12000 वर्षों को देववर्ष मानने की कल्पना मनु की नहीं है। इसकी उत्पत्ति बहुत बाद में हुई। (जे. बर्गेस द्वारा अनूदित : सूर्यसिद्धान्त, पृष्ठ 10)

1. 'सुशोभनम्' इति पाठः। तुलनीय— संवीज्य तालवृन्तेन लिङ्गं गन्धैः सुलेपितम्। दशवर्षसहस्राणि शिवलोक महीयते॥ (सौर. 65, 22)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भगवान् रुद्रदेव को भक्तिपूर्वक शोभाजनक तालवृन्त (पँखा) निवेदित करने पर दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में निवास होता है।

मयूरव्यजनदानफलमाह —

मयूरव्यजनं दत्वा शिवायातीव शोभनम्।
वर्षकोटिशतं पुण्यं रुद्रलोके महीयते॥ 65 ॥[1]

इसी प्रकार मयूरपँखों से बने व्यजन (बीजना, बिजण) को दान करना भगवान् शिव को अति सुन्दर लगता है। इस दान के पुण्यस्वरूप दानी सैकड़ों-करोड़ों वर्षों तक रुद्रलोक में निवास करता है।

चामरदानफलमाह —

शिवाय चामर दत्वा मणिदण्डविभूषितम्।
हेमरौप्यादिदण्डं वा तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 66 ॥
चामरासक्तहस्ताग्र दिव्यस्त्रीपरिवारितः।
हेमरौप्यविमानस्थः चिरं शिवपुरे वसेत्॥ 67 ॥
इत्यर्चना प्रकाराद्यैः अनुपुण्यसञ्चयः।

भगवान् शिव को मणियों के दण्ड से विभूषित चामर (चँवर) भेंट करना चाहिए। चामरों में सुवर्ण और चाँदी के दण्ड वाले चामरों का पुण्यफल सुनो। शिव के प्रति ऐसे चामर को भेंट करने वाले व्यक्ति को (अन्त में) हाथों में चामर ढुलाती दिव्य स्त्रियाँ (अप्सराएँ) घेरे रहती हैं और वह सुवर्ण और चाँदी के विमान में बैठता है तथा चिरकाल तक शिवपुर में निवास करता है। (इस प्रकार मैंने) शिवार्चना के विविध प्रकारों और उनसे पुण्य के संचय के सम्बन्ध में कहा है।

सनत्कुमारोवाच —

पुष्पैः कतिविधैः पूजा कर्तव्या कथयस्व मे॥ 68 ॥

यह सुनकर सनत्कुमार ने श्रीनन्दिकेश्वर से पूछा कि पुष्पों से किस प्रकार शिव की पूजा होती है, वह मुझसे कहियेगा।

अथ कुसुमविनिवेदनस्य फलमाह। नन्दिकेश्वरोवाच—

पुष्पैरारण्य सम्भूतैः पत्रैर्वा गिरिसम्भवैः।

---

1. तुलनीय— मयूरव्यजनं दद्याच्छिवायातीव शोभनम्। वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 23)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अपर्युषित निच्छद्रैः प्रोक्षितैर्जन्तु वर्जितैः॥ 69॥

सनत्कुमार के वचनों को सुनकर नन्दिकेश्वर ने बोले कि वन प्रदेश में उपजे पुष्प, पहाड़ों पर उपजे पत्र जो कि अपर्युषित और बिना छिद्र के हों और जीव-जन्तु से रहित हों, वे पत्र-पुष्प पूजा के योग्य होते हैं।

आत्मारामोद्भवैर्वाऽपि पुष्पैः सम्पूजयेच्छिवम्।
पुष्पजातिविशेषेण भवेत्पुण्यं ततोऽधिकम्॥ 70॥

अपने ही विकसित किए बाग-बगीचों में उत्पन्न पुष्पों से भी शिव की पूजा की जा सकती है। उसमें भी विशेष प्रजाति के पुष्पों से पूजन-अर्चन करना अधिक पुण्यप्रद होता है।

तपःशील गुणोपेते पात्रे वेदपारगे[1]।
दत्वा सुवर्णमयुतं तत्फलं कुसुमे शुभे॥ 71॥

तपस्वी और शील जैसे गुणों से युक्त वेदपारग को दस हजार सुवर्ण[2] मुद्राओं के दान का जो फल होता है, वह केवल शुभ पुष्प से ही प्राप्त हो जाता है।

अर्कस्य पुष्पे चैकस्मिन् शिवाय विनिवेदिते।
दशदत्वा सुवर्णानि यत्फलं तदवाप्नुयात्॥ 72॥

यदि अर्क (आकड़ा या मन्दार) का एक पुष्प भी शिव को निवेदित किया जाए तो वह दस सुवर्ण मुद्रा के दान देने जितना फल प्रदान करने वाला है।

श्वेतार्कस्य विशेषेण द्विगुणं फलमिष्यते।

---

1. 'देवस्यपारगे' इति पाठः।
2. शतपथब्राह्मण में 'हिरण्यं दक्षिणा सुवर्ण शतमानं तस्योक्तम्' उल्लेख के आधार पर शतमान के स्वर्ण निर्मित होने का उल्लेख मिलता है। प्रो. डी. आर. भण्डारकर का मत है कि शतमान वृत्ताकार सिक्का था। उस काल तक निष्क, कृष्णल, सुवर्ण, शतमान, माषक और कार्षापण इन छह सिक्कों के प्रचलन को स्वीकार करते हैं। उनका यह भी विचार है कि अनगढ़ धातु हिरण्य कही जाती थी और वही जब सिक्के के रूप में ढाल दी जाती तो सुवर्ण कहलाने लगी। इन सुवर्ण के 80 रत्ती भार होने का उल्लेख भी मिलता है किन्तु यह कहना कठिन है कि सुवर्ण ब्राह्मणों में उल्लिखित 80 रत्ती भार वाले स्वर्ण खण्ड या मुद्राओं के समान ही थे अथवा नहीं। इस प्रसंग में प्रस्तुत पुराणकार ने सुवर्ण का मुद्रा होना संकेतित किया है। वैदिक साहित्य में निष्क, शतमान, सुवर्ण और पाद का उल्लेख शुभ अवसरों पर पुजारियों को दी जाने वाली दक्षिणा के रूप में हुआ है। मनु और याज्ञवल्क्य के विवरण के आधार पर सुवर्ण सिक्कों का यह तालिका प्रस्तुत की है— 5 रत्ती = 1 माश, 80 रत्ती = 16 माश = 1 सुवर्ण, 320 रत्ती = 64 माश = 4 सुवर्ण = 1 फल या निष्क, 3200 रत्ती = 640 माश = 40 सुवर्ण = 10 पल या निष्क = 1 धरण। (प्राचीन भारतीय पुरातत्त्व , अभिलेख एवं मुद्राएँ : डॉ. नीहारिका, बनारस, 2007 ई., पृष्ठ 218-219 एवं 226)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एवं पुष्पविशेषेण फलं तस्य ततोऽधिकम्॥ 73॥

इसमें भी श्वेतार्क (सफेद आक) के पुष्प का विशेष रूप से दोगुना फल कहा गया है। इसी तरह पुष्प विशेष से उसका फल भी उससे अधिक होता जाता है।

पुष्पजाति विशेषेण यथा स्यात्तन्निबोधत।
अर्कपुष्प सहस्रेभ्यः करवीरं विशिष्यते॥ 74॥

इस क्रम में विशेष पुष्प प्रजाति से जो फल होता है, उसे कहा जाता है। एक हजार आक के पुष्पों से करवीर (कनेर) पुष्प विशेष फलदायी कहा गया है।

करवीर सहस्रेभ्यो बिल्वपत्रं विशिष्यते।
बिल्वपत्र सहस्रेभ्यो बकपुष्पं विशिष्यते॥ 75॥

एक हजार करवीर पुष्पों से बिल्वपत्र विशेष होता है। एक हजार बिल्वपत्रों की अपेक्षा बक नामक पुष्प विशेष कहा गया है।

बकपुष्प सहस्राणां एकं धूर्धूरकं[1] परम्।
धूर्धूरक सहस्रेभ्यो बृहत्पुष्पं विशिष्यते॥ 76॥

एक हजार बक पुष्पों से एक धूर्धरक का पुष्प श्रेष्ठ होता है और एक हजार धूर्धरक (धत्तूरक) से भी बृहत्पुष्प विशिष्ट होता है।

अपामार्ग सहस्रेभ्यो कुशपुष्पं विशिष्यते।
कुशपुष्प सहस्रेभ्यः शमीपुष्पं विशिष्यते॥ 77॥

एक हजार अपामार्ग (चिरचिरा, चिचड़ा) के पुष्पों की अपेक्षा कुशपुष्प विशिष्ट होता है और हजार कुशपुष्पों से शमीपुष्प (खेजड़े का फूल) श्रेष्ठ माना गया है।

नीलोत्पल सहस्रेण यो मालां सम्प्रयच्छति।
शिवाय विधिवद्भक्त्या तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 78॥

एक हजार नीलकमलों की माला बनाकर जो भगवान् शिव को विधिवत रूप से निवेदित करता है, (हे सनत्कुमार!) उसका फल सुनिये।

कल्पकोटि सहस्राणि कल्पकोटिशतानि च।
वसेच्छिवपुरे श्रीमान् शिवतुल्य पराक्रमः॥ 79॥

ऐसी पुष्पमाला निवेदित करने वाला श्रीमान् हजारों कल्पों और सैकड़ों-

---

1. तुलनीय— बकपुष्पसहस्रेभ्य एकं धत्तूरकं तथा। धत्तूरकसहस्रभ्यो बृहत्पुष्पं विशिष्यते॥ (सौर. 65, 33)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

करोड़ों कल्पों तक शिवपुर में निवास करता है और भगवान् शिव के समान पराक्रमी हो जाता है।

तथान्य पुष्पानि तुल्यताह —

शेषाणां पुष्पजातीनां यत्फलं परिकीर्तितम्।
तत्फलस्यानुसारेण शिवलोके महीयते॥ 80॥

इसके अतिरिक्त शेष पुष्पों का जो फल बताया गया है, उनके फलों के अनुसार ही व्यक्ति शिवलोक में निवास करता है।

शमीपुष्पं बृहत्याश्च कुसुमं तुल्यमेव च।
करवीर समाज्ञेया ज़ाती विजयपाटलाः॥ 81॥

शमी के पुष्प और बृहती (कटेरी) के पुष्प समान फलदायी कहे गए हैं। करवीर के पुष्प के समान विजयपाटल जाती के पुष्पों को समझना चाहिए।

श्वेतमन्दारकुसुमं सितपद्मसमं भवेत्।
नागचम्पकपुन्नागा धूर्धूरक समाः स्मृताः॥ 82॥

सफेद आक के पुष्प के समान सफेद कमल के पुष्प होते हैं। नाग, चम्पक व पुन्नाग पुष्पों को धूर्धरक (धत्तूरक) पुष्प के समान समझना चाहिए।

इत्यमनन्तर वर्जितपुष्पाणि —

केतकी माधवी चैव कुन्दयूथीमदन्तिका।
शिरीषसज्जबन्धूक कुसुमानि विवर्जयेत्॥ 83॥

केतकी (केवड़ा), माधवी (हलदबेल), कुन्दयूथी और मदयन्तिका (मल्लिका, बेला) तथा शिरीष, सज्ज और बन्धूक पुष्पों को फूलों में वर्जित माना गया है।

आल्मली कुसुमं पत्र करञ्जे तु तरुद्भवम्।
वैभीतकानि पत्राणि तत्पुष्पाणि च वर्जयेत्॥ 84॥

आल्मली के पुष्प, पत्र तथा करंज के वृक्ष से उत्पन्न पुष्प, पत्र और विभीतक के पत्र व उसके पुष्पों को भी वर्जित समझें।

निर्गन्धान्युग्रगन्धानि यानि तानि विवर्जयेत्।
गन्धवन्त्यपवित्राणि यानि तानि विवर्जयेत्॥ 85॥

जिनमें गन्ध नहीं हो और जिनमें उग्रगन्ध हों, उन पुष्पों को भी वर्जित

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

समझना चाहिए। जो पुष्प गन्धवान हों परन्तु किसी दृष्टि से अपवित्र हों तो ऐसे पुष्पों को भी वर्जित मानें।

गन्धहीनमपि ग्राह्यं पवित्रं यत्कुशादिकम्।
सात्विकं तच्च कुसुमं अपवित्रं तु तामसम्॥ 86॥

गन्धहीन पुष्प भी ग्राह्य हो सकते हैं जैसे कि कुशादि के पुष्प पवित्र कहे गए हैं। ऐसे पुष्प सात्विक होते हैं और अपवित्र पुष्प तामस होते हैं।

निशाकालानुसारेणार्पितपुष्पाणि —

कनकनि कदम्बानि रात्रौ देयानि शङ्करे।
दिवा शेषाणि पुष्पाणि दिवा रात्रौ च मल्लिकाः॥ 87॥
प्रहरं तिष्ठते जातिः करवीरमहर्निशम्।

कनक (धत्तूर) और कदम्ब का पुष्प शंकर को रात्रिकाल में भेंट करें और शेष पुष्पों को दिन में भेंट करना चाहिए। मल्लिका का पुष्प दिन हो या रात्रि, कभी भी भेंट किया जा सकता है। जाति पुष्प एक प्रहर तक तरोताजा रहता है। करवीर का पुष्प एक दिन-रात ताजा रहता है।

कीटादीनां विद्ध च त्याज्यकुसुमानि —

कीटकेशोपविद्धानि शीत(!र्ण)पर्युषितानि च॥ 88॥
स्वयं पतितपुष्पाणि त्यजेदुपहतानि च।
मुकुलैर्नार्चयेद्देवं अर्चिते सति कुड्मले॥ 89॥
अपक्कं यातयामं च शिवाय न निवेदयेत्।

कीटों और केशों-रेशों से विद्ध पुष्प और मुरझाये-कुम्हलाये पुष्प और स्वयं ही गिरे हुए पुष्पों को शिवपूजा में त्याग दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार कलियों से रुद्र देवता का पूजन नहीं करना चाहिए। पूजन तो अच्छी तरह से खिले हुए पुष्पों से ही होता है। जो अपक्व हो और बासी पुष्प या अन्य कोई खराब वस्तु हो, उसको शिव के प्रति निवेदित नहीं करना चाहिए।

अन्यदपि —

लवणानामसङ्ख्यानां राशिस्तेन धृतेन यत्॥ 90॥
फलं क्रथित विद्धं च यत्नात्पक्कमपि त्यजेत्।
अलाभेन तु पुष्पाणां पत्राण्यपि निवेदयेत्॥ 91॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यह भी ज्ञेय है कि लवण असंख्य होते हैं, जब तक कि उनकी राशि उनमें धारण रहती है। फलों को क्वथित में विद्ध रखकर यत्नपूर्वक पकाया गया हो तो उन्हें भी त्याग दिया जाना चाहिए। अच्छे पुष्प नहीं मिले तों केवल पत्र ही भेंट करें।

पत्राणामप्य लाभे तु फलान्यपि निवेदयेत्।
फलानामप्यलाभे तु तृणगुल्मौषधैरपि॥ 92॥
ओषधानामलाभे तु मानसं परमं शुभम्।

किसी कारण से यदि पत्र भी नहीं मिले तो फल भेंट किए जा सकते हैं। फल नहीं मिल पाएँ तो तृण, गुल्म और ओषधि भी भेंट की जा सकती है। कभी ऐसा भी हो कि औषधि भी सुलभ नहीं हो सके तो मानसिक पूजा भी परम शुभ होती है।

मुक्तस्रग्विबन्धपुष्पञ्च फलम् —

प्रत्येकमुक्तपुष्पेषु दशसाहस्त्रिकं फलम्॥ 93॥
स्त्रग्विबन्धेषु तेष्वेव द्विगुणं फलमिष्यते।
सुगन्धैर्मुक्त पुष्पैर्थः सम्यग्लिङ्गं प्रपूजयेत्॥ 94॥
मालाभिर्वासु घटितैः अनन्तं फलमाप्नुयात्।

प्रत्येक खुले पुष्प का पुण्य फल दस हजार के बराबर होता है और उन पुष्पों की माला बनाकर अथवा गजरा बनाकर धारण करवाने पर अपेक्षाकृत दोगुना फल मिलता है। सुगन्ध से मुक्त पुष्पों से और उनसे तैयार की गई माला से अच्छी प्रकार से जो शिवलिंग का पूजन करते हैं तो अनन्त फल प्राप्त होता है, ऐसा जानें।

पूजनार्थ पत्रपुष्पस्वरूपफलम् —

बिल्वपत्रैरखण्डैश्च सकृल्लिङ्गं प्रपूजयेत्॥ 95॥
सर्वपाप विनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते।

बिल्वपत्र से शिवलिंग की पूजा करनी हो तो अखण्ड बिल्वपत्र लेकर ही निवेदित करना चाहिए। इससे समस्त पापों से छुटकारा मिलता है और पूजनकर्ता शिवलोक को प्राप्त करता है।

धूर्धरकैश्च यो लिङ्गं सकृत्पूजयते नरः॥ 96॥
स गोलक्ष प्रदानस्य शिवं प्राप्य फलं लभेत्।[1]

---

1. तुलनीय सौरपुराणे— धत्तूरकैस्तु यो लिङ्गं सकृत्पूजयते नरः। गोलक्षस्य फलं प्राप्य शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 46-47)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

धूर्धरक (धत्तूरक) के पुष्प से जो व्यक्ति शिवलिंग का सम्यक् रूप से पूजन करते हैं, उनको एक लाख गायों के दान के बराबर फल शिवकृपा से प्राप्त होता है।

बृहतीकुसुमैर्भक्त्या यो लिङ्गं सकृदर्चयेत्॥ 97॥
गवामयुत दानस्य फलं प्राप्य शिवं व्रजेत्।

बृहती (कटेरी, वार्ताकी) के पुष्प से जो भक्तिपूर्वक शिवलिंग की अर्चना करता है, उसे दस हजार गायों के दान का फल मिलता है और वह शिव का सान्निध्य प्राप्त करता है।

अपामार्गस्य पत्रैश्च यो लिङ्गं सकृदर्चयेत्॥ 98॥
स गवां कोटिदानस्य फलं प्राप्य शिवं व्रजेत्।

अपामार्ग (चिरचिरा) के पत्रों से जो शिवलिंग की अर्चना करता है, वह करोड़ों गायों के दान के बराबर फल प्राप्त करता है और शिव के समीप जाता है।

तथान्य शिवर्चनयोग्यं पुष्पपत्राणि च फलमाह —

मल्लिकोत्पलनिर्गुण्डी जाति पुन्नाग चम्पकाः॥ 99॥
अशोकश्वेतमन्दार कर्णिकारबकानि च।
करवीरार्कमन्दारशमीतगरकेसरम् ॥ 100॥
कुशापामार्गकुमुद कदम्बद्रोणकानि च।
नन्द्यावर्तकशम्याक तिलकं नवमालिका॥ 101॥
करञ्जनागद[न्तीश्च वैभीतकप]त्रजादिभिः।
सौगन्धिक सनागैश्च सिन्धुश्रीफलकार्जुनैः॥ 102॥
एकपत्रारविन्दाग्रा विष्णुक्रान्तिदलोत्पलैः।
दुर्वारैः पारिभद्रैश्च ब्रह्मवृक्ष प्रसूनकैः॥ 103॥
आमिलात कुसूमैश्च चूतजम्बक पल्लवैः।
दूर्वाग्रैः श्वेतदूर्वैश्च तालपुष्पैर्विशेषतः॥ 104॥
तुलसीकुरवांकोल नागैर्बकुल सौरभैः।
पुष्पैरेतैर्यथालाभं यो नरः पूजयेच्छिवम्॥ 105॥
स च यत्फलमाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणुः।

मल्लिका के पुष्पों और कमल, निर्गुण्डी, जाति, पुन्नाग, चम्पक, अशोक, श्वेत मन्दार, कर्णिकार, बक, करवीर, अर्क, मन्दार, शमी, तगर, केसर, कुशा, अपामार्ग,

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कुमुद, कदम्ब, द्रोणका, नन्द्यावर्तक, शम्याक, तिलक, नवमालिका, करंज, नागदन्ती, विभीतक के पत्र, सौगन्धिक नाग सहित सिन्धु, श्रीफल और अर्जुन, एकपत्र वाले अरविन्दाग्र, विष्णुक्रान्तिदल (तुलसी दल), उत्पल से, दुर्वार से, पारिभद्र और ब्रह्मवृक्ष (पलाश) के पुष्पों से, आमिलात के कुसुमों से, आम्र व जामुन के पल्लवों से, दूर्वाग्र और श्वेत दूर्वा से और विशेषकर ताल पुष्पों से तुलसी, कुरव, अंकोल, नाग, बकुल के सुगन्धित पुष्प जितने मिल जाते हों और इनमें से किसी से भी जो व्यक्ति शिव का पूजन करता है, वह जो फल प्राप्त करता है, उसके बारे में सुनो।

कोटिसूर्यप्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः ॥ 106 ॥
पुष्पमालापरिक्षिप्तैः गीतवादित्रनादितैः ।
तन्त्रीमधुरवाद्यैश्च स्वच्छन्दगमनालसैः ॥ 107 ॥
रुद्रकन्यासमाकीर्णैः देवदानव किन्नरैः ।
[दो]धूयमानश्चमरैः स्तूयमानः सुरासुरैः ॥ 108 ॥
गच्छेच्छिवपुरं दिव्यं यत्र वा रुचितं भवेत्।

उक्त पुष्पों से शिव की पूजा करने वाला व्यक्ति अपनी कामनाओं को पूर्ण करता है और करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश वाले विमान में पुष्पमालाओं से लकदक होकर बैठता है। उसके अनुरंजन के लिए गीत और वाद्यों का निनाद होता है। उसके लिए तन्त्री वाद्य वीणा आदि मधुर स्वर निष्पादक वाद्यों का घोष होता है। विमान वह बिना आलस्य के स्वच्छन्द गमन करता है। वह रुद्रकन्याओं से घिरा रहता है। देवता, दानव और किन्नर उसके लिए चामर ढुलाते हैं और सुर-असुरगण उसकी स्तुति करते हैं। वह इसी स्थिति में दिव्य शिवपुर को जाता है और वह वहाँ जैसी उसकी रुचि हो, जा सकता है।

यैस्तैर्वापीहकुसुमैः जलजैः स्थलजैः शिवम्॥ 109 ॥
सम्पूज्य प्रोक्षितैर्भक्त्या शिवलोके महीयते।

कुसुम तीन प्रकार के हैं— (गमलों, क्यारियों में कहीं भी) बोये जाकर उगाए गए, जलोत्पन्न और स्थलोत्पन्न। इनसे जो कोई शिव की पूजा भक्तिपूर्वक प्रोक्षण करके करता है, वह शिवलोक को जाता है।

शिवस्योपरि पुष्पमण्डपनिर्माणविधानफलञ्च —

शिवस्योपरि यः कुर्यात् सुघनं पुष्पमण्डपम्॥ 110 ॥
शोभितं पुष्पमालाद्यैः आपीठान्तं प्रलम्बिभिः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अत्याश्चर्यैर्महायानैः दिव्यपुष्पोपशोभितैः ॥ 111 ॥
सर्वैः परिवृतः श्रीमान् गच्छेच्छिवपुरं सुखी।

भगवान् शिव के ऊपर जो सुघन पुष्पमण्डप बनाता है और उस मण्डप को पुष्पमालाओं आदि से शोभायमान तथा सम्पूर्ण पीठ तक पुष्प-मालाओं को लटकाकर उसके सौंदर्य की सृष्टि करता है, वह अति ही आश्चर्यचकित करने वाले अनेक दिव्य पुष्पों से शोभायमान महायान में आरूढ़ होकर श्रीमानों से घिरा हुआ शिवपुर में पहुँचकर सुखानुभूति करता है।

स पुष्पक विमानानां सहस्त्रैः परिवारितः ॥ 112 ॥
दिव्यस्त्री सुखसम्भोग क्रीडारति समन्वितः।
अक्षयं मोदते कालं अतिरस्कृतशासनः ॥ 113 ॥
शिवादि सर्वलोकेषु यत्रेष्टं तत्र याति सः।
पूजासु भक्तिविश्वास रचितादिषु सर्वदा[1] ॥ 114 ॥

ऐसे पुष्पमण्डप की रचना करने वाला पुष्पक विमान में हजारों गणों से घिरा हुआ रहता है। वह दिव्यस्त्रियों के साथ सुख सहवास करता है। वह रतिक्रीड़ा सहित रहता है। वह अक्षयकाल तक आनन्दित-प्रमुदित रहता है और बिना किसी तिरस्कार के शासन करता है। वह शिवादि सभी लोकों में जहाँ चाहे, वहाँ जा सकता है और पूजा से भक्ति तथा विश्वास से सदैव रचित रहता है।

वित्तानुसारेण शिवार्चनफलमाह —

फलमेवं समासेन ज्ञेयं वित्तानुसारतः।

भगवान् शिव के लिए अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार पूजादि कृत्यों को सम्पादित करने से मिलने वाले पुण्य फलों के सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप से जानना चाहिए।

मालाभिवेष्टयेद्वेदीं लिङ्गं सम्पूज्येन्नरः ॥ 115 ॥
शिवो देव्या च पुत्रेण मोदते पूजयानया।
लिङ्गवेदी भवेद्देवी लिङ्गं साक्षान्महेश्वरः ॥ 116 ॥

व्यक्ति को चाहिए कि वह पुष्प मालाओं से वेदी को वेष्ठित कर सजायें और शिवलिंग का पूजन करे। शिव की, देवी पार्वती की और उनके पुत्र गणेश-कार्तिकेय

---

1. मान्यता यह है कि शिवपूजा में भक्तिपूर्वक कृत्य सम्पादन हो अथवा तदर्थ कोई सौन्दर्य रचना की जाए अथवा व्यय किया जाए, दोनों ही समान फल देने वाले होते है। तुलनीय— पूजादिभक्तिविन्यासैरर्चनादिषु सर्वतः। फलमेकं समं ज्ञेयं फल वित्तानुसारतः॥ (सौर. 65, 57)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

की पूजा करने से व्यक्ति मोद में रहता है। यह ज्ञातव्य है कि लिंग की वेदी ही देवी है और लिंग साक्षात् महेश्वर है।

तयोः सम्पूजनाद्भक्त्या देवी देवश्च पूजितौः।
स्वयमुत्पाद्य पुष्पाणि यः शिवं पूजयेत्सदा॥ 117॥
तानि साक्षात्प्रगृह्णाति तद्भक्त्या सततं शिवः।

अतएव शिवलिंग की भक्तिपूर्वक पूजा करने से देव और देवी की पूजा हो जाती है। जो स्वयं सदा पुष्पों को तोड़कर लाता है और उनसे शिव की पूजा करता है, उसके हाथ साक्षात् शिव उसकी भक्ति से सतत ग्रहण किए रहते हैं।

शिवार्थारामनिर्माणफलमाह —

यः कुर्याच्च शिवारामं आम्र बिल्वादि शोभितम्॥ 118॥
जाती विजयराजार्क करवीराब्जकुब्जकैः।
पुन्नागनागबकुलैः अशोकोत्पल चम्पकैः॥ 119॥
कदलीहेमयूथाद्यैः तस्य पुण्यफलं शृणु।
यावत्पत्रकुसुमं बीजमूल फलानि च॥ 120॥
तावद्वर्ष सहस्राणि रुद्रलोके महीयते।

जो व्यक्ति भगवान् शिव के लिए (ऐसे) बाग-बगीचे लगाता है जो आम और बिल्वादि से शोभायमान हों तथा जिसमें जाती, विजयराज, आक, करवीर, कमल, कुब्जक, पुन्नाग, सुपाड़ी, बकुल, अशोक, उत्पल, चम्पक, केला, हेमयूथ (पीली जूही) आदि पेड़-पौधे हों, तो (हे सनत्कुमार) उसके पुण्यफल को सुनो। ऐसे उद्यान में जब तक जितने पत्र, कुसुम, बीज, मूल और फल रहते हैं, उतने ही हजार वर्षों तक वह निर्माता रुद्रलोक में निवास करता है।

सूपनिवेदनफलमाह —

लाक्षां प्रामाण्य निर्मुक्त सूपं दद्यात्सकृच्छिवे॥ 121॥
चतुर्वेदिगृहे जन्म प्राप्नोति सततं सुखी।

जो भक्त शिव के प्रति लाक्षा प्रमाण से मुक्त सूप (बर्तन) अर्पण करता है, वह चतुर्वेदी ब्राह्मण के घर में जन्म लेता है और निरन्तर सुखी रहता है।

धूपनिवेदनफलमाह —

कृष्णागरु सकर्पूरं धूपं दद्यान्महेश्वरे॥ 122॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नैरन्तर्यैण मासार्धं तस्य पुण्यफलं शृणु।
कल्पकोटिसहस्त्राणि कल्पकोटिशतानि च॥ 123॥
भुक्त्वा शिवपुरे भोगांस्तस्याप्यन्ते महीपतिः।

भगवान् महेश्वर के प्रति कृष्णागरु और कर्पूर की धूप की जानी चाहिए। यह धूप यदि निरन्तर एक पखवाड़े तक की जाए तो उसका पुण्यफल सुनो। इस कृत्य का कर्ता हजारों-करोड़ों कल्पों व सैकड़ों करोड़ कल्पों तक शिवपुर में भोग भोगता है। तदोपरान्त पृथ्वीपति अर्थात् राजा होता है।

गुग्गुलुं घृतसंयुक्तं साक्षाद्गृह्णाति शङ्करः॥ 124॥
मासार्धं मात्र(! धूप)दानेन शिवलोके महीयते।

गुग्गुल का घी के साथ धूप दिए जाने पर शंकर साक्षात् होकर उसे ग्रहण करते हैं। यह धूपदान केवल आधे मास करने से भक्त शिवलोक को प्राप्त करता है।

शिव कृष्णचतुर्दश्यां यः साज्यं गुग्गुलुं दहेत्॥ 125॥
अपराधसहस्त्रं तद् इहामुत्र कृतं क्षमेत्।

शिव की कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन जो घी के साथ गुग्गुल की धूप देता है, शिव उसके इहलोक-परलोक में किए गए हजारों अपराधों को क्षमा कर देते हैं।

देवदारु नमेरुं च सर्जश्रीवासकुन्दुरुम्॥ 126॥
श्रीफलं चाऽऽज्यसम्मिश्रं दत्वाऽऽप्नोति परां श्रियम्।
एभ्यः सुगन्धिकर्पूरं षटसहस्त्रगुणोत्तरम्॥ 127॥

देवदारु और नमेरु से और सर्ज, श्रीवास और कुन्दरु से तथा नारियल की घी के साथ धूप देने से महाफल होता है। इसको सुगन्धित कर्पूर के साथ दिया जाए तो वह छह हजार गुना फल देने वाला होता है।

अगरुं दशसाहस्त्रं द्विगुणं चासितागरुम्।
गुग्गुलं दशसाहस्त्रं सघृतं द्विगुणं भवेत्॥ 128॥

धूप में अगरु की धूप देने से दस हजार गुना और श्वेत अगरु से धूप देने पर उससे दोगुना अर्थात् बीस गुना फल मिलता है। घी मिलाकर गुग्गुल की धूप देने पर उससे भी दोगुना अर्थात् चालीस हजार गुना फल होता है।

प्रियश्च गुग्गुलर्नित्यं आज्ययुक्तो विशेषतः।
द्वे साहस्त्रे फलानां तु महिषाक्षस्य गुग्गुलोः॥ 129॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दग्ध्वाज्येन तु सम्मिश्रं शिवतुल्यः प्रजायते।

भगवान् शिव को गुग्गुल की घी के साथ दी गई धूप नित्य रुचिकारक है। इसमें भी महिषाक्ष गुग्गुल[1] दो हजार गुना फल को देने वाला कहा गया है। जो उस महिषाक्ष गुग्गुल से घी के साथ मिलाकर धूप देता है, वह शिव के समान हो जाता है।

अगरुं घृत संयुक्तं अनन्ताश्च फलानि च॥ 130॥
अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलमाप्नोति मानवः।
शोधयेत्पापसंयुक्तं पुरुषं नात्र संशयः॥ 131॥
कृष्णागरूद्भवो धूपः तुषास्तुरिव काञ्चनम्।

इसी प्रकार घी मिश्रित अगरु की धूप अनन्त फलदायी होती है। इससे मानव अग्निष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त करता है। वह यदि पापी भी हों तो पापों का शोधन कर लेता है, इसमें संशय नहीं है। काले अगरु से निकलने वाली धूप तुषा से निकले सुवर्ण के समान होती है।

शिवालयेधूपगुणधर्मं सफलमाह —

योऽन्तः शिवगृहं भक्त्या सुगन्धेन प्रलेपयेत्॥ 132॥
कवाटद्वारकुड्यान्तं तिर्यगूर्ध्वं सवेदिकम्।
श्वासयेत्पुष्पमालाभिः धूपैश्चापि सुगन्धिभिः॥ 133॥
यः कुर्यात्सकृदप्येवं पुष्णं तस्यावधारय।

जो कोई शिवमन्दिर के अन्तःभाग को भक्तिपूर्ण वातावरण के क्रम में सुगन्ध से लिप्त कर देता है, किंवाड़ों, द्वारों और दीवारों को ऊँचाई पर और तिरछे तथा शिवालय की वेदी को पुष्पमालाओं से सुवासित और सुगन्धित धूपों से सुधूपित करता है, ऐसा लगातार करने वाले के पुण्यफलों को सुनो!

सर्वकामैश्च सम्पूर्णो महायानैः सहस्त्रशः॥ 134॥

---

1. गुग्गुल के औषधशास्त्रों में पाँच भेद बताए गए हैं। यथा— महिषाक्ष, महानील, कुमुद, पद्म और हिरण्य। जो गुग्गुल भौरा या स्रोतोजन के समान काले रंग का होता हे, वह महिषाक्ष कहा जाता है। यह हाथियों और मनुष्यों के लिए विशेष हितकारी होता है। निघण्टु में आता है— महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पद्म इत्यपि। हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्च जातयः॥ भृङ्गाजनसवर्णस्तु महिषाक्ष इति स्मृतः। महानीलस्तु विज्ञेयः स्वनामसमलक्षणः॥ कुमुदः कुमुदाभः स्यात्पद्मो माणिक्यसन्निभः। हिरण्याख्यस्तु हेमाभः पञ्चानांलिङ्गमीरितम्॥ महिषाक्षो महानीलो गजेन्द्राणां हितावुभौ। हयानां कुमुदः पद्मः स्वस्त्यारोग्यकारौ परौ॥ विशेषेण मनुष्याणां कनकः परिकीर्त्तितः। कदाचिन्महिषाक्षश्च मतः कैश्चिन्नृणामपि॥ (भावप्रकाशनिघण्टु कर्पूरादिवर्ग 33-37)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आपुरायं दिशः सर्वाः आमोदैश्च सुगन्धिभिः।
कल्पकोटिशतं दिव्यं रुद्रलोके महीयते॥ 135॥
तस्यान्ते धर्मशेषेण त्रैलोक्याधिपतिर्भवेत्।

ऐसा धर्मात्मा व्यक्ति अपनी समस्त कामनाओं को पूर्ण करके हजारों महायानों के साथ सभी दिशाओं में और समस्त देवपुरियों[1] में सुगन्धित वातावरण में आमोद-प्रमोद करता है। वह सौ करोड़ दिव्य कल्पों तक रुद्रलोक में रहता है और अन्त में धर्म अशेष रहने से तीन लोकों का अधिपति होता है।

ऋतावृत्तौ च यः कुर्याद्दिव्यगन्धैः शिवालयम्॥ 136॥
स समस्त कुलोपेतः शिवलोके महीयते।

जो व्यक्ति शिवालय को दिव्य गन्धों से ऋतावृत्त किए रखता है, वह अपने समस्त कुल के साथ शिवलोक में जाता है।

उपवीतदानफलमाह—

त्रिवृच्छत्सुपीतं वा पट्टसूत्रादि निर्मितम्॥ 137॥
दत्वोपवीतं रुद्राय भवेद्वेदान्तगोचरः।

तीन वृत्तों वाले, अच्छे पीले उपवीत जो पट्टसूत्र या रेशम इत्यादि से बनाया गया है, को रुद्र के प्रति दान करने वाला वेदान्त विशारद हो जाता है।

वस्त्रदानफलमाह —

वासांसि सुविचित्राणि सारवन्ति मृदूनि च॥ 138॥
धूपितानि शिव दद्याद् विकेशानि नवानि च।
यावत्तद्वस्त्रतन्तूनां परिमाणं समन्ततः॥ 139॥
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते।

नाना प्रकार के रंगों वाले और सारवान तथा मुलायम वस्त्रों-वागों-पोशाकों को धूपित करके जो शिव के प्रति दान करता है और जिनमें केशादि दोष नहीं हो तथा नवीन हों तो उन वस्त्रों में ताने-बाने के रूप में जितने तार-तन्तु होते हैं, उतने ही हजार युगों तक वह दानकर्ता रुद्रलोक में रहता है।

---

1. माहेन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायवी, सौम्या और ईशानी— ये देवपुरियाँ कही गई हैं : माहेन्द्री चाप्यथाग्नेयी याम्या च नैर्ऋती तथा॥ वारुणी चाथ वायव्या सौम्यैशानी तथैव च। एताः पुर्यस्तु देवानां तथोपरि समाश्रिताः॥ (भविष्यपुराण ब्राह्मपर्व 126, 5-6)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स्वर्णादीनां दानफलमाह —

तुटिमात्रं तु यो दद्याद् हेम लिङ्गस्य मूर्धनि॥ 140॥
इन्द्रस्यार्धासने तावद् [1]यावदिन्द्राश्चतुर्दश:।
एवं वित्तानुसारेण फलं ज्ञेयं समासत:॥ 141॥
सर्वेषां मणिपट्टानां मुकुटादेर्विशेषत:।

जो एक तुटि मात्रा प्रमाण भी सुवर्ण शिवलिंग के शीश पर चढ़ाता है, उसके पास इन्द्र का आधा सिंहासन तब तक रहता है, जब तक कि चौदह देवराज इन्द्रों का राज्य बना रहता है। इस प्रकार से अपनी सम्पत्ति के अनुसार दानादि का फल संक्षेप में जान लेना चाहिए। विशेषकर मणियों से जड़े पट्टों और मुकुट जैसे आभूषणों के दान के प्रसंग में यह विचारणीय है।

मधुपर्कं दानफलमाह —

योर्कपत्रपुटं पूर्णं मधुपर्कं सुमन्त्रितम्॥ 142॥
निवेदयेत शर्वाय सोऽश्वमेधफलं लभेत्।[2]

जो आक के पत्ते का दौना बनाकर उसे मधुपर्क से भरकर मन्त्रोच्चार के साथ भगवान् शिव को निवेदित करता है, उसको अश्वमेध यज्ञ के समान फल मिलता है।

शिवार्थ चरुनिवेदनफलमाह —

शालिनां तण्डुलं प्रस्थं कुर्यादन्नं सुसंस्कृतम्॥ 143॥
शिवाय तच्चरुं दद्यात् चतुर्दश्यां विशेषत:।

---

1. 'यावदिन्द्राश्चतुर्दिश:' इति पाठ:। यह पाठ होने पर अर्थ होगा चारों दिशाओं में इन्द्रों का राज्य रहने तक उस दानी के पास इन्द्र का आधा राज्य बना रहता है। गूढार्थ कोशों में इन्द्र को चौदह संख्या का पर्याय माना गया है। मन्वन्तरानुक्रम से इन्द्र की गणना की गई है— 1. स्वायम्भुव मनु के साथ विष्णुभुक्, 2. स्वारोचिष के साथ विद्युति, 3. उत्तम के साथ विभु, 4. तामस के साथ प्रभु, 5. रैवत के साथ शिखी, 6. चाक्षुष के साथ मनोजव (विगत इन्द्र), 7. वैवस्वत के साथ ओजस्वी (वर्तमान इन्द्र), 8. अर्कसावर्णि के साथ बलि, 9. ब्रह्मसावर्णि के साथ अद्भुत, 10. रुद्रसावर्णि के साथ त्रिदिव, 11. धर्मसावर्णि के साथ सुसात्त्विक, 12. दक्षसावर्णि के साथ कीर्ति, 13. रौच्य के साथ शतधामा तथा 14. भौत्य के साथ दिवस्पति इन्द्र— इन्द्रस्तु विष्णुभुग्ज्ञेयो विद्युतिस्तदनन्तरम्। विभु: प्रभुश्चैव शिखी तथैव च मनोजव:॥ ओजस्वी साम्प्रतिस्त्विन्द्रो बलिर्भाव्यस्तत: परम्। अद्भुतस्त्रिदिवश्चैव दशमस्त्विन्द्र उच्यते॥ सुसात्त्विकश्च कीर्तिश्च शतधामा दिवस्वति:। इति भूता भविष्याश्च इन्द्रा ज्ञेयाश्चतुर्दश॥ (भविष्य. ब्राह्म. 125, 24-26)
2. तुलनीय— यस्त्वर्कसम्पुटे कृत्वा मधु चार्घस्यमन्त्रत:। निवेदयति शर्वाय सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ (सौर. 65, 64)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चतुर्दशी के अवसर पर भगवान् शिव को विशेष रूप से प्रस्थ प्रमाण चावल धान्य लेकर उनको भाप करके चरु निवेदित करना चाहिए।

हारिद्रं कृसरं शुक्लं पायसं वा चरुंस्तथा॥ 144॥
गुडखण्डाज्य सम्मिश्रं नैवेद्यं परिकल्पयेत्।
यावन्तस्तण्डुलास्तस्मिन्नैवेद्ये परिसंख्यया॥ 145॥
तावद्वर्षसहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते।

शिवार्थ यह चरु हारिद्र, खिचड़ी या उज्ज्वल दूध की खीर के रूप में हो सकता है। इसी प्रकार गुड़ और खाण्ड से मिश्रित नैवेद्य भी बनाकर निवेदित किया जा सकता है। इस चरु सामग्री में जितने चावलों की और नैवेद्य द्रव्यों की संख्या होती है, उतने ही हजार वर्षों तक दानकर्ता रुद्रलोक में निवास करता है।

तथान्य भक्ष्यनिवेदनफलम् —

गुडखण्डकृ(! घृ) तानां च भक्ष्याणां च निवेदने॥ 146॥
घृतेन पाचितानां तु पुण्यं शतगुणं भवेत्।

शिव को गुड़ और खाण्ड सहित तैयार की गई भोजन सामग्री निवेदित करनी चाहिए। इसमें यदि घी मिला हुआ हो तो उसका पुण्य सौ गुना बढ़ जाता है।

मज्जिका पानकानां तु भक्ष्यार्थं फलमिष्यते॥ 147॥
तदर्धं सलिलस्यापि वासितस्य निवेदने।

भगवान् शिव को मज्जिका (पौधों का रस) पिलाने वालों को भक्ष्य का आधा फल मिलता है और उसका आधा पुण्यफल सुवासित जल निवेदित करने वाले को प्राप्त होता है।

तथा च पक्कफलानि —

मातुलुङ्गफलादीनि पक्कानि च निवेदयेत्॥ 148॥
शिवाय तत्फलं तस्य भक्ष्याणां यन्निवेदने।

मातुलुंग (बीजोरा नींबू) के फल पके हुए भी निवेदित करने चाहिए। मातुलुंग के फल और उनके भक्ष्य शिव को भेंट करने चाहिए।

ताम्बूलनिवेदनम् —

पञ्च सौगन्धिकोपेतं ताम्बूलं च निवेदयेत्॥ 149॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवाय गुरवे चैव तस्य पुण्यफलं शृणु।
सुगन्धदेहस्तेजस्वी सर्वावयव सुन्दरः॥ 150॥
वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते।

भगवान् शिव को पाँचों सुगन्धि मिले ताम्बूल निवेदित करना चाहिए।[1] (हे सनत्कुमार!) शिव और गुरु को ताम्बूल भेंट करने का पुण्यफल सुनो। इससे देह सुगन्धित और वह तेजोमय होता है। उसके सभी अंग-अवयव सुन्दर होते हैं और वह सैकड़ों करोड़ वर्षों तक दिव्य शिवलोक में रहता है।

घृतदीपदानस्य फलमाह—

घृतदीपप्रदानेन शिवाय शतयोजनम्॥ 151॥
लङ्घयित्वा ततो याति विमानैः सूर्य सप्रभैः।
गच्छेच्छिवपुरं दिव्यं यावदाभूतविप्लवम्॥ 152॥
तस्यान्ते स महीपालो ब्राह्मणो वाऽभिजायते।

भगवान् शिव के प्रति जो घी का दीपक प्रदान करता है, वह सौ योजन दूरी को लांघकर सूर्य के समान दीप्तिमान विमान में आरूढ़ होकर दिव्य शिवपुर में जाता है और प्रलयकाल तक वहाँ रहता है। तदोपरान्त वह इस लोक में राजा अथवा ब्राह्मण के रूप में जन्म ग्रहण करता है।

तत्र दीपमालिकादीपवृक्षश्च पुण्यमाह —

यः कुर्यात्कार्तिकमासे शोभनां दीपमालिकाम्॥ 153॥
घृतेनैव चतुर्दश्यां पौर्णमास्यां तथापि वा।
सूर्यकोटि प्रतीकाशैः तेजोभिर्भासयेद्दिशः॥ 154॥
तेजोराशिर्विमानस्थः कुलमुद्धृत्य सर्वशः।
यावत्प्रदीप संख्यानं घृतेनापूर्य बोधितम्॥ 155॥
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते।

---

1. ताम्बूलमञ्जरी में कहा गया है कि कर्पूर, जायफल, शीतलचीनी, लौंग, लता कस्तूरी, चूना और सुपाड़ी ये पान के उपादान है, इनसे युक्त पान शुभ माना जाता है। सुन्दर सुपाड़ी, चूना और कत्था मिला हुआ गुणयुक्त पान के पत्तों के बीड़े बनाकर ब्राह्मण और देवताओं को अर्पण किए बिना विवेकवान व्यक्ति के लिए सेवन करना वर्जित होता है— कर्पूरं जातिकङ्कोलं लवङ्गं कटुकाह्वयम्। सचूर्णपूगैर्विहितं तन्त्रं ताम्बूलजं शुभम्॥ सुपूगं च सुपत्रं च चूर्णखादिर संयुतम्। अदत्त्वा द्विजदेवेभ्यो ताम्बूलं वर्जयेद्बुधः॥ (ताम्बूल. 45-46) ताम्बूल अर्पण का मन्त्र है— पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैयुतम्। एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो कार्तिक मास में शिवालय पर सुन्दर दीपमालिका करता है और चतुर्दशी या पूर्णिमा को घृत के दीये जलाता है, वह करोड़ों सूर्यों के समान तेजोमय राशि सहित दिग्दिगन्त में (यशकीर्ति लिए) चमकता है। अपने इस सुकृत्य के प्रभाव से वह तेजस्वी विमान में आरूढ़ होता है अपने कुल का सर्वप्रकारेण उद्धार करता है। उसने शिवालय पर जितनी संख्या में घी के दीये जलाएँ हों, उतने ही हजार युगों तक वह रुद्रलोक में निवास करता है।

दीपवृक्षं समुद्धृत्य लोहमुच्चं शिवालये॥ 156॥
पूर्वस्माद्द्विगुणं पुण्यं लभते नात्र संशयः।

इसी प्रकार जो शिवालय में लोहे का ऊँचा दीपवृक्ष (दीपाधार-स्तम्भ[1]) बनवाता है, वह पहले गए (दीपमालिका के कृत्य) पुण्य की अपेक्षा दोगुना पुण्यफल प्राप्त करता है, इसमें संशय नहीं है।

कापिलेन घृतेनैव सूक्ष्मतन्तु कृतेन च॥ 157॥
सकृद्दीपं शिवे दद्यात् तस्य पुण्यफलं शृणु।
सूर्यकोटि प्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 158॥
गच्छेत्सोऽपि शिवं लोकं यावदाभूत सम्प्लवम्।
तस्यां [परिवारितोरग दिव्य] देह समन्वितः॥ 159॥
ज्ञानयोगं समासाद्यं तत्रैव स विमुच्यते।

(दीये में) कपिला गाय के घृत को पूरितकर तन्तुओं की छोटी वर्तिका करें और प्रज्वलित करें। इस दीपक को शिव के प्रति समर्पित किया जाए। इसके पुण्यफल को सुनो! ऐसा करने वाला करोड़ों सूर्य के समान समस्त कामनाएँ पूरी करने वाले

---

1. विश्वकर्मवास्तुशास्त्र में पोतिका नाम से दीपाधार बनाने की विधि आई है। ग्रन्थकार का मत है कि इनको पाँच ताल ऊँचाई का या सात ताल की ऊँचाई का बनाना चाहिए। कहीं-कहीं इनको आठ ताल की भी बनाई जा सकती है। कदाचित लोहा या शिला की पोतिका बनानी हो तो उसे नौ ताल की ऊँचाई का भी बनाया जा सकता है। दीपपात्रों को धारण करने के लिए शिला, धात्वादि से युवतियों का उत्कीर्णन 1. गान्धर्वी, 2. किन्नरी, 3. विद्याधरी अथवा 4. पक्षीरूपिका (हंसिका, मयूरिका, शुकादि उत्तम पक्षिणियों) के रूप में किया जा सकता है। इन दीपपात्र धारिणियों को नाना अलंकरणों से युक्त बनाना चाहिए। देवालयों अथवा महलों में किसी शुभस्थल का चयनकर मान और स्थलविद् को चाहिए कि वह इन दीपधारिणियों को किसी उच्च आसन पर साधार स्थापित करे। यह स्थापना युग्मरूप में या आगे की ओर युग्मस्वरूप हो सकती है। इनको घेरे के रूप में भी स्थापित किया जा सकता है— पञ्चताला सप्तताला वाऽष्टताला क्वचिन्मता। नवताला क्वचिल्लोह शिलादित्तत्प्रयोजिता॥ गान्धर्वी किन्नरी विद्याधरी वा पक्षिरूपिका। नानालङ्कारसंयुक्ता दीपपात्रकधारिणी॥ महासना वा साधारा देवभूपालकल्पने। मानज्ञेन स्थलज्ञेन स्थापितव्या शुभस्थले॥ तद्युग्मकं वा पुरतो युग्मं विपरिवृत्तकम्। (विश्वकर्मवास्तुशास्त्रम् 59, 3-6)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विमान में बैठकर शिवलोक को जाता है और वहाँ प्रलयकाल तक दिव्यदेह में उरगों-नागों से घिरा रहता है। ज्ञानयोग का पालन करके वह वहीं पर मुक्त हो जाता है।

शिवाग्रेशिरसादीपधारणफलमाह —

शिरसा धारयेद्दीपं सर्वरात्रं शिवाग्रतः॥ 160॥
ललाटे वाऽथ हस्ताभ्यां उद्युक्तश्च तथोरसि।
सूर्यायुत प्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 161॥
कल्पायुतशतं दिव्यं रुद्रलोके महीयते।[1]

भगवान् शिव के आगे रात भर जो अपने सिर पर दीपक को धारण करता है अथवा ललाट या हाथों या फिर हृदयप्रदेश पर दीपक को धारण किए रहता है, ऐसा साधक दस हजार सूर्यों के प्रकाश के समान सार्वकामिक विमान में आरूढ़ होता है और सौ कल्पायुत तक दिव्य रुद्रलोक में निवास करता है।

दर्पणदानफलमाह —

शिवस्य पुरतो दद्याद्दर्पणं चारु निर्मलम्॥ 162॥
पर्यन्तं शोभितं कृत्वा श्वेतमाल्यैः सचन्दनैः।
चन्द्रांशुनिर्मलः श्रीमान् सुभगः कामरूपधृक्॥ 163॥
कल्पायुतसहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते।[2]

भगवान् शिव के सामने सुन्दर और स्वच्छ दर्पण धरें और फिर (शृंगार करते हुए) उन्हें पूरी तरह से शोभायमान करें। उन्हें श्वेत मालाओं और चन्दन से लेपित करते हुए चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत और निर्मल करके श्रीमान् सुभग कामरूपधारी बनाएँ तो भक्त हजारों अयुत कल्पों तक रुद्रलोक में निवास करता है।

प्रदक्षिणाफलमाह —

कृत्वा प्रदक्षिणं भक्त्या शिवस्याऽऽयतनं नरः॥ 164॥
अश्वमेधसहस्त्रस्य लभते फलमुत्तमम्।[3]

---

1. तुलनीय —शिरसा धारयेद्दीपं सर्वरात्र्यां विशेषतः। ललाटे वाऽ हस्ताभ्यां शिरसा वाऽथ नारदः। सूर्यायुतप्रतीकाशैर्विमानैः सार्वकामिकैः। कल्पायुतशतं दिव्यं शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 71-72)
2. तुलनीय — शिवस्य पुरतो दत्वा दर्पणं च सुनिर्मलम्। चन्द्रांशुनिर्मलः श्रीमान्सुभगः कामरूपधृत्॥ कल्पायुतसहस्त्रं तु शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 73-74)
3. 'शिवस्योभयथा' इति पाठः। तुलनीय — कृत्वा प्रदक्षिणं भक्त्या शिवस्याऽऽयतनं नरः॥ अश्वमेधसहस्त्रस्य फलमाप्नोति नारद। (सौर. 65, 74-75)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक भगवान् शिव के मन्दिर की प्रदक्षिणा करता है, उसे हजार अश्वमेध यज्ञ का उत्तम फल मिलता है।

नमस्कारफलमाह—

नमस्कारः स्मृतो यज्ञः सर्वयज्ञोत्तमः शिवे॥ 165॥
नमस्कृता महादेवं अश्वमेधफलं लभेत्।

भगवान् शिव को नमस्कार करना स्मृति यज्ञ है, यह समस्त यज्ञों में उत्तम यज्ञ माना गया है। महादेव को नमस्कार करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

प्रणम्य दण्डवद्भूमौ नमस्कारेण योर्चयेत्॥ 166॥
स यां गतिमवाप्नोति न तां यज्ञशतैरपि।

शिव को प्रणाम करना चाहिए, भूमि पर दण्डवत होकर नमस्कारपूर्वक अर्चना करनी चाहिए। ऐसा करने वाले को वह गति मिलती है जो सैकड़ों यज्ञों के सम्पादन से भी नहीं मिलती है।

स्तुतिजप्योपहारेणफलमाह —

सर्वयज्ञोपवासेषु सर्वतीर्थेषु यत्फलम्॥ 167॥
स्तुतिजप्योपहारेण शिवे तत्फलमाप्नुयात्।

सभी यज्ञों से, उपवासों से और समस्त तीर्थों की यात्रा करने जो फल मिलता है, वही फल स्तुति, जय और उपहार करने से शिव भक्त को प्रदान कर देते हैं।

महाध्वजार्पणफलमाह —

श्वेतं महाध्वजं दद्यात् कृत्वा वै पञ्चरङ्गिकम्॥ 168॥
किङ्किणीरवकोपेतं मयूरच्छत्रभूषितम्।
स सितेन विमानेन सर्वेषां चोपरिस्थितः॥ 169॥
मन्वन्तरसहस्रं तु मोदते दिवि रुद्रवत्।

शिवालय पर श्वेत महाध्वज चढ़ाया जाना चाहिए। वह महाध्वज पाँच रँगों का भी हो सकता है। उसको खनकने वाली घुघरियों से युक्त और मयूरछत्र से विभूषित करना चाहिए। ऐसा करने से व्यक्ति उज्ज्वल विमान में आरूढ़ होकर सब लोकों से ऊपर अवस्थित होता है और हजारों मन्वन्तरों तक देवताओं के लोक में रुद्र के समान आनन्दित होकर रहता है।

ध्वजमालाकुलं कुर्यात् प्राकारालय मध्यतः॥ 170॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महाध्वजाष्टकं वापि दिग्विदिक्षु निवेदयेत्।
स विमानसहस्त्रेण दिव्याश्वपरिशोभिना ॥ 171 ॥
कल्पायुतसहस्राग्रं मोदते दिवि रुद्रवत्।

शिवालय के मध्यभाग में ध्वजाओं की मालाओं का आकुल बनाएँ अथवा आठ महाध्वज लगाएँ जो चारों ही दिशाओं (पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण) और विदिशाओं (ईशान-आग्नेय-नैर्ऋत्य-वायव्य) तक विस्तीर्णमान हो, तो ऐसा करने वाला हजारों ऐसे विमानों का उपभोग करता है जो दिव्य अश्वों से जुते हुए होते हैं। ऐसा व्यक्ति हजारों अयुत कल्पों तक देवगणों के साथ रुद्र के समान होकर आनन्द का उपभोग करता रहता है।

दण्डछत्रदानफलमाह —

शरच्चन्द्रांशु विमलं मुक्तामालोपशोभितम् ॥ 172 ॥
मणिदण्डमवच्छत्रं दद्यात्काञ्चन निर्मितम्।
सच्छत्रैश्च विचित्रैश्च धार्यमाणैश्च शोभितम् ॥ 173 ॥
विमानैः सर्वसम्भोगैः चिरं शिवपुरं व्रजेत्।

शरदपूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत और निर्मल मोतियों की मालाओं से शोभित, मणियों से युक्त दण्ड और सोने का छत्र बनाकर जो शिव के प्रति भेंट करता है, वह व्यक्ति विचित्र छत्रों को धारण किए सुशोभित होता है और चिरकाल तक समस्त भोगों को भोगता हुआ विमान पर आरूढ़ होकर शिवपुर को जाता है।

ये निश्चिता नराः सम्यक् पूजयन्ति महेश्वरम् ॥ 174 ॥
तेषां ददाति विश्वेशो देवो मुक्तिं सुदुर्लभाम्।[1]

इस प्रकार यह निश्चित है कि जो लोग सम्यक् रूप से महेश्वर की पूजा करता है, उसको भगवान् विश्वेश्वर देवताओं को भी सुदुर्लभ मुक्ति प्रदान करते हैं।

यदि चेद्राज्यमाकाङ्क्षेद् देही काल विपर्ययात् ॥ 175 ॥
भुङ्क्ते समुद्रपर्यन्तां एकच्छत्रां वसुन्धराम्।

यदि कोई व्यक्ति राज्य की अभिलाषा करता है तो वह शिव की कृपा से काल के कराल क्रम से दूर होकर एकछत्र (एकराट् सम्राट होकर) समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का उपभोग करता है।

---

1. श्लोकं मातृकायां नोपलभ्यते।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महाघण्टादानफलमाह —

यः श्रृङ्खलासमायुक्तां महाघण्टां महास्वनाम्॥ 176॥
कांस्यलोहमयीं वापि बन्धयेद्यो शिवालये।
घण्टाकर्णगणः श्रीमान् शिवस्यातीव वल्लभः॥ 177॥
शिवतुल्यबलो भूत्वा शिवलोके महीयते।

जो व्यक्ति शृंखलाओं के साथ तेज ध्वनि करने वाला महाघण्टा शिवालय में ले जाकर बाँधता है, वह चाहे कांस्य का हो अथवा लोहमय हो तो वह घण्टाकर्ण नामक गण के रूप में भगवान् शिव का अतीव प्रिय होता है। वह शिव के समान ही बल प्राप्त करके शिवलोक में निवास करता है।

सङ्गीतवाद्यदानफलमाह —

भेरी-मृदङ्ग-मुरव-तिमिलो-पटहादिकम्॥ 178॥
वंश-कांस्यादिवादित्रं यः शिवाय निवेदयेत्।
स विमानैर्महाभोगैः वंश-वीणाकृतस्वनैः॥ 179॥
युगायुतशतं दिव्यं शिवलोके महीयते।

वाद्यों में भेरी, मृदंग, मुरब (मुरज), घोषकारी, पटहादि, वंशी और अन्य कांस्यादि के बने हुए वाद्यों को शिव के प्रति निवेदित करता है, वह महान भोगों को भोगता हुआ अन्त में जिस विमान में आरूढ़ होता है, उसमें वंशी और वीणा का वादन होता रहता है। ऐसा भक्त शिवलोक में सैकड़ों, हजारों वर्ष तक निवास करता है।

स्त्रीणां सङ्गीतदानेन सनाट्येन विशेषतः॥ 180॥
यथेष्टमैश्वरे लोके मोदते कालमक्षयम्।

स्त्रियों के द्वारा किए गए नाटकों सहित संगीत की प्रस्तुतियों के प्रबन्धात्मक दान को विशेष माना गया है, इससे ईश्वर के लोक में अक्षय काल तक इच्छानुकूल आनन्द की प्राप्ति होती है।

शङ्खदानफलमाह —

महास्वनं तु योदद्याच्छङ्खयुग्मं शिवाय तु॥ 181॥
युगकोटिशतं दिव्यं रुद्रलोके महीयते।

जो महाध्वनि करने वाले शंखयुग्म (दो शंख) को शिव के प्रति दान करता है, वह सौ करोड़ दिव्य युगों तक रुद्रलोक में निवास करता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वितानादीनां निवेदनफलमाह —

वितानं सितपद्माभं मध्ये कमलभूषितम्॥ 182॥
विचित्रमेकवर्णं वा नानावर्णोपशोभितम्।
किङ्किणीरवकोपेतं कन्दुकैश्चोपशोभितम्॥ 183॥

भगवान् शिव के प्रति ऐसा वितान (चन्दोवा) बनवाकर भेंट करना चाहिए जो कि सफेद कमल जैसा हो और जो बीच में कमल की रचना से मण्डित हो। वह एक वर्ण या अनेक वर्ण का हो सकता है किन्तु उसे नाना वर्णों का प्रयोग करके सुन्दर बनाना चाहिए। इसके किनारों पर झनकार के लिए घुंघरुओं का प्रयोग हो और स्थान-स्थान पर लट्टुओं का प्रयोग हों।

लम्बकैर्मुक्तादामैश्च घण्टाचामर भूषितम्।
शिवस्योपरि यो दद्यात् पुरतो वाऽपि कल्पयेत्॥ 184॥
रुद्रवत्सर्वलोकेषु युगकोटिं स मोदते।

वह वितान मुक्ताओं की लड़ियों के लम्बकों से भूषित हों और उसमें घण्टा और चामर की रचना की गई हो। यदि ऐसा वितान शिवलिंग के ऊपर अथवा आगे की ओर लगवाता है, वह समस्त लोकों में रुद्र के समान कोटि युगों तक आनन्द का उपभोग करता है।

शिवस्योपरि यो दद्यात् सर्वरत्नोपशोभितम्॥ 185॥
मण्डनं मौक्तिकं श्रीमान् तस्य पुण्यफलं शृणु।
कोटिकोटि विमानैश्च सर्वकाम समन्वितः॥ 186॥
आभूत सम्प्लवं यावत् तावच्छिवपुरे वसेत्।

भगवान् शिव के लिए जो समस्त रत्नों से जटितकर सुन्दर बनाया हुआ ऐसा वितान भेंट करता है कि जिसमें मोतियों की मँडाई की गई हो तो ऐसे श्रीमान् के लिए विहित पुण्यफल के लिए सुनो। ऐसा भक्त कोटि-कोटि देवविमानों का उपभोग करता है और अपनी समस्त कामनाओं को पूर्ण करता है। प्रलयकाल तक वह शिवपुर में निवासरत रहता है।

वस्त्रपूजाफलमाह —

शिवस्याऽऽयतने कुर्याद् वस्त्रपूजां सुशोभनम्॥ 187॥
दुकूलपट्टदेवाङ्गैः वस्त्रैरन्यैश्च शोभनैः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वस्त्रादिपट्टतन्तुनां (भवेत्) संख्या तु यावति ॥ 188 ॥
तावद्युग सहस्राणि रुद्रलोके महीयते।

शिवालय में सुन्दर वस्त्रों को निवेदित कर पूजन करवाना चाहिए। निवेदन के योग्य वस्त्रों में दुकूलपट्ट (दुशाले) और अन्य सुन्दर देवांग-परिधान हो सकते हैं। ऐसे वस्त्रों, पट्टों के ताने-बाने में जितने तार होते हैं, उतने ही हजार युगों तक वह व्यक्ति रुद्रलोक में निवास करता है।

शिवभक्त्या जगत्सर्वं वृष्टिसारेण सार्यते ॥ 189 ॥
यत्सन्धार्य जगत्पुण्यं अग्निकार्येण तद्भवेत्।
जगतो धारणं कुर्याद् अग्निकार्ये विशेषतः ॥ 190 ॥

भगवान् शिव की भक्ति से समस्त जगत वृष्टिसार से सारता है, जो जगत का पुण्य सन्धारित करता है, वह अग्निकार्य की तरह हो जाता है। विशेषकर अग्नि के कार्य में जगत को धारण करना है।

रुद्राग्रे इष्टिकागारफलम् —

यः कुर्यादिष्टकागारं रुद्राग्रेरति शोभनम्।
सकृत्तत्राग्नि कार्येण रुद्र सायुज्यमाप्नुयात् ॥ 191 ॥
शिवाग्नि कार्यं यः कृत्वा कुर्यात्त्र्यायुषमात्मनः।
दशभिर्मुच्यते पापैः सितेन शिवभावना ॥ 192 ॥

जो भगवान् शिव के सामने अति सुन्दर इष्टिकागार का निर्माण करवाता है, वह उसी अग्नि के कार्य के फलस्वरूप रुद्र का सायुज्य प्राप्त करता है। जो व्यक्ति शिवाग्नि का कार्य करता है, वह अपने तीन आयुष्यों अर्थात् तीन जन्मों के दस प्रकार के पापों[1] से मुक्त होकर सत्वमयी शिवभावना से युक्त हो जाता है।

---

1. दसविध पापों का वर्णन स्कन्दपुराण और मनुस्मृति में आया है जिसके अनुसार 1. बिना दिए हुए किसी की वस्तु को ले लेना, 2. यज्ञादि विधि के बिना हिंसा, 3. पराई स्त्री का सेवन— ये तीन कायिक-शारीरिक पाप हैं। इसी प्रकार 4. कठोर वचन, 5. असत्य भाषण, 6. सब प्रकार की पिशुनता या चुगली, 7. निष्प्रयोजन प्रलाप— ये चारों वाचिक पाप कहे गए हैं। इसके अतिरिक्त 8. परद्रव्यों पर अभिध्यान, 9. मन ही मन अनिष्ट का विचार और 10. असत्य वस्तुओं के प्रति आग्रह— ये तीनों मानसिक पाप कहे गए हैं— अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम्॥ ॥ पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥ परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसाऽनिष्टचिन्तनम्। वितथाऽभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म्म मानसम्॥ (काशीखण्ड 27, 152-154; मनुस्मृति 12, 7, 6, 5 तथा राजमार्तण्ड 1402-1404)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथार्घ्यादीनां फलमाह —

कृत्वा शिवालये य प्रान्ते दशमण्डलकानि तु।
सर्वपाकाग्र संयुक्तः तेषु नित्यं बलिं हरेत्॥ 193॥

शिवालय के किनारों पर दस मण्डलों की रचना की जानी चाहिए जिनमें सभी प्रकार के पाकशाला बनें और उनमें नित्य ही बलिवैश्वदेव का होता हो।

अर्घ्यं पुष्पजलोपेतं ताम्रपात्रे प्रकल्पयेत्।
रुद्रमातृगणादीनां देवतानां च सर्वतः॥ 194॥

पुष्पजल का अर्घ्य ताँबे के पात्र से देना चाहिए। यह नियम रुद्र, मातृगणादि सहित सभी देवताओं के लिए समस्त प्रसंगों में ज्ञातव्य है।

यः कुर्यात्सकृदप्येवं दशदिक्षु बलिक्रियाम्।
दशवर्षसहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 195॥

जो दसों ही दिशाओं को ध्यान करके थोड़ी भी बलिक्रिया का सम्पादन करता है, वह दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में रहता है।

रौद्रं संध्याबलिं कृत्वा नित्यं पर्वसु वा निशि।
कल्पायुतशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 196॥

नित्यप्रति, पर्वों के अवसर पर अथवा रात्रि में जो रुद्र को संध्याबलि प्रदान करता है, वह सैकड़ों-हजारों कल्पों तक शिवलोक में शिव के आगे रहता है।

दधिभक्तमयलिंगार्चनाविधानमाह —

दधिभक्तमयं लिङ्गं हेमपात्रादि संस्थितम्।
पुष्पधूपार्चितं कृत्वा विमानोपरि शोभितम्॥ 197॥
शिरसा धारयन्पात्रं शनैर्गच्छेत्प्रदक्षिणम्।
शिवायतन पर्यन्तं शङ्खभेर्यादि निस्वनैः॥ 198॥

दही और भात का लिंग-पिण्ड बनाकर उसे सुवर्ण के पात्र में विराजित करें। पुष्प, धूपादि से अर्चना करते हुए उसको शिव-विमान (पालकी, रेवाड़ी) पर स्थापित करें। फिर उक्त पात्र को सिर पर उठाएँ और धीरे-धीरे पूरे शिवालय परिसर की प्रदक्षिणा करनी चाहिए। इस दौरान भक्तगणों द्वारा शंखों और भेरियों का वादन किया जाए।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दर्पणैर्ध्वजमालाभिः गेयनृत्तादिभिः सह।
चित्रचामरधूपाद्यैः यष्टिदीपादिभिस्तथा॥ 199॥
तच्छेषं दधिभक्तेन लिङ्गस्य पुरतः स्थितम्।
पुष्पाक्षतविमिश्रेण पीठे तदुपसंहरेत्॥ 200॥

इस शिवयात्रा में भक्तगणों के हाथों में दर्पण, ध्वज और मालाएँ हों। वे गायन करते हुए वाद्य वादन के साथ नर्तन करते चलें। शिव लीला सम्बन्धी चित्र हों, चामर और धूप पात्र भी हों। भक्त लोग हाथों में मशालें भी लिए हुए हों। इसके उपरान्त उस दही-भात को लिंग के आगे रखें और पीठ पर पुष्प, अक्षतों के मिश्रण को पधराएँ। इस प्रकार इस विधि का उपसंहार करें।

एतेन मातरो रुद्रो शिवो वा षण्मुखादयः।
शान्तिं जुषन्ति सुप्रीता रौद्रेण बलिना सदा॥ 201॥

इस प्रकार सदा मातरों, रुद्रगणों, शिवगणों या कार्तिकेय आदि की रुद्रबलि से शान्ति और प्रीतिपूर्वक पूजा करके उन्हें प्रसन्न करना चाहिए।

शिवमाख्यापनयनमार्जनादीनां फलम् —

शिवमाख्यापनयनं पूजान्ते भूप्रमार्जनम्।
एकैकमेव तुल्यं स्यात् चान्द्रायण फलेन तु॥ 202॥

भगवान् शिव का आख्यापनय (सन्देश, प्रचार या आभारोक्ति कथनादि) और शिव की पूजा के अन्त में भूमि की अच्छी प्रकार से सफाई करना चाहिए। इनमें से एक-एक कृत्य से भी चान्द्रायण व्रत के बराबर फल मिलता है।

शिवस्य मण्डलोक्तपूजाफलमाह —

शिवमण्डलकं कृत्वा हस्तमात्रं शिवाग्रतः।
यः कुर्यादक्षतैः पुष्पैः पत्रैर्वाप्यथ केवलैः॥ 203॥
सुरूपः सुभगः श्रीमान् तेजस्वी वेदवित्सुखी।
चतुर्वेदीगृहे जन्म सकृत्कृत्वा लभेन्नरः॥ 204॥

भगवान् शिव के आगे एक हस्त प्रमाण (24 अंगुल) शिवमण्डल बनाकर जो उसकी अक्षत और पुष्पों अथवा केवल पत्रों से पूजा करता है, वह सुन्दर रूप वाला, सौभाग्यशाली, तेजस्वी, वेदों का विद्वान और सुखी होता है। इस कृत्य के फलस्वरूप वह व्यक्ति चतुर्वेदी के घर में जन्म पाता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वर्णकपिष्टात् भूमिशोभाफलमाह —

एवं स्वस्तिकपद्माद्यैः भूमि शोभा शिवालये।
कृत्वा वर्णकपिष्टाद्यैः तस्माच्छतगुणं भवेत्॥ 205॥

इसी प्रकार जो स्वस्तिक और कमल आदि (रंगोली) रचनाओं से शिवालय की भूमि की शोभा करता है और उसे नाना रंगों के आटे आदि से सजाता है तो वह उससे भी अधिक सौ गुना फल का अधिकारी होता है।

रुद्रयज्ञोपकरणदानादीनां फलमाह —

शिवयज्ञोपकरणं दत्वाल्पं यदि वा बहु।
स च वित्तानुसारेण शिवलोके महीयते॥ 206॥

शिव-यज्ञ के निमित्त आवश्यक उपकरण थोड़े हों या अधिक, अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार दान किए जाएँ तो दानकर्ता शिवलोक को प्राप्त करता है।

शिवमुद्दिश्य यद्दत्तं सर्वकारणकारणम्।
तदनन्तफलं दातुर्भवतीति किमद्भुतम्॥ 207॥

शिव को उद्देश्य करके जो भी कुछ दान किया जाता है, वह सभी कारणों का कारण होता है और उसका अनन्त फल होता है, यह क्या अद्भुत नहीं है?

यद्यदिष्टं विशिष्टं च न्यायेन समुपार्जितम्।
तच्छिवाय निवेद्यं स्यात् भक्त्यानन्त फलार्थिभिः॥ 208॥

जो कुछ इष्ट हो या विशिष्ट, किन्तु न्यायपूर्वक उपार्जित किया हो, उसको भगवान् शिव के प्रति निवेदित करना चाहिए। इससे दानकर्ता अनन्त फल का अधिकारी होता है।

कर्मशाठ्येन यः कुर्यात् मूल्येनाऽपि शिवालये।
सोऽपि शाठ्याद्दिवं याति पापवर्जित कर्मणा॥ 209॥

किन्तु, जो शिवालय के निर्माणादि कार्यों में मूल्यों को लेकर कंजूसी करता है, वह भी पापवर्जित कर्म करके कंजूसी से छूट जाता है।

आरामादीनां निर्माणकाले प्रभावितभूतानिदशाह —

कृत्वाऽऽराममन्नपानादि शिवायतन कर्मसु।
उपयुक्तानि भूतानि खननोत्पातनेषु च॥ 210॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अकामतोऽपि सर्वाणि चराणि स्थावराणि च।
दिवं प्रयान्त्यसन्देहं भावात्परमेष्ठिनः ॥ 211 ॥[1]

शिवालय के निर्माण का कार्य हो अथवा उसके लिए बाग-बगीचों, अन्नपानादि अर्थात् खेती और कूपादि के निर्माण के कार्य, उनके लिए खुदाई करने से पंचेन्द्रिय जीवादि निकल आते हैं। यदि उपर्युक्त कार्य निष्काम रूप से किए गए हों तो वे चर और स्थावर जीवादि भी परमेष्ठि शिव के अनुग्रह से निःसन्देह दिव्यदेह हो जाते हैं अर्थात् देवगति को प्राप्त करते हैं।

शिवक्षेत्रेदेहोत्सर्जनफलमाह —

लिङ्गहस्तशतं साग्रं शिवक्षेत्रं समन्ततः।
देहिनां तत्र मरणं शिवसायुज्यकारणम् ॥ 212 ॥[2]

शिवलिंग के चारों ओर सौ-सौ हाथ तक का घेरा शिवक्षेत्र कहा जाता है। यदि इस शिवक्षेत्र में कोई देहधारी मरता है तो उसे शिव सायुज्य प्राप्त होता है।

मनुजैः स्थापिते लिङ्गे क्षेत्रमानमिदं स्मृतम्।
स्वयम्भूते सहस्रं स्याद् आर्षे चैव तदर्धकम् ॥ 213 ॥
पतित नरोऽपि यतस्मिन् निवसेत शिवालये।
स याति परमं स्थानं यस्माच्छिवपुरं महत् ॥ 214 ॥
तस्मादावसथं कुर्याच्छिवक्षेत्र समीपतः।

उपर्युक्त शिवक्षेत्र[3] का (सौ हाथ) प्रमाण मनुष्य द्वारा स्थापित लिंग के प्रसंग में बताया गया है। यदि स्वयम्भू शिवलिंग हो तो यह प्रमाण हजार हाथ का होता है और आर्ष या ऋषियों द्वारा स्थापित लिंग हो तो इसका आधा अर्थात् पाँच सौ हाथ प्रमाण क्षेत्र में शिवक्षेत्र होता है। यदि कोई पापी व्यक्ति भी शिवालय के क्षेत्र में निवास करते

---

1. तुलनीय— कूपारामप्रपाद्यैस्तु शिवायतनकर्मणि॥ उपयुक्तानि भूतानि खननोत्पातनांदिषु। कामतोऽकामतो वाऽपि स्थावराणि चराणि च॥ शिवं यान्ति न सन्देहः प्रासादात्परमेष्ठिनः। (सौर. 65, 75-77) यथा : अकामो वा सकामो वा तिर्यग्योनिगतोऽपि वा। अविमुक्ते त्यजन् प्राणान् मम लोके महीयते॥
2. प्रसिद्धोक्ति— विश्वेश्वराच्चतुर्दिक्षु धनुःशतयुगोन्मितम्। अविमुक्ताभिधं क्षेत्रं मुक्तिस्तत्र न संशयः॥ (पद्मपुराण पातालखण्ड, काशीवर्णनप्रसंग)
3. तुलनीय— क्रोशमात्रं शिवक्षेत्रं समन्तात्परमेष्ठिनः॥ देहिनां तत्र पञ्चत्वं शिवसायुज्यकारणम्। मनुष्यस्थापिते लिङ्गे क्षेत्रमानमिदं स्मृतम्॥ स्वायंभुवे योजनं स्यादार्षे चैव तदर्धकम्। पापाचारोऽषि यस्तत्र पञ्चत्वं याति नारद॥ सोऽपि याति याति शिवस्थानं सद्देवैरपि दुर्लभम्। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन तत्र स्नानादिकं चरेत्॥ तस्मादावसथं कुर्याच्छिवक्षेत्र समीपतः। (सौर. 65, 77-81)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

हुए मरता है तो वह शिव के महान् परम धाम को जाता है। इसलिए अपना आवास सदा ही शिवक्षेत्र के परिसर में ही बनाया जाना चाहिए।

शिवगङ्गेस्नानफलमाह —

शिवलिङ्गसमीपस्थं यत्तोयं पुरतः स्थितम्[1] ॥ 215 ॥
शिवगङ्गेति तज्ज्ञेयं तत्र स्नात्वा शिवं व्रजेत्।

किसी भी शिवलिंग के समीप, आगे की ओर यदि जलस्रोत हों तो उसको शिवगंगा कहा जाता है, उसके जल से स्नान करने से शिवलोक में निवास मिलता है।

शिवस्थाने दीर्घिका वा कूपनिर्माणफलमाह —

यः कुर्याद्दीर्घिकां वाऽपि कूपं वाऽपि[2] शिवालये ॥ 216 ॥
त्रिःसप्तकुलमुद्धृत्य शिवलोके महीयते।[3]

जो व्यक्ति शिवालय के समीप दीर्घिका (चौकोर वापी) या कूप खुदवाता है, वह अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता हुआ शिवलोक को प्राप्त होता है।

इत्यमनन्तर शिवपूजननिर्देशं सफलमाह —

सर्वमन्यत्परित्यज्य शिवैकाहित मानसः ॥ 217 ॥
शिवपूजाविधिं कुर्याद्यदिच्छेच्छुभमात्मनः।
त्वरितं जीवितं याति त्वरितं याति यौवनम् ॥ 218 ॥
त्वरितं व्याधिरभ्येति तस्मात्पूज्यः सदाशिवः।

(ऐसे में हे सनत्कुमार!) अन्य सभी को छोड़कर शिव में अपने मन को लगाने में हित समझना चाहिए। अपना शुभ चाहने वाले को शिव की विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। शिव की विधिसम्मत पूजा करने से (मरणासन्न भी) शीघ्र जीवन पाता है, (जराग्रस्त) शीघ्र ही यौवन प्राप्त करता है और शीघ्र ही व्याधियों से निजात पाता है। इसलिए सदाशिव का पूजन करना चाहिए।

यावन्नायाति मरणं यावन्नाक्रमते जरा ॥ 219 ॥
यावन्नेन्द्रिय वैकल्यं तावत्पूजय शङ्करम्।

---

1. 'शुभम्' इति पाठः।
2. 'चापि' इति पाठः।
3. इदं श्लोक सपाठान्तर तुलनीय— यः कुर्याद्दीर्घिकां वाऽपि कूपं वाऽपि शिवाश्रमे। त्रिःसप्तकुलसंयुक्तः शिवलोके महीयते॥ (सौर. 65, 82)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

न शिवार्चनतो ह्यस्ति धर्मोऽन्यो भुवनत्रये ॥ 220 ॥

जब तक मृत्यु पास नहीं आती, जब तक बुढ़ापा नहीं आता और जब तक इन्द्रियाँ विकल नहीं हो जाती तब तक शिव की पूजा करते रहना चाहिए क्योंकि शिवार्चन से अधिक बड़ा अन्य कोई धर्म तीन लोकों में नहीं है।

इति विज्ञाय यत्नेन पूजनीयः सदाशिवः।
ये भक्ता देवदेवस्य शिवस्य परमेष्ठिनः ॥ 221 ॥
इहलोके सुखं प्राप्य विन्दन्ति परमं पदम्।
सम्पूज्य पशुभर्तारं विशुद्धेनान्तरात्मना ॥ 222 ॥
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा इदं स्तोत्रमुदीरयेत्।

यह अच्छी तरह से समझकर यत्नपूर्वक सदाशिव की पूजा करें। जो देवाधिदेव शिव परमेष्ठि के भक्त हैं, वे इस लोक में सुख पाकर परमपद को प्राप्त करते हैं। ऐसे भक्तगण पशुपति भगवान् शिव की पूजा विशुद्ध अन्तरात्मा से करते हैं। शिवपूजन में हाथ जोड़कर यह स्तोत्र पढ़ना चाहिए—

इदं स्तोत्रम् —

शिवं शिवकरं शान्तं शिवात्मानं शिवोत्तमः ॥ 223 ॥
शिवमार्ग प्रणेतारं प्रणमामि सदाशिवम्।

भगवान् शिव शिवकर अर्थात् कल्याण करने वाले हैं, वे शान्त है और शिवात्मान अर्थात् कल्याण आत्मा हैं, शिवोत्तम अर्थात् उत्तम कल्याण ही हैं। जो शिवमार्ग के प्रणेता हैं, ऐसे सदाशिव को मैं नमस्कार करता हूँ।

शाश्वतं शोभनं शुद्धं स्मरद्दोष प्रमोक्षकम् ॥ 224 ॥
विश्वं विश्वेश्वरं देवं शङ्करं प्रणमाम्यहम्।

वे शाश्वत, शोभन, शुद्ध और कामदोष से छुटकारा दिलाने वाले हैं। वे देव विश्व हैं, विश्व के ईश्वर हैं, उन देव शंकर को मैं प्रणाम करता हूँ।

सर्वपापहरं नाथं सर्वरोगहरं शुभम् ॥ 225 ॥
सर्वबाधाहरं नित्यं नामम्यार्तिहरं परम्।

वे सभी पापों को हरने वाले नाथ हैं, सभी रोगों का हरण कर शुभ करने वाले हैं। वे सभी बाधाओं के हरणकर्ता हैं, उन आर्तिहर परम शिव को मैं नित्य ही नमस्कार करता हूँ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आस्थानस्थान संस्थान संस्थितस्थितिभासकम्॥ 226॥
शिरस्थानस्थ योगस्थं स्थाणुमीशं नमाम्यहम्।

वे सभी स्थान संस्थानों के आस्थान हैं, सदा स्थिति व संस्थित रूप में हैं, वे शिरस्थान पर स्थित हैं, योगारूढ़ हैं, ऐसे स्थाणु-शिवलिंग रूप ईश को मैं नमस्कार करता हूँ।

ईशानं पुरुषं घोरं वामं सद्यं महेश्वरम्॥ 227॥
ईशानं सर्वभूतानां ईश्वरं प्रणमाम्यहम्।
ईशानं वरदं देवं ईशामनन्त नायकम्॥ 228॥

उन महेश्वर (पंचवक्त्र शिव को कि जिनका ऊर्ध्व मुख) ईशानमूर्ति है, (द्वितीय पूर्वमुख) तत्पुरुषमूर्ति है, (तृतीय दक्षिणमुख) अघोरमूर्ति, (चतुर्थ उत्तरमुख) वामदेव और (पंचम पश्चिममुख) सद्योजात है, ऐसे ईशान को और सभी भूतप्राणियों के ईश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ।[1] वे ईशान, वरद, देव, ईश और अनन्त नायक हैं।

अध्यायान्ते इदं पुण्यफलमाह —

इति पूजाविधिं पुण्यं यः शृणोति सकृन्नरः।
स मुक्तः सर्वपापेभ्यः शिवलोके महीयते॥ 229॥

शिव की इस पुण्यमयी पूजाविधि को जो व्यक्ति सुनता है, वह शीघ्र ही सब पापों से विमुक्त होकर शिवलोक को प्राप्त होता है।

इति शिवधर्मपुराणे[2] शिवार्चनद्रव्यपुण्यं नामः पञ्चमोऽध्यायः॥ 5॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में शिवार्चन द्रव्य पुण्य नामक पाँचवाँ अध्याय समाप्त हुआ।

*****

---

1. शिव के पांच मुख माने गए है। उनका रूपकत्व इस प्रकार बताया गया है— सद्योजातं मही प्रोक्ता वामदेवं तथा जलम्। तेजस्त्वघोरं विख्यातं वायुस्तत्पुरुषं मतम्॥ ईशानं च तथाकाशमूर्ध्वस्थं पञ्चमं मुखम्। (विष्णुधर्मोत्तरपुराण 3, 48, 3-4)
2. 'शास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ षष्ठोऽध्यायः ॥ 6 ॥

श्रीनन्दिकेश्वर द्वारा श्रीसनत्कुमार के सम्मुख शिवोद्गीण के रूप में विविध विघ्नों के निवारण के लिए बलि आदि विभिन्न शान्ति के उपाय एवं विजयादि अभीष्टों की सिद्धि प्रदान करने वाले देवादिक ध्यानों का वर्णन

श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

अतः परमिदं गुह्यं शिवोद्गीणं महोदयम्।
महाविघ्नप्रशमनं महाशान्तिकरं शुभम्॥ 1॥

(श्रीनन्दिकेश्वर सनत्कुमार के प्रति कहते गए कि) इसके आगे परम गोपनीय महानतम शिवोद्गीण (शिव के उगले हुए) कथन के विषय में कहता हूँ जो भयंकर विघ्नों का शमन करने वाला है और महाशान्तिकारी तथा शुभ है।

अकालमृत्यमथनं सर्वव्याधि निवारणम्।
परचक्रप्रमथनं सदाविजयवर्धनम्॥ 2॥

इसका प्रयोग अकाल मृत्यु का मथन करने वाला, सभी व्याधियों का निवारण करने वाला, शत्रुओं के षड्यन्त्र-चक्र का भेदन करने वाला और नित्य निरन्तर विजय की अभिवृद्धि करने वाला है।

स्तम्भनं परसैन्यस्य रिपुसादकरं सदा।
सर्वदेवग्रहानीकं सर्वाभीष्टावभासकम्॥ 3॥
सर्वशान्त्यधिकाराख्यं धर्मं वक्ष्यामि शाश्वतम्।

यह शिवोद्गीण युद्ध में शत्रुओं की सेना का स्तम्भन करने वाला और रिपुओं को पराजित करने वाला है। यह सभी देवताओं और ग्रहों के दोषों के लिए प्रभावी तथा समस्त अभिलाषाओं को देने वाला है। ऐसे सर्वशान्त्यधिकार नामक अक्षय धर्म विधान को कहता हूँ। (इसके लिए सर्वप्रथम महेश्वरादि ध्यानमूलक स्तुतियों को कहता हूँ)।

महेश्वरध्यानम् —

शशाङ्कार्धधरस्त्र्यक्षो नागयज्ञोपवीतवान्॥ 4॥
चतुर्मुखश्चतुर्बाहुः सितभस्मावगुण्ठितः।
वरो वरेण्यो वरदो देवदेवो महेश्वरः॥ 5॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

त्रैलोक्यनमितः श्रीमान् शान्तिमाशु करोतु मे।

(वे शिव जो चन्द्रशेखर हैं) आधे चन्द्रमा को अपने सिर पर धारण किए हुए हैं, वे तीन नेत्र हैं और नाग की यज्ञोपवीत धारण किए हैं। वे चार मुख वाले और चार हाथ वाले हैं। सफेद भस्म को अपने शरीर पर मले हुए हैं। वे वर हैं, वरेण्य हैं, वरदाता हैं तथा वे देवाधिदेव महेश्वर हैं। हे श्रीमान्! तीनों ही लोक आपको नमस्कार करते हैं, मुझे भी आप तत्काल शान्ति प्रदान कीजिए।

शिवार्धाङ्गिनीध्यानम् —

सर्वावयव मुख्येन गात्रेण तनुमध्यमा॥ 6॥
पीतश्यामाऽति सौम्येन शिवरूपेण सेवितः।
ललाटतिलकोपेता चन्द्रलेखार्धधारिणी॥ 7॥

(वे जो भगवती उमादेवी हैं) अपने शरीर के समस्त अंगों से भरीपूरी है किन्तु जिनकी कमर पतली हैं। वे पीले रँग की श्यामा हैं और सौम्यस्वभावा हैं तथा कल्याणी के रूप में सेवित हैं। उनके ललाट पर तिलक हैं। वे आधी चन्द्रलेखा को धारण करने वाली हैं।

दिव्याम्बरधरा देवी सर्वाभरणभूषिता।
वरस्त्री सर्वनारीणां शोभागुण महास्पदम्॥ 8॥
भावनामात्र सन्तुष्टा उमादेवी वरप्रदा।
साक्षादागम्यरूपेण शान्तेनामित तेजसा॥ 9॥
शान्तिं करोतु मे प्रीता भक्तानां भक्तवत्सला।

वे दिव्य वस्त्रों को धारण करने वाली देवी हैं। वे सभी आभूषणों को धारण किस हैं। वे सभी नारियों में श्रेष्ठ स्त्री हैं और शोभा और गुणों में महान् हैं। जो मात्र भावना से सन्तुष्ट हो जाने वाली हैं। वे उमादेवी वरप्रदायिका हैं। वे साक्षात् अगम्य रूप से शान्त और अमित तेजस्विनी हैं। हे भक्तवत्सला देवी! मुझ पर प्रीति करके शान्ति कीजिएगा।

षण्मुखध्यानम् —

पद्मरागद्युतिः सौम्यो रक्तमाल्यानुलेपनः॥ 10॥
अबालो बालरूपेण षण्मुखः शिखिवाहनः।
पूर्णेन्दुवदनः सौम्यः त्रिशिखाशक्ति संयुतः॥ 11॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

(कुमार कार्तिकेय का स्वरूप) पद्मराग की दीप्ति लिए, सौम्य स्वरूप, लाल माला धारण करने वाले और लाल ही अनुलेपन किए, जो बालक नहीं किन्तु बाल रूप में हैं, छह मुख वाले तथा मयूरवाहन हैं। पूरे चन्द्रमा के समान सौम्य और तीन शूलों की शक्ति से सम्पन्न हैं।

कृत्तिकोमाग्निरुद्राङ्ग गङ्गोद्भूतः सुरार्चितः।
कार्तिकेयो महातेजा वरदानैक तत्परः॥ 12॥
शान्तिं करोतु मे नित्यं बलं सौख्यं च सर्वदा।

कृत्तिकाओं, उमा, अग्नि तथा रुद्रांग लिए जो गंगा नदी से उत्पन्न होकर देवगणों द्वारा अर्चित हुए, ऐसे महान् तेजस्वी कार्तिकेय जो वरदान देने में तत्पर रहते हैं, आप मेरे लिए सदा शान्तिकारक हों तथा बल और सुख प्रदान कीजिएगा।

नन्दीशध्यानम् —

श्वेतवस्त्रपरीधानः त्र्यक्षः कनक सप्रभः॥ 13॥
शूलपाणिर्महाप्राज्ञः नन्दीशः शिवभावितः।
शिवध्यानैक परमः शिवभक्तिपरायणः॥ 14॥
शान्तिं करोतु मे शान्तो धर्मे च मतिमुत्तमाम्।

(नन्दीश का स्वरूप) श्वेत वस्त्रों को परिधान के रूप में धारण करने वाले, तीन आँखों वाले, सूर्य के समान आभा के धारक, हाथ में शूल लिए, महाज्ञानी नन्दीश भगवान् शिव की भावना से भावित हैं, वे शिव के परम ध्यान में रहते हैं और शिवभक्ति करने वाले हैं। हे शान्तस्वरूप प्रभु! आप मुझे शान्ति प्रदान करें और मुझे धर्म में उत्तम गति दीजिएगा।

विनायकध्यानम् —

नागयज्ञोपवीती च नागाभरणभूषितः॥ 15॥
सर्वार्थसम्पदाधारो गणाध्यक्षो वरप्रदः।
रुद्रस्य तनये देवो नायकोऽथ विनायकः॥ 16॥
करोतु मे महाशान्तिं कर्मसिद्धिं च सर्वदा।

(विनायक का स्वरूप) नाग की यज्ञोपवीत धारण करने वाले और नागों के ही आभरण अंगीकृत करने वाले हैं। सभी अर्थों और सम्पदाओं के आधार, गणों के अध्यक्ष और वरदाता है। आप भगवान् रुद्र के पुत्र हैं और देवताओं के नायक विनायक हैं। आप मेरे लिए महाशान्ति कीजिए और सदा ही मेरे कार्यों की सिद्धि कीजिएगा।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महाकालध्यानम् —

इन्द्रनीलनिभस्त्र्यक्षो दीप्तशूलायुधोद्यतः ॥ 17 ॥
रक्ताम्बरधरः श्रीमान् कृष्णाङ्गो नागभूषणः।
पापापनोदमतुलं अलक्ष्मीमलनाशनः ॥ 18 ॥
करोतु मे महाकालः प्रीतिं प्रीतेन चेतसा।

(महाकाल का ध्यान) इन्द्रनील के समान दिखाई देने वाली तीन आँखों वाले, दीप्त तेज शूलों से युद्ध के लिए उद्यत रहने वाले, लाल परिधान धारण करने वाले, श्रीमान्, कृष्णांग वाले, नाग को आभूषण बनाकर धारण करने वाले हैं। आप अति पाप को और अलक्ष्मी (लक्ष्मी की बड़ी बहन) के मल का नाश करने वाले हैं। हे महाकाल! आप मुझे प्रीतिवान और प्रीत की चेतना वाला करें।

गणमाताम्बिकाध्यानम् —

पीतवस्त्रपरीधाना कन्यारूपा स्वलङ्कृता ॥ 19 ॥
गणमाताम्बिका त्र्यक्षा पुण्यागौरी सुरेश्वरी।
सर्वसिद्धिप्रदादेवी प्रसाद परमाशिवा ॥ 20 ॥
शान्तिं करोतु मे प्रीता सिद्धिमाशु प्रयच्छतु।

(गणमाता अम्बिका का ध्यान) पीले वस्त्र के परिधान धारण करने वाली, कन्या रूप में अपना अलंकार किए हुए, गणों की माता, तीन आँखों वाली अम्बिका पुण्यागौरी देवताओं की ईश्वरी है। समस्त सिद्धियों को प्रदान करने वाली देवी परमशिवा! मुझ पर कृपा करें। आप मुझ पर प्रीतिपूर्वक अनुग्रह करके शान्ति करें और तुरन्त सिद्धि प्रदान कीजिएगा।

महामहिषमर्दनीध्यानम् —

स्निग्ध श्यामेन वर्णेन महामहिषमर्दनी ॥ 21 ॥
धनुश्चक्रप्रहरणा शङ्ख्यष्ट्यसिधारिणी।
आतर्जनोद्यतकरा सर्वोपद्रवनाशिनी ॥ 22 ॥

(महामहिषमर्दनी का ध्यान) स्निग्ध श्याम वर्ण वाली आप महामहिषमर्दनी दुर्गा हैं। आप अपने हाथों में धनुष और चक्र को लेकर प्रहार करने वाली हैं। अन्य हाथों में शंख, यष्टि, दण्ड और तलवार धारण करने वाली हैं। आप हाथ की तर्जनी अंगुली मात्र उठाकर समस्त उपद्रवों का विनाश करने वाली हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भृङ्गिरिटिध्यानम् —

अतिसूक्ष्मोऽतिविक्रान्तः त्र्यक्षो भृङ्गिरिटिर्महान्।
रुद्रात्मजो रुद्रभक्तो रुद्रैकगतमानसः ॥ 23 ॥
सोऽपि शान्तात्मभावेन शान्तिमाशु प्रयच्छतु।

(भृङ्गिरिटि का ध्यान) जो बहुत छोटे हैं और बहुत विशाल हैं, वे तीन नेत्र वाले (शिव के प्रतिहार) महान् भृङ्गिरिटि हैं। रुद्र की आत्मा से उत्पन्न, रुद्र के भक्त और रुद्र के प्रति एकाग्रमन रखने वाले हैं। आप भी शान्तात्म भाव से शीघ्र ही शान्ति प्रदान करने वाले हैं। (आपसे यही अपेक्षा है)।

चण्डेश्वरध्यानम् —

प्रचण्ड गणसैन्यस्थो महाटङ्काक्षधारकः ॥ 24 ॥
अक्षमालार्पितकरः त्र्यक्षश्चण्डेश्वरः प्रभुः।
चण्ड पापापहरणो ब्रह्महत्यादि शोधनः ॥ 25 ॥
करोतु मे महायोगी नित्यं कल्याणवर्धनम्।

(चण्डेश्वर का ध्यान) प्रचण्डगणों की सेना में रहने वाले, महान् टंकाक्ष धारण करने वाले, अपने हाथों में रुद्राक्ष की माला धारण करने वाले, तीन नेत्रों के धारक चण्डेश्वर प्रभु हैं। वे प्रचण्ड पापों का अपहरण करके ब्रह्महत्या आदि का भी शोधन कर देते हैं। हे महायोगी! मुझे भी नित्य कल्याणवर्धन करने वाला बनाइये।

नीलकण्ठध्यानम् —

शङ्खकुन्देन्दुतुल्याभः कण्ठे मरकतप्रभः ॥ 26 ॥
अक्षमालाशिरोग्रस्तु स्वयं ज्ञाने व्यवस्थितः।
चतुर्मुखश्चतुष्पादः त्रिनेत्रः सर्वदोज्वलः ॥ 27 ॥

(नीलकण्ठ का ध्यान) शंख और पूर्ण चन्द्रमा के समान श्वेत आभा वाले प्रभु, कण्ठ में मरकत की प्रभा वाले नीलकण्ठ हैं। आप रुद्राक्ष की माला सिर के आगे धारण किए हैं, आप स्वयं ज्ञान-ध्यान में व्यवस्थित रहने वाले हैं। आप चतुर्मुख और चतुष्पाद वाले, तीन नेत्र और सर्वदा ज्वलनशील रहने वाले हैं। (आप मेरे संकट का दहन कीजिएगा)।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वृषपतिधर्मध्यानम् —

क्षितेःपतिर्वरयो देवः सर्वधर्मोत्तमोत्तमः।
ईशं वहति पृष्ठेन तस्माद्धर्मो जगत्प्रभुः॥ 28॥
वृषो वृषपतिः श्रीमान् करोतु मम शान्तिकम्।

(वृषपति धर्म का स्वरूप) आप लोगों को राजा होने का वरदान देने वाले और सभी धर्मों में उत्तमोत्तम देव हैं। आपके पृष्ठ पर ईश रहता है अतः आप धर्म हैं और जगत्प्रभु हैं। आप वृष हैं, विशाल हैं और वृषपति हैं। श्रीमान्! आप मुझे शान्ति प्रदान कीजिएगा।

पितामहध्यानम् —

पद्मासनः पद्मनिभः चतुर्वदन पङ्कजः॥ 29॥
कमण्डलुधरः श्रीमान् देवगन्धर्वपूजितः।
शिवध्यानैकनिरतः शिवसद्भावभावितः॥ 30॥
ब्रह्मशब्देन दिव्येन ब्रह्मा शान्तिकरोतु मे।

(पितामह ब्रह्मा का ध्यान) जो पद्मासन पर विराजित हैं, पद्म के समान ही प्रतीति देते हैं, चार मुखों वाले और कमल जन्मा हैं और वे कमण्डलु को धारण करते हैं। वे श्रीमान् देवताओं और गन्धर्वों से पूजित हैं किन्तु स्वयं एक शिव के ध्यान में ही लगे रहते हैं और शिव के सद्भाव से भावित हैं। हे ब्रह्मा! आप अपने दिव्य ब्रह्मशब्द से मुझे शान्ति प्रदान कीजिएगा।

विष्णुध्यानम् —

ताक्ष्र्यासनश्चतुर्बाहुः शङ्खचक्रगदाधरः॥ 31॥
श्यामपीताम्बरधरो वनमालाविभूषितः।
यज्ञदेवोत्तमो देवो माधवो मधुसूदनः॥ 32॥
शिवप्रणामपरमः शिवध्यानैक तत्परः।
शिवार्चनपरो नित्यं विष्णुशान्तिं करोतु मे॥ 33॥

(विष्णु का ध्यान) वे गरुड़ासन पर आरूढ़ होने वाले और अपनी चार भुजाओं में शंख, चक्र, गदा (और पद्म) को धारण करने वाले हैं। वे श्याम वर्ण और पीताम्बरधारी, वनमाला से विभूषित तथा यज्ञदेवों में उत्तम देव माधव, मधुसूदन हैं। वे शिव को प्रणाम करने वाले परमतत्त्व हैं और शिव के ध्यान में ही तत्पर रहते हैं। वे नित्य शिवार्चन करते हैं। ऐसे जो भगवान् विष्णु हैं, वे मुझे शान्ति प्रदान करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लक्ष्मीदेवीध्यानम् —

पद्मरागप्रभा देवी चतुर्वदन पङ्कजा।
अक्षमालार्पितकरा कमण्डलुधरा शुभा॥ 34॥

(लक्ष्मीदेवी का ध्यान) पद्मराग के समान प्रभावाली देवी (लक्ष्मी) चार मुखकमल वाली हैं। वे अपने हाथों में रुद्राक्ष की माला और सुन्दर कमण्डलु को धारण किए रहती हैं।

ब्रह्माणीध्यानम् —

ब्रह्माणी सौम्यवदना शिवपूजा परायणा।
शान्तिं करोतु मे प्रीता ब्रह्मशब्देन सर्वदा॥ 35॥

(ब्रह्माणीदेवी का ध्यान) ब्रह्माणी देवी सौम्यमुखी हैं और शिवपूजा में तत्पर रहती हैं। देवी! आप मेरे ऊपर प्रीति रखकर सर्वदा ब्रह्मशब्द से शान्ति करती रहें।

शिवादेवीध्यानम् —

हिमशैलतनया देवी महावृषभवाहना।
त्रिशूलहस्ता वरदा सर्वाभरण भूषिता॥ 36॥
रुद्रभक्त्या महावीर्या रुद्रार्चनपरा शिवा।
चतुर्भुजा चतुर्वक्त्रा त्रिनेत्रा पापहारिणी॥ 37॥
आर्तिं हरतु मे प्रीता ब्रह्मशब्देन सर्वदा।

(हिमशैलसुता देवी का ध्यान) पर्वतराज हिमालय की पुत्री महावृषभ वाहना देवी हैं। वे हाथों में त्रिशूल रखती हैं और वरदान देती हैं। से समस्त आभूषणों से विभूषित हैं। वे रुद्र की भक्ति करती हैं, महापराक्रमी हैं और रुद्र की अर्चना में भी तत्पर रहती हैं। वे चार भुजाओं, चार मुखों और तीन नेत्रों वाली पापहारिणी हैं। देवी! आप मुझ पर सदैव प्रीति रखकर अपने ब्रह्मशब्द से मेरे दुःखों का हरण कीजिएगा।

कौमारीध्यानम् —

त्रिशूलहस्तावरदा देवी ईश्वरी नित्यमुज्वला॥ 38॥
मयूरवाहना देवी सिन्दूरारुण विग्रहा।
शक्तिहस्ता महारूपा सर्वाभरणभूषिता॥ 39॥
रुद्रभक्तामहापुण्या रुद्रार्चनरता सदा।
कौमारी वरदा देवी शान्तिमाशु करोतु मे॥ 40॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

(कौमारी का ध्यान) हाथों में त्रिशूल और वर मुद्रा धारण करने वाली ईश्वरी देवी नित्य उज्वलाभ हैं। वे मयूर के वाहन पर आरूढ़ हैं और लाल सिन्दूर जैसे शरीर वाली हैं। अपने हाथों में शक्ति (भाला) लिए वे महान् रूप वाली समस्त आभूषणों से विभूषित हैं। वे सदा रुद्र की भक्ति का महापुण्य उठाती हैं और रुद्रार्चन में लगी रहती हैं। ऐसी वरदान प्रदान करने वाली कौमारी देवी! मेरे लिए शीघ्र शान्ति कीजिएगा।

वैष्णवीध्यानम् —

शङ्खचक्रगदाहस्ता श्यामा पीताम्बरप्रिया।
चतुर्भुजा तार्क्ष्यवाहा वैष्णवी सुरपूजिता॥ 41॥
शिवार्चनरताभक्ता रुद्रैकगत मानसा।
शान्तिं करोतु मे प्रीता सर्वासुरविमर्दिनी॥ 42॥

(वैष्णवी का ध्यान) शंख, चक्र और गदा को अपने हाथों में धारण करने वाली, श्यामवर्णा पीताम्बर प्रिया है। वैष्णवी चार भुजाओं वाली, गरुड़वाहिनी हैं और देवताओं द्वारा पूजित हैं किन्तु स्वयं शिवार्चन में तत्पर रहने वाली ऐसी भक्त हैं कि रुद्र के साथ एक मनसा रहती हैं। समस्त असुरों का विर्मदन करने वाली देवी! आप मुझ पर प्रीति करके शान्ति कीजिएगा।

वाराहीध्यानम् —

वराहघोषाविकटा वराहवरवाहिनी।
श्यामावदाताविपुला शङ्खचक्रगदाधरा॥ 43॥
तर्जयन्ती सदा विघ्नान् अर्चयन्ती सदाशिवम्।
वाराही वरदा देवी क्षेमारोग्यं करोतु मे॥ 44॥

(वाराही देवी का ध्यान) वराह (शूकर के समान) के मुख-स्वर वाली, विकटा और श्रेष्ठ वराह पर आरूढ़ होकर गमन करने वाली, श्याम रूप व विपुल दान करने वाली, शंख, चक्र, गदा को धारण करने वाली, जो सदा ही विघ्नों को रोकती हैं और सदाशिव का अर्चन-पूजन करती है। हे वरदात्री वाराही देवी! मेरे लिए क्षेम और आरोग्य कीजिएगा।

ऐन्द्रीध्यानम् —

ऐरावतगजारूढा वज्रहस्ता महाबला।
नेत्राणां तु सहस्रेण भूषिता कनकप्रभा॥ 45॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सिद्धगन्धर्वनमिता सर्वाभरणभूषिता।
ऐन्द्रीदेवी सदाकालं शान्तिमाशु करोतु मे॥ 46॥

(ऐन्द्रीदेवी का ध्यान) ऐरावत नामक हाथी पर आरूढ़ होने वाली, हाथ में वज्र को धारण करने वाली महाबलशाली, हजार आँखों वाली, अलंकृत स्वरूपा, सुवर्ण जैसी आभा वाली, सिद्ध-गधर्व जिसे नमन करते हैं, ऐसी समस्त आभूषणों से विभूषित ऐन्द्रीदेवी! आप सर्वकाल में मेरे प्रति शीघ्र शान्ति कीजिएगा।

चामुण्डाध्यानम् —

ऊर्ध्वकेशोत्कटाक्षामा निर्मांसस्नायुबन्धना।
करालवदना घोरा खड्गघण्टायुद्धोद्यता॥ 47॥
कपालमालिनीदेवी क्रूरा खट्वाङ्गधारिणी।
आरक्तपिङ्गनयना गजचर्मावगुण्ठिता॥ 48॥
नाना नागपरीताङ्गी प्रेतस्थान निवासिनी।
शिवरूपेण घोरेण शिवारावभयङ्करी॥ 49॥
चामुण्डा चण्डरूपेण चित्रयन्त्रा सनोतु मे।
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो मम रक्षां करोत्विह॥ 50॥
आयुः श्रियं बलं सौख्यं प्रीता भूत्वा ददातु मे।

(चामुण्डा देवी का ध्यान) ऊर्ध्व केशों वाली, उत्कटा, दग्ध या क्षीणकाय, निर्मांस, सूखे हुए शरीर वाली, स्नायुबन्धन जिसके दिखाई पड़ रहे हैं, जो भयानक मुख वाली और घोरा है तथा अपने हाथों में खड्ग, घण्टा जैसे आयुध लिए युद्ध के लिए उद्यत दिखाई देती हैं। कपालों की मालाएँ धारण किए क्रूर रूप में खट्वांग धारण किए हैं, लाल-लाल और भूरी आँखों वाली हाथी की खाल को ओढ़े हुए रहती हैं, नाना नाग उसके शरीर पर लिपटे हुए रहते हैं और जो श्मशान में निवास करने वाली हैं और अपने घोर शिव रूप से शिव के समान आवाज से भयंकरी हैं। ऐसी चामुण्डा चण्ड रूप से विचित्र यन्त्रों के आसन पर बैठी हैं। वह भूत-प्रेतों से मुझे बचाएँ, मेरी रक्षा करें। वह मुझे प्रीतिपूर्वक आयुष्य, श्रिय, बल, सौख्य प्रदान करें।

आकाशस्थ च लोकमातरादीनां —

आकाशे मातरो दिव्याः तथान्या लोकमातरः॥ 51॥
भूतानां मातरः सर्वाः तथान्याः पितृमातरः।
सर्वामातृगणा देव्यः स्वायुधव्यग्रपाणयः॥ 52॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जगद्व्याप्यावतिष्ठन्त्यो बलिकामा महोदयाः।
रुद्रभक्ता महावीर्या रुद्रार्चनपरायणाः ॥ 53 ॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं मातरः सुरपूजिताः।

(आकाश में रहने वाली और अन्य मातृकाओं से याचना) आकाश में रहने वाली दिव्यमाताएँ तथा अन्य लोकमातृकाएँ, समस्त भूत प्राणियों की माताएँ और अन्य पितरों की जो मातृकाएँ हैं, वे सभी मातृगण देवियाँ अपने हाथों में अपने-अपने हाथों में आयुध लिए (संकट निवारण के लिए) व्यग्र रहती हैं, वे सारे जगत में व्याप्त होकर सारी की सारी महोदया बलि की कामना रखे हुए हैं। वे महान् बलशाली रुद्र की भक्त हैं और रुद्रार्चन के परायण हैं। हे देवताओं से पूजित माताओं! आप मेरे प्रति नित्य शान्ति बनाए रखें।

तथा च रौद्रश्च सौम्यस्थानस्थमातरः —

ये रुद्रा रुद्रकर्माणो रौद्रस्थान निवासिनः ॥ 54 ॥
सौम्याश्चैव तु ये केचित् सौम्यस्थान निवासिनः।
मातरो रुद्ररूपाश्च गणानामधिपाश्च ये ॥ 55 ॥
विघ्नभूतास्तथा ये च दिग्विदिक्षु समाश्रिताः।
सर्वे सुप्रीतमनसः प्रतिगृह्णन्त्विमां बलिम् ॥ 56 ॥
सिद्धिं कुर्वन्तु मे नित्यं भयेभ्यः पान्तु मां सदा।

ये जो रुद्र हैं और रुद्र कर्म करने वाले तथा रुद्रस्थान में निवास करने वाले हैं और उनमें जो कुछ शेष सौम्या हैं और सौम्य स्थान में निवास करने वाली हैं, वे रुद्ररूपा माताएँ तथा गणों के अधिपति हैं और जो विघ्नभूता होकर दिशाओं तथा विदिशाओं में विचरणशील हैं, वे सभी प्रसन्न मन से मेरे द्वारा अर्पित बलि को ग्रहण करें और मुझे नित्य सिद्धि प्रदान करें। वे भय से मेरी सदा रक्षा करें।

ऐन्द्रयादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

ऐन्द्र्यां दिशि गणा ये तु वज्रहस्ता महाबलाः ॥ 57 ॥
सुश्वेताक्षाः श्वेतनिभाः तथा वै श्वेतलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 58 ॥
रुद्रार्चनरता नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

जो ऐन्द्र या पूर्व दिशा में स्थित रहने वाले गण हैं, वे हाथ में वज्रधारक हैं, वे

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महाबली हैं। वे श्वेत आँखों वाले, श्वेत कान्ति वाले और श्वेतलोहित हैं। इनके साथ ही दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले रुद्र की अर्चना में नित्य-निरत रहने वाले जो गण हैं, वे सभी सदा मेरे प्रति शान्ति करें।

आग्नेयादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

आग्नेय्यां ये गणाः सर्वे स्रुवहस्ता निषङ्गिणः ॥ 59 ॥
सुरक्ताक्षा रक्तनिभाः तथा वै रक्तलोमभिः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 60 ॥
रुद्रैकाहितचेतस्काः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

आग्नेय दिशा (दक्षिण-पूर्व) में निवास करने वाले समस्त गण अपने हाथों में स्रुवा और बाण लिए रहते हैं। वे सभी अच्छे लाल रंग की आंखों वाले, रक्तवर्ण ही दिखाई देने वाले और लाल केशों वाले हैं। उनके साथ ही जो दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले गण जो रुद्र का हित ही अपने चित्त में धारण किए रहते हैं, वे सभी सदैव मेरे प्रति शान्ति करें।

याम्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

याम्यां दिशिगणा ये तु सततं दण्डपाणयः ॥ 61 ॥
सुकृष्णाक्षाः कृष्णनिभाः तथा वै कृष्णलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौभाश्च पातालतलवासिनः ॥ 62 ॥
रुद्रैकाहितचेतस्काः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

याम्य दिशा (दक्षिण) के जो गण हैं, वे नित्य अपने हाथ में दण्ड लिए रहते हैं, वे अच्छी तरह की काली आँखों वाले, काली आभा लिए और कृष्णलोहित वर्ण वाले हैं। उनके साथ ही जो दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले और रुद्र का हित ही अपने चित्त में धारण किए रहते हैं, वे सभी गण सदैव मेरे प्रति शान्ति करें।

नैर्ऋत्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

नैर्ऋत्यां तु गणा ये तु राक्षसाः खड्गपाणयः ॥ 63 ॥
सुनीलाक्षा नीलनिभाः तथा वै नीललोहिताः।
दिव्यन्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 64 ॥
रुद्रध्यानैकपरमाः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नैर्ऋत्य दिशा (दक्षिण-पश्चिम) में निवास करने वाले जो राक्षसगण है, वे अपने हाथों में खड्ग धारण करते हैं। वे गण सुन्दर नीली आँखों वाले, नील आभा वाले और नीललोहित वर्ण लिए होते हैं। उन गणों के साथ ही जो दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले गण जो रुद्रदेवता का हित ही अपने चित्त में धारण किए रहते हैं, वे सभी गण सदैव मेरे प्रति शान्ति करें।

वारुण्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

वारुण्यां ये गणाः सर्वे सततं पाशपाणयः ॥ 65 ॥
सुमुक्ताक्षा मुक्तनिभाः तथा वै मुक्तलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 66 ॥
शिवभक्ता महात्मानः शान्तिं कुर्वन्तु ये सदा।

वरुण की दिशा (पश्चिम) में निवास करने वाले जो गण हैं, वे सभी अपने हाथ में पाश धारण करते हैं। वे मोती जैसी उज्वल आँखों वाले, मुक्ता जैसी आभा वाले और मोतियालाल रँग वाले हैं। उनके साथ ही जो दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले महात्मा गण हैं, वे शिवभक्त हैं, वे गण सदैव मेरे लिए शान्ति करें।

वायव्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

वायव्यां ये गणाः सर्वे सततं ध्वजपाणयः ॥ 67 ॥
सुधूम्राक्षा धूम्रनिभाः तथा वै धूम्रलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 68 ॥
शिवपूजा समायुक्ताः क्षेमं कुर्वन्तु सर्वदा।

वायव्य दिशा (उत्तर-पश्चिम) के निवासी गण हैं, वे अपने हाथ में ध्वज लिए रहते हैं। वे अच्छे धूएँ जैसी नेत्र वाले, धूएँ जैसी आभा लिए और धूम्रलोहित रँग वाले हैं। उनके साथ ही जो दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर रहने वाले और शिवपूजा में जुटे रहते हैं, वे सभी गण सदैव मेरी क्षेम-कुशल बनाए रखें।

कौबेर्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

कौबेर्यां ये गणाः सर्वे सततं निधिपाणयः ॥ 69 ॥
सुपीताक्षाः पीतनिभाः तथा वै पीतलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः ॥ 70 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्तिपराः सर्वे शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

कुबेर की दिशा (उत्तर) में रहने वाले जो गण हैं, वे हाथों में निधि लिए रहते हैं, वे सुन्दर पीली आँखों वाले, पीली आभा लिए और पीतलोहित रँग वाले हैं। उनके साथ दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले जो गण हैं, वे शिवभक्तिपरायण हैं। वे सभी सदैव मेरे लिए शान्ति रखें।

ऐशान्यादिशस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

ऐशान्यां वै गणा ये तु सततं शूलपाणयः॥ 71॥
सुश्वेताक्षाः श्वेतनिभाः तथा वै श्वेतलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः॥ 72॥
परमेशार्चनरताः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

ईशान दिशा (उत्तर-पूर्व) के गण अपने हाथ में सदा ही शूल लिए रहते हैं। वे सुन्दर सफेद आँखों वाले, सफेद आभा बिखेरने वाले और श्वेतलोहित वर्ण वाले हैं। उन गणों के साथ जो दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले गण हैं, वे परमेश्वर की अर्चना में लगे रहते हैं। वे सभी गण सदैव मेरे प्रति शान्ति बनाए रखें।

अथाधोभागस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

अधोभागे[1] वै गणा ये तु सततं चक्रपाणयः॥ 73॥
सुनीलाक्षा नीलनिभाः तथा वै नीललोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौमाश्च पातालतलवासिनः॥ 74॥
शिवपूजा समायुक्ताः अशुभं नाशयन्तु मे।

नीचे के भाग में रहने वाले जो गण हैं, वे नित्य ही हाथों में चक्र धारण करते हैं। वे सुन्दर नील आँखों वाले, नीली प्रभा विकीर्ण करने वाले और नीललोहित रँग वाले हैं। उनके साथ-साथ दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम और पातालतल पर रहने वाले जो गण हैं, वे शिवपूजा में संलग्न रहते हैं। वे सभी मेरे अशुभ का विनाश करें।

ऊर्ध्वभागस्थगणश्च दिव्यान्तरिक्षभौमगणादीनां प्रतिप्रार्थनाह —

ऊर्ध्वभागे गणा ये तु सततं पाशपाणयः॥ 75॥

---

1. 'ऐशान्यां' इति मातृकायाम्। अधोभागेति साधुपाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सुसूक्ष्माक्षाः सूक्ष्मनिभाः तथा वै सूक्ष्मलोहिताः।
दिव्यान्तरिक्षभौभाश्च पातालतलवासिनः॥ 76॥
शिवपूजासमायुक्ताः त्वशुभं नाशयन्तु मे।

ऊर्ध्वभाग में रहने वाले जो गण हैं, वे नित्य हाथ में पाश लिए रहते हैं। वे सूक्ष्म आँखों वाले, सूक्ष्म ही आभा वाले और मामूली लोहित वर्ण वाले हैं। उनके साथ दिव्यलोक, अन्तरिक्षलोक, भौम और पातालतल पर निवास करने वाले जो गण हैं, वे शिवपूजन के परायण हैं। आप सभी मेरे अशुभ का विनाश करें।

अन्यदप्याह —

एते गणा महात्मानो महाबलपराक्रमाः॥ 77॥
शिवं सम्पूज्य यत्नेन बलिमेषां विनिक्षिपेत्।
ततः सुप्रीतमनसा शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 78॥

उपर्युक्त सभी गण महात्मा, महाबली और महान् पराक्रम के धनी हैं। वे यत्नपूर्वक शिव की पूजा करते हैं। उनके प्रति मैं बलि देता हूँ। इस पर वे सभी प्रसन्नमन से मेरे लिए सदैव शान्ति करें।

अथ देवपुर्यानिवासिनलोकपालध्यानम्, पूर्वदिशस्थामरावतीपुर्यामेन्द्रध्यानाह —

अमरावतीपुरी नाम पूर्वभागे व्यवस्थिता।
विद्याधरगणाकीर्णा सिद्धगन्धर्वसेविता॥ 79॥
रत्नप्राकारनिचिताः महारत्नोपशोभिताः।
तत्र देवपतिः श्रीमान् वज्रपाणिर्महाबलः॥ 80॥

(दिशानुसार अवस्थित देवपुरियों[1] के लोकपालों के ध्यान का वर्णन करते हुए नन्दिकेश्वर बोले कि) ब्रह्माण्ड के पूर्वभाग में अमरावती नामक देवपुरी अवस्थित है। वह विद्याधरगणों से भरी-पूरी है। उसको सिद्ध, गन्धर्वगण सेवित करते हैं। वह रत्नों के परकोटे से बनी हुई है और उस पर महान रत्नों की शोभा की गई है। वहाँ पर देवपति श्रीमान् इन्द्र रहते हैं, जो महाबली हैं और हाथ में वज्र लिए रहते हैं।[2]

---

1. पुराणों में लवणसागर, क्षीरसागर, दधिसागर, घृतसागर, मधुसिन्धु, इक्षुसमुद्र, और सुस्वादुजलसिन्धु इन सात सरोवरों के नाम आते हैं। इनके साथ ही हिमवान्, हेमकूट, निषध, नील, श्वेत, शृंगवान और महाराजत इन सात पर्वतों के नाम आते हैं। इनके ऊपर माहेन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायवी, सौम्या तथा ईशानी- इन सात देवनगरियाँ समाश्रित हैं। इनके नामानुसार ही लोकपालों के नाम आते हैं। (लिंगपुराण पूर्व. अध्या. 48 एवं भविष्यपुराण, ब्राह्मपर्व अध्या. 126)
2. लिंगपुराण में देवराज इन्द्र की अमरावती पुरी का वर्णन इस प्रकार आया है— मेरु पर्वत के पूर्वभाग में स्थित

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नेत्राणान्तु सहस्रेण शोभनेव विराजते।
ऐरावतगजारूढो हेमवस्त्रो महाद्युतिः ॥ 81 ॥
देवेन्द्रः सततं हृष्टः परमेशार्चने रतः।
शिवध्यानैक सम्पन्नः शिवभक्ति समन्वितः ॥ 82 ॥
शिवभक्तैः सुराद्यैश्च देवैरपि सहानुगैः।
शिवप्रणामपरमः करो तु मम शान्तिकम् ॥ 83 ॥

उनके हजार नेत्र हैं और वहाँ शोभापूर्वक विराजित हैं। वे ऐरावत जैसे देवगज पर सवारी करते हैं और सुवर्ण के वस्त्र धारण करके महाद्युति विकीर्ण करते हैं। वे देवेन्द्र सदा ही प्रसन्नमना और परमेश की अर्चना में निरत रहते हैं। वे शिव के ध्यान में एकाग्रचित्त हैं, शिवभक्ति में लगे रहते हैं। वे अकेले ही नहीं, अनुगामी देवताओं के साथ शिवभक्ति में रहते हैं। वे शिव को प्रणाम करने में परमासक्त हैं। वे इन्द्र मेरे प्रति शान्ति करें।

अथाग्नेयदिशस्थ तेजोवतीपुर्यामनलध्यानाह —

आग्नेय्यां दिग्विभागे तु पुरी तेजोवती शुभा।
नानारत्नसमाकीर्णा रत्नज्वाला समुज्ज्वला ॥ 84 ॥
तत्र ज्वालापरीताङ्गा दीप्ताङ्गारसमद्युतिः।

आग्नेय दिशा (दक्षिण-पूर्व) में सुन्दर तेजोवती[1] नामक देवपुरी हैं। वह विभिन्न रत्नों से समाकीर्ण हैं और रत्नों की ज्वालाओं जैसी उज्ज्वल हैं। वहाँ पर ज्वाला के अंगों वाले दीप्तमान अंगारों जैसी चमक बनी रहती है।

भूतिकृद्देहिनां देवो ज्वलनः पापनाशनः ॥ 85 ॥

इन्द्र की पुरी अनेक प्रकार के महलों से युक्त, अनेक देवताओं से भरी हुई और मणिमय जालों से घिरी हुई है। यह विविध आकारों वाले तथा सुवर्ण तथा रत्नों से विभूषित गोपुरों, सोने तथा मणियों के बने हुए अजूबे तोरणों, राजमार्ग पर स्थित बातचीत में प्रवीण सभी आभूषणों से सज्जित पयोधरों के भार से झुकी तथा मद के कारण घूर्णित नेत्रों वाली हजारों स्त्रियों से भरी तथा चतुर्दिक अप्सराओं से घिरी हुई है। यह विचित्र वापियों से युक्त है। ये वापियां खिले हुए कमलों से सुशोभित सुवर्ण से निर्मित सोपान वाले, सुवर्णमय बालुओं वाले, नीलकमलों तथा अन्य प्रकार के कमलों से शोभायमान, सुगन्धित नीलकमलों तथा सुवर्णकमलों वाले इस प्रकार से जलाशयों तथा नदियों व नदों से युक्त यह सुन्दरपुरी शोभायमान है। उस पुरी से मेरु नामक सुन्दर पर्वत भी दिव्य दिखाई देता है। (लिंग. पूर्व. 48, 9–14) इन्द्रादि की पुरियों के नाम वायुपुराण के 34वें अध्याय में भी आए हैं।

1. लिंगपुराण में इस पुरी का नाम तेजस्विनी आया है— तेजस्विनी नामपुरी आग्नेय्यां पावकस्य तु। अमरावतीसमा दिव्या सर्वभोगसमन्विता॥ (लिंग. पूर्व 48, 15)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवपूजाजपोद्युक्तो शिवस्मरणभावितः।
शान्तिं करोतु मे देवः तथा पापपरिक्षयम्॥ 86॥

वहाँ के भूतिकृतदेह वाले अग्निदेव पापों का विनाश करने वाले हैं। वे शिवपूजा और रुद्रमन्त्र के जाप में तत्पर रहते हैं। वे शिव के स्मरण से भावित हैं। ऐसे अग्निदेव! मेरे लिए शान्ति करें और पापों का क्षय करें।

दक्षिणदिशस्थ वैवस्वतीपुर्यास्थ यमध्यानाह —

वैवस्वती पुरी नाम दक्षिणे तु व्यवस्थिता।
लोहप्राकारसंयुक्ता प्रासादैर्गोपुरैः शुभैः॥ 87॥
यमरूपशतानीका पितृयक्षोरगालया।

दक्षिण दिशा में वैवस्वती नामक देवपुरी विद्यमान है। वह लोहे के परकोटे से घिरी हुई है और वहाँ लोहे के ही सुन्दर गोपुर वाले प्रासाद बने हुए हैं। वहाँ शतानीक यमरूप, पितृ, यक्ष और उरगालय भी बने हुए हैं।

तत्रेन्द्रनीलसङ्काशो रक्तान्तायतलोचनः॥ 88॥
महामहिषमारूढः कृष्णस्त्रग्वस्त्रभूषणः।
कालान्तक महाकालः चण्डकोदण्ड संयुतः॥89॥
श्रीमान्यमो महातेजाः शिवधर्मपरायणः।
शिवपूजाजपोद्युक्तः क्षेमारोग्यं करोतु मे॥ 90॥

वहाँ इन्द्रनील के समान कान्तिमय, लाल-लाल लम्बे नयन वाले महामहिष पर आरूढ़ होने वाले यम रहते हैं जो काले रँग के वस्त्र, मालादि भूषण धारण करते हैं। वे काल के अन्तकर्ता, महाकाल हैं। वे चण्ड धनुष लिए रहते हैं। वे श्रीमान् यम महान तेजोमय हैं और शिवधर्मपरायण हैं। वे शिवपूजा और जपोद्योग में तत्पर रहते हैं। धर्मराज यम! मेरे प्रति कुशल और आरोग्य बनाए रखें।

नैर्ऋत्यदिशस्थ शुद्धवतीपुर्यास्थ नैर्ऋत्यध्यानाह —

नैर्ऋते तु दिशाभागे पुरी शुद्धवती[1] शुभा।
नानागणसमाकीर्ण नानाकिन्नर सङ्कुला॥ 91॥

---

1. कूर्मपुराण में नैर्ऋत्य दिशा में स्थित पुरी का नाम रक्षोवती आया है, जहाँ राक्षसगण नैर्ऋतिदेव की आराधना करते हैं। तामस प्रकृति वाले धर्मपरायण पुरुष उस पुरी में आते हैं— तस्यास्तु पश्चिमे भागे निर्ऋतेस्तु महात्मनः रक्षोवती नाम पुरी राक्षसैः संवृत्ता तु या॥ तत्र ते नैर्ऋतं देवं राक्षसाः पर्युपासते। गच्छन्ति तां धर्मरता ये तु तामसवृत्तयः॥ (कूर्मपुराण 46, 17-18)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नैर्ऋत्य दिशा के भाग में सुन्दर शुद्धवती पुरी स्थित हैं जो विभिन्न गणों से भरी हुई है। वहाँ अनेक किन्नरों का समूह रहता है।

[कृष्णवर्णभासिते तत्र राक्षसेन्द्रावस्थितम्।
नरारूढं महाकायं रक्षोभिर्बहुभिर्वृतम्॥
खड्गहस्तं महानीलं कज्जलाचलसन्निभम्।
नरयुक्तविमानस्थं पीताभरणभूषितम्॥[1]
असुरेन्द्रः सततं हृष्टः परमेशार्चने रतः।
शान्ति करोतु मे प्रीतः शान्तः शान्तेन चेतसा।]

वह काले वर्ण की दिखाई देती है और वहाँ पर राक्षसेन्द्र नैर्ऋति अवस्थित है जो कि नर पर आरूढ़ हैं। महाकाय राक्षसेन्द्र का अनेक राक्षस घेरे रहते हैं। उनके हाथ में खड्ग रहती है। वे महानील वर्ण वाले और काजल के पर्वत प्रतीत होते हैं। नरयुक्त विमान पर वह पीले आभरणों से विभूषित रहते हैं। असुरेन्द्र सदा ही प्रसन्न रहते हैं और परमेश्वर शिव की अर्चना में लगे रहते हैं। ऐसे असुरेन्द्र! मुझ पर प्रीति रखते हुए शान्त और शान्तचित्त होकर शान्ति करें।

वारुण्यदिशस्थ नीरवतीपुर्यास्थ वरुणदेवध्यानाह —

[वारुण्यां दिशाभागे नीरवती पुरी शुभा।[2]
तत्राप्सरोगणैः सिद्धैः सेव्यमानोऽमराधिपैः॥]

हेमाद्रि ने जो पाठ दिया है, उसके अनुसार पाठ समीचीन लगता है— नैर्ऋते तु दिशी भागे पुरी कृष्णेति विश्रुता। महारक्षीगणाकीर्णा पिशाचप्रेत सङ्कुला॥ तत्र स्कन्दनिभो देवो रक्तस्रग्वस्त्रभूषणः। खड्गपाणिर्म्महातेजाः कराल वदनीज्ज्वलः॥ राक्षसेन्द्रो वसेन्नित्यं (शिवस्या)राधने रतः। करोतु ते महाशान्तिं धनधान्यञ्च यत्नतः॥ (व्रतखण्ड अध्याय 32, पृष्ठ 1062) वायुपुराण में भी कहा है— तथा चतुर्थदिग्देशे नैर्ऋत्याधिपतेः सभा। नाम्ना कृष्णाङ्गना नाम विरुपाक्षस्य धीमतः॥ (वायु. 34, 87)

1. मातृकायां इयं श्लोकं नोपलभ्यते। अतएव मत्स्यपुराणातोपन्यस्तम्। (तुलनीय– 260, 15-16)
2. 'नीरवती' इति अनुमितपाठः। आग्नेय या वह्निपुराण में पयस्वतीपुरी नाम आया है। ध्यान इस प्रकार दिया गया है— पयस्वती पुरी नाम वारुण्यां दिशि संस्थिता॥ तस्याः पुर्याः समेत्यास्मिन् पादोभिरथः संवृतः। मकरस्कन्धमारुढः पाशहस्तो जलाधिपः॥ (वह्निपुराण 55, 42-43)

कूर्मपुराण में नैर्ऋत्य दिशा में रक्षोवती पुरी और पश्चिम भाग में शुद्धवती पुरी की स्थिति बताई गई है। शुद्धवती पुरी में अप्सराओं, सिद्धों तथा श्रेष्ठ देवताओं द्वारा सेवित वरुणराज निवास करते हैं और जलदान करने वाले लोग ही वहाँ जाते हैं— पश्चिमे पर्वतवरे वरुणस्य महापुरी। नाम्ना शुद्धवती पुण्या सर्वकामर्द्धिसंयुता। तत्राप्सरोगणैः सिद्धै सेव्यमानोऽमराधिपैः। आस्ते स वरुणो राजा तत्र गच्छन्ति येऽम्बुदाः॥ (कूर्मपुराण 46, 19-20)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्र मौक्तिकसङ्काशः परिपिङ्गललोचनः।
शुक्लवस्त्रपरीधानः पाशहस्तो महाद्युतिः॥ 92॥
वरुणः परमाभक्त्या शिवैकाहितमानसः।
रोगशोकार्ति सन्तापं विनाशय तु मे सदा॥ 93॥

वारुण्य दिशा (पश्चिम) में नीरवती नामक शुभ पुरी है। वहाँ (पर स्थित लोकपाल की) अप्सराओं सहित सिद्धगणों और अमराधिप द्वारा सेवा की जाती है। वहाँ पर मोतियों के समान चमक लिए पिंगल या पीले नेत्र वाले, शुक्ल वस्त्रों को धारण किए और हाथ में पाश लिए महान आभा बिखेरते हुए वरुणदेव भगवान् शिव के हित में मन किए परम भक्ति में लीन रहते हैं। वे वरुण देव मेरे रोग, शोक-सन्ताप का सदा विनाश करें।

वायव्यदिशस्थ गन्धवतीपुर्यास्थ पवनदेवध्यानाह —

वायव्ये दिग्विभागे तु पुरी गन्धवती शुभा।
ऋषिसिद्धगणाकीर्णा हेमप्राकारतोरणा॥ 94॥
तत्र धूम्रेण देहेन कृष्णः पिङ्गललोचनः।
[1]पटव्यादयन्तरालीनो ध्वजयष्ट्यायुद्धोद्यतः॥ 95॥
पवनः परमो देवः परमेश्वर भावित।
क्षेमारोग्यबलं शान्तिं करो तु विजयं मम॥ 96॥

वायव्य दिशा (उत्तर-पश्चिम) में शुभ गन्धवती पुरी स्थित है। वह ऋषियों और सिद्धगणों से भरी हुई और वहाँ सुवर्ण का परकोटा और तोरण बने हुए हैं। वहाँ पर धूएँ जैसी काया वाले, काले-भूरे नेत्रों वाले, रेशमी वस्त्रों के साथ ध्वजादण्ड लिए सदा ही युद्ध के लिए सन्नद्ध रहने वाले पवनदेव विद्यमान हैं। वे परमदेव परमेश्वर के भाव में लगे हुए हैं। वे मुझ पर भी क्षेम, आरोग्य और बल की कृपा करते हुए शान्ति करें और विजय प्रदान करें।

हेमाद्रि का उपन्यस्त किया पाठ समीचीन लगता है। यथा— पश्चिमे तु दिशां भागे पुरी शुद्धवती शुभा। ऋषिसिद्धगणाकीर्णा नानारत्नसुशोभिता॥ तत्र कुन्देन्दुसङ्काशो हरिः पिङ्गललोचनः। शुक्लाम्बरधरो देवो पाशहस्तो महाबलः। वरुण परयाभक्त्या (शिवस्य)गतमानसः। रोगकाशादिसङ्काशं तापं निर्व्वापयत्वथ॥ (व्रतखण्ड अध्याय 32, पृष्ठ 1062)

1. तुलनीय— पृथिव्याः प्रान्तसन्तानो ध्वजयष्ट्यायुधोच्छ्रितः॥ चरमः परमो देवो ग्रहेशश्च परात्परः। क्षेमारोग्यं बलं शान्तिं करोतु सततं तव॥ (व्रतखण्ड अध्याय 32, पृष्ठ 1062)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उत्तरदिशस्थ महोदयानामपुर्यास्थ कुबेरस्य ध्यानाह —

महोदया[1] नाम पुरी उत्तरेण महोज्ज्वला।
अनेक यक्षसङ्कीर्णा नानारत्नोपशोभिता॥ 97॥
हेमप्राकारसंयुक्ता रत्नप्रासाद संयुता।
तत्र देवो गदाहस्तः चित्रस्त्रग्वस्त्रभूषणः॥ 98॥
ह्रस्वबाहुर्महातेजाः परिपिङ्गललोचनः।
कुबेरो वरदः श्रीमान् हरपादार्चने रतः॥ 99॥
शान्ति करोतु मे प्रीतः शान्तः शान्तेन चेतसा।

उत्तर दिशा में अति ही उज्ज्वल महोदया नामक पुरी स्थित है। वह पुरी अनेकानेक यक्षों से भरी हुई और विविधानेक रत्नों से शोभायमान है। सुवर्ण के प्राकार से निर्मित उस पुरी में रत्नों से जटित प्रासाद बने हुए हैं। वहाँ के अधिपति गदा को हाथ में धारण किए रँग-बिरँगे स्रग्वस्त्रों (मालामय) से भूषित हैं। वे छोटी भुजाओं वाले किन्तु महान तेजस्वी तथा पिंगल नेत्र वाले हैं। ऐसे वरदाता श्रीमान् कुबेर शिव के चरणकमलों में अर्चन-पूजन में रत रहते हैं। वे शान्तमना, शान्तचित्त सहित मुझ पर प्रीति रखते हुए शान्ति करें।

ऐशान्यादिशस्थ यशोवतीपुर्यास्थ ईशानध्यानाह —

यशोवती पुरी नाम ऐशान्यां[1] दिशि संस्थिता॥ 100॥
नानागणसमाकीर्णा नानाकृत सुरालया।
तेजः प्राकारपर्यन्तादुर्न्निरूप गुणोज्ज्वला॥ 101॥
तत्र मौक्तिकसङ्काशः शशाङ्ककृतशेखरः।
त्रिनेत्रः शान्तरूपात्मा अक्षमालाकरोद्यतः॥ 102॥
ईशानः परमोदेवः सर्वदेवोत्तमोत्तमः।
सोऽपि सर्वात्मभावेन शान्तिमाशु करोतु मे॥ 103॥

ऐशान्य दिशा (उत्तर-पूर्व) में यशोवती नामक पुरी स्थित है। वह विभिन्न गणों से भरी हुई है और वहाँ कई देवालय बने हुए हैं जिनके परकोटे तेजोमय है और

---

1. कूर्मपुराण में इस पुरी का नाम कान्तिमती आया है। इस शुभ्र पुरी में सोमदेव का निवास कहा गया है। जो धर्मपरायण व्यक्ति अपने स्वधर्म के पालन में तत्पर रहते हैं, वे विभिन्न भोगों से युक्त इस पुरी को प्राप्त करते हैं— तस्याः तु पूर्वे तु दिग्भागे सोमस्य परमा पुरी। नाम्ना कान्तिमती शुभ्रा तस्यां सोमो विराजते॥ तत्र ये धर्मनिरताः स्वधर्मे पर्युपासते। तेषां तदुचितं स्थानं नानाभोगसमन्वितम्॥ (कूर्मपुराण 46, 23-24)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

बड़े ही अद्भुत गुणों से उज्ज्वलता लिए हुए हैं। वहाँ पर मोतियों के समान, चन्द्रमा का मुकुट बनाए हुए, तीन नेत्रों वाले, शान्तस्वरूप और हाथ में अक्षमाला लिए ईशानदेव विराजित रहते हैं जो परमदेव हैं और समस्त देवताओं में उत्तमोत्तम हैं। वे मेरे प्रति सर्वात्मभाव लिए शान्ति करें।

इत्यमनन्तर भूभुवस्वादि नानालोकस्थ देवादीनां —

भूलोकेऽथ भुवर्लोके स्वर्लोकेऽपि च संस्थितः।
देवो दिव्यप्रभायुक्तः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 104॥

(भूलोकादि विभिन्न स्वर्गलोकों के देवताओं से याचना) भूलोक में और भुवर्लोक तथा स्वर्लोक में भी जो देवगण दिव्यप्रभा के साथ संस्थित हैं, वे सदा ही मेरे लिए शान्ति करें।[1]

महोलोके च ये देवाः शुद्धस्फटिकसन्निभाः।
रुद्रभक्ता महात्मानः शिवं कुर्वन्तु मे सदा॥ 105॥

महोलोक में विद्यमान जो देवता हैं, वे शुद्ध स्फटिक के समान होते हैं। वे रुद्र के भक्त महात्मा मेरा सदा ही कल्याण करें।

तपोलोके च ये देवाः शुद्धस्फटिक सन्निभाः।
रुद्रभक्ता महात्मानः शिवं कुर्वन्तु मे सदा॥ 106॥

तपोलोक में स्थित जो देवता है, वे भी शुद्ध स्फाटिक के समान होते हैं, वे महात्मा रुद्रभक्त हैं। वे सदा मेरे कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें।

जनोलोके च ये देवा धौत चामीकरप्रभाः।
ईशानं प्रणता नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 107॥

जनोलोक में विद्यमान जो देवतागण हैं, वे सुवर्ण के वर्ण की तरह हैं। वे नित्य ईशान को प्रणाम करते हैं। वे मेरे लिए सदा-सर्वदा शान्ति करें।

महर्लोके च ये देवा विमानोज्ज्वल संस्थिताः।
शिवैकाहितचेतस्काः पापं प्रशमयन्तु मे॥ 108॥

महर्लोक में विद्यमान जो देवता है, वे उज्ज्वल विमान पर संस्थित रहते हैं। वे शिव के हित में ही एकमन रहते हैं, वे मेरे पापों का शमन करें।

---

1. पुराणों में सात लोकों के नाम आए हैं— भूर्भवः स्वर्म्महश्चैव जनश्च तप एव च। सत्यलोकश्च सप्तैते लोकास्तु परिकीर्तितताः॥ (अग्निपुराण)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महर्लोके जनालोके तपोलोके च संस्थिताः।
ते देवा निरान्तकाः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 109॥

महर्लोक, जनालोक और तपोलोक में जो देवगण स्थित हैं, वे निरान्तक अर्थात् उपद्रवों का शमन करने वाले हैं। वे आतंकों को दूर रखते हुए सदा ही मेरे लिए शान्ति निश्चित करें।

सत्यलोके च ये देवा भवन्त्युज्ज्वलविग्रहाः।
शिवभक्ताः सुमनसः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 110॥

सत्यलोक में जो देवगण निवसित रहते हैं, वे अति ही उज्ज्वल विग्रहवान हैं। वे अपने सम्यक् मन से शिवभक्त हैं। वे सदा ही मेरे लिए शान्ति करें।

गिरिगुह्यादिनिवसस्थदेवप्रत्याभ्यर्थनाह —

गिरिकन्दरदुर्गेषु वनेषु निवसन्ति ये।
रुद्रार्चनरता देवाः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 111॥

इसी प्रकार पर्वतों की कन्दराओं में, दुर्गों–किलों और वनखण्डों में रहने वाले जो रुद्र की अर्चना में संलग्न देवता हैं, वे मेरे प्रति सदा ही शान्ति रखें।

सरस्वत्यात् याचनाह —

शरच्चन्द्रांशु गौरेण देहेनामलतेजसा।
सरस्वती शिवेभक्ता शान्तिमाशु करोतु मे॥ 112॥

शरद के चन्द्रमा की तरह गौर वर्ण वाली, निर्मल देह तथा तेजोमय भगवती सरस्वती जो कि शिव की भक्त हैं, मेरे लिए शीघ्र शान्ति करें।

श्रीदेव्यात् याचनाह —

चारुचामीकरच्छाया सरोजकरपल्लवा।
श्रीदेवी च शिवेभक्ता श्रीमद्भूतिं ददातु मे॥ 113॥

सुवर्ण के समान आभासित सुन्दर देह वाली जिसके हस्तकमल सरोज के पल्लव के समान हैं, वे शिवभक्त श्रीदेवी मुझे ऐश्वर्य प्रदान करें।

अपराजितादेवीप्रति याचनाह —

हारेण सुविचित्रेण भास्वत्कनक मेखला।
अपराजिता शिवेभक्ता करोतु विजयं मम॥ 114॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चित्र-विचित्र हारों को धारण करने वाली, जिसकी सोने की मेखलाएँ दीप्तिमान रहती हैं, वे शिवभक्त अपराजिता देवी मेरी विजय निश्चित करें।

अथ सूर्यादि नवग्रहध्यानञ्च याचनाह —

सिन्दूरारुण रक्ताङ्गः कर्णान्तायत लोचनः।
सहस्त्रकिरणः श्रीमान् सप्तसप्तिक वाहनः॥ 115॥
गभस्तिमाली भगवान् शिवार्चनरतः सदा।
करोतु मे महाशान्तिं ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 116॥

सिन्दूर जैसी लालिमा लिए, रक्त अंग वाले और जिनके नेत्र कान तक पहुँचने वाले हैं, ऐसे सहस्त्रकिरण श्रीमान् सूर्यदेव हैं, जिनके वाहन में सात-सात अश्व जुते हुए रहते हैं, वे गभस्तिमाली सदा ही भगवान् शिव की अर्चना में लगे रहते हैं। ऐसे सूर्यदेव! मुझे महाशान्ति प्रदान करें और ग्रहजनित पीड़ाओं का हरण करें।

अङ्गारकध्यानमाह —

पद्मरागनिभेनाऽपि देहेनापिङ्गललोचनः।
अङ्गारकः शिवेभक्तो रुद्रार्चनपरायणः॥ 117॥
रुद्रसद्भावसम्पन्नो रुद्रध्यानैकमानसः।
ग्रहपीडाभयं सर्वं विनाशयतु मे सदा॥ 118॥

पद्मराग रत्न जैसी आभा वाली काया के धारक, भूरी आँखों वाले मंगल ग्रह जो शिवभक्त हैं और रुद्रार्चन परायण रहते हैं, वे रुद्र के भाव से सम्पन्न हैं और एकमन से रुद्र का ध्यान करते हैं। वे मेरी ग्रहजनित पीड़ाओं और भय का सदा विनाश करें।

बुधध्यानमाह —

कुङ्कुमच्छविभा श्रीमद्देहेन परिमण्डितः।
बुधोऽपि शिवभक्तात्मा ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 119॥

कुंकुम की छवि वाली देह से परिमण्डित श्रीमान् बुध शिवभक्तात्मा हैं, वे भी मेरी ग्रहजन्य पीड़ा का हरण करें।

बृहस्पतिध्यानमाह —

तप्तचामीकरच्छायः सर्वज्ञानकृतालयः।
बृहस्पतिः सदाकालं ईशानार्चन तत्परः॥ 120॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सोऽपि शान्तात्मभावेन परमेण सुभावितः।
ग्रहपीडां विनिर्जित्य करोतु विजयं मम॥ 121॥

तपाए हुए सोने जैसी आभा वाले, जो सर्वज्ञानालय माने जाते हैं, वे बृहस्पति सदाकाल ईश की अर्चना में तत्पर रहते हैं। वे भी शान्तात्मभाव से परम सुभाव से ग्रहजनित पीड़ाओं को जीतकर मेरी विजय निश्चित करें।

शुक्रध्यानमाह —

हिमकुन्देन्दुतुल्याभः सुरदैत्यैः सुपूजितः।
शुक्रः शिवार्चनरतो ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 122॥

हिम के समान और कुन्देन्दु के तुल्य प्रभा वाले, देवताओं और दैत्यों द्वारा पूजे जाने वाले शुक्र ग्रह जो शिवार्चन में तत्पर रहते हैं, मेरी ग्रह पीड़ाओं का हरण करें।

शनिश्चरध्यानमाह —

भिन्नाञ्जनं समच्छायः संरक्तनयनद्युतिः।
शनैश्चरः शिवेभक्तो ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 123॥

काले अंजन के समान छवि और लाल-लाल आँखों की चमक वाले शनिश्चर जो शिव के भक्त हैं, मेरी ग्रहोद्भूत पीड़ाओं का शमन करें।

राहुध्यानमाह —

नीलाञ्जनसमः श्रीमान् सैंहिकेयो महाबलः।
शिवपूजारतो राहुः ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 124॥

नीले अंजन के समान दिखाई देने वाले श्रीमान्, सिंहिका के पुत्र जो महाबलशाली हैं, वे शिवपूजा में रत रहने वाले राहु मेरी ग्रहकृत पीड़ाओं का निवारण करें।

केतुध्यानमाह —

धूम्रदेहयुतः क्रूरः सर्वोत्पातसमन्वितः।
शिवार्चनरतः केतुः ग्रहपीडां व्यपोहतु॥ 125॥
एते ग्रहा महात्मानः शिवार्चनरताः सदा।
शान्तिं कुर्वन्तु मे हृष्टाः सदाकालं हितैषिणः॥ 126॥

धुएँ जैसी देह लिए, क्रूरकर्मा और समस्त उत्पातों को करने वाले केतु, जो

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कि शिवार्चन में तत्पर रहने वाले हैं, मेरी ग्रहकारित पीड़ाओं का शमन करें। उक्त समस्त नौ ग्रह महात्मा हैं और शिव की अर्चना में सदा ही लगे रहते हैं, मुझ पर प्रसन्न होकर शान्ति करें और सदा-सर्वदा हितैषी बने रहें।

छायासूर्यसुते देविभद्राध्यानमाह —

मुखे यस्या स्थितो मृत्युः विष्टिर्नाम महाबला।
सुमुखा विघ्नकारी च पुच्छे च विजयं करी॥ 127॥
रुद्रप्रणामपरमा शान्तिमाशु करोतु मे।

जिसके मुख में मृत्यु का निवास है, ऐसी जो विष्टि[1] नामक महाबला है और जो अपने मुखकाल में विघ्नकारक तथा पुच्छ की घटी में विजय प्रदायक है। ऐसी रुद्र को परम प्रणाम करने वाली विष्टि (भद्रा) मेरे लिए शीघ्र शान्ति करें।

तिथ्यानुसारेण भद्राकालमाह —

तृतीया सप्तमी चैव दशमी च चतुर्दशी॥ 128॥
चतुर्थीत्वष्टमी चैव एकादशी च पौर्णिमा।
एता विघ्नकरा भद्राः[2] शुक्लकृष्ण समुद्भवाः॥ 129॥
भवन्तु मे श्रियै नित्यं कुर्वन्तु विजयं सदा।

---

1. विष्टि अथवा भद्रा वह कालावधि है जिसमें कोई मांगलिक कार्य नहीं किया जाता। इसका समय प्रायः 24 घंटे का होता है और यह प्रत्येक 2, 3, 7, 8 और 12 व 13 तिथियों को लगी रहती है। पुराणों में इसको सूर्य की पुत्री और शनि की बहन बताया गया है। कथा है कि जन्मते ही वह संसार का भक्षण करने के लिए झपट पड़ी, मंगल-यात्रा उत्सादि में उपद्रव करने लगी और पूरे जगत को पीड़ा पहुँचाने लगी। लल्लाचार्य कृत रत्नकोश, ज्योतिषरत्नमाला आदि ग्रंथों की की मान्यता के अनुसार वह बव, बालव, कौलव आदि करणों के अन्त में निवास करने वाली हुई। ऐसे में मांगलिक कार्यों में उक्त मुहूर्त-करणों का त्याग कर दिया जाता है। इसके बारह नाम है : धन्या, दधिमुखी, भद्रा, महामारी, खरानना, कालरात्रि, महारुद्रा, विष्टि, कुलपुत्रिका, भैरवी, महाकाली और असुरक्षयकरी। इन नामों का सुबह उठकर स्मरण करने से व्याधि का भय नहीं रहता, ऐसा माना जाता है। रोगों का निवारण होता है और सभी ग्रह अनुकूल हो जाते हैं। इसका पूजन इस मन्त्र के साथ किया जाता है— छायासूर्यसुते देवि विष्टिरिष्टार्थदायिनी। पूजितासि यथाशक्त्या भद्रे भद्रप्रदा भव॥ वह पाँच घड़ी मुख में, दो घड़ी कण्ठ में और तीन घड़ी पूँछ में प्रभावी रहती है। जब उसका निवास समय मुख में होता है तब कार्य का नाश होता है, कण्ठ में रहने तक धन का नाश, हृदय में रहने तक प्राण का नाश, नाभि में कलह, कटि में अर्थ नाश और पूँछ में रहने पर विजय और कार्य सिद्धि होती है : मुखे तु घटिकाः पञ्च द्वे कण्ठे तु सदा स्थिते। हृदि चैकादश प्रोक्ताश्चतस्रो नाभिमण्डले॥ कट्यां पञ्चैव विज्ञेयास्तिस्रः पुच्छे जयावहाः। मुखे कार्यविनाशाय ग्रीवायां धननाशिनी॥ हृदि प्राणहरा ज्ञेया नाभ्यां तु कलहावहा। कट्यामर्थ परिभ्रंशो विष्टिपुच्छे ध्रुवो जयः। (भविष्य. उत्तरपर्व 117, 39 एवं 23-25)
2. 'भक्ताः' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उक्त विष्टि अथवा भद्रा प्रत्येक मास में कृष्णपक्ष में तृतीया, सप्तमी, दशमी और चतुर्दशी और शुक्लपक्ष में चतुर्थी, अष्टमी, एकादशी और पूर्णिमा (इन तिथियों में क्रमशः 5, 2, 7, 4, 8, 3, 6, 1 प्रहरों में आदि की 5 घटी भद्रा का मुख होता है[1])— इन तिथियों को जो भद्रा उत्पन्न होकर विघ्न करती है, वह मेरे लिए श्रेयस्कारक हों और नित्य विजयकारी हों।

अथ तिथीनामीशशस्तिथीशाः सिद्धायामाह —

अमावस्या महापुण्या पितृदेव समन्विता॥ 130॥
प्रिया ह्येषा तु परमा शिवस्य परमात्मः।
शिवतेजः समायुक्ता करोतु मम शान्तिकम्॥ 131॥

(ज्योतिष की मान्यता के अनुसार प्रत्येक तिथि का स्वामी होता है, तिथियों के इन स्वामियों से शान्ति की याचना की गई है) महापुण्य अमावस्या तिथि पितृदेव के साथ होती है, ऐसी परमात्मा शिव के प्रति परम प्रीति रखने वाली अमावस्या तिथि शिवतेज से युक्त हैं, वह मेरे प्रति शान्ति निश्चित करें।

पञ्चदशतिथिनां क्रमणेशाः स्वामिनस्तानाह —

प्रतिपद्वह्निसंयुक्ता [2]द्वितीयाकोधिदेवता।
तृतीया च महापुण्या धनदेन समन्विता॥ 132॥
चतुर्थी च महापुण्या गजवक्त्राधिदैवतम्।
पञ्चमी श्रीयुता नित्यं षष्ठि स्कन्दाधिदैवतम्॥ 133॥

प्रतिपदा तिथि अग्निदेव से संयुक्त होती हैं, द्वितीया तिथि ब्रह्मा और तृतीया महापुण्या तिथि धनद[3] (कुबेर) से समन्वित होती है। चतुर्थी महत्तिथि गणेशदेवता, पंचमी तिथि सदा ही लक्ष्मी और षष्ठी स्कन्द से संयुक्त होती है।

---

1. व्यवहारसमुच्चय में आया है— दशम्यामष्टम्यां प्रथमघटिकापञ्चकपरं हरिद्युः सप्तम्यां द्विदश 12 घटिकान्ते त्रिघटिकम्। तृतीया राकायां खयम 20 घटिकाभ्यः परभवं शुभं शुभं विष्टेः पुच्छं शिवतिथिचतुर्थ्योस्तु विरमे॥ (मुहूर्तचिन्तामणि पीयूषधाराटीकायां 1, 44) इसके प्रयोजन के लिए ज्योतिषरत्नमाला में कहा गया है— मनुवसुमुनितिथि युगदशशिवगुणसङ्ख्यासु तिथिषु पूर्वस्याः। आयाति विष्टिरेषां पृष्ठे शुभदा पुरस्त्वशुभा॥ ब्रह्मसिद्धान्त का मत है—दिवा परार्धजा विष्टिर्विष्टिरेव दिवानिशोः। सा त्याज्या त्वन्यथा विष्टिः सर्वकर्मशुभप्रदा॥ (तत्रैवोद्धृत)
2. 'द्वितीयार्काधिदेवता' इति पाठः। को ब्रह्मा, द्वितीयाया ब्रह्मा स्वमीत्ययमर्थः सिद्धि भवति।
3. ज्योतिश्शास्त्रानुसारेण तृतीयातिथ्येश गौरी। यथा— वह्निर्विधाताऽद्रिसुता गणेशः सर्पो विशाखो दितिजो महेशः। दुर्गा यमो विश्वहरी च कामः शर्वो निशेशश्च पुराणदृष्टाः॥ (वसिष्ठसंहिता तिथ्याध्याय)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सप्तमी रवि संयुक्ता ह्यष्टमी रुद्रदेवता।
नवमी तिथिरत्युग्रा दुर्गादेव्यधिदेवता॥ 134॥
दशमी यमसंयुक्ता इन्द्रेणैकादशी[1] मता।
द्वादशी विष्णुसंयुक्ता मदनेन त्रयोदशी॥ 135॥

सप्तमी तिथि के सूर्य और अष्टमी के देवता रुद्र हैं। नवमी तिथि के देवता अति उग्र दुर्गादेवी हैं। दशमी यमराज के साथ हैं जबकि एकादशी इन्द्र[1], द्वादशी विष्णु से संयुक्त और त्रयोदशी कामदेव से संयुक्त हैं।

चतुर्दशीमनःस्थेन पौर्णमासी हिमांशुना।
एतास्तु तिथयः सर्वाः ईशानार्चन तत्पराः॥ 136॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं सदाकालं हितैषिणः।

चतुर्दशी तिथि के देवता शिव हैं और पूर्णिमा के देवता चन्द्रमा कहे गए हैं। तिथियों के ये समस्त स्वामी ईशान शिव की अर्चना में तत्पर हैं। आप सब तिथ्येश मेरे सद-सर्वदा हितैषी बनें और नित्य शान्ति बनाए रखें।

अथ योगनामानि —

विष्कम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यः शोभनस्तथा॥ 137॥

----

1. ज्योतिषमतानुसारेण विश्वेदेवः एकादश्याधिदैवताः।
वराहमिहिर का मत है— कमलजविधातृहरियमशशाङ्कषड्वक्रशक्रवसुभुजगाः। धर्मेशसवितृमन्मथकलयो विश्वे च तिथिपतयः॥ (बृहत्संहिता 99, 1)
विष्णुधर्मोत्तर में तिथियों के स्वामियों का नामानुक्रम इस प्रकार बताया गया है— ब्रह्माप्रजापतिर्विष्णुर्यमस्सोमस्तथैव च। कुमारो मुनयस्यप्त ह्यष्टौ च मनवस्तथा॥ पिशाचश्च तथा धर्मो रुद्राश्चैकादश स्मृताः। आदित्या द्वादश तथा कामदेवस्तथैव च॥ यक्षाश्च पितरश्चैव प्रतिपत्प्रभृतिर्नृप। (विष्णुधर्मोत्तर. 1, 83, 22-24)
स्कन्दपुराण में किंचित् भेद आया है : वह्निर्देवः प्रतिपदि द्वितीया ब्रह्मदेवता। तृतीयायास्तथा गौरी चतुर्थ्यां गणनायकः॥ सर्पाधिपा पञ्चमी स्यात्षष्ठी स्यात्स्कन्ददेवता। सप्तम्यां भास्करो देवः शिवदेवाष्टमी तिथिः॥ दुर्गाधिपा तु नवमी दशम्यन्तकदेवता। एकादश्यधिपाश्चैव विश्वेदेवाः प्रकीर्तिताः॥ द्वादश्याश्च हरिः कामस्त्रयोदश्यधिपो मतः। चतुर्दश्यां शिवश्चैव पौर्णमास्याः शशी पतिः॥ अमायाः पितरो देवा एते तिथ्यधिपाः स्मृताः॥ स देवस्तत्र पूज्यः स्याद्यस्य देवस्य या तिथिः॥ (श्रावणमास माहात्म्य 3, 34-38)
तत्त्वसागरसंहिता में प्रकारान्तर है— प्रतिपद्धनदस्योक्ता द्वितीया च श्रियामता। तृतीया पार्वतीदेव्याश्चतुर्थी विघ्नहारिणः॥ पञ्चमी शशिनः प्रोक्ता षष्ठी प्रोक्ता गुहस्य तु॥ सप्तमी भास्करस्योक्ता दुर्गायाश्चाष्टमी मता॥ मातृणां नवमी प्रोक्ता वासवे दशमीस्मृता। एकादशी मुनीनाञ्च द्वादशी चक्रपाणिनः॥ त्रयोदशी त्वङ्गस्य शिवस्योक्ता चतुर्दशी। पौर्णमासी सुरश्रेष्ठ पितुर्मे कथिता तिथिः। देव्यास्त्रिपुरभैरव्याः कथिता तु चतुर्थिका। अन्यासामपि नित्यनामष्टमी नवमी स्मृता॥ (चतुर्वर्गचिन्तामणि परिशेषखण्डे पृष्ठ 888-889)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वज्रसिद्धिव्यतीपाता वरीयान्परिघः शिवः।
सिद्धः साध्यः शुभो शुभ्रो ब्राह्मो माहेन्द्रवैधृती॥ 138॥

विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन [अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण[1]], वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुभ्र, ब्राह्म, ऐन्द्र और वैधृति।

चन्द्रस्यभानोरुत्पन्ना ह्येते योगा महाबलाः।
शिवभक्तियुताः सर्वे शिवभक्तिविधायिनः॥ 139॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं शिवध्यान परायणाः।

ये योग चन्द्र के एवं सूर्य से उत्पन्न होते हैं, ये योग महाबली हैं। ये शिव भक्ति से युक्त हैं और समस्त शिवभक्ति के विधायी हैं। ये सब शान्ति करें और मुझे शिवभक्ति के परायण बनाएँ।[2]

अथ पूर्वादि दिशाक्रमादृक्षेशा स्थितिश्च ध्यानाह —

कृत्तिका परमादेवी रोहिणीरुचिरानना॥ 140॥
मृगशीर्षा शिवेभक्ता आर्द्रा च परमोज्ज्वला।
पुनर्वसुस्तथा पुष्या आश्लेषा च महोज्ज्वला॥ 141॥
नक्षत्रामन्तरो ह्येताः प्रभामालावभासिताः।
महादेवार्चनरता महादेवात्मभावनाः॥ 142॥
पूर्वभागे स्थिता ह्येताः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

(कृतिकादि सभी 27 नक्षत्र चन्द्रमा की पत्नियाँ कहे गए हैं) कृतिका[3]

---

1. ज्योतिषशास्त्र में 27 योगों का उल्लेख है। यहां पर जिन योगों का नाम नहीं है, उनको कोष्ठकांकित किया गया है। श्रीपति भटाचार्य का मत है कि इन योगों के फल उनके नामों के अनुसार ही होते हैं— क्रमशो भवन्ति योगा विष्कुभः प्रीतिरायुचायुष्मान्। सौभाग्य शोभनाख्याव्यति गण्डोप्यथ सुकर्मा च॥ धृति शूलगण्ड वृद्धि ध्रुव नामानोभन्त्यथान्ये च। व्याघात हर्षणारव्यौ वज्रं सिद्धिर्व्यतिपातः॥ तदनुवरीयान् परिघः शिवस्ततः सिद्धसाध्यशुभ शुक्लाः। ब्रह्लेन्द्रो वैधृति इतिनाम समानं फलं कुर्युः॥ (ज्योतिषरत्नमाला 5, 1-3)
2. मुहूर्त को लेकर योगों की आवश्यकता होती है। ये योग चन्द्रमा और सूर्य की गणना से ज्ञात होते हैं। योग को ज्ञात करने की रीति चण्डेश्वर ने इस प्रकार बताई है कि जिस दिवस को योग का ज्ञान वांछित हो, उस दिन सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उसकी संख्या और चन्द्रमा जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र की संख्या को जोड़ें और उसमें से एक को घटाकर 27 से भाजित करने पर जो शेष हो, उसे विष्कम्भादि क्रमानुसार योग जानना चाहिए— यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानुर्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः। एकीकृत्य त्येजदेकं योगा विष्कुम्भकादयः॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् 25, 1)
3. यहाँ कृतिकादि नक्षत्र से गणना की गई है, न कि अश्विन्यादि है। विष्णु आदि पुराने पुराणों में यही परम्परा

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

परमादेवी हैं और रोहिणी सुन्दर मुख वाली है। मृगशीर्ष शिवभक्त हैं और आर्द्रा नक्षत्र परम उज्ज्वल हैं। पुनर्वसु तथा पुष्य और आश्लेषा महोज्ज्वल हैं और जो अन्तर नक्षत्र या तारे हैं, जो अपनी प्रभा से चमक रहे हैं और महादेव की अर्चना में लगे हैं। वे महादेव की आत्मभावना से युक्त हैं। उपर्युक्त सभी नक्षत्र पूर्व दिशा के भाग में स्थित होकर मेरे लिए शान्ति करें।

दक्षिणदिशस्थ नक्षत्रमाह —

मघा सर्वगुणोपेता पूर्वा चैव तु फाल्गुनी॥ 143॥
उत्तराफाल्गुनी श्रेष्ठा हस्तचित्रा तथोत्तरा।
स्वाती विशाखा वरदा दक्षिणस्थान संस्थिताः॥ 144॥
अर्चयन्तः सदाकालं देवं त्रिनयनं परम्।
ममापि शान्तिकं ह्येताः कुर्वन्तु शिवचोदिताः॥ 145॥

मघा नक्षत्र समस्त गुणों से युक्त हैं, ऐसे ही पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी श्रेष्ठ हैं। हस्त और चित्रा भी वैसे ही उत्तम हैं। स्वाती, विशाखा वरदायी हैं और दक्षिण स्थान में संस्थित हैं। ये सदाकाल त्रिनयन परमशिव की अर्चना में संलग्न हैं। ये सभी मेरे प्रति शान्तिकारी हों। ये सभी शिव से प्रेरित हैं।

पश्चिमदिशस्थ नक्षत्रमाह —

अनुराधा तथा ज्येष्ठा मूलावृश्चि बलान्विता।
पूर्वाषाढा महावीर्या आषाढा चोत्तरा शुभा॥ 146॥
अभिजिन्नाम नक्षत्रं श्रवणः परमोज्ज्वलः।
एताः पश्चिमतो दीप्ता राजन्ते चारुमूर्त्तयः॥ 147॥
ईशानं पूजयन्त्येतत् सर्वकालं सुभाविताः।
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं विभूतं च महाहिताः॥ 148॥

देखने को मिलती है। अश्विनी से गणना का श्रेय वराहमिहिर (587 ई.) को हैं। उससे पूर्व तक कृतिका से ही गणना की जाती थी। वराह के टीकाकार उत्पलभट्ट ने पुरानी नक्षत्र गणना के लिए 'गर्गसंहिता' के कूर्मविभागाध्याय से ये श्लोक उपन्यस्त किए हैं— कृत्तिकाद्यैस्त्रि नक्षत्रैर्भवगैर्नवभिः क्षितिः। कल्पिता मध्यदेशादौ प्रागादिक्रम योगतः॥ कृतिकाद्यस्त्रिनक्षत्रो मध्यदेशे गणो यदा। पापैरुपहतो हन्ति मध्यदेशाखिलांस्तदा॥ रौद्राधिको हन्ति पूर्वां सर्पाद्यः पूर्वदक्षिणाम्। आर्यम्णाद्यस्तथा याम्यां स्वात्याद्यो दक्षिणापराम्॥ ज्येष्ठाद्यः पश्चिमामाशां वैश्वाद्यश्चापरोत्तराम्। वारुण्याद्यो हन्ति सौम्यां पौष्णाद्यः शूलिनो दिशम्॥ (सविवृत्तिबृहत्संहिता 14, 1)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इसी प्रकार अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र बलान्वित हैं। पूर्वाषाढ़ा महान पराक्रमी हैं और उत्तराषाढ़ा शुभ हैं। अभिजित् नामक नक्षत्र परम उज्ज्वल हैं। ये सभी सुन्दर स्वरूप लिए पश्चिम दिशा में दीप्तिमान व विराजित हैं। ये सर्वकाल सुभाव लिए ईशानदेव की पूजा करते हैं। ये सभी नक्षत्र मेरे प्रति शान्ति रखें और मुझे महाहितकारी विभूति प्रदान करें।

उत्तर दिशस्थ नक्षत्रमाह —

श्रविष्ठाशतभिषक् चैव पूर्वभाद्रपदस्तथा।
उत्तराभद्ररेवत्याद्यश्वति सुमहर्द्धिका॥ 149॥
भरणी च महावीर्या नित्यमुत्तर संस्थिताः।
शिवार्चनरता नित्यं शिवध्यानैक मानसाः॥ 150॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं सर्वकालं शुभोदयाः।

इनके अतिरिक्त श्रविष्ठा या धनिष्ठा, शतभिषक् या शततारक और पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी नक्षत्र सुमहर्द्धिका (बहुत ऋद्धि प्रदायक) हैं। भरणी नक्षत्र महापराक्रमी हैं। ये सभी उत्तर दिशा में अवस्थित होकर नित्य शिवार्चना में निरत हैं, ये एकमन से शिव के ध्यान में लगे रहते हैं। ये मुझे नित्य शान्ति प्रदान करें और सभी कालों में शुभ का विकास करें।

अथ राशिश्च राश्याधिपध्यानमाह —

मेषो मृगाधिपस्थं यो धनुर्दीप्तिमतां वरः॥ 151॥
पूर्वं तु भासयन्त्येते शिवपूजापरायणः।
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं हरपादब्जपूजकाः॥ 152॥

(राशियों की स्थिति कही जा रही है) मेष, मृगाधिप (सिंह)[1] तथा धनु राशि श्रेष्ठ दीप्तिमय हैं। ये पूर्व में चमक लिए हैं और शिवपूजा के परायण हैं। शिव के चरणकमलों का नित्य पूजन करने वाली ये राशियाँ मेरे प्रति शान्ति करें।

वृषश्च वरदः कन्या मकरश्च महर्धिकाः।

---

1. मार्कण्डेयपुराण में कूर्मचक्रानुसार राशियों का विभाजन भी किया गया है। मेष आदि तीन राशियाँ कूर्म के मध्य भाग में बताई गई हैं। मिथुन व कर्क मुख भाग में जबकि पूर्व और दक्षिण वाले चरण में कर्क एवं सिंह हैं। सिंह, कन्या व तुला राशियाँ कुक्षि में है। तुला व वृश्चिक दक्षिण-पश्चिम वाले चरण में है। पृष्ठभाग में वृश्चिक व धनु है। वायव्य कोण वाले चरण में धनु, मकर और कुम्भ है। उत्तर कुक्षि में कुम्भ और मीन हैं जबकि ईशान कोण वाले चरण में मीन एवं मेष राशियाँ हैं। (मार्कण्डेय. 55, 75-79)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ऋषभश्च महावीर्याः शिवभाव सुभाविताः ॥ 153 ॥
एते दक्षिणदेशे तु पूजयन्ति सदाशिवम्।
भक्त्या परमय नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा ॥ 154 ॥

वृष राशि वरदायी हैं तथा कन्या और मकर महानतम हैं। ये ऋषभ, महापराक्रमी और शिवभाव से सुभावित हैं। ये राशियाँ दक्षिणी देश में स्थित होकर सदाशिव का पूजन परम भक्ति करती हैं। ये सदा ही मेरे लिए शान्ति करें।

मिथुनश्च तुलाकुम्भौ पश्चिमे तु व्यवस्थिाः।
शिवपादार्चने युक्ताः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा ॥ 155 ॥

मिथुन और तुला व कुम्भ राशियाँ पश्चिम दिशा में अवस्थित हैं। ये शिव के चरणों की अर्चना में रहती हैं। ये मेरे प्रति सदा ही शान्ति करें।

कर्कटो वृश्चिको मीना येन्त उत्तरतः स्थिताः।
यजन्त्येते सदाकालं रुद्रं त्रिभुवनाधिपम् ॥ 156 ॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं रुद्राज्ञानुविधायिनः।

कर्क, वृश्चिक और मीन— ये राशियाँ उत्तर दिशा में स्थित हैं। ये हर काल में त्रिभुवनपति रुद्र का यजन करती हैं। रुद्र के ज्ञान की नित्य विधायिनी ये राशियाँ मेरे लिए शान्ति करें।

अथ सप्तऋष्यार्थ ध्यानमाह —

ऋषयः सप्तसङ्ख्याता, ध्रुवान्ताः परमोज्ज्वलाः ॥ 157 ॥
शिवप्रसादसम्पन्नाः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

ध्रुव के अन्त में स्थित ऋषिगण परमोज्ज्वल हैं। इनकी संख्या सात हैं। शिव कृपा से सम्पन्न ये ऋषिगण मेरे प्रति सदा ही शान्ति करें।

अन्यदप्याह —

काश्यपो गालवो गार्ग्यो विश्वामित्र महामुनिः ॥ 158 ॥
मनुर्दक्षो वसिष्ठोऽथ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः।
नारदो भृगुरात्रेयो भारद्वाजोऽङ्गिरा मुनिः ॥ 159 ॥
वाल्मीकिः कौशिकः कण्वः जाबाल्योऽथ पुनर्वसुः।
शालङ्कायन इत्याद्या ऋषयोऽथ महाबलाः ॥ 160 ॥
शिवाध्यानार्चने युक्ताः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

काश्यप, गालव, गार्ग्य और महामुनि विश्वामित्र, मनु, दक्ष, वसिष्ठ, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, नारद, भृगु, आत्रेय, भारद्वाज, मुनि अंगिरा, वाल्मीकि, कौशिक, कण्व, जाबालि, पुनर्वसु, शालंकायन इत्यादि ऋषिगण महानतम बलवान कहे गए हैं। ये सभी शिवध्यान और अर्चना से युक्त हैं, ये मेरे लिए सदा ही शान्ति करें।

सिद्धगणादीनां ध्यानमाह —

सिद्धाः समृद्धतपसो गन्धर्वाप्सरोगणाः ॥ 162 ॥
विद्याधरा महात्मानो गरुडश्च महर्द्धिकः ।
महेश्वरपरा नित्यं महेश्वरपदार्चकाः ॥ 163 ॥
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्तु शिवधर्मपरायणाः ।

सिद्धगण, तपस्याओं से समृद्ध तपस्वी, गन्धर्व और अप्सराओं व उरुगों के गण, विद्याधर महात्मा, महान् गरुड महेश्वर के परमभक्त हैं और नित्य ही महेश्वर के चरणों की अर्चना करते हैं। वे सभी शिवपरायण मुझे शीघ्र सिद्धि प्रदान करें।

नानासुरगणार्थ प्रार्थनामाह —

नमुचिर्नाम दैत्येन्द्रः शङ्कुकर्णो महाबलः ॥ 164 ॥
तारकोऽग्निमुखो दैत्यः कालनेमिबर्लिस्तथा ।
एते दैत्या महात्मानः शिवसद्भावभाविताः ॥ 165 ॥
पुष्टिं बलं तथा वीर्यं प्रयच्छन्तु सुखोदयम् ।

नमुचि नामक दैत्यपति तथा महाबली शंकुकर्ण, तारकासुर अग्निमुख दैत्य तथा कालनेमि और बलिराजा— ये भी महात्मा दैत्य शिव के प्रति सद्भाव लिए रहते हैं। वे मुझे पुष्टि, बल तथा पराक्रम प्रदान करें और सुखों का विकास करें।

महानादोऽथ विततः दैत्यः परमवीर्यवान् ॥ 166 ॥
हाटकेश्वरदेवस्य नित्यं पूजापरायणः ।
बलं वीर्यं च मे क्षिप्रं प्रयच्छतु महर्धिकः ॥ 167 ॥

महानाद वितत दैत्य (वीणादि वाद्यों का स्वर करने वाले) परम पराक्रमी हैं, वे हाटकेश्वरदेव की नित्य प्रति पूजा परायण हैं। वे मुझे भी शीघ्रातिशीघ्र बल और पराक्रम प्रदान करें।

महाजम्भो हयग्रीवः प्रह्लादो दैत्यराट् प्रभुः ।
वैरोचनो हिरण्याक्षः सुपर्वा च सुलोमजः ॥ 168 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मुचुकुन्दः सुकुन्दश्च दैत्यो रैवतकस्तथा।
भावेन परमेणाशु यजन्तः सर्वदा शिवम्॥ 169॥
सततं च शिवात्मानं पुष्टिं कुर्वन्तु मे सदा।

महाजम्भ, हयग्रीव और दैत्यराज प्रह्लाद, वैरोचन, हिरण्याक्ष, सुपर्वा, सुलोमज, मुचुकुन्द, सुकुन्द दैत्यपति रैवतक—ये सभी भावनापूर्ण होकर सदाशिव का अर्चन-पूजन करते हैं। ये सतत् समस्त दैत्य शिवात्मक होकर सदा मेरे लिए पुष्टि करें।

इत्यमनन्तर नागसंस्थानमाह —

आरक्तेन शरीरेण रक्तान्तायत लोचनः॥ 170॥
महाभोगाकृताटोपः शङ्खाब्जकृतलाञ्छनः।
अनन्तो नाम नागेन्द्रः शिवपूजारतः सदा॥ 171॥
महापापविषं हत्वा क्षेमारोग्यं करोतु मे।

लाल-लाल काया लिए और लाल ही लम्बे नेत्रों वाले, महाभोग करने वाले, जिनके लांछन शंख और कमल हैं, वे अनन्त नाम के नागेन्द्र हैं और सदा ही शिवपूजा में रत रहते हैं। वे महापाप-विष का हनन करके मुझे क्षेम-कुशल और निरामय करें।

सुश्वेतेन तु देहेन सुश्वेतोत्पलशेखरः॥ 172॥
चारुभोगकृताटोपो हारचारु विभूषणः।
वासुकिर्नाम नागेन्द्रः शिवपूजापरो महान्॥ 173॥
सर्वपापविषं हत्वा क्षेमारोग्यं करोतु मे।

अच्छी तरह से सफेद काया वाले, सुश्वेत उत्पल का सिर रखने वाले, सुन्दर भोगों को उठाने वाले और सुन्दर ही हार-भूषणधारी जो वासुकि नामक नागेन्द्र हैं, वे शिवपूजा से महान् हैं। वे समस्त पाप-विष का हनन करें और मेरा कल्याण करते हुए आरोग्य प्रदान करें।

अतिपीतेन देहेन प्रस्फुरद्भोग सम्पदा॥ 174॥
तेजसा चाति सप्तेन कृतस्वस्तिक लाञ्छनः।
नागराट् तक्षकः श्रीमान् नागकोटि समन्वितः॥ 175॥
करोतु मे महाशान्तिं सर्वदोष विषापहः।

बहुत पीली देह और भोग सम्पदा प्रस्फुटित करने वाले, अत्यन्त तेजोमय और सात स्वास्तिक के लांछन लिए नागाधिराज श्रीमान् तक्षक कोटि नागों के साथ रहते हैं। वे मेरे लिए महाशान्ति करें और समस्त विष दोषों का हरण करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अतिकृष्णेन देहेन स्फुरद्विकटमस्तकः ॥ 176 ॥
कण्ठे रेखात्रयोपेतो घोरदंष्ट्रायुधोद्यतः।
कालकूटो महानागो विषदर्पसमन्वितः ॥ 177 ॥
विषशस्त्राग्निसन्तापं हत्वा शान्तिं करोतु मे।

बहुत काली देह वाले और जो अपने विकट मस्तक से फुफकारते हैं, जिनके कण्ठ पर तीन रेखाएँ हैं और अपने घोर दाँतों को लिए जो युद्ध के लिए सन्नद्ध रहते हैं, ऐसे कालकूट नामक महानाग विष रूपी अभिमान से युक्त हैं, वे विष, शस्त्र और अग्नि सन्ताप का हरण करें और मेरे लिए शान्ति करें।

पद्मवर्णेन देहेन चारुपद्मायतेक्षणः ॥ 178 ॥
पञ्चबिन्दुकृताभासो ग्रीवायाः शुभलक्षणः।
ख्यातः पद्ममहानागो हरपादार्चने रतः ॥ 179 ॥
करोतु मे महाशान्तिं महापापविषक्षयम्।

जो पद्मवर्ण की देह वाले हैं और सुन्दर पद्माकार लम्बी आँखों वाले हैं, जिनकी ग्रीवा में पाँच बिन्दुओं के शुभ लक्षण विद्यमान होते हैं, वे पद्म नामक महानाग के रूप में ख्यात होकर शिव के चरणों की अर्चना करते हैं। वे मेरे लिए शान्ति करें और महापाप विष का क्षय करें।

पुण्डरीक निभेनाऽपि देहेनामिततेजसा ॥ 180 ॥
शङ्खशूलाब्जरुचिरैः भूषितो मूर्ध्नि बिन्दुभिः।
महापद्मो महानागो नित्यं पशुपतौ रतः ॥ 181 ॥
विनिहत्य विषं घोरं शान्तिमाशु करोतु मे।

पुण्डरीक के समान ऐसी देह जो अमित तेजवाली हैं और जिनके सिर पर शंख, शूल और सुन्दर कमल के लक्षण बिन्दु रूप में दिखाई देते हैं, ऐसे महापद्म नामक महानाग नित्य पशुपतिनाथ की सेवा में रत हैं। वे महापद्म घोर विष का हनन करके शीघ्र ही मुझे शान्ति प्रदान करें।

श्यामेनदेहभारेण श्रीसत्कमललोचनः ॥ 182 ॥
विषदर्पबलोन्मत्तो ग्रीवायामेकरेखया।
शङ्खपालः श्रियादीप्तः शिवपादाब्जपूजकः ॥ 183 ॥
महाघोरविषं हत्वा करोतु मम शान्तिकम्।

जो श्याम देह के भार को लिए हैं और जिनके नयन सुन्दर कमल की रचना

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वाले हैं, वे विष रूपी अभिमान से उन्मत्त रहते हैं और जिनकी ग्रीवा में एक रेखा होती हैं, वे श्रीमान् शंखपाल महानाग शिव के चरण कमलों की पूजा करके दीप्तिमान हैं। वे महा घोर विष का हनन करें और मेरे लिए शान्ति करें।

अतिगौरेण देहेन चन्द्रार्धकृतमस्तकः॥ 184॥
दीप्तभोगकृताटोपः शुभलक्षणलक्षितः।
गुलिको नागराजेन्द्रो नित्य हरपरायणः॥ 185॥
अपहृत्य विषं घोरं करोतु मम शान्तिकम्।

अत्यन्त गौर वर्ण की देह वाले, जिनके मस्तक पर अर्धचन्द्र का लांछन बना होता है और जो भोग से परिपूर्ण दीप्तिमान होकर शुभलक्षणों को प्रकट करते हैं, ऐसे गुलिक नामक नागराजेन्द्र शिव के प्रति नित्य परायण है। वे घोर विष का अपहरण करें और मेरे लिए शान्ति करें।

अथान्तरिक्षादीनां नागनागिन्यनागकन्यानागकुमारिकाह —

अन्तरिक्षे च ये नागा ये नागाः स्वर्ग संस्थिताः॥ 186॥
गिरिकन्दरदुर्गेषु ये नागा भूमि संस्थिताः।
पाताले ये स्थिता नागाः सर्वेऽप्यत्र समाहिताः॥ 187॥
रुद्रपादार्चने युक्ताः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

(इन नागों के अतिरिक्त) अन्तरिक्ष में स्थित नाग, स्वर्ग में स्थित नाग, पर्वतों की कन्दराओं, दुर्गम दुर्गों और भूमि पर स्थित नागों सहित जो पाताल में स्थित नाग हैं, वे सभी के सभी रुद्र के चरणों की अर्चना में निरत हैं, वे मेरे प्रति सदा शान्ति करें।

नागिन्यो नागकन्याश्च तथा नागकुमारिकाः॥ 188॥
शिवभक्ताः सुमनसः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

इन नागों की रानियाँ, नागों की कन्याएँ तथा नाग कुमारियाँ सभी अपने अच्छे मन से शिव की भक्त हैं। वे सब मेरे प्रति सदा शान्ति करें।

य इदं नागसंस्थानं कीर्तयेच्छृणुयादपि॥ 189॥
न तस्य नागाहिंसन्ति विषं नाक्रमते सदा।
चिन्तितं सिध्यते नित्यं तथा पापपरिक्षयः॥ 190॥
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्ति सर्वविघ्न विवर्जिताः।

(श्रीनन्दिकेश्वर ने कहा कि) इस प्रकार यह नाग-संस्थान कहा गया है, जो कोई इसको सदा कहता अथवा सुनता है, उनको न तो नाग डसते हैं, न ही उन पर विष

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

का प्रभाव होता है। इसका चिन्तन करने पर यह सिद्ध होता है और नित्य पापों का क्षरण करता है। उनको शीघ्र ही सिद्धि भी मिलती है और समस्त विघ्नों का निवारण भी होता है।

अथ पवित्रदेवनद्यादीनां नद्यातभ्यर्थनाह —

गङ्गा पुण्या महादेवी यमुना नर्मदा तथा॥ 191॥
गोमती चाऽपि कावेरी कौशिका च सरस्वती।
ताम्रपर्णी च सरयूः वरुणादेविका तथा॥ 192॥
सर्वभूतपतिं देवं (तु) परमेशं महेश्वरम्।
पूजयन्त्यो महानद्यः शिवसद्भावभाविताः॥ 193॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं तथा पापपरिक्षयम्।
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्तु सर्वविघ्न विनाशनम्॥ 194॥

(भारतवर्ष की प्रसिद्ध पवित्र नदियों से प्रार्थना) पुण्यशीला महादेवी गंगा, यमुना, नर्मदा, गोमती, कावेरी, कौशिका, सरस्वती, ताम्रपर्णी, सरयू, वरुणा और देविका— ये सारी महानदियाँ समस्त भूत-प्राणियों के अधिपति परमेश महेश्वर की पूजा करती हैं। ये शिवभाव से भावित होकर प्रवाहमय रहती हैं। ये सभी मेरे लिए शान्ति करें और पापों का नित्य क्षय करें। सभी मुझे शीघ्रातिशीघ्र सिद्धि प्रदान करें और समस्त विघ्नों का विनाश करें।

चन्द्रभागा महापुण्या नदी गोदावरी शुभा।
सरयूर्गण्डकी श्रेष्ठा कौशिकी च सरस्वती॥ 195॥
एता नद्यो महापुण्याः शिवपादार्चने रताः।
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं शिवध्यानैक मानसाः॥ 196॥

इसी प्रकार महापुण्या चन्द्रभागा नदी, शुभातिशुभ गोदावरी, श्रेष्ठ सरयू, गण्डकी, कौशिकी और सरस्वती— ये सारी नदियाँ महापुण्या हैं, ये शिव के चरणों की अर्चना में रत हैं। ये सभी नदियाँ शिव के एकमेव ध्यान के मानस के साथ मेरे प्रति शान्ति करें।

नैरञ्जना नाम नदी शोणश्चाऽपि महानदः।
मन्दाकिनी च परमा तथा सन्निहिता शुभा॥ 197॥
एताश्चान्यश्च बह्योप भूमिदिव्यन्तरिक्षगाः।
रुद्रार्चनपरा नद्यः कुर्वन्तु मम शान्तिकम्॥ 198॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ऐसे ही निरंजना नामक नदी सहित शोण जैसे महानद और मन्दाकिनी जैसी परम प्रवाही और शुभ से सन्निहित नदियाँ— ये सभी और अन्य बहुत सी भूमि और अन्तरिक्ष में जाने वाली नदियाँ रुद्रार्चन के परायण हैं। ये सब मेरे लिए शान्ति करें।

इत्योपरान्त तीर्थात् प्रार्थनाह —

गुह्यानि यानि तीर्थानि आसुद्रात्सरांसि च।
कुर्वन्तु शान्तिकं तानि श्रीकण्ठाधिष्ठितानि तु॥ 199॥

समुद्रों से लेकर सरोवरों तक जो गुप्तातिगुप्त तीर्थ हैं, वे सभी श्रीकण्ठ के अधिष्ठित हैं। वे सब मेरे प्रति शान्ति करें।

अत्रैव धनदयक्षादीनां —

महान्वैश्रवणोदेवः यक्षराजो महर्धिकः।
यक्षकोटिपरीवारो यक्षासङ्ख्येन संयुतः॥ 200॥
महाविभव सम्पन्नो हरपादार्चने रतः।
शान्तिं करोतु मे प्रीतः पद्मपत्रायतेक्षणः॥ 201॥

(विभिन्न यक्षों से प्रार्थना) वैश्रवणदेव महान् हैं जो कि यक्षों के राजा हैं, जिनके पास यक्षों का कोटि परिवार हैं, जिनके पास असंख्य यक्षों के समूह हैं, वे महान् सम्पत्ति से सम्पन्न हैं और शिव के चरण-कमलों की पूजा में रत हैं। वे लम्बे पद्मपत्रों जैसी आँखों वाले यक्ष मेरे प्रति प्रीतिपूर्वक शान्ति करें।

माणिभद्रो महायक्षो मणिरत्नविभूषितः।
मनोहरेण हारेण कण्ठलग्नेन राजते॥ 202॥
शिवध्यानरतो नित्यं शिवपादाब्ज पूजकः।
शान्तिं करोतु मे नित्यं सर्वदोष निवारणम्॥ 203॥

इन यक्षों में माणिभद्र नामक महायक्ष मणियों के रत्नों से विभूषित रहते हैं। उनके गले में मनोहर हार पड़ा रहता है। वे शिव ध्यान में रत रहते हैं और शिव के चरण कमलों की पूजा करते हैं। वे मेरे प्रति नित्य शान्ति करें और समस्त दोषों का निवारण करें।

तस्य यक्षिण्यादीनां —

यक्षिणी यक्षकन्याभिः परिवारित विग्रहः।
रुद्रार्चनपरोभक्तः करोतु मम शान्तिकम्॥ 204॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इन यक्ष के साथ ही यक्षिणी और यक्ष कन्याओं का परिवार हैं जो रुद्र की अर्चना करने वाले भक्त हैं। वे मेरे प्रति शान्ति करें।

तत्रैव सुवीरवञ्चिकविभण्डकधृतराष्ट्रादीनां यक्षाह —

सुवीरो नाम यक्षेन्द्रो मणिकुण्डलभूषणः।
ललाटे हेमपट्टेन शोभनेव विराजितः॥ 205॥
बहुयक्षसमाकीर्णो यक्षैर्नमित विग्रहः।
शिवः परापरो नित्यं करोतु मम शान्तिकम्॥ 206॥

सुवीर नामक यक्षेन्द्र मणियों से निर्मित कुण्डलों से विभूषित रहते हैं। उनके ललाट पर सुवर्ण का पट्ट सुशोभित होता है। उनको अनेक यक्ष घेरे रहते हैं और जो स्वयं यक्षों से निर्मित विग्रह वाले हैं। ऐसे शिव की नित्य परा-अपरा पूजा करने वाले यक्ष मेरे प्रति शान्ति करें।

वञ्चिको नाम यक्षेन्द्रः कर्णिकाकटकोज्वलः।
मुकुटेन विचित्रेण केयूराभ्यां विराजितः॥ 207॥
यक्षासङ्ख्येन संयुक्तो यक्षकोटि समन्वितः।
हरार्चनरतो नित्यं करोतु मम शान्तिकम्॥ 208॥

वंचिक नामक यक्षेन्द्र जिनकी कर्णिका और कटक जैसे आभूषण बहुत उज्ज्वल हैं, जो विचित्र मुकुट और केयूर धारण किए विराजित हैं। वे असंख्य यक्षों से घिरे रहते हैं और जिनके यक्षगणों की कोटि संख्या हैं। शिव के अर्चन में तत्पर रहने वाले यक्षराजेन्द्र वंचिक मेरे प्रति शान्ति करें।

श्रीमान्विभण्डको यक्षो नानारत्नविभूषितः।
चारुणा कुण्डलेन्द्रेण कर्णे नित्यं विराजितः॥ 209॥
यक्षो यक्षपतिर्देवो यक्षसेनापतिर्बुधः।
हरपादार्चनरतः करोतु मम शान्तिकम्॥ 210॥

श्रीमान् विभण्डक नामक यक्ष नानारत्नों से विभूषित हैं। उनके कानों में सुन्दर कुण्डल नित्य शोभा देते हैं, यक्षों और यक्षपतियों के सेनापति यक्ष भगवान् शिव के चरणों की अर्चना में रत है। वे मेरे लिए शान्ति करें।

धृतराष्ट्रो महातेजाः यक्षो यक्षाधिपः प्रभु।
दिव्यपट्टांशुकच्छन्नो मणिकाञ्चनभूषितः॥ 211॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्तः शिवध्याता शिवपूजा परायणः।
शिवप्रसाद सम्पन्नः करोतु मम शान्तिकम्॥ 212॥

महातेजस्वी यक्ष धृतराष्ट्र यक्षाधिपति और स्वामी हैं। वे दिव्य रेशमी वस्त्रधारी और सुलक्षणों वाली मणियों और स्वर्णाभरणों से विभूषित हैं। वे शिव के भक्त, शिव का ध्यान करने वाले और शिवपूजा के परायण हैं। वे शिव की कृपा से सम्पन्न हैं। वे मेरे प्रति शान्ति करें।

तथा च पूर्णभद्रविरूपाक्षादीनां यक्षयक्षिण्याह —

पूर्णभद्रो महायक्षः सर्वालङ्कारभूषितः।
रत्नदीप्तेन पट्टेन हैमनातीव राजिते॥ 213॥
यक्षकोटिसहस्त्रेण परिवारित विग्रहः।
संयतो रुद्रप्रणतो रुद्रभक्तः पुनः पुनः॥ 214॥
रुद्रार्चन समुद्युक्तः करोतु मम शान्तिकम्।

पूर्णभद्र नामक महायक्ष समस्त अलंकारों से विभूषित रहते हैं। वे रत्नों की चमक बिखरने वाले पट्ट को धारण करते हैं जो सुवर्ण की तरह अत्यन्त दीप्ति लिए हैं। उनको हजारों-करोड़ों यक्ष घेरे रहते हैं। वे संयममना होकर रुद्र के प्रति प्रणीत भाव लिए हैं और बारम्बार रुद्र की भक्ति में संलग्न रहते हैं। इस प्रकार वे रुद्रार्चना में तत्पर रहते हैं। वे मेरे प्रति शान्ति करें।

विरूपाक्षश्च यक्षेन्द्रः श्वेतवासा महाद्युतिः॥ 215॥
चारुकाञ्चनमालाभिः किङ्किणीरवकान्विते।
विभूषितस्सदाकालं वरदानैकतत्परः॥ 216॥
रुद्रपूजापरो नित्यं करोतु मम शान्तिकम्।

यक्षेन्द्र विरूपाक्ष श्वेत वस्त्रों में महान चमक बिखरने वाले हैं। वे सुवर्ण निर्मित सुन्दर मालाएँ धारण करते हैं जिनकी घुघरियाँ झनकार करती रहती हैं। वे सदा ही विभूषित रहते हैं और एकमेव वरदान देने में ही तत्पर रहते हैं तथा नित्य रुद्रपूजा में रत रहते हैं। वे मेरे लिए शान्ति करें।

अन्तरिक्षगता यक्षा ये यक्षाः स्वर्ग संस्थिताः॥ 217॥
गिरिकन्दरदुर्गेषु यक्षाः पातालवासिनः।
नानारूपयुता यक्षाः शिवभक्ता दृढव्रताः॥ 218॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

योगैश्वर्ययुताः सर्वे शिवपूजा समुत्सुकाः।
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं शान्ताः शान्तेन चेतसा ॥ 219 ॥

इसी प्रकार वे निधिपति यक्ष जो अन्तरिक्षगत हैं, जो स्वर्ग में संस्थित हैं, पर्वतों की कन्दराओं, दुर्गम दुर्गों और पाताल में निवास करने वाले हैं तथा अन्य विविधरूपों को धारण किए रहते हैं, वे समस्त यक्ष शिवभक्ति के प्रति दृढ़ हैं। वे योग प्रदत्त ऐश्वर्य से संयुक्त हैं और सारे के सारे शिवपूजा में उद्यत रहते हैं। वे सदैव शान्तमना होकर उदार चित्त से मेरे प्रति शान्ति करें।

यक्षिण्यो विविधाकाराः तथा यक्षकुमारिकाः।
यक्षकन्या महाभागाः शिवार्चन परायणाः ॥ 220 ॥
शान्तिं स्वस्त्ययनं क्षेमं बलं कल्याणमुत्तमम्।
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्तु नित्यमेव समाहिताः ॥ 221 ॥

इन यक्षों के साथ ही अपनी-अपनी विविधाकार यक्षिणियाँ, यक्षकुमारियाँ और महाभाग यक्षकन्याएँ भी शिवार्चन के परायण हैं। वे शान्ति, स्वस्त्यन, क्षेम, बल और उत्तम कल्याण की प्रदायक हों तथा नित्य समाहित होकर शीघ्र ही मुझे सिद्धि प्रदान करें।

पर्वतगणाह —

पर्वताः सर्वतः सर्वे पर्वत्यश्च महर्धिकाः।
शिवभक्ता सदाकालं क्षेमं कुर्वन्तु मे सदा ॥ 222 ॥

पृथ्वी पर सर्वत्र विद्यमान वे पर्वत (कुलचलादि पर्वत) जो कि पर्वतों में महान् हैं, सदाकाल शिवभक्ति में लीन रहते हैं, वे मेरे प्रति सदैव क्षेमजनक हों।

तथोदधिगणाह —

समुद्राः सर्वतः सर्वे ये चान्ये सागरा भुवि।
रुद्रार्चनपरानित्यं कुर्वन्तु मम शान्तिकम् ॥ 223 ॥

पृथ्वी के कोने-कोने जो (क्षीर-दध्यादि) समुद्र हैं और अन्य जो सागर हैं, वे नित्य रुद्र की अर्चना में निरत हैं, वे मेरे प्रति शान्ति करें।

नानास्थलस्थ राक्षसगणादीनां —

राक्षसाः सर्वतः सर्वे राक्षसा घोररूपिणः।
राक्षसा ये महावीर्या राक्षसाश्च महाबलाः ॥ 224 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स्वर्गं जलस्थानागयक्षा ये तु येऽन्तरिक्षे तु राक्षसाः।
पाताले राक्षसा ये तु नित्यं रुद्रार्चने रताः॥ 225॥
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं सततं शिवभाविताः।

सर्वत्र विद्यमान रहने वाले राक्षसगण (भी स्मरणीय है), वे राक्षस घोर रूप वाले हैं। सभी राक्षसगण महान पराक्रमी और महाबली हैं। इनमें से स्वर्ग में रहने वाले, जलस्थानों में रहने वाले, अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले और पाताल में रहने वाले राक्षस— ये सभी नित्य रुद्रार्चन में रत रहते हैं। वे सतत शिवभाव से भावित होकर मेरे प्रति नित्य शान्ति करें।

भैरवस्यस्मरणमाह —

भैरवं यस्य रूपं तु प्रेतभस्मावगुण्ठितम्॥ 226॥
तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

भैरव जो कि मुर्दों की भस्म को देह पर मले रहते हैं और दैविक तेज से सम्पन्न हैं, मेरे प्रति सदा ही शान्ति करें।

योगिन्याडाकिन्यादीनां —

नित्यमुज्ज्वलवेषेण योगिन्योऽथ महाबलाः॥ 227॥
अनेकरूपधारिण्य डाकिन्यश्च महर्धिकाः।
रुद्रप्रणामपरमा रुद्रपूजारताः सदा॥ 228॥
रुद्रैकाहितचेतस्काः शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

नित्य प्रति उज्ज्वल वेष में दिखाई देने वाली (चौंसठ) योगिनियाँ महाबलशाली हैं। इसी प्रकार अनेक रूपों को धारण करने वाली डाकिन्या महर्धिका हैं। वे सदा ही रुद्र के प्रति परम प्रणाम और रुद्र पूजा में रत रहती हैं। वे रुद्र के हित में एकचित्त होकर मेरे प्रति सदा शान्ति करें।

अन्तरिक्षगतायाश्च डाकिन्यः स्वर्ग संस्थिताः॥ 229॥
पाताले भूतले याश्च गिरिदुर्गेषु याः स्थिताः।
तृतीयं लोचनं यस्य त्रिशूलं भस्मभासुरम्॥ 230॥
तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

ऐसी डाकिनियाँ जो अन्तरिक्षगामी हैं और जो स्वर्गभूमि पर संस्थित हैं, जो पाताललोक, भूतल और पर्वतीय दुर्गों में स्थित रहती हैं तथा तीन नेत्र सहित त्रिशूल लिए भस्म मले रहती हैं, वे अपने दैविक तेज से मेरे प्रति सदा शान्ति करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नानालोकस्थ पिशाचगणादीनां —

ये पिशाचा महात्मानः पिशाचाः कामरूपिणः।
अन्तरिक्षे पिशाचा ये स्वर्गे ये च पिशाचकाः॥ 232॥
भूतले ये पिशाचाश्च पातालतलवासिनः।
नानारूपधराः सर्वे सर्वे च गुणवत्तराः॥ 233॥
चन्द्रार्धं मस्तके यस्य भस्म यस्य विभूषणम्।
तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा॥ 234॥

इसी प्रकार अन्य देवयोनियों में पिशाच महात्मा हैं। वे पिशाच काम रूप में रहते हैं। ऐसे पिशाच जो अन्तरिक्षचारी हैं और स्वर्ग के निवासी हैं, भूतल और पातालतल के निवासी हैं, जो अन्य विविध रूपों को धारण करते हैं और अपने-अपने उत्तम गुणों के धारक हैं, जो अपने सिर पर अर्धचन्द्र को धारण करते हैं और भस्म को अंगाभूषण बनाते हैं, ऐसे तेजोमय देव मेरे प्रति सदा ही शान्ति करें।

महारूपाभूतगणाह —

सर्वे भूता महारूपाः सर्वे भूता महोज्वलाः।
अन्तरिक्षे च ये भूता ये भूता दिवि संस्थिताः॥ 235॥
पाताले भूतले ये तु भूता भूति विधायिनः।
खट्वाङ्ग यस्य विमलं त्रिशूलं करपल्लवे॥ 236॥
तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

सभी भूतगण महारूप वाले हैं, सभी महोज्ज्वल हैं। वे भूतगण जो अन्तरिक्ष में रहते हैं, जो स्वर्ग में निवास करते हैं, जो पाताललोक और भूतल पर रहते हुए वैभव का विधान करते हैं, जो अपने हाथों में खट्वांग नामक आयुध और विमल त्रिशूल लिए रहते हैं, उनका दिव्य तेज मेरे पर सदा शान्ति करें।

नानारूपधारीप्रेतगणाह —

प्रेताः प्रेतगणाः सर्वे ये प्रेताः सर्वतोमुखाः॥ 237॥
अतिदीप्ताश्च ये प्रेता ये प्रेता रुधिराशनाः।
अन्तरिक्षे तु ये प्रेता ये प्रेताः स्वर्गवासिनः॥ 238॥
पातले भूतले प्रेता ये प्रेताः कामरूपिणः।
श्मशाननिलयो यस्य वृषभो यस्य वाहनम्॥ 239॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

(शिव के साथ रहने वाले) प्रेत और प्रेतों के गण (स्मरणीय हैं)। सभी प्रेतगण सभी ओर मुखों की रचना वाले हैं। वे प्रेत बहुत चमक लिए रहते हैं और रुधिर का आहार करते हैं। ऐसे प्रेत जो अन्तरिक्ष में रहते हैं और जो स्वर्ग में निवास करते हैं, जो पाताल और भूतल पर कामरूप में रहते हैं, जिनका निवास श्मशान है और बैल जिनका वाहन हैं, वे देवों के तेजवाले मेरे प्रति सदा ही शान्ति करें।

इत्यमनन्तर ज्वरग्रहादीनां —

अपस्मारा ग्रहाः सर्वे सर्वे चाऽपि ज्वरग्रहाः॥ 240॥
गर्भबालग्रहा ये तु नानारोगग्रहाश्च ये।
अन्तरिक्षे ग्रहा ये तु ये च स्वर्गे ग्रहोत्तमाः॥ 241॥
भूपाताले ग्रहा ये च ये ग्रहाः सर्वतोदिशि।
कण्ठे यस्य महानीलभूषणं यस्य पन्नगाः॥ 242॥
तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु मे सदा।

इसी प्रकार विभिन्न व्याधियों वाले अपस्मार जैसे ग्रह और अन्य ज्वरादि ग्रह, गर्भ तथा बालग्रह तथा नाना रोगों के ग्रह, अन्तरिक्षचारी ग्रह और स्वर्ग में रहने वाले उत्तम ग्रह, भूमि और पाताल में रहने वाले तथा दसों ही दिशाओं में रहने वाले ग्रह जिनके कण्ठ में महानील के आभरण और नाग रहते हैं, वे देव अपने तेज से मेरे प्रति सदा शान्ति करें।

इति देवादयः सर्वे शिवध्यान विधायिनः॥ 243॥
कुर्वन्तु शान्तिं जगतः शिवभक्तेषु सर्वदा।
इत्युक्त्वा देवदेवस्य सन्निधौ च कृताञ्जलिः॥ 244॥
शिवध्यानपरो भूत्वा भक्त्या स्तोत्रमुदैरयत्।

इस तरह से सभी देवगणादि शिव के ध्यान के विधायक हैं। वे जगत के शिवभक्तों के लिए सदा शान्ति करें। इनके प्रति ऐसा ही कहकर (शान्ति के इच्छुकजन को) देवदेवस्य शिव के सान्निध्य में हाथ जोड़ना चाहिए और शिव के ध्यान के परायण होकर प्रसन्नता और भक्तिपूर्वक (अधोलिखित) स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

तत्रैव शिवस्तोत्र —

जयात्मयोगसंस्थाय जय संशुद्धचेतसे॥ 245॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जय दानैकशूराय जयेशाय नमोऽस्तु ते।

आत्मयोग में स्थित रहने वाले (शिव की) जय हो। उन शुद्ध चेतस की जय हो। एकमेव दानवीर की जय हो। जयेश के प्रति नमस्कार हैं।

जयोत्तमाय देवाय जय कल्याणदायिने ॥ 246 ॥
जय प्रकटदेवाय जय जप्याय ते नमः।

उत्तम देव की जय हो। कल्याणदायी की जय हो। प्रकट देव की जय हो। आप जप्य की जय हो। आपको नमस्कार है।

जय लक्ष्मीविधानाय जय कान्ति विधायिने ॥ 247 ॥
जय वाक्य विशुद्धाय अजिताय नमो नमः।

लक्ष्मी विधानाय की जय हो, कान्ति के विधायक की जय हो, विशुद्ध वाक्य वाले शिव की जय हो। अजित को नमन, नमस्कार हैं।

जय त्रिशूलहस्ताय जय खट्वाङ्गधारिणे ॥ 248 ॥
जय निर्मितलोकाय जय रूपाय ते नमः।

हाथ में त्रिशूल धारण करने वाले की जय हो। खट्वांग धारण करने वाले की जय हो। लोकों को निर्मित करने वाले की जय हो। जय रूप में आपको नमस्कार है।

जय कान्तार्धदेहाय जय चन्द्रार्धधारिणे ॥ 249 ॥
जय देवादिदेवाय महादेवाय ते नमः।

कान्ता के अर्धनारीश्वर रूप की जय हो। अर्धचन्द्रमा को धारण करने वाले की जय हो। देवादिदेव की जय हो। महादेव आपको नमस्कार है।

जय त्रिभुवनेशाय जय विख्यातकीर्तये ॥ 250 ॥
जयाधाराय देवाय जय कर्त्रे नमोऽस्तु ते।

त्रिभुवनेश की जय हो। विख्यात कीर्ति वाले की जय हो। आधार देव की जय हो। सृष्टिकर्ता की जय हो। आपको नमस्कार है।

जय निर्मल देहाय जय सर्वार्थकारिणे ॥ 251 ॥
जय मन्मथनाशाय ईशानाय नमो नमः।

निर्मल देही की जय हो। सर्वार्थकारी की जय हो। मन्मथ (कामदेव) का नाश करने वाले की जय हो। ईशान शिव को नमस्कार है।

ब्रह्मविष्णिवन्द्ररूपाय जय शान्ताय ते नमः ॥ 252 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जय जातविशुद्धाय सर्वव्यापिन्नमोऽस्तु ते।

ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र रूप वाले की जय हो। शान्त स्वरूप आपको नमस्कार है। विशुद्धजात की जय हो। सर्वव्यापि आपको नमस्कार हो।

इत्योपरान्त शान्याऽध्याय पाठफलमाह —

इत्येतच्छान्तिकाऽध्यायं यः पठेच्छृणुयादऽपि॥ 253॥
विधूय सर्वपापानि शिवलोके महीयते।

इस शान्तिकाध्याय को जो व्यक्ति पढ़ता है अथवा सुनता है, उसके सभी पाप इसके प्रभाव से धुल जाते हैं और वह शिवलोक को प्राप्त होता है।

कन्यार्थी लभते कन्यां जयकामो जयं लभेत्॥ 254॥
अर्थकामोलभेदर्थं पुत्रकामो बहून्सुतान्।

जिनको कन्या वांछित हो, उनको कन्या मिलती है, विजय के इच्छुकों को विजय मिलती है। धन की कामना रखने वालों को धन की प्राप्ति होती है और पुत्र के इच्छुकों को बहुत से पुत्रों की उपलब्धि होती है।

विद्यार्थी लभते विद्यां योगार्थी योगमाप्नुयात्॥ 255॥
गर्भिणी लभते पुत्रं कन्या विन्दति सत्पतिम्।

विद्यार्थियों को विद्या मिलती है, योग के इच्छुकों को योग की सिद्धि होती है। गर्भिणियों को पुत्र प्राप्ति होती है और कन्याओं को अच्छा पति मिलता है।

यान्यान्कामयते कामान्मानवः श्रवणादिह॥ 256॥
तान्सर्वान्शीघ्रमाप्नोति देवानां च प्रियो भवेत्।

जिस मानव की जो कामना हो, वह सब इसके सुनने से शीघ्र ही पूरी होती है और वह देवताओं का प्रिय हो जाता है।

श्रुत्वाऽध्यायमिदं पुण्यं सङ्ग्रामं प्रविशेन्नृपः॥ 257॥
विनिर्जित्याशु तान्शत्रून् कल्याणैः परिपूर्यते।
अक्षयं मोदतेऽकालं अतिरस्कृतशासनः॥ 258॥
व्याधिभिर्नाभिभूयेत् पुत्र पौत्रैः प्रतिष्ठितः।

जो इस अध्याय को सुनता है, उसका पुण्य यह है कि यदि इसे सुनकर राजा समरांगण में प्रवेश करता है तो वह शत्रुओं को जीतकर कल्याण की पूर्ति करता है और अक्षयकाल तक आनन्द करता है और बिना किसी बाधा के अनन्तकाल तक

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शासन संचालित करता है। उसे कोई व्याधि नहीं होती, उसके पुत्र-पौत्रों की प्रतिष्ठा बढ़ती है।

पठ्यमानमिदं पुण्यं यमुद्दिश्य पठेन्नरः॥ 259॥
तस्य रोगा न बाधन्ते वातपित्तादि सम्भवाः।
नाकाले मरणं तस्य न सर्पैश्चाऽपि दंश्यते॥ 260॥
न विषं क्रमते देहे न जलान्धत्वमूकतः।
नहि सर्पभयं तस्य न चोत्पातभयं तथा॥ 261॥
नाभिचारकृतैर्दोषैः लिप्यते स कदाचन।

इस अध्याय को पढ़ने से पुण्य मिलता है और जो जिस उद्देश्य को लेकर इसको पढ़ता है (उसे वह मिलता है)। इसके श्रोता को वात, पित्तादि से होने वाले रोग कभी बाधक नहीं बनते। उसका अकाल मरण नहीं होता, उसे सर्प भी डसते हैं। न तो उसकी देह में विष फैलता है, न ही आगजनी होती है। उसे न अन्धत्व होता है और न ही मूकता होती है। उसको सर्पों का भय नहीं रहता। चोरों-तस्करों के उत्पातों का भय भी नहीं रहता। उस पर अभिचार का दोष भी नहीं चलता, वह कभी इसमें लिप्त नहीं होता है।

यत्पुण्यं सर्वतीर्थानां गङ्गादीनां विशेषतः॥ 262॥
तत्पुण्यं कोटिगुणितं प्राप्नोति श्रवणादिह।
दशानां राजसूयानां अग्निष्टोम शतस्य च॥ 263॥
श्रवणात्फलमाप्नोति कोटिकोटि गुणोत्तरम्।
अवध्यः सर्वदेवानां अन्येषां च विशेषतः॥ 264॥
जीवेद्वर्षशतं साग्रं सर्वव्याधि विवर्जितः।

विशेषकर गंगा नदी (के तटवर्ती) सब तीर्थों की प्राप्ति से जो पुण्य मिलता है, उससे करोड़ गुना पुण्य इस अध्याय को केवल सुनने से सुलभ होता है। दस राजसूय और सौ अग्निष्टोम यज्ञों का फल केवल इसके श्रवण मात्र से मिलता है, वह फल भी करोड़-करोड़ गुना होकर प्राप्त होता है। वह सभी देवताओं के लिए अवध्य हो जाता है तो अन्य क्या विशेष है! वह सौ वर्ष तक जीवित रहता है, जीवनावधि में उसे कोई व्याधि नहीं होती।

अन्यदप्याह —

गोघ्नश्चैव कृतघ्नश्च ब्रह्महा गुरुतल्पगः॥ 265॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शरणागतघाती च मित्रविश्रम्भघातकः।
दुष्टः पापसमाचारः पितृहा मातृहा तथा॥ 266॥
श्रवणादस्य भावेन मुच्यते सर्वपातकैः।

अपने जीवन में गाय की हत्या करने वाला, कृतघ्न, ब्रह्महत्या करने वाला, गुरुपत्नीगमनकर्ता, शरणागत घातक, मित्र सहित विश्रामघातक, दुष्ट, पापी, पितृहत्यारा तथा मातृहत्यारा— कोई भी क्यों न हो, इस अध्याय को भावपूर्वक सुनने से समस्त पापों से छूट जाता है।[1]

शान्त्याऽध्यायमिदं पुण्यं न देयं यस्य कस्यचित्॥ 267॥
शिवभक्ते सदा देयं शिवेन कथितं पुरा।
नित्यं खचितचित्तः स्याच्छक्ति व्याघात वर्जितः॥ 268॥
सर्वकाम समृद्धस्तु यः पठेत दिने दिने।

इस शान्त्याध्याय का पुण्य किसी ऐसे-वैसे को नहीं देना चाहिए बल्कि शिवभक्त को ही देना चाहिए, ऐसा भगवान् शिव ने पूर्व में कहा है। नित्य एकाग्रचित्त होकर बिना कोई जोर लगाए अर्थात् सहजमना होकर पढ़ा जाना चाहिए। इस तरह पढ़ने से दिन-दिन समस्त कामों में समृद्धि होती जाती है।

इति शिवधर्मपुराणे शान्त्याऽध्यायः षष्ठः।[2]

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में छठवाँ शान्त्याध्याय पूरा हुआ।

*****

---

1. ये फल शिवनाम के सहस्रनाम के जाप से मिलने का प्रसंग लिंगपुराण में आया है— यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्ब्राह्मणानपि। अश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्नोति वै द्विजाः॥ ब्रह्मघ्नश्च सुरापश्च स्तेयी च गुरुतल्पगः। शरणागतघाती च मित्रविश्वासघातकः। मातृहा पितृहा चैव वीरहा भ्रूणहा तथा। संवत्सरं क्रमाज्जप्त्वा त्रिसन्ध्यं शङ्कराश्रमे। देवमिष्ट्वा त्रिसन्ध्यं च सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ (पूर्व. 65, 172-175)
2. 'इति शान्त्याध्यायः षष्ठः' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ सप्तमोऽध्यायः ॥ 7 ॥

भगवान् शिव के स्मरण और जप का फल, दान से शिवलोक प्राप्ति, ईशान पूजा की महिमा व शिवधर्म सहित शिवमन्त्र की महिमा और फलाफल का श्रीनन्दिकेश्वर द्वारा श्रीसनत्कुमार के प्रति कथन

अथ ईशानपूजार्चनमाहात्म्यमाह। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

ये स्मरन्ति सदाकालं ईशानं पूजयन्ति च।
रुद्रलोकात्परिभ्रष्टा विज्ञेयास्ते गणेश्वराः ॥ 1 ॥

(श्रीनन्दिकेश्वर सनत्कुमार से बोले कि) जो सदा-सर्वदा ईशान महादेव की पूजा करते हैं, वे रुद्रलोक से परिभ्रष्ट भी हो जाते हैं तो गणेश्वर गिने जाते हैं।

अग्निहोत्राश्च वेदाश्च यज्ञाश्च बहुदक्षिणाः।
शिवलिङ्गार्चनस्यैते कोट्यंशेनाऽपि नो समाः ॥ 2 ॥

अग्निहोत्र और वैदिक सत्रों, यज्ञों के अवसर पर बहुत सी दक्षिणा दी गई हो तो वे सब शिवलिंगार्चन से करोड़वाँ अंश भी बराबरी नहीं कर सकती है।

सदा यजति यज्ञेन सदा दानं प्रयच्छति।
सदा स वायुभक्ष्यः स्याद्यस्सदार्चयते शिवम् ॥ 3 ॥

नित्य यज्ञ से यजन करना, सदा दान देना और सदा वायु का आहार करना जैसी तपस्याएँ नित्य शिव की अर्चना के बराबर है।

यः शिवं पूजयेन्नित्यं प्रणयेद्वापि भक्तितः।
तस्य योगं च मोक्षं च शिवः प्रीतः प्रयच्छति ॥ 4 ॥

जो नित्य प्रति शिव की पूजा करते हैं, उनको भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं, उनको योग की सिद्धि और मोक्ष का फल शिव की कृपा से प्राप्त होता है।

मासश्च तिथ्यावसरेणार्चनफलमाह —

यः कुर्यादर्चनं मासं एकाहारो जितेन्द्रियः।
स च यत्फलमाप्नोति न तत्सर्वैर्महामखैः ॥ 5 ॥

जो भक्त एक मास तक एक समय आहार लेता हुआ जितेन्द्रिय रहकर

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भगवान् शिव की अर्चना करता है, वह जो फल प्राप्त करता है, वह बड़े-बड़े यज्ञों से भी नहीं मिल सकता है।

पौर्णमास्याममवास्यां चतुर्दश्यष्टमीषु च।
स्नापयित्वाम्भसा लिङ्गं सर्वयज्ञफलं लभेत्॥ 6॥

पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी और अष्टमी तिथियों को शिवलिंग को जल से स्नान कराने से सभी यज्ञों का फल प्राप्त हो जाता है।

कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां उपोष्य परमेश्वरे।
प्रातर्मध्याह्नपूजां च चतुर्दश्यां समारभेत्॥ 7॥
पञ्चगव्यं सकृत्पीत्वा हविर्भुञ्जीत वाग्यतः।
दशानामश्वमेधानां फलं प्राप्नोति मानवः॥ 8॥

महीने में कृष्णपक्ष की त्रयोदशी को उपवास करके परमेश्वर की प्रातःकाल और मध्याह्न की पूजा चतुर्दशी को करें। तदोपरान्त पंचगव्य का पान कर वाणी से हवि करें, तो उस व्यक्ति को दस अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

उपोष्य कृष्णाष्टम्यां च योऽर्चयित्वा तु शङ्करम्।
प्राप्नोति परं स्थानं यत्र देवो महेश्वरः॥ 9॥

कृष्णपक्ष की अष्टमी को उपवास रखकर जो शंकर भगवान् का अर्चन करता है, वह परमधाम को प्राप्त करता है, जहाँ कि महेश्वर देव विराजित हैं।

ब्रह्मचारी शुचिर्भूत्वा त्रिसंध्यं योऽर्चयेच्छिवम्।
त्रिसप्तकुलमुद्धृत्य$_{21}$ शिवलोके महीयते॥ 10॥

ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए पवित्र होकर जो भगवान् शिव की तीनों ही संध्याओं में पूजा-अर्चना करता है, वह अपने इक्कीस कुलों का उद्धार करता हुआ अन्त में शिवलोक को प्राप्त होता है।

दानादिपूर्वक पर्वकालेन शिवपूजनाह —

दानोपवासनियमैः पूजाजागरभोजनैः।
महास्नानादिविधिना शिवं पर्वसु पूजयेत्॥ 11॥

जिस दिन पर्वकाल (14, 8, 15, 30 एवं सङ्क्रान्ति) पड़ता हो, उस दिन दान, उपवास के नियमों का पालन करके पूजा, जागरण और भोजन सहित महास्नानादि की विधि से शिव का पर्व-पूजन करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पर्वकालर्चनपुण्यफलमाह —

यावच्च सर्वकालेषु यावदर्चयते शिवम्।
तावत्कालार्चनात्पुण्यं यत्तत्पर्वार्चनं लभेत्॥ 12॥

जीवन के पूरे काल में भगवान् शिव की पूजा करने से जो पुण्य मिलता है, वह केवल पर्वकाल में पूजा करने से प्राप्त हो जाता है।

तस्मात्पर्वसु यत्नेन यथा विभव विस्तरैः।
पूजनीयः शिवो नित्यं महापुण्यजिघृक्षया॥ 13॥

इसलिए महापुण्य की अभिलाषा करने वाले को पर्वकाल में जैसा सम्पत्ति-सामर्थ्य हो, भगवान् शिव की नित्य पूजा करनी चाहिए।

विषुवादिसङ्क्रान्त्यार्चनफलमाह —

नैरन्तर्येण षण्मासं विधिना पूज्य शङ्करम्।
पुण्यं तदेव सकलं लभते विषुवार्चनात्॥ 14॥
एवमेव फलं ज्ञेयं ग्रहणायनयोरऽपि।
सङ्क्रान्तौ च दिनच्छिद्रे षडशीतिमुखे च॥ 15॥

नित्य-निरन्तर छह मास तक भगवान् शंकर की विधिपूर्वक पूजा करने से जो पुण्य मिलता है, वह समस्त पुण्यलाभ अकेली विषुव-संज्ञक संक्रान्ति (तुला और मेष की, जब दिन एवं रात बराबर होते हैं) पर पूजन से मिल जाता है। इसी प्रकार का फल ग्रहणकाल और अयनों (मकर में सौम्यायन और कर्क राशि में याम्यायन) की संक्रान्ति का जानना चाहिए। इसी प्रकार दिनच्छिद्र षडशीत्यायन संक्रान्ति (मिथुन, कन्या, धन और मीन) में शिवपूजा का फल होता है।

कार्तिकपूर्णिमावसरे पूजाफलमाह —

मासैश्चतुर्भिर्यत्पुण्यं विधिना पूज्य शङ्करम्।

---

1. नारदसंहिता में कहा गया है कि स्थिर राशियों वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ में संक्रान्ति हो तो वह विष्णुपद कही जाती है। द्विस्वभावराशियों मिथुन, कन्या, धन और मीन में संक्रान्ति हो तो षडशीत्यानन होती है। तुला व मेष राशियों में होने पर विषुव संक्रान्ति होती है— स्थिरभेष्वर्कसङ्क्रान्तिर्ज्ञेया विष्णुपदाह्वया। षडशीतिमुख ज्ञेयं द्विस्वभावेषु राशिषु। तुलाधराजयोर्ज्ञेयं विषुवं सूर्यसङ्क्रमे॥ (मुहूर्तचिन्तामणि पीयूषधाराटीका, 3, 4) पञ्चसिद्धान्तिका में वराहमिहिर ने कहा है— मेषतुलादौ विषुवत् षडशीतिमुखं तुलादिभागेषु। षड्शीतिमुखेषु रवेः पितृदिवसा येऽवशेषाः स्युः। षडशीतिमुखं कन्याचतुर्दशेऽष्टादशे च मिथुनस्य। मीनस्य द्वाविंशे षडविंशे कार्मुकस्यांशे॥ (पञ्चसिद्धान्तिका 3, 23-24)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्कार्तिक्यां भवेत्पुण्यं पौर्णमास्यां शिवार्चनात्॥ 16 ॥
पुण्यं तदेव फल्गुन्यां आषाढ्यां च तथैव च।
चातुर्मास्यार्चनादेतत् महापुण्य फलप्रदम्॥ 17 ॥

चातुर्मास पर्यन्त विधिपूर्वक शिव की जो पूजा की जाती है, शिवार्चना का वही फल कार्तिक मास की पूर्णिमा के अवसर पर शिव की पूजा से मिल जाता है। इसी तरह का फल फाल्गुनी पूर्णिमा का है और वैसा ही पुण्य आषाढ़ की पूर्णिमा का है। चातुर्मास में शिवार्चना महापुण्यफल प्रदायक है।

माघादीनां मासपर्यन्तशिवार्चनाफलमाह —

माघमासे समुद्युक्तः त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेच्छिवम्।
लभेत् षाण्मासिकं पुण्यं मासेनैव न संशयः॥ 18 ॥

माघ मास में तीनों ही सन्ध्याओं में जो शिव की अर्चना करता है, वह एक ही महीने में छह मास की पूजाओं के बराबर पुण्य का भागीदार होता हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

यथा माघे तथाषाढे मासे चैव तु कार्तिके।
त्रिषु पुण्यं समुज्ज्ञेयं मासेष्वेतेषु यत्कृतम्॥ 19 ॥

जैसा माघ मास का पुण्य कहा गया है, वैसा ही आषाढ़ और कार्तिक मास का होता है। इन तीनों ही मासों के पूजाकृत्य के पुण्य को समान समझना चाहिए।

चातुर्मास्यकृतं पुण्यं पुण्यमासार्चनाल्लभेत्।
चैत्रफल्गुनयोः पुण्यं द्विमासजनितं भवेत्॥ 20 ॥

चातुर्मास में किए जाने वाला पुण्य उपर्युक्त महीनों में की गई अर्चना से प्राप्त हो जाता है। चैत्र और फाल्गुन मासों का पुण्य दो मास जन्य होता है।

चतुर्दश्याममावास्यां पौर्णमास्यां च पाक्षिकम्।
पुण्यमष्टगुणं ज्ञेयं अष्टम्यां योऽर्चयेच्छिवम्॥ 21 ॥

जो फल चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा तथा पाक्षिक का कहा गया है, उसकी अपेक्षा अष्टमी पर की गई शिवपूजा का फल आठ गुना जानना चाहिए।

शिवपूजनफलमाह —

यः प्रदद्याद्गवां लक्षं दोग्धीणां वेदपारगे।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एकाहमर्चयेल्लिङ्गं तस्य पुण्यं ततोऽधिकम्॥ 22॥[1]

दूधारू गायों का वेदों के विद्वानों को किए गए दान से जो पुण्य प्राप्त होता है, उससे कहीं अधिक पुण्यफल एक मास की शिवलिंग की अर्चना से मिल जाता है।

मासे मासे तु योऽश्नीयात् यावज्जीवं सकृन्नरः।
यश्चार्चयेत्सकृल्लिङ्गं सममेतन्न संशयः॥ 23॥

इस संसार में जितने भी जीव है, उनको प्रतिमास भोजन करवाने का जो पुण्य है, वह पुण्यफल एक मास पर्यन्त शिवलिंग की अर्चना से सुलभ होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

एतेन क्रमयोगेन फलवृद्धिर्दिने दिने।
ज्ञेया संवत्सरस्याऽपि यावद्वा कालमर्चयेत्॥ 24॥

इस प्रकार जितने काल तक अर्चना की जाती है, क्रमयोग से दिन-दिन फल वृद्धि होती जाती है, उसे संवत्सर जितनी समझनी चाहिए।

यः पुनः सङ्गमुत्सृज्य शिवमब्दं प्रपूजयेत्।
नैरन्तर्याच्छतगुणं तस्यपुण्यं विवर्धते॥ 25॥

पुनः इस संग-गणना को छोड़कर शिव का एक वर्ष तक निरन्तर अर्चन किया जाए तो उसका सौ गुना पुण्य बढ़ता है।

पञ्चाशद्गुणितं पुण्यं अब्दार्धं योऽर्चयेच्छिवम्।
ऋतावृतौ तदर्धं स्यात् मासे मासे तदर्धकम्॥ 26॥

इसी प्रकार पचास गुना पुण्य उसको मिलता है जो आधे वर्ष तक शिवार्चना करता है। छहों ऋतुओं की आवृत्ति अर्थात् दो-दो मास में उसका आधा पुण्य होता है और मास पर्यन्त अर्चना से उससे भी आधा होता है।

मासार्धमपि यो लिङ्गं नैरन्तर्येण पूजयेत्।
पुरुषोत्तमः स विज्ञेयः नैरन्तर्यं हि दुष्करम्॥ 27॥

जो आधे मास भी शिवलिंग की निरन्तर पूजा करता है, वह पुरुषोत्तम ही समझने के योग्य होता है क्योंकि निरन्तर पूजन बहुत ही दुष्कर है।

---

1. पाराशरमाधवीय में इसके बाद यह श्लोक आया है— सकृत्पूजयते यस्तु भगवन्तमुमापतिम्। अस्याश्वमेधादधिकं फलं भवति नान्यथा। (वीरमित्रोदय लक्षणप्रकाशे, पृष्ठ 623)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रातर्कालेपूजनफलमाह —

प्रातरुत्थाय यो लिङ्गं भक्त्या पूजयते सकृत्।
कपिलानां शतं दत्वा यत्पुण्यं तदवाप्नुयात्॥ 28॥

जो व्यक्ति सुबह उठकर भक्तिपूर्वक शिवलिंग का पूजन करता है, उसको सौ कपिला गायों के दान के बराबर पुण्यफल मिलता है।

मध्याह्नेपूजनफलमाह —

मध्यं दिनगते सूर्ये शिवं यः प्रतिपूजयेत्।
सम्पूर्णां पृथिवीं दत्वा यत्फलं तदवाप्नुयात्॥ 29॥

मध्याह्न के सूर्य में जो शिवपूजन करता है, उसको सम्पूर्ण पृथ्वी के दान जितना पुण्यफल मिलता है।

सूर्यास्तकालेपूजनफलमाह —

वारुणीमाश्रिते सूर्ये यः शिवं सम्यगर्चयेत्।
गवां शतसहस्रस्य तत्तस्य फलमाप्नुयात्॥ 30॥

पश्चिम दिशा में जब सूर्य हो अर्थात् सूर्यास्त की वेला में शिव की विधिपूर्वक पूजा करने से हजार गायों के दान के बराबर फल सुलभ होता है।

अर्धरात्रेपूजनफलमाह —

यो लिङ्गमर्धरात्रे तु शुचिर्भूत्वा प्रपूजयेत्।
सम्यगिष्टं शतं तेन यज्ञानां धर्मतो भवेत्॥ 31॥

अर्धरात्रि में पवित्र होकर जो शिवलिंग की अर्चना करता है, उसको सैकड़ों इष्ट यज्ञों के बराबर धर्मपुण्य का लाभ मिलता है।

एवं सर्वासु वेलासु अवेलास्वऽपि शङ्करम्।
सम्पूजयेन्नरो भक्त्या सर्वान्कामानवाप्नुयात्॥ 32॥

इस प्रकार सभी वेलाओं और अवेलाओं (प्रातः वेला, मध्याह्न वेला, सायं वेला तथा मध्यरात्रि सहित अन्य कालों में) जो शंकर की भक्तिपूर्वक पूजा करता है, उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

लिङ्गप्रति नमस्कारस्पर्शार्चनञ्च फलमाह —

शिवलिङ्गं महापुण्यं सर्वदेव नमस्कृतम्।
यः स्पृशेदऽपि पाणिभ्यां न स पापैः प्रलिप्यते॥ 33॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवलिंग सचमुच महापुण्य है, उसको प्रणाम करने से सभी देवताओं को प्रणाम हो जाता है। जो उसका अपने हाथों से स्पर्श करता है, वह कभी पापों से लिप्त नहीं होता है।

मेरुमन्दरमात्रोऽपि राशिः पापस्य कर्मणः।
ईश्वरं वैद्यमासाद्य नश्यते दुष्टरोगवत्॥ 34॥

जिस व्यक्ति के पापकर्मों की राशि मेरु और मन्दर पहाड़ों जितनी हो, उस समस्त पाप राशि का ईश्वर रूपेण वैद्य द्वारा उपचार करने से दुष्टरोगों की तरह शमन हो जाता है।

न ते भूयः प्रयास्यन्ति योनिमार्गं सुसङ्कटम्।
काञ्चनं मेरुमात्रं च सर्वान्दत्वा वसुन्धराम्॥ 35॥
क्रमान्मोक्षं गमिष्यन्ति ये नरा लिङ्गमाश्रिताः।

ऐसे भक्त को फिर कभी योनिमार्ग के संकट का सामना नहीं करना पड़ता अर्थात् वह जन्म लेने के झंझट से बच जाता है। मेरु पर्वत के बराबर सोना और सम्पूर्ण पृथ्वी जितना दान करके भी जो लोग शिवलिंग का आश्रय ग्रहण करते हैं, वे क्रम से मोक्ष को जाते हैं।

शिवार्चनरतो नित्यं महापातक सम्भवैः॥ 36॥
दोषैः कृतैर्नलिप्येत पद्मपत्रमिवाम्भसा।

शिवार्चन में लगे रहने वाले नित्य महापातक होने पर भी किए गए दोष से लिप्त नहीं होते है, जैसे कि पानी में रहकर भी कमलपत्र पानी में नहीं भीगते है।

छित्वा हित्वा च भूतानि हत्वा सर्वमिदं जगत्॥ 37॥
यजेदेकं विरूपाक्षं न स पापैः प्रलिप्यते।
सर्वावस्था गतो वाऽपि युक्तो वा सर्वपातकैः॥ 38॥
शिवमिष्ट्वा नरः सोऽपि प्रयाति परमं पदम्।

चाहे प्राणियों का हनन और छेदन किया हो, चाहे सारे ही जगत का हनन कर दिया गया हो, केवल एक विरूपाक्ष शिव का यजन करना चाहिए। इससे कोई पाप से लिप्त नहीं होता है। सभी अवस्थाओं में युक्त हुए पापों के बावजूद शिव की कृपा से व्यक्ति परमपद प्राप्त करता है।

सर्वस्थाने शिवपूजननिर्देशमाह —

सरित्समुद्रतीरेषु वनेषूपवनेषु च॥ 39॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गिरिशृङ्गेषु तुङ्गेषु गह्वरोपवनेषु च।
पुष्करिण्यां तटाकेषु तीर्थायत संश्रये॥ 40॥
यत्र वा रमते बुद्धिः तत्रैव शिवमर्चयेत्।
सर्वयज्ञेषु यत्पुण्यं तल्लभेन्नात्र संशयः॥ 41॥

नदियों और समुद्रों के तीर पर, वनों और उपवनों में, पहाड़ों की ऊँची चोटियों और गह्वर वनखण्डों में, पोखरियों, जलाशयों, तीर्थों के संश्रय में— जहाँ कहीं मन व बुद्धि को अच्छा लगता हो, वहाँ पर शिव की अर्चना की जा सकती है। इससे समस्त यज्ञों का पुण्यफल मिलता हे, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

यः पुनः स्थान सङ्कल्प्यं उत्सृज्य शिवमर्चयेत्।
सोऽश्वमेधफलं सर्वं लभते नात्र संशयः॥ 42॥
यस्तु सर्वत्र सम्पूज्य सविशेषं सविस्तरम्।
अश्वमेधायुतं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥ 43॥

पुनः स्मरणीय है कि जो जिस किसी स्थान पर शिवपूजा का संकल्प करता है, वहाँ से उठकर अर्चना करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है, इसमें कोई संशय नहीं है। जो सर्वत्र विशेष विस्तार के साथ शिवपूजा करता है, वह निःसन्देह दस हजार अश्वमेध यज्ञों के बराबर पुण्यलाभ करता है।

समन्त्रार्चनफलमाह —

यस्तमर्चयते भक्त्या तस्य पुण्यं ततोऽधिकम्।
अयं विनैव मन्त्रेण पुण्यराशिः प्रकीर्तितः॥ 44॥
स्यादयं मन्त्रसंयुक्तं पुण्यं शतगुणाधिकम्।
तस्मान्मन्त्रेण शर्वाय ज्ञानगन्धप्रदाधिकम्॥ 45॥
क्षितिं गाश्चैव रत्नानि हेमाढ्यं च निवेदयेत्।

इसमें भी यदि भक्तिपूर्वक शिवार्चना की जाती है तो उसका पुण्य अधिक होता है। इसी प्रकार बिना मन्त्रों के भी की गई पूजा जब पुण्यराशि कही गई है तो मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) के साथ की गई पूजा सौ गुना अधिक पुण्यदायी होती है। इसलिए शिव की पूजा मन्त्र सहित करनी चाहिए क्योंकि ज्ञान गन्धप्रद (! अभिमानमय) अधिक है। अतएव भूमि, गोधन, रत्न, सुवर्णादि धातु निवेदित करके शिवपूजन करें।

षडक्षरमन्त्रस्वरूपञ्च माहात्म्याह —

ज्ञेयो नमः शिवायेति मन्त्र सर्वार्थसाधकः॥ 46॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वमात्राऽधिकश्चाऽयं ओङ्काराद्यः षडक्षरः।

यह जान लेना चाहिए कि 'नमः शिवाय' यह मन्त्र सर्वार्थ साधक है। इसमें सभी मात्राएँ अधिक हैं और इसके आरम्भ में ॐ लगाकर इसे षडक्षर बनाएँ अर्थात् इससे 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र बनेगा।

शिवेनान्तबर्हिर्व्याप्तं सर्वमेतच्चराचरम्॥ 47॥
जगदोमिति यद्भूते तस्मादोमिति संस्मृतम्।

शिव ही अन्तर और बाहर तथा समस्त चराचर में व्याप्त है, इसलिए यह जगत कहा जाता है, इसी अर्थ में ॐ स्मरणीय है।

अयमर्धेन तिसृभिः मात्राभिः परिगीयते॥ 48॥
ब्रह्माहरिश्च रुद्रश्च मात्रास्तिस्त्रः प्रकीर्तिताः।

इसमें आधी मात्रा कही गई है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र ये तीनों तीन मात्राओं में कहे गए है।

दक्षिणाङ्गे भवो ब्रह्मा हरिर्वामाङ्ग सम्भवः॥ 49॥
हृदयान्नीलरुद्रश्च ब्रह्मविष्णु प्रबोधकः।

दक्षिण अंग में ब्रह्मा है, वाम भाग में विष्णु विद्यमान हैं। हृदयप्रदेश में नील रुद्र है जो ब्रह्मा और विष्णु के प्रबोधक हैं।

जगत्सृष्टिकरो ब्रह्मा विष्णुर्लोकविमोहकः॥ 50॥
अनुग्रहपरो नित्यं नीलरुद्रः शिवात्मकः।
त्रिभिरेतैर्जगद् व्याप्तं कारणैरात्ममूर्तिभिः॥ 51॥

जगत की सृष्टि करने वाले ब्रह्मा है, लोक को मोहित करने वाले विष्णु हैं और नित्य अनुग्रह करने वाले नीलरुद्र शिवात्मक हैं। इन तीनों से ही यह जगत व्याप्त है, वे आत्ममूर्ति के स्वयं कारण हैं।

तिस्त्रो मात्राः शिवस्यैताः सर्वलोक प्रपूजिताः।
एता एव त्रयोवेदाः त्रयो लोकास्त्रयोग्नयः॥ 52॥
त्रयो गुणास्त्रिवर्गाश्च यच्चान्यज्जगति स्थितम्।
अर्धमात्रापरो रुद्रः शिवः परमकारणम्॥ 53॥
तस्मादेतत्समुत्पन्नं जगतः कारणत्रयम्।

अतः शिव की केवल तीसरी मात्रा भी सभी लोकों में पूजित होती है। ये तीनों

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ही तीन वेद हैं, तीनों तीन लोक और तीनों तीन अग्नियाँ हैं। तीनों तीन गुण, तीनों तीन वर्ग है, यही जगत की अन्य स्थिति हैं। आधी मात्रा वाले रुद्र शिव ही परम कारण हैं। इसीलिए इनसे उत्पन्न जगत तीन कारणों का है।

नमस्कारनिर्देशाह —

सर्वयज्ञात्परः शुद्धो नमस्कारो महामखः॥ 54॥
नमस्कारात्म यज्ञेन तस्मात्सम्पूजयेच्छिवम्।

वह सब यज्ञों से विशुद्ध हैं और नमस्कार करने योग्य महायज्ञ हैं। अतः नमस्कारपूर्वक आत्मयज्ञ से शिव का पूजन करना चाहिए।

अज्ञानमशिवत्वं स्यात् सर्वदुःखालयं यतः॥ 55॥
सुभावात्तदवाप्तं हि यस्माद्रुद्रः परः शिवः।
नमः शिवाय शान्ताय कारणत्रय हेतवे॥ 56॥

अज्ञान ही अशिव है जो समस्त दुखों का घर है। सुभाव रखने से ही वे प्राप्त होते हैं। रुद्र ही परम शिव है। उन शान्त स्वरूप को नमस्कार हैं जो उत्पत्ति, पालन और प्रलय— इन तीनों ही कारणों के हेतु हैं।

निवेदयेन्ममात्मानं उक्त्वैवं परमेश्वरे।
उक्त्वो नमः शिवायेति मुच्यते सर्वबन्धनात्॥ 57॥

अपने आपको उन परमेश्वर को निवेदित (अर्पण, शरणाश्रित) कर दें और नमः शिवाय कहें जिससे समस्त बन्धनों से मुक्ति मिल जाती है।

यस्मात्तस्मात्सदा मन्त्रं ओङ्काराद्यमनुस्मरेत्।
सर्वदा सर्वकार्येषु क्षान्तिं निष्ठीवनादिषु॥ 58॥
यान्त्यां नमः शिवायेति गिरमुक्त्वा शिवं पदम्।

इस अर्थ में सदा ही मन्त्र के आरम्भ में ॐ लगाकर शिव का स्मरण करें और सर्वदा सभी कार्यों में आरम्भ से ही क्षान्तिपूर्ण (धैर्यवान, सहिष्णु) और निष्ठावान रहें। अन्त में नमः शिवाय यह कहें। इससे शिवपद की सिद्धि कही गई है।

शिवमन्त्रस्मरणफलमाह —

यः स्वपन् प्रतिबद्धश्च प्राणान्ते तु समुत्स्मरेत्॥ 59॥
तद्य नमः शिवायेति स गच्छेत्परमां गतिम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो शिवभक्त शयनकाल में भी इस मन्त्र के प्रति प्रतिबद्ध हो और प्राणान्त के समय भी 'नमः शिवाय' यह कहता हो, वह परमगति को प्राप्त करता है।

शाठ्येनाऽपि नमस्कारः प्रयुक्तः शूलपाणये॥ 60॥
संसारस्थूलबन्धानां उद्वेष्टनकरो भवेत्।

यदि शठतापूर्वक भी शिव को मन्त्रपूर्वक नमस्कार किया जाता है तो शूलपाणि भगवान् शिव उसके इस संसार के सुदृढ़ बन्धनों को खोल देते हैं।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा॥ 61॥
यः स्मरेद्देवमीशानं स ब्राह्याभ्यन्तरः शुचिः।

चाहे अपवित्र हो अथवा पवित्र, समस्त अवस्थाओं और समस्त गतियों में जो ईशानदेव शिव का स्मरण करता है, वह भीतर और बाहर से पवित्र हो जाता है।

स्मरणादेव रुद्रस्य पापसङ्घात पञ्जरम्॥ 62॥
शतधा भेदमायाति गिरिर्वज्रहतो यथा।

रुद्रदेव के स्मरण मात्र से ही पापों का संघात रूपी पिंजरा सैकड़ों खण्ड-खण्ड होकर रह जाता है, मानो कोई पहाड़ वज्र की चोट से हत हुआ हो।

सर्वेषां शिवभक्तानां अशेषार्थ प्रसिद्धये॥ 63॥
मन्त्रमाहशिवः साक्षात् अशेषार्थ निबन्धनम्।

सभी शिवभक्तों के लिए कुछ भी बाकी नहीं रहता, ऐसा प्रसिद्ध है। मन्त्रोच्चार करना ही साक्षात् शिव है, जिससे कोई बन्धन शेष नहीं रहता।

सद्बीजं सर्वविद्यानां आद्यं ब्रह्म परात्परम्॥ 64॥
सर्वार्थ साधकं मन्त्रं शिवसूत्रं षडक्षरम्।
भाष्यमस्यैव रुद्रस्य सर्वज्ञानानि शम्भुना॥ 65॥

यह सभी विद्याओं का सद्बीज है और आदि ब्रह्म परात्पर है। यह मन्त्र सर्वार्थ साधक है। यह शिवसूत्र षडाक्षरी 'ॐ नमः शिवाय' है। इसी में रुद्र का भाष्य और शम्भु का समस्त ज्ञान निहित है।

पश्चात्परापराणीय भक्तार्थं गदितानि तु।
तस्मादनेन मन्त्रेण प्रकुर्वीत शिवार्चनम्॥ 66॥

तदोपरान्त ही परा और अपराणीय भक्तों के लिए ज्ञातव्य कहा गया है। इसलिए इस मन्त्र से शिव का अर्चना करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सन्ध्यानां च जपेदेनं सर्वपाप विशुद्धये।
गृहाच्छतगुणं पुण्यं सन्ध्यायां च शिवालये॥ 67॥
शिवदक्षिणमूर्तौ तु तत्पुण्यमयुताऽधिकम्।
तस्माच्छिवालये जप्यं आचरेच्छान्तमानसः॥ 68॥

इस मन्त्र का सन्ध्याकाल में जाप करने से समस्त पापों से निवृत्ति मिलती है। गृह में जाप करने से सौ गुना पुण्य मिलता है। सन्ध्याकाल में शिवालय, विशेषकर दक्षिणामूर्ति शिव के सान्निध्य में जाप करने से दस हजार से भी अधिक गुना पुण्य मिलता है। इसलिए शिवमन्त्र का जाप शान्त मानस होकर शिवालय में शिव सन्निधि में ही करना उचित है।

शिवमन्त्रेण सततं सर्वकामप्रसिद्धये।
जितेन्द्रियः शान्तमनाः शिवमन्त्रेण पूजयेत्॥ 69॥

शिव मन्त्र के जाप से लगातार सभी काम सिद्ध होते हैं। जितेन्द्रिय और शान्तमना रहकर शिव का मन्त्र से पूजन करना चाहिए।

शैवदेशेपि वसेदयमाह —

न तस्य शक्यते वक्तुं पुण्यं वर्षशतैरऽपि।
एतावच्छक्यते वक्तुं यस्मिन्देशे वसेदयम्॥ 70॥
सोऽपि देशो भवेत्पूतः किं पुनस्तस्य बान्धवाः।
यस्यायमन्नमश्नाति एतस्य परिचारकाः॥ 71॥
तेऽपीह तत्समा ज्ञेयाः तैर्विना न शिवार्चनम्।

इस मन्त्र का पुण्य इतना अधिक है कि उसको सैकड़ों वर्षों तक कहते रहने से भी कहा नहीं जा सकता है। इसके पुण्यों का कथन-विस्तार जहाँ होता हो, वैसे ही देश में निवास करना चाहिए। इससे प्रभाव से वह देश भी पवित्र होता है तो फिर उसके बन्धुओं का तो कहना ही क्या है! जो इस मन्त्र से नमस्कार करते हैं (या जय-जय शिव कहते हैं), वे परिचारक भी उसके समान ही समझे जाने चाहिए। बिना उनकी सहायता के तो शिवार्चन नहीं हो पाता।

तत्र देशे न दुर्भिक्षं न च मारी प्रवर्तते॥ 72॥
नाकाले म्रियते राजा पूज्यते यत्र शङ्करः।

जहाँ पर शिव की पूजा होती है, उस देश में न तो दुर्भिक्ष पड़ता है न महामारी जैसी व्याधियाँ फैलती है और न ही असमय राजा का मरण होता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रुद्रमन्त्राद्दीक्षितकृतार्चनफलमाह —

दीक्षित्तस्सूत्र मन्त्रज्ञो योर्चयेत सदाशिवम्॥ 73॥
स यत्फलमवाप्नोति तदेकाग्रमनाः शृणु।

(श्रीनन्दिकेश्वर ने कहा— हे सनत्कुमार!) जो रुद्रमन्त्र-दीक्षित होकर सदाशिव की अर्चना करता है, उसे जो फल मिलता है, उसके बारे में एकाग्रमन होकर सुनो।

सर्ववेदेषु यत्प्रोक्तं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्॥ 74॥
तत्फलं कोटिगुणितं स लभेन्नात्र संशयः।

चारों ही वेदों में समस्त यज्ञों का जो फल कहा गया है, वह फल करोड़ गुना होकर रुद्रमन्त्र से दीक्षित होने वाले को मिलता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

यः शिवं पूजयेन्नित्यं अन्त्यजोऽथ जितेन्द्रियम्॥ 75॥
भवभावसमायुक्तः सोऽपि गच्छेत्परां गतिम्।

जो व्यक्ति नित्य शिवपूजा करता है, वह चाहे अन्त्यज (अछूत) हो अथवा जितेन्द्रिय ब्राह्मण हो, वह भावपूर्ण होकर परमगति को प्राप्त करता है।

इत्यमनन्तर शिवभक्त वैशिष्ट्यमाह —

नोपनीतसहस्रेभ्यो ब्रह्मचारी विशिष्यते॥ 76॥
ब्रह्मचारि सहस्रेभ्यो गृहस्थो हि विशिष्यते।
गृहसंस्थ सहस्रेभ्यो ह्यग्निहोत्री विशिष्यते॥ 77॥
अग्निहोत्रि सहस्रेभ्यः सत्रयाजी विशिष्यते।
सत्रयाजिसहस्रेभ्यः सर्वविद्यार्थपारगः॥ 78॥
सर्वविद्यार्थवित्कोट्या शिवभक्तो विशिष्यते।
तस्मादेवं शिवं भक्त्या पूजयेच्छान्तमानसः॥ 79॥

हजारों उपवीत वालों की अपेक्षा ब्रह्मचारी विशेष होता है और हजारों ब्रह्मचारियों की अपेक्षा गृहस्थ विशेष होता है। गृह में निवास करने वाले हजारों जनों की अपेक्षा अग्निहोत्री विशेष होता है और हजारों अग्निहोत्रियों की अपेक्षा सत्रयाजी विशेष होता है। हजारों सत्रयाजियों की अपेक्षा सर्वविद्याओं के अर्थों के जानकार विशेष होते हैं। ऐसे करोड़ों सर्वविद्यार्थविदों की अपेक्षा शिवभक्त विशेष होता है। अतएव भगवान् शिव की भक्तिपूर्वक शान्तमानस होकर पूजा करनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्तगुणमाह —

शिवभक्तो जितक्रोधः शिवज्ञानपरायणः।
मैत्रीकारुणिकोपेतः प्राप्नोति परमं पदम्॥ 80॥

जो शिवभक्त क्रोध को जीतकर शिवज्ञान के परायण होता है, वह मैत्री और करुणा के भाव से युक्त होकर परमपद को प्राप्त करता है।

क्षणार्धेनापि यत्पुण्यं कुर्यान्मैत्री सुभावितः।
न तद्वर्षशते नाऽपि तपो यज्ञशतैरऽपि॥ 81॥

आधे क्षण मात्र के लिए भी भावपूर्ण मैत्री का जो पुण्य होता है, वह पुण्य सैकड़ों वर्षों के तप और सैकड़ों यज्ञ करने पर भी प्राप्त नहीं हो पाता।

सर्वप्राणिषु कारुण्यं दीनानाथेषु भावयेत्।
सुख प्राणिषु मैत्रीस्यान्मुदिताः पुण्यशीलिषु॥ 82॥

सभी प्राणियों पर कारुण्य (दया) का भाव रखें। दीन और अनाथों के प्रति सहानुभूति का भाव दिखाएँ। सुखी प्राणियों से मैत्री और पुण्यशीलों के साथ मुदिता का भाव रखें।

अपुण्यवत्सु चोपेक्षां सर्वेषां च वदेच्छिवम्।
इत्येवं पञ्चधा चित्तं भावयित्वा यजेच्छिवम्॥ 83॥

जो अपुण्यवान या पापी हैं, उन सभी के साथ उपेक्षा भाव रखें, ऐसा शिव कहते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त पाँच प्रकार के भावों (मैत्री, करुणा, सहानुभूति, मुदिता, उपेक्षा) को धारण करें और शिव का यजन करना चाहिए।

सम्पूज्य पशुभर्तारं प्रहृष्टेनान्तरात्मना।
ध्यानं कुर्याद्ययोद्दिष्टं सर्वपाप निकृन्तनम्॥ 84॥

यजन के क्रम में उन पशुपतिनाथ का पूजन करके अपने आपको प्रसन्न रखें और जिस तरह कहा गया है, वैसा ध्यान करें जिससे सपी पापों का निकृन्तन हो सके।

इष्ट्वा तु परया भक्त्या भगवन्तं महेश्वरम्।
(कृताञ्जलिपुटो भूत्वा भगवन्तं महेश्वरम्)॥ 85॥
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा स्तोत्रमेतदुदीरयेत्।

इसके लिए परमभक्तिपूर्वक इष्टदेव भगवान् महेश्वर का का पूजन करें और भगवन्त महेश्वर के सामने हाथ जोड़ें। करबद्ध होकर उनके सामने (निम्नलिखित) स्तोत्र का पाठ करना चाहिए —

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पाठोचित शिवस्तोत्रमाह —

स्तुताय स्तुतिरूपाय स्तूयमानाय सर्वदा ॥ 86 ॥
स्तुति हेतु निधानाय नमस्त्रिनयनाय ते।

आप शिव स्तुति के लिए हैं, स्तुति रूपेण हैं, सदा स्तुति के मान हैं। आप स्तुति के हेतु और निधान है। आप त्रिनेत्र को नमस्कार है।

देवाय देवदेवाय सर्वदेवैकहेतवे ॥ 87 ॥
देवानामऽपि देवाय नमो देवतमाय ते।

हे देव! आप देवों के भी देव हैं, सभी देवताओं के हेतु हैं। देवताओं में भी आप देव हैं, आप देवतम को नमस्कार है।

नमस्ते ज्ञानरूपाय ज्ञानज्ञानैकहेतवे ॥ 88 ॥
ज्ञानविज्ञानशुद्धा नित्यं ज्ञानतमाय ते।

आप ज्ञानरूप को नमस्कार है, आप ही ज्ञान और अज्ञान के हेतु हैं। आप ज्ञान, विज्ञान के शुद्ध स्वरूप और आप ही नित्य ज्ञानतम है।

सूक्ष्माय सूक्ष्मरूपाय सूक्ष्मज्ञानैक हेतवे ॥ 89 ॥
सूक्ष्माणामपि सूक्ष्माय नमः सूक्ष्मतमाय ते।

आप सूक्ष्म हैं, सूक्ष्मरूप हैं और आप सूक्ष्मज्ञान के हेतु हैं। आप सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हैं। आप सूक्ष्मतम को नमस्कार है।

दिव्याय दिव्यरूपाय परमार्थैक हेतवे ॥ 90 ॥
परापर विमुक्ताय नमः परतमाय ते।

आप दिव्य हैं, दिव्यरूप हैं और परमार्थ के हेतु हैं। पर और अपर से विमुक्त हैं। आप परतम को नमस्कार है।

पूज्याय पूज्यरूपाय सर्वपूज्यैकहेतवे ॥ 91 ॥
पूज्यानामपि पूज्याय नमः पूज्यतमाय ते।

आप पूज्य हैं, पूज्यरूप हैं, सभी पूज्यों के हेतु हैं। पूज्यों में भी पूज्य आप पूज्यतम को नमस्कार है।

नित्याय नित्यरूपाय सर्व नित्यैक हेतवे ॥ 92 ॥
दीप्तानामपि दीप्ताय सर्व नित्यैक हेतवे।
नित्यानाऽपि नित्याय नमो नित्यतमाय ते ॥ 93 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

। आप नित्य हैं, आप नित्यरूप हैं, आप सर्वनित्य के एक हेतु हैं। दीप्तों में भी दीप्त को और सर्वनित्य के एक हेतु हैं। नित्यों में भी नित्य आप नित्यतम शिव को नमस्कार है।

दीप्ताय दीप्तरूपाय सर्वदीप्त्यैक हेतवे।
दीप्तानामपि दीप्ताय नमो दीप्ततमाय ते॥ 94॥

आप दीप्त हैं, दीप्तरूप हैं, सर्वदीप्तों के एक हेतु हैं। दीप्तों में भी दीप्त आप दीप्ततम को नमस्कार है।

साराय सारसाराय सर्वसारैक हेतवे।
साराणामपि साराय नमः सारतमाय ते॥ 95॥

आप सार हैं, सारों के सार हैं, आप सर्वसारों के एक हेतु हैं। सारों में भी सार आप सारतम को नमस्कार है।

शक्ताय शक्तिरूपाय सर्वशक्त्यैक हेतवे।
शक्तानामपि शक्ताय नमः शाक्ततमाय ते॥ 96॥

आप शक्ताय हैं, शक्तिरूप हैं, सर्वशक्त्यों के एक हेतु हैं। आप शक्त्यों में शक्त्याय हैं। आप शाक्ततम् को नमस्कार है।

शुद्धाय शुद्धरूपाय सर्वशुध्यैक हेतवे।
शुद्धानामपि शुद्धाय नमः शुद्धतमाय ते॥ 97॥

आप शुद्धाय हैं, शुद्ध रूप हैं, सर्वशुद्धों के एक हेतु हैं। आप शुद्धों में शुद्ध हैं। आप शुद्धतम को नमस्कार है।

सर्वमन्त्रशरीराय सर्वमन्त्रैक हेतवे।
मन्त्राणामपि मन्त्राय नमो मन्त्रतमाय ते॥ 98॥

आप समस्त मन्त्रों के शरीर हैं, सभी मन्त्रों के एक हेतु हैं। आप मन्त्रों में भी मन्त्र हैं, आप मन्त्रतम को नमस्कार है।

व्योम प्रमाण रूपाय ईशानाय नमो नमः।
व्योम प्रमाण रूपाय पुरुषाय नमो नमः॥ 99॥

आकाश के प्रमाण रूप ईश को नमन है, नमस्कार है। आप आकाश प्रमाण रूप पुरुषोत्तम हैं। आपको नमन है, नमस्कार है।

व्योम प्रमाणाकारा अघोराय नमो नमः।
व्योम प्रमाण रूपाय व्योमेशाय नमो नमः॥ 100॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आप आकाश के प्रमाणाकार हैं, अघोर को नमन है, नमस्कार है। आकाश के प्रमाण रूप वाले व्योमेश हैं। आपको नमन है, नमस्कार है।

व्योम प्रमाण सद्याय सद्येशाय नमो नमः।
व्योम प्रमाण विद्याय विद्येशाय नमो नमः ॥ 101 ॥

आप आकाश के प्रमाण हैं, सद्य हैं, सद्येशाय को नमन है, नमस्कार है। आप आकाश प्रमाण विद्य हैं, आप विद्येशाय को नमन है, नमस्कार है।

व्योम प्रमाण मोक्षाय मोक्षेशाय नमो नमः।
व्योम प्रमाण विश्वाय विश्वेशाय नमो नमः ॥ 102 ॥

आप आकाश के प्रमाण हैं, मोक्ष हैं, आप मोक्षेश को नमन है, नमस्कार है। आप आकाश प्रमाण विश्वाय हैं। आप विश्वेशाय को नमन है, नमस्कार है।

व्योम प्रमाण देहाय बहुदेहाय ते नमः।
देहासङ्ख्येय युक्ताय विश्वेशाय नमो नमः ॥ 103 ॥

आप आकाश प्रमाण हैं, देह हैं, आप बहुदेहाय को नमन है, नमस्कार है। आप असंख्य देहयुक्त हैं। आप विश्वेशाय को नमन है, नमस्कार है।

एककालद्विकालाय बहुकालाय ते नमः।
कालासङ्ख्येन युक्ताय (कालकालाय ते नमः) ॥ 104 ॥

आप एक काल हैं, द्विकाल हैं। आप बहुकाल को नमस्कार है। आप असंख्य काल युक्त हैं। आप काल और अकाल हैं, आपको नमस्कार है।

(एकजिह्वद्विजिह्वाय) बहुजिह्वाय ते नमः।
जिह्वाय जिह्वासंस्थाय त्रिनेत्राय नमो नमः ॥ 105 ॥

आप एक जिह्वा हैं, द्वि जिह्वा हैं। आप बहुजिह्वा को नमस्कार है। आप जिह्वा हैं, आप जिह्वा संस्थाय हैं। आप त्रिनेत्र को नमन है, नमस्कार है।

एककर्णद्विकर्णाय बहुकर्णाय ते नमः।
कर्णासङ्ख्येययुक्ताय शङ्कराय नमो नमः ॥ 106 ॥

आप एक कर्ण हैं, द्वि कर्ण हैं। आप बहुकर्ण को नमस्कार है। आप असंख्य कर्णों से युक्त हैं, आप शंकर को नमन है, नमस्कार है।

एकनासद्विनासाय बहुनासाय ते नमः।
नासासङ्ख्येययुक्ताय (रुद्ररूपाय नमो नमः) ॥ 107 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आप एक नासा हैं, द्वि नासा हैं। आप बहुनासिका को नमस्कार है। आप असंख्य नासायुक्त हैं। आप रुद्ररूप को नमन है, नमस्कार है।

(एकदंष्ट्रद्विदंष्ट्राय) बहुदंष्ट्राय ते नमः।
दंष्ट्रासङ्ख्येययुक्ताय महेशाय नमो नमः॥ 108॥

आप एक दाढ़ हैं, द्वि दाढ़ हैं। आप बहुदाढ़ को नमस्कार है। आप असंख्य दाढ़ युक्त हैं। आप महेश को नमन है, नमस्कार है।

एकनेत्रद्विनेत्राय बहुनेत्राय ते नमः।
नेत्रासङ्ख्येययुक्ताय ईशा(नाय नमो नमः॥ 109॥

आप एक नेत्र हैं, द्वि नेत्र हैं। आप बहुनेत्र को नमस्कार है। आप असंख्य नेत्रों से युक्त हैं। आप ईश को नमन है, नमस्कार है।

एकवक्त्रद्विवक्त्राय ब)हुवक्त्राय ते नमः।
वक्त्रासङ्ख्येययुक्ताय परमेशाय ते नमः॥ 110॥

आप एक मुख हैं, द्वि मुख हैं। आप बहुमुख को नमस्कार है। आप असंख्य मुखों से युक्त हैं। आप परमेशाय को नमन है, नमस्कार है।

एकहस्तद्विहस्ताय बहुहस्ताय ते नमः।
हस्तासङ्ख्येययुक्ताय शङ्क(राय नमो नमः)॥ 111॥

आप एक हस्त हैं, द्वि हस्त हैं। आप बहुहस्त को नमस्कार है। आप असंख्य हस्तों से युक्त हैं। आप शंकर को नमन है, नमस्कार है।

एकशस्त्रद्विशस्त्राय बहुशस्त्राय ते नमः।
शस्त्रासङ्ख्येययुक्ताय ईशानाय नमो नमः॥ 112॥

आप एक शस्त्र हैं, द्वि शस्त्र हैं। आप बहुशस्त्र को नमस्कार है। आप असंख्य शस्त्रों से युक्त हैं। आप ईश को नमन है, नमस्कार है।

एकपादद्विपादाय बहुपादाय ते नमः।
पादासङ्ख्येययुक्ताय महादेव नमोऽस्तु ते॥ 113॥

आप एक पाद हैं, द्वि पाद हैं। आप बहुपाद को नमस्कार है। आप असंख्य पादों से युक्त हैं। आप महादेव को नमन है, नमस्कार है।

नमस्तेऽस्तु महायोगिन्! नमस्तेऽस्तु महाबल!।
नमस्तेऽस्तु महेशान! नमस्तेऽस्तु महोत्तम!॥ 114॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आप महायोगी को नमस्कार है। महाबली को नमस्कार है। महेशान को नमस्कार है। महोत्तम को नमस्कार है।

नमस्तेऽस्तु महारूप! नमस्तेऽस्तु सदाशिव!।
नमस्तेऽस्तु सदाशुद्ध! [आर्तिहर नमो नमः]॥ 115॥

आप महारूप को नमस्कार है। सदाशिव को नमस्कार है। सदाशुद्ध को नमस्कार है। आर्तिहर को नमन है, नमस्कार है।

सर्वात्मने नमस्तुभ्यं नमस्तेऽस्तु सदाभव!।
नमस्ते भगवन्छान्त! नमस्ते भगवन्ध्रुव!॥ 116॥

सर्वात्मन! आपको नमस्कार है। सदाभव को नमस्कार है। शान्तभगवान्! आपको नमस्कार है। भगवन् ध्रुव! आपको नमस्कार है।

नमस्ते भगवन्दीप्त! नमस्ते भगवन्हर!।
अजिताय नमस्तुभ्यं भस्माङ्गाय नमो नमः॥ 117॥

दीप्त भगवन्! आपको नमस्कार है। भगवन् हर! आपको नमस्कार है। अजिताय आपको नमस्कार है। भस्माङ्गाय आपको नमन, आपको नमस्कार है।

सर्वज्ञाय नमस्तुभ्यं शाश्वताय नमोऽस्तु ते।
सम्पूज्याय नमस्तुभ्यं वरदाय नमोऽस्तु ते॥ 118॥
अनन्ताय नमस्तुभ्यं सर्वगाय नमोऽस्तु ते।

सर्वज्ञाय! आपको नमस्कार है। शाश्वताय! आपको नमस्कार है। सम्पूज्याय! आपको नमस्कार है। वरदाय! आपको नमस्कार है। अनन्ताय! आपको नमस्कार है। सर्वगाय! आपको नमस्कार है।

इत्योपरान्त स्तोत्रपाठफलमाह —

[य इमं प्रातरुत्थाय शुचिर्भूत्वा पठेन्नरः]।
विधूय सर्वपापानि रुद्रलोकं स गच्छति॥ 119॥

जो व्यक्ति प्रातः उठकर पवित्र होकर इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके समस्त पाप धुल जाते हैं और वह रुद्रलोक को जाता है।

भोगार्थी लभते भोगान् राज्यार्थी राज्यमाप्नुयात्।
कन्यार्थी लभते कन्यां योगार्थी योगमाप्नुयात्॥ 120॥

इसके पाठ से भोग के इच्छुक को भोग मिलता है, राज्यार्थी को राज्य

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

की प्राप्ति होती है, कन्या के इच्छुक को कन्या और योगार्थी को योग की प्राप्ति होती है।

[एवं स्तुतो महादेवो रुद्रजाप्येन चक्रिणा]।
बन्धनान्मुच्यते बद्धो यशोर्थी लभते यशः॥ 121॥

महादेव की यह स्तुति हैं। रुद्र के जाप का ही प्रभाव है कि इससे बन्धन में पड़ा हुआ बन्धन से मुक्त हो जाता है, यश के इच्छुक को यशलाभ होता है।

यान्यांश्चिन्तयते कामान् तान्स्तान्प्राप्नोति भावितः।
शैवं पदम वाप्नोति [शम्भुः स्वयं वचनब्रवीत्]॥ 122॥

जिसके विचार में जो-जो कामना आती है, उस-उस को वह भावपूर्वक प्राप्त करता है और अन्त में शिव के पद को पाता है, ऐसा स्वयं शिव का वचन है।

इति शिवधर्मपुराणे[1] पूजाधर्म शिवमन्त्रं नाम सप्तमोऽध्यायः॥ 7॥

इस प्रकाश शिवधर्मपुराण में पूजाधर्म और शिवमन्त्र नामक सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

*****

अथ अष्टमोऽध्यायः॥ 8॥

शिवलिंग का महत्व, शिवलिंग को चलायमान करने का निषेध, घृताभिषेक की विधि, रथयात्रा का पुण्य, ब्राह्मणभोजन का विधान, कपिला गाय के दान का फल, गाय में देवताओं के निवास स्थलों का परिचय, गौशान्ति की विधि, भूमि आदि के दान का पुण्य और अपहरण का फल इत्यादि का श्रीनन्दिकेश्वर द्वारा सनत्कुमार के प्रति कथन

अथ शिवलिङ्गमाहात्म्याह। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च।

---

1. 'शास्त्रे' इति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

लीयन्ते तानि लिङ्गे तु [1]तस्मा [ल्लिङ्ग गुरुतरतरम्]॥ 1॥

(श्रीनन्दिकेश्वर ने सनत्कुमार से कहा कि) इस पृथ्वी पर जितने तीर्थ और पुण्य-प्रासाद हैं, वे सभी लिंग में लीन होते हैं, इसीलिए वह लिंग गुरु से गुरुत्तर कहा जाता है।

[श्रौतस्मार्तस्मृतिपारगः] यज्ञैश्च दीक्षितः।
यः पूजयेन्महालिङ्ग पुण्यं सर्वार्थसिद्धिदम्॥ 2॥

चाहे श्रोत्र-स्मार्त परम्पराओं और स्मृतियों के विद्वान हो चाहे, यज्ञों का सम्पादन करने वाले दीक्षित हों, वे (यदि) महालिंग का पूजन करवाते हैं तो उसका पुण्य सर्वार्थ सिद्धियों को देने वाला है।

शतेन स्थापितं लिङ्गं सहस्त्रेण तु चालयेत्।
सुस्थितं दुःस्थितं वाऽपि शिवलिङ्गं न चालयेत्॥ 3॥[2]

लिंग को स्थापित करने के लिए सौ बार हवन करें और हजार बार हवन करके उसको चलित किया जा सकता है। शिवलिंग चाहे सुस्थित हों अथवा दुःस्थित, यूँ ही कभी शिवलिंग को चलायमान नहीं करना चाहिए।

---

1. मातृकायां इदं श्लोकस्य चतुर्थांश नोपलभ्यते।
इस प्रसंग में शैवागम शास्त्र सुप्रभेदागम में स्पष्ट किया गया है कि प्रलयकाल में जब समस्त भूतादि प्राणी जिसमें लीन हो जाते हैं और सृष्टिकाल में पुनः जिसमें से उत्पन्न होते हैं, वह लिङ्ग है— लयं गच्छन्ति भूतानि संहारे निखिलं यतः। सृष्टिकाले पुनस्सृष्टिं तस्माल्लिङ्गमुदाहतम्॥ (एलिमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकॉनोग्राफी, भाग द्वितीय, खण्ड द्वितीय, परिशिष्ट पृष्ठ 3 तथा लिङ्गपुराण 99, 8) भुवनदेवाचार्य का मत है कि आकाश को लिङ्ग कहा गया है और पृथ्वी उसकी जलहारिका पीठिका यानी योनि है। इन दोनों के बीच ही सभी भूत प्राणी होते है। इसमें सबका लय होता है, इसीलिए इसे लिङ्ग कहते हैं—आकाशं लिङ्गमित्याहुः क्षितिः स्याज्जलहारिका। तन्मध्ये सर्वभूतात्म लयानाल्लिङ्गमुच्यते॥ (अपराजितपृच्छा,196 64) इसी प्रकार स्कन्दमहापुराण में भी कहा गया है—आकाशं लिङ्गमित्याहुः पृथिवी तस्य पीठिका। आलयः सर्वदेवानां लयनालिङ्गमुच्यते॥ (वीरमित्रोदय के लक्षणप्रकाश में उद्धृत)
2. ये ही श्लोक उलटक्रम से अग्निपुराण में आए हैं और वहाँ इनके लक्षण भी बताए गए हैं— सुस्थितं दुःस्थितं वापि शिवलिङ्गं न चालयेत्। शतेन स्थापनं कुर्यात्सहस्त्रेण तु चालनम्॥ सुस्थितदुःस्थितलक्षणमपि तत्रैवोक्तम्— पूजादिभिश्च संयुक्तं जीर्णाद्यमपि सुस्थितम्। पूजया रहितं यत्तददुष्टमपि दुःस्थितम्॥ अर्थात् सुस्थापित तथा दुःस्थापि शिवलिङ्ग को चलायमान नहीं करना चाहिए। सौ बार हवन कर शिवलिङ्ग की स्थापना करें और हजार बार हवन कर पूर्वोक्त स्थिति में स्थानान्तरित करने के लिए उखाड़ना चाहिए। जीर्ण लिङ्ग की भी यदि पूजा होती हो तो वह सुस्थिर होता है (जबकि यदि नया भी हो) और पूजा नहीं होती हो तो दुःस्थित माना जाता है। (वास्तुउद्धारधोरिणी 3, 15-16) सिद्धान्तशेखर में भी स्पष्टीकरण है— सहस्राधिकहोमेन तस्य चालनमीप्सितम्। स्थापनं शतहोमेन तस्य लिङ्गस्य चोदितम्॥ (वीरमित्रोदय लक्षणप्रकाश, पृष्ठ 629)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुण्यमासे लिङ्गस्य घृतस्नपनविधिः फलमाह —

घृताभिषेकं यः कुर्याद् अहोरात्रं शिवस्य तु।
पुष्यमासे समुद्युक्तो नियतं श्लक्ष्णधारया॥ 4॥
गीतनृत्तोपहारेण शङ्खवादित्रनिःस्वनैः।
कुर्याज्जागरणं तत्र प्रदीपाद्युपशोभिते॥ 5॥
समस्तपापनिर्मुक्तः समस्तकुलसंयुतः।
समस्तकाम सम्पूर्णः समस्तगुणसंयुतः॥ 6॥
ज्वलद्भिः स महायानैः असङ्ख्येयैरनूपमैः।[1]
युक्तः शिवपुरे नित्यं मोदते शिववत्सुखी॥ 7॥

जो लोग दिन-रात शिव का घृताभिषेक करते हैं, विशेषकर तब जबकि पौष मास हो और इस कार्य के निमित्त नियमित तथा स्निग्ध धारणा की जाए और वहाँ पर गीत, नृत्तादि सहित उपहार निवेदित किए जाएँ, शंखादि वाद्यों का वादन किया जाए और इस बीच जागरण रखा जाए तथा ज्योति के अर्थ में दीपादि के प्रकाश के साथ शोभा की जाए तो वह शिवभक्त अपने समस्त पापों से छूट जाता है, साथ ही उसका सारा कुल भी पापों से मुक्त हो जाता है। उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं और सभी गुणों से युक्त हो जाते हैं। ऐसे शिवपूजक उस महायान में आरूढ़ होते हैं जो कि दीप्तिमान होता है और अनगिनत सौन्दर्य की विशेषताएँ लिए होता है। वे शिवपुर में जाते हैं और वहाँ पर शिव के समान सुखी होते हैं।

ग्रहणे विषुवे चैव पुण्येषु दिवसेषु च।
घृताभिषेकं यः कुर्यान् महापुण्यमवाप्नुयात्॥ 8॥

सूर्य या चन्द्रमा के ग्रहणकाल में विषुव (तुला और मेष राशिस्थ) सङ्क्रान्ति होने पर अथवा किसी पुण्यदायी दिवस के योग में जो घृताभिषेक करता है, उसे महापुण्य मिलता है।

तस्यावसरे दर्शनं फलमाह —

घृताभिषेकं यः पश्येत् आसमासेरुपोषितः।[2]

---

1. 'ज्वलद्भिः स महायानैरसंख्येयैर्नगोत्तमैः।' इति पाठः। (तुलनीय—हेमाद्रिकृत चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतखण्डाऽध्याय 31, पृष्ठ 912)
2. 'घृताभिषेकं यः पश्येदासमासिमुपोषितः। विधूय सर्व्वपापानि शिवलोकं स गच्छति॥' इति पाठः। (तुलनीय—उपर्युक्त व्रखण्डाऽध्याय 31, पृष्ठ 912)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विधूय सर्वपापानि शिवलोके महीयते॥ 9॥

जो व्यक्ति घृताभिषेक के अवसर पर शिव के दर्शन करता है और उसके समाप्त होने पर उपवास रखता है, वह अपने समस्त पापों को धोकर अन्त में शिवलोक को जाता है।

एकः पूजयते भक्त्या भक्त्या चान्यः प्रशस्यति।
तुल्यमेवफलं ताभ्यां भक्तिरेवाऽत्र कारणम्॥ 10॥[1]

एक व्यक्ति जो भक्तिपूर्वक शिवपूजन करता है और अन्य उसे पूजन करते हुए देखता है, उन दोनों का फल बराबर ही होता है क्योंकि भक्ति ही इसमें मुख्य कारण होती है।

पर्वावसरे महापूजां च रथयात्राऽऽयोजनम् —

यः कुर्यात्पर्वकालेषु महापूजा प्रवर्तनम्।
शिवस्य रथयात्रां वा नगरान्तः परिभ्रमात्॥ 11॥

पर्वकाल (14, 8, 15, 30 और सङ्क्रान्ति) को देखकर जो शिव की महापूजा का प्रवर्तन करता है और शिव की रथयात्रा निकालता है अथवा नगर के अन्त तक परिक्रमा कराता है (वह आगे कहे अनुसार पुण्य लाभ करता है)।

महाचित्रैः ध्वजैश्चित्रैः किङ्किणीरवकान्वितैः।
वितानध्वजमालाभिः घण्टाचामरदर्पणैः॥ 12॥

उक्त रथयात्रा, नगर भ्रमणादि के दौरान बड़े-बड़े विचित्र ध्वज हों, जिनमें किंकिणियाँ (घुघरियाँ) बँधी हुई हों जो ध्वनि करने वाली हों, ध्वज और मालाओं के साथ चँदावों की रचना हों, घण्टा बजते हों, चँवर दुलाएँ जाते हों और दर्पण साथ हों।

शङ्खभेर्यादिनिर्घोषैः गीतनाटकादि संयुतैः।
लेख्यदारुमयैर्यन्त्रैः मातृयक्षगणादिभिः॥ 13॥

उसमें शंख और भेरियों का वादन होता हो, साथ ही कलाकार गीत और नाट्य-लीलाओं की प्रस्तुति देते हों, उसमें ऐसे उत्खचित काष्ठ के यन्त्रों को भी रखा जाए, जिन पर मातृकाओं और यक्षगणादि की रचनाएँ हों।

उदकान्तोययन्त्रैश्च वह्वाश्चर्यैरनेकशः।
स्त्रीडोलाश्चक्रयन्त्रैश्च रथमन्दिरशोभितैः॥ 14॥

1. 'तुल्यमेव फलान्ताभ्यां भक्तिरेवाऽत्र कारणम्।' इति पाठः। (यथोपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उक्त शोभायात्रा के दौरान पानी और जलचलित फव्वारा आदि यन्त्रों के सहारे अनेकानेक आश्चर्यों अर्थात् ऐन्द्रजालिक कौतुकों को दिखाया जाए, स्त्रियों के झुलने के लिए चकरी चलित यन्त्र हों और उसमें चलने वाले रथमन्दिर को सुशोभित किया जाए।

दध्यन्नपानरवानाद्यैः महासत्र समायुतैः।
महाजनसमाकीर्णं यथा विभव विस्तरम्॥ 15॥

उस महासत्र में दही, अन्नाहार और पेयादि का प्रबन्ध हो और उसके लिए बहुत से जनसमाज (भीड़) को यथा अर्थ-सामर्थ्य जुटाया जाए।

सर्वदानानि पुण्यानि सर्वयज्ञफलानि च।
अत्युग्रतपसां पुण्यं सर्वतीर्थफलानि च॥ 16॥
लब्धा नरवरः श्रीमान् शिवयात्रा प्रवर्तनैः।
शिवलोके महाभोगैः शिववन्मोदते सदा॥ 17॥
तस्यान्ते देवराजत्वं सुचिरं कालमाप्नुयात्।
जम्बूद्वीपाधिपः श्रीमान् तस्यानते च भवेत्पुनः॥ 18॥

ऐसी शिवयात्रा के प्रवर्तन के फलस्वरूप आयोजक सभी दानों के पुण्य, सभी यज्ञों के फल, अत्यन्त उग्र तपस्या का पुण्य और सभी तीर्थों का फल प्राप्त करता है। ऐसी शिवयात्रा का प्रवर्तक शिवलोक में महान् भोगों को भोगता है और शिव के समान होकर वहाँ सदा आमोद-प्रमोद करता है। वहाँ पुण्य पूरे होने पर वह चिरकाल तक देवराज इन्द्र का पद प्राप्त करता है और तदोपरान्त कालक्रम से जन्म लेकर इस जम्बूद्वीप का महान् अधिपति होता है।

आलिङ्गं वेदिपर्यन्तं वादित्राद्धृतकम्बलम्।
घृतधाराफलं तस्य माघे पौर्णिम पर्वणि॥ 19॥

इसके अतिरिक्त, माघ मास की पूर्णिमा के पर्व पर वेदीपर्यन्त पूरे ही लिंग पर कम्बल को वाद्यों के वादन के बीच अर्पित करने से घृतधारा का फल होता है।

जागरं गीतनृत्ताद्यैः सकृत्कृत्वा तु पर्वणि।
मन्वन्तरशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 20॥

पर्वावसर पर रात्रि जागरण के साथ ही गीतों के गायन और नृत्त-लीलादि के सुकृत्य करने वाला सैकड़ों मन्वन्तर से आगे तक शिवलोक में निवास करने का फल पाता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्र छत्र-नाटकादीनां फलमाह —

छत्राभिरामनाट्याद्यं शिवस्यायतनाग्रतः।
सम्यक् प्रेक्षणकं दत्वा रुद्रलोके महीयते॥ 21॥
स्वरूपः सुभगः श्रीमान् परिहृष्टोऽत्र जायते।
सप्तद्वीपसमुद्रायाः क्षितेरधिपतिर्भवेत्॥ 22॥

शिवायतन अर्थात् शिवमन्दिर के आगे छत्र और सुन्दर नाट्य-लीलाओं की सधी हुई प्रस्तुति देने वाला रुद्रलोक को प्राप्त करता है। वह अच्छा रूप पाता है, सौभाग्यसिद्ध होता है और परम हर्ष को प्राप्त करता है। पुण्यस्वरूप वह सातों ही द्वीपों और समुद्रों वाली पृथ्वी का एकराट् अधिपति होता है।

अथैकपादपिष्टमयरूपादिन्यासपूर्वकं पूजनाह —

रूपं पिष्टमयं कृत्वा त्रिनेत्रं रत्नभूषितम्।
शुक्लोपवीतसंयुक्तं एकपादं विशेषतः॥ 23॥

शिवार्चना के लिए आटे से एक रूप बनाएँ और उस पर रत्नों से निर्मित तीन नेत्र लगाएँ। उसे शुक्ल यज्ञोपवीत से युक्त करें और एक पाँव का विशेषकर निर्माण करें।

दन्तेषु मौक्तिकं तस्य प्रवालं च तथोष्ठयोः।
दद्याद्वज्रं च नेत्राभ्यां वैडूर्यं वाप्य सम्भवे॥ 24॥
हेमरूप्यं च हस्ताभ्यां ताम्रं पादे च विन्यसेत्।
अण्डजैः वोण्डजैर्वस्त्रैः[1] विविधैः परिवेष्टयेत्॥ 25॥

उस पर मोतियों के दाँतों को लगाएँ। प्रवाल के अधर निर्मित करें। आँखों के लिए हीरा अथवा वैडूर्य का प्रयोग किया जाना चाहिए। सोने और चाँदी के हाथों की रचना करें और पाँव को ताँबे से तैयार करें। उसको कौशेय या कपास के बने सूती वस्त्रों से विविध प्रकार परिवेष्टित करना चाहिए।

सुभगैर्दिव्यगन्धैश्च पुष्पैश्चापि विभूषयेत्।
विविधैर्भक्ष्यभोज्याद्यैः बलिं तत्र प्रकल्पयेत्॥ 26॥

उसको नाना प्रकार की अच्छी, दिव्य गन्ध और पुष्पों से विभूषित करना

---

1. 'पौण्ड्रजैर्वस्त्रैः' इति मातृकायाम्। (तुलनीय—अण्डजानि कौशेयानि, वोण्डजानि कार्पासानि। व्रतखण्ड अध्या. 19, पृष्ठ 240)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चाहिए। पूजा के क्रम में नाना प्रकार के भक्ष्य भोजन को तैयार करके वहाँ बलि को निवेदित करना चाहिए।

भोजयेच्छिवभक्तांश्च विप्राञ्छक्त्या प्रतर्पयेत्।
प्रीयतां मे शिवो नित्यमुक्त्वा चोत्थापयेद्विजान्॥ 27॥

इसके बाद, शिवभक्तों को भोजन करवाएँ और यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन से तृप्त करें। जब भोजन से तृप्त होकर ब्राह्मण उठने लगें, तब कहें कि 'भगवान् शिव मुझ पर नित्य ही प्रेम बनाए रखें।'

तैरेव सार्धं विप्रेन्द्रैः तद्रूपं तु शिवालये।
भत्या समर्पयेद्वेद्यां शिवलिङ्ग समीपतः॥ 28॥

इस कृत्य के उपरान्त उन विप्रेन्द्रों के समान ही बनकर शिवालय में जाएँ तथा वह सामग्री शिवलिंग की वेदी के समीप भक्तिपूर्वक समर्पित कर देवें।[1]

सर्वयज्ञफलं प्राप्य सर्वदान फलानि च।
स्वरूप स्वरूप दानेन शिवलोके महीयते॥ 29॥

इससे समस्त यज्ञों का फल और समस्त दानों का फल मिलता है। इस स्वरूप दान के फलस्वरूप शिवलोक प्राप्त होता है।

इत्यमनन्तर घृतभाजनव्रतम्, बल्यार्थ सामग्रीप्रमाणादीनां —

भोजनं घृत सम्पूर्णं मधुनोपरिशोभितम्।
दद्यात्कृष्णतिलानां च प्रस्थमेकं तु मागधम्॥ 30॥
द्विगुणं तण्डुलानां तु पृथक् प्रस्थं प्रकल्पयेत्।[2]

इस अवसर पर पर्याप्त रूप से मधु और घी मिला हुआ भोजन तैयार करें और उसमें काले तिल एक मागध-प्रस्थ[3] तौल के बराबर प्रदान करें। तिल के दोगुना चावल मिलाकर अलग से प्रस्थ सामग्री तैयार करें।

---

1. 'नित्या' इति पाठः।
2. सपाठान्तर तुलनीय— भोजनं घृतसंयुक्तं मधुनोपरिशोभितम्। दद्यात् कृष्णतिलानान्तु प्रस्थमेकन्तु मागधम्॥ द्विगुणन्तण्डुलानाञ्च पृथक्प्रस्थं प्रकल्पयेत्। अण्डैवोण्डजैर्वापि विविधं परिवेष्ठितम्॥ लिङ्गं संवेष्ठ्य मन्त्रैश्च बलिमेतं निवेदयेत्। अर्चयित्वा विधानेन पौर्णमास्यां समाहितः। युगकोटिसहस्राणि शिवलोके महीयते॥ पुण्यक्षयादिहागत्य समृद्धे जायते कुले। मेधावी सुभगः श्रीमान्वेदवेदाङ्गपारगः॥ (व्रतखण्ड अध्या. 19, पृष्ठ 240-41)
3. यह पूर्वकाल में इतनी सामग्री एक मनुष्य का भोजन प्रमाण है, कहा गया है— सर्वारम्भास्तण्डुल प्रस्थमूला। एक हाथ लम्बाई, एक हाथ चौड़ाई और एक हाथ ऊँचाई अथवा गहराई जिसमें हो, वह एक घनहस्त कहा

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अण्डजैः वौण्डजैर्वस्त्रैः[1] विचित्रैः परिवेष्टियेत्॥ 31॥
एवं संवेष्ट्य वस्त्राभ्यां बलिमेवं निवेदयेत्।
अर्चयित्वा विधानेन पौर्णमास्यां विशेषतः॥ 32॥

इस सामग्री को एकाधिक रँगों वाले अण्डज या पौण्ड्रज वस्त्रों से ढँके और इस प्रकार वस्त्रों से ढँके हुए ही बलि निवेदित करनी चाहिए। इस प्रकार विधानपूर्वक पूर्णिमा को विशेष रूप से पूजा अर्चना सम्पादित करें।

युगकोटिसहस्राणि [2]शिवलोके महीयते।
पुण्यक्षयादिहागत्य समृद्धे जायते कुले॥ 33॥
मेधावी सुभगः श्रीमान् वेदवेदाङ्गपारगः।

इस अर्चना के फलस्वरूप शिवभक्त हजारों, करोड़ों युगों तक शिवलोक में निवास करता है और इन पुण्यों के क्षीण होने पर वह इस लोक में आकर धनाढ्य कुल में जन्म ग्रहण करता है और बुद्धिमान, सौभाग्यवान, सम्पत्तिशाली और वेद-वेदांगों का विद्वान होता है।

सोमव्रते ताम्रपात्रे पयदानफलमाह —

ताम्रपात्रं पयः पूर्णं कृत्वाततस्थं च काञ्चनम्॥ 34॥
प्रच्छाद्योपरिपद्मेन गन्धपुष्पार्चितं महत्।
आवेष्ट्यवस्त्रयुग्मेन नववस्त्रैश्च पूरितम्॥ 35॥
शिवभक्तद्विजं सम्यग् भोजयित्वा सदक्षिणम्।

ताँबे के एक पात्र को दूध से भरकर उसमें सुवर्ण डालें। उसको कमलपत्रों से ढँककर सुगन्ध और पुष्पों से भलीभाँति अर्चित करें। उस पर दो वस्त्रों को रखें। नए वस्त्रों से भी युक्त करके रख दें। इसके अनन्तर शिवभक्त ब्राह्मणों को अच्छी मनुहार के साथ भोजन करवाएँ और यथेष्ट दक्षिणा प्रदान करें।

जाता है। इसके नीचे, ऊपर और मध्य में मिलाकर बारह कोण होते हैं। इस तरह अन्नादि तौलने के लिए जो घनहस्त बनाया जाता है, उसे शास्त्रों में मागध प्रमाण कहा गया है। यह खारी प्रमाण है। उस खारी के सोहलवें अंश को द्रोण, द्रोण का चतुर्थांश आढ़क, आढ़क का चतुर्थांश प्रस्थ और प्रस्थ का चतुर्थांश कुडब कहा जाता है। लीलावती में आया है— हस्तोन्मितैर्विस्तृति दैर्घ्यपिण्डैर्यद् द्वादशास्रं घनहस्तसंज्ञम्। धान्यादिके यद् घनहस्तमानं शास्त्रोदिता मागधखारिका सा॥ द्रोणस्तु खार्याः खलु षोडशांशः स्यादाढको द्रोणचतुर्थभागः। प्रस्थश्चतुर्थांश इहाढकस्य प्रस्थांघ्रिराद्यैः कुडवः प्रदिष्टः॥ (लीलावती 1, 7-8)

1. 'पौण्ड्रजैवस्त्रै' इति मातृकायाम्।
2. 'पुराकोटि सहस्राणी' ति पुस्तकान्तरे पाठः। (व्रतखण्ड अध्या. 19, पृष्ठ 240)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्राच्यां समुद्गते सोमे प्रतीच्यां च रवौ गते॥ 36॥
पौर्णमास्यां तु वैशाख्यां नीत्वा पात्रं शिवाग्रतः।
प्रीयतां मे महादेवः सोममूर्तिर्जगत्पतिः॥ 37॥
इत्युक्त्वा वचनं ध्यायन् देवदेवमुमापतिम्।
तस्मै विप्राय तत्पात्रं अर्पयेद्भक्तितः शनैः॥ 38॥

ऐसे समय में जबकि जब चन्द्रमा पूर्व में उदित हों और सूर्य पश्चिम में चला गया हो, वैशाख मास की पूर्णिमा को उक्त पात्र को शिव के आगे निवेदित करें। इस अवसर पर यह कहना चाहिए— 'हे महादेव! सोममूर्ति! जगत्पति! आप मुझ पर कृपा करें।' ऐसा कहकर देवदेव उमापति शिव का ध्यान करें और उक्त पात्र को धीरे से विप्रों को भक्तिपूर्वक अर्पित कर देना चाहिए।

एतत्सोमव्रतं नाम कृत्वा रुद्रान्तिकं व्रजेत्।
रुद्रलोकात्परिभ्रष्टो भवेज्जातिस्मरो नरः॥ 39॥
पूर्वाभ्यासेन तेनैव पुनः शिवपदं व्रजेत्।

इस प्रकार यह व्रत सोमव्रत नाम से कहा गया है। इसको करने वाला रुद्र के सामीप्य के लिए गमन करता है। रुद्रलोक से परिभ्रष्ट होने पर वह ऐसे व्यक्ति के रूप में जन्म पाता है जिसको अपने पूर्वजन्म का स्मरण रहता है। वह पूर्व में किए गए अभ्यास के फलस्वरूप पुनः शिवपद को प्राप्त कर लेता है।

कार्तिकस्य पौर्णमास्यायां शिवोपवित्रारोपणम् —

पौर्णमास्यां तथा षष्ठ्यां[1] शिवं सम्पूज्य यत्नतः॥ 40॥
उपवीतं शिवे दद्याच्छिवभक्तांश्च भोजयेत्।
पुनरेवं तु कार्त्तिक्यां [2]पूज्य शम्भु क्षमापयेत्॥ 41॥
[3]यतीनां दक्षिणां दद्यात् सूत्रवस्त्रादिपूर्विकाम्।

पूर्णिमा अथवा छठ को प्रयास करके शिवपूजन करना चाहिए। उस दिन शिव को यज्ञोपवीत (पवित्रा) भेंट करें और शिवभक्तों को भोजन करवाएँ। इसी प्रकार

---

1. 'तथाषाढ्यां' इति मातृकायाम्। संशोधितपाठ हेमाद्रिकृतेन चतुर्वर्गचिन्तामण्यात्। (परिशेषखण्डे कालनिर्णय, अध्या. 17, पृष्ठ 882)
2. 'सम्पूज्यैवं समापयेत्।' इति मातृकायाम्।
3. 'यतिभ्यो दक्षिणां दत्वा सूत्रवस्त्रादि पूर्वकाम्' इति पाठ।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कार्तिक पूर्णिमा को भी शिव शम्भु की पूजा कर क्षमायाचना करें। और पूजा की समाप्ति पर यतियों को दक्षिणा के साथ-साथ सूत के बने हुए वस्त्रादि प्रदान करें।

यः कुर्यात्सकृदप्येवं चातुर्मास्यां पवित्रकम्॥ 42॥
कल्पकोटिशतं दिव्यं[1] रुद्रलोके महीयते।
पुण्यक्षयात्परिभ्रष्टः चतुर्वेदी[2] प्रजायते॥ 43॥
[3]इच्छाया वा भवेद्राजा गुणरूपसमन्वितः।

पवित्रारोपण का शिवनिवेदनमूलक सुकृत्यों को चातुर्मास भी करना चाहिए। ऐसा करने के फलस्वरूप शिवभक्त को हजारों, करोड़ों दिव्य कल्पों तक रुद्रलोक में निवास मिलता है। पुण्यों के प्रभाव के क्षीण होने पर वह रुद्रलोक से परिभ्रष्ट होकर चतुर्वेदी के घर जन्म लेता है अथवा अपनी इच्छा के अनुरूप अनेक गुणों और सुन्दर स्वरूप वाला राजा होता है।

शिवार्थे वाद्यगीतनृत्तस्य दानफलमाह —

भूमिदानस्य यत्पुण्यं कन्यादानस्य यत्फलम्॥ 44॥
मुखवाद्येन यत्पुण्यं उभयं लभते नरः।
तदेव पुण्यं गीतस्य नृत्तस्य च विशेषतः॥ 45॥
तदेव जयशब्दस्य हस्ततालध्वनौ तथा।

भूमिदान करने से जो पुण्य होता है और कन्यादान करने से जो फल मिलता है, वे दोनों ही पुण्यफल मुख से बजने वाले (वंशी, शहनाई, शंख आदि) वाद्यों के शिव के प्रति दान करने वाले व्यक्ति को सुलभ होते हैं। इसी प्रकार का पुण्यलाभ शिव के लिए गीतों के गायन और विशेषकर नृत्य करने से मिलता है तथा यही पुण्यफल शिव की जय-जयकार करने और हस्तताल (करतल ध्वनि) से प्राप्त होता है।

----

1. 'कल्पकोटिसहस्राणि' इति हेमाद्रिपाठः।
2. 'चतुर्वेदः' प्रजायते। इत्योपर्युक्तपाठः।
3. 'इहागतो भवेद्राजा गुरुरूपसमन्वितः।' इत्योपर्युक्तपाठः। तथा च शिवरहस्ये— पवित्रारोपणं शम्भोः कुर्य्यात्रिभसि वा शुचै। चतुर्दश्यामथाष्टम्यामधिवास्य विधानतः॥ श्रावणे प्रौष्ठपद्यां वा पवित्रारोपणन्तु यः। कुरुते नापवित्रं स्यात्तस्य संवत्सरान्तरा। शम्भोः पवित्रमारोप्य रिक्तः सम्पूर्णताभियात्॥ पवित्रात्तु पवित्रन्तु सान्वयं भृगुनन्दन। अपित्रं पवित्रं स्याद्देहकर्माखिलं नृणाम्॥ कालोत्तरेपि— पूजां कृत्वा प्रकर्त्तव्यं नित्यमेव पवित्रकम्। अथवा नियमेनैव कुर्य्यान्मास त्रयान्तरे॥ आषाढान्ते चतुर्दश्यां नभस्य नभसोस्तथा। अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोः समम्। पवित्रारोपणं कार्यं न तु कालान्तरे स्थितम्॥ एवं काले ह्यतिक्रान्ते प्रायश्चित्तं समाचरेत्। भौतिकानां विशेषेण शुक्लपक्षे ह्ययं विधिः॥ (परिशेषखण्डे पृष्ठ 882-883)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवार्थ गोमिथुनदानफलमाह —

यो गां पयस्विनीं दद्यात् तरुणीं वृषसंयुतम्॥ 46॥
शिवाय तेन दत्तं स्यात् जगत्सर्वं चराचरम्।

शिव के प्रति यदि दूधारू गाय का दान करना हो तो वह तरुणी हो और उसे बैल के साथ दी जानी चाहिए। यह चराचर सहित समस्त जगद्दान समझें।

तत्र वृषस्वरूपाह —

वृषभं परिपूर्णाङ्गं उदारं च शशिप्रभम्॥ 47॥
गोपतिं धूर्वहं वाऽपि शिवाय विनिवेदयेत्।
यावन्ति तस्य रोमाणि तत्प्रसूति कुलेषु च॥ 48॥
तावद्युग सहस्राणि रुद्रलोके महीयते।

दान करने योग्य वृषभ वह होता है जो परिपूर्ण अंग वाला और उदार हों तथा चन्द्रमा की तरह उजला हो। ऐसा गोपति बैल अथवा धूर्वह (धूरे में जोते जाने योग्य) शिव को निवेदित करना चाहिए। (इस दान से) उस पर जितने रोम होते हैं, उतने तक सत्कुल में जन्म होता है और उतने ही हजार युगों तक रुद्रलोक में निवास होता है।

अथ सुरूपाकपिलाधेनुदानमाह —

शिवाग्निकार्यमुद्दिश्य सुरूपां सुपयस्विनीम्॥ 49॥
कुलीनां कपिलां दत्वा दत्तं भवति गोशतम्।

शिवाग्नि कार्य के उद्देश्य से सुन्दर, दूधारू, अच्छे कुल वाली एक कपिला गाय दान करने का पुण्य सौ गायों के बराबर होता है।

गिरिकान्तारदुर्गेषु मातेव परिरक्षति॥ 50॥
यत्नेन कपिलां तस्मात् शिवाय विनिवेदयेत्।

पर्वतों, वनखण्डों और दुर्गों के परिक्षेत्र में माता की तरह उनकी रक्षा करनी चाहिए और प्रयत्नपूर्वक कपिला गाय शिवार्थ निवेदित करनी चाहिए।

शिवस्नानाग्निकार्यार्थां उत्पन्नां कपिलां यतः॥ 51॥
तस्मात्तत्रैव संयोज्या कपिला शुभमिच्छता।

यह ज्ञातव्य है कि शिवस्नान और अग्निकार्य के लिए ही इन कपिला गायों की उत्पत्ति हुई है। इसलिए जो कपिला गायों का शुभैच्छु हों, वह इन्हें उसी कार्य के लिए वहीं पर प्रदान करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कापिलं यः पिबेच्छूद्रः शिवसंस्कारवर्जितः ॥ 52 ॥
य याति नरकं घोरं यावदाभूत सम्प्लवम्।

यदि कोई संस्कार वर्जित (जिसका संस्कार नहीं हुआ हो) और शूद्र कपिला गाय का दूध पी जाता है तो प्रलयकाल तक वह घोर नरक को भोगता है।

हुतशेषं पिबेद्विप्रः स्वर्गीस्यादन्यथा पशुः ॥ 53 ॥
संस्कारेण वियुक्तं चेत् संस्कारो दुर्लभः शुभः।

यदि कोई विप्र हवन के बाद बचे हुए दूध का पान करता है तो वह स्वर्गी कहा जाता है अन्यथा वह पशु है जो कि संस्कारों से विहीन होता है। संस्कार निश्चित ही दुर्लभ हैं किन्तु वे शुभ होते हैं।

गामालभ्य नमस्कृत्वा कुर्याद्यस्तु प्रदक्षिणम् ॥ 54 ॥
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीप वसुन्धरा।

गाय को स्पर्श करके, दुलारकर उसे नमस्कार करें। तदोपरान्त उसकी प्रदक्षिणा करनी चाहिए। कपिला गाय की प्रदक्षिणा से सातों द्वीपों वाली इस पृथ्वी की परिक्रमा पूरी हो जाती है।

गवां हुङ्कारशब्देन दर्शनात्स्पर्शनादपि ॥ 55 ॥
पापं प्रणश्यते यस्मात् तस्मात्पश्येत्स्पृशेदपि।
कुतस्तेषां हि पापानि येषां गृहमलङ्कृतम् ॥ 56 ॥

गाय के हुँकारने को सुनकर, उसके दर्शन और स्पर्श करने से सभी पाप विनष्ट होते हैं। अतएव गाय को देखें, स्पर्श करें तो उन लोगों के पाप कहाँ रह सकते हैं, जिनके घर गायों से भरे-पूरे होते हैं।

सततं बालवत्साभिर्गोभिः श्रीभिरिव स्वयम्।
यानि तीर्थानि मे दद्यात् मासमात्रात्सरांसि च ॥ 57 ॥
गवां शृङ्गोदक स्नानात् कलां नार्हन्ति षोडशीम्।

बाल-बछड़ों सहित गायों को निरन्तर स्वयं लक्ष्मी समझना चाहिए। जितने तीर्थों में वर्ष पर्यन्त (स्नान योग्य) जल वाले सरोवर-तालाब भी क्यों न दान किए हों, वे सब एक गाय के सींग के प्रमाण जल से स्नान की अपेक्षा सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं होते हैं।

गवामस्थीनि लङ्घेत मृतगावं न वर्जयेत् ॥ 58 ॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यावज्जिघ्रति तद्गन्धं तावत्पुण्यै प्रपूर्यते।
गवां कण्डूयनाद्धूपाद् गोप्रदानसमं भवेत्॥ 59॥

गायों की हड्डी यदि कहीं पड़ी हो तो उसे लांघना नहीं चाहिए। गाय यदि मृत भी हो तो उसे पीटना नहीं चाहिए। जहाँ गायों की गन्ध हो, वहाँ सांस तक लेने से पुण्य का अर्जन होता है। गायों को खुजलाने-सहलाने और धूप देने से गायों के दान के समान ही महत्व होता है।[1]

तुल्यं गोशतदानस्य भयरोगादि पालनम्।
तृणोदकादि संयुक्तां यः प्रदद्याद्गवां महीम्॥ 60॥
स गोमेधसमं पुण्यं लभते नात्र संशयः।
बहुनात्र किमुक्तेन गावः पाल्याः प्रयत्नतः॥ 61॥
गावो देयाः सदारक्ष्याः स्पृश्या दृश्याश्च सर्वदा।

यह नियम-व्रत सौ गायों के दान के तुल्य है और भय-रोग पालन के समान है। गायों के लिए चारा-घास और पानी के साथ जो (गोचर, चरनोट) भूमि का दान करता है, वह गोमेध यज्ञ के समान पुण्य का लाभ प्राप्त करता है, इसमें कोई संशय नहीं है। अधिक क्या कहा जाए, गायों का सर्वसम्भव प्रयास से पालन करना चाहिए। उनकी सदा ही रक्षा की जानी चाहिए, उनका स्पर्श और दर्शन करना चाहिए।

गोताडननिषेधमाह—

ये ताडयन्ति गां पापाः सर्वलोकस्य मातरम्॥ 62॥
आक्रोशयति ये मोहात् आक्रुष्टं दायिकं जगत्।
ताडनेन गवां मोहात् समन्तात्ताडितं जगत्॥ 63॥

गायें समस्त लोकों की माता मानी गई हैं, जो उनका ताड़न करते हैं, वे बड़े पापी होते हैं। जो कोई मोहवश अपने अज्ञान से गायों पर क्रोध करते हैं, वे सारे जगत

----

1. उक्त प्रसंग में महाभारत यह मत विचारणीय है कि जो मनुष्य गायों की सेवा करता है, उसे गायें अत्यन्त दुर्लभ वरदान देती हैं। ऐसा गोभक्त मनुष्य पुत्र, धन, विद्या, सुखादि जिस किसी वस्तु की कामना करता है, वह उसे सुलभ हो जाती है, उसके लिए कोई वस्तु दुर्लभ नहीं रहती। गायों का समूह जहाँ बैठकर निर्भयतापूर्वक साँस लेता है, उस स्थान के समस्त पापों को खींच लेता है— गाश्च शुश्रूषते यश्च समन्वेति च सर्वशः। तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानपि सुदुर्लभान्॥ गोषु भक्तश्च लभते यद् यदिच्छति मानवः। स्त्रियोऽपि भक्ता या गोषु ताश्च काममवाप्नुयुः॥ पुत्रार्थी लभते पुत्रं कन्यार्थी तामवाप्नुयात्। धनार्थी लभते वित्तं धर्मार्थी धर्ममाप्नुयात्॥ विद्यार्थी चाप्नुयाद् विद्यां सुखार्थी प्राप्नुयात् सुखम्। न किञ्चिद्दुर्लभं चैव गवां भक्तस्य भारत॥ (महाभारत अनु. 81, 33 एवं 83, 50-52)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

को क्रोध देने वाले होते हैं। अज्ञान के वशीभूत होकर गायों की ताड़ना करने से सारे जगत को ताड़ना मिलती है।

ताडयेद्यस्तु गां मोहात् यश्चाक्रोशेन्नराधमः।
नरकाग्नौ स पच्येत गवां निश्वासपीडितः॥ 64॥

गायों पर इस प्रकार के क्रोध-आक्रोश और मोहपूर्वक अत्याचार के फलस्वरूप नराधमों को उनके निश्वास से पीड़ित होना पड़ता है और वे नरक की अग्नि में पकाए जाते हैं।

पालाशेनैव दण्डेन मृदुना गां निवर्तयेत्।
गच्छ गच्छेति तां ब्रूयान् मा मातरिति वारयेत्॥ 65॥

यदि कभी हाँकने, धमकाने के प्रयोजन से ताड़ना की आवश्यकता भी पड़ जाए तो पलाश की कोमल लकड़ी का प्रयोग करके गायों का निवर्तन करना चाहिए और इस दौरान यह बोला जाना चाहिए- चलो, जाओ! हे मेरी गौमाता! यहाँ से जाओ। इस तरह कहते हुए उनका निवारण करना चाहिए।

अन्यदप्याह —

मलोत्सर्गं च यः कुर्यात् पक्षयोरुभयोरपि।
द्वादश्यां पौर्णमास्यां वा चतुर्दश्यष्टमीषु च॥ 66॥
तस्य गावो वृषो विष्णुः शिवोमा सर्वदेवताः।
शान्तिं कुर्वन्तु सुप्रीता स्वर्गमायुर्बलं श्रियम्॥ 67॥

जो गोधन मास के दोनों पखवाड़ों में गोबर करती हों, विशेषकर द्वादशी, पूर्णिमा या चतुर्दशी और अष्टमी को, ऐसी गायों और बैलों की विद्यमानता से विष्णु, शिव, उमा इत्यादि सभी देवता सुप्रीतिपूर्वक शान्ति प्रदान करते हैं और इस प्रकार स्वर्ग-सुख, आयु, बल और धन की अभिवृद्धि होती हैं।

गोसेवामाहात्म्यमाह —

दास्यन्ति च सदानित्यं कल्याणं भद्रमेव च।
एवं यो वर्तते गोषु ताडनाऽऽक्रोश वर्जितः॥ 68॥
महतीं श्रियमाप्नोति रुद्रलोकं स गच्छति।

जो गायों के सेवक बनकर रहते हैं, उनका कल्याण और भला होता है। इस तरह जो गायों के साथ ताड़ना और क्रोध रहित (संयत, मृदु और पालनीय) व्यवहार करते हैं, वे महान श्रेय प्राप्त करते हैं और रुद्रलोक को जाते हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गोब्राह्मणार्थमुद्युक्तं प्राणैर्यदि विमुच्यते॥ 69॥
प्राप्नोति परमं स्थानं रुद्रलोकं स गच्छति।

जो कोई गायों और ब्राह्मणों के हित में सदा तत्पर रहता है और उनकी रक्षादि के लिए प्राणोत्सर्ग कर देता हैं, वह परमपद पाता हैं और रुद्रलोक को जाता है।

ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधाकृतम्॥ 70॥
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति।
न च मन्त्रैर्विना यज्ञो हविषा च प्रवर्तते॥ 71॥
तस्याद्विप्राश्च गावश्च पुण्यात्पुण्यतरा उभौ।
गोभिर्यज्ञाः प्रवर्तन्ते गोषु देवाः प्रतिष्ठिताः॥ 72॥

यह ज्ञातव्य है कि ब्राह्मण और गायों का एक ही कुल है जो दो रूपों में दिखाई देता है। (जैसे कि) मन्त्र एकत्र ही रहते हैं और हवि अन्यत्र रहता है। ऐसा होने पर भी न तो मन्त्रों के बिना यज्ञ सम्भव है और न हवि के अभाव में सत्र हो सकता है। इसीलिए ब्राह्मणों और गायों दोनों को पुण्यात्पुण्यतर समझा जाता है। गायों से ही यज्ञ चलते हैं और गायों में ही समस्त देवता प्रतिष्ठित होते हैं।

गोशरीरेदेवादीनां निवेशस्थलमाह[1] —

गोभिर्वेदास्समुत्कीर्णाः सषडङ्गपदक्रमाः।
शृङ्गमूले गवां नित्यं ब्रह्माविष्णुः स्वयं स्थितौ॥ 73॥

गायों से ही वेदों का निकास षडंग पदक्रम के साथ हुआ है। गाय के दोनों सींगों के मूल में नित्यप्रति ब्रह्मा और विष्णु स्वयं स्थित रहते हैं।

शृङ्गाग्रे सर्वतीर्थानि चराणि स्थावराणि च।
शिरोमध्ये महादेवः सर्वदेवपतिः स्थितः॥ 74॥

---

1. तुलनीय गोशरीरे देवतानिवेशो यथा— दन्तेषु मरुतो देवा जिह्वायान्तु सरस्वती। खुरमध्ये तु गन्धर्वाः खुराग्रेषु तु पन्नगाः॥ सर्वसन्धिषु तु साध्याश्च चन्द्रादित्यौ तु लोचने। ककुदी सर्वनक्षत्रं लाङ्गूले धर्म्म आश्रितः॥ अपाने सर्व्व तीर्थानि प्रस्रावे जाह्नवी नदी। नानाद्वीपसमाकीर्णाश्चत्वारः सागरास्तथा॥ ऋषयो रोमकूपेषु गोमये पद्मधारिणी। रोमसु सन्ति विद्याश्च त्वक्केशेष्वयनद्वयम्॥ धैर्य्यं धृतिश्च क्षान्तिश्च पुष्टिवृद्धिस्तथैव च। स्मृतिर्मेधा तथा लज्जा वपुः कीर्त्तिस्तथैव च। विद्याशान्तिर्म्मतिश्चैव सन्ततिः परमा तथा। गच्छन्तीमनुगच्छन्ति एता गां वै न संशयः॥ यत्र गावो जगत्तत्र देवदेवपुरोगमाः। यत्र गावस्तत्र लक्ष्मीः सांख्यधर्म्मश्च शाश्वतः॥ सर्व्वरूपेषु ता गावस्तिष्ठन्त्यभिमताः सदा॥ गावः पवित्रा मङ्गल्या देवानामपि देवताः। यस्ताः शुश्रूषते भक्त्या स पापेभ्यः प्रमुच्यते॥ (वराहपुराण से शब्दकल्पद्रुम में उद्धृत)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गायों के सींगों के आगे के भाग में समस्त चर-स्थावर तीर्थ रहते हैं। सिर के मध्य में सर्वदेवपति महादेव विराजित हैं।

ललाटे पार्वतीदेवी नासाग्रे चैव षण्मुखः।
कमलाश्वतरौ नागौ नासापुट समाश्रितौः॥ 75॥

गायों के ललाट पर पार्वतीदेवी और नासिका के अग्रभाग में कार्तिकेय का निवास होता है। कमलाश्वतर नाग गायों के नथूनों के आश्रय में रहते हैं।

कर्णयोरश्विनीदेवौ नेत्रे च शशिभास्करौ।
दन्तेषु वायवः सर्वे जिह्वायां वरुणः स्थितः॥ 76॥

गायों के दोनों कानों में देवता अश्विनीकुमार रहते हैं। नेत्रों में चन्द्रमा और सूर्य की स्थिति होती है। दाँतों में सभी वायुगण और जिह्वा पर वरुण की स्थिति होती है।

सरस्वती च हुङ्कारे यम-यक्षौ च गण्डयोः।
सन्ध्याद्वयं तथोष्ठौ च ग्रीवायामिन्द्र आश्रितः॥ 77॥

गायों के हुंकार में वाग्देवी सरस्वती और गण्डदेश (कपोलों) पर यक्षगणों का विराजना होता है। गायों के होठों पर दोनों सन्ध्या रहती हैं और ग्रीवा पर इन्द्रदेव का निवास होता है।

ऋक्षाणि च ककुद्देशे साध्याश्चोरति संस्थिताः।
चतुष्पादात्सकलो धर्मः स्वयं जङ्घासु संस्थितः॥ 78॥

गायों के कुकुद पर ऋक्षगण और ऊरु पर साध्यगण संस्थित होते हैं। उनके चारों पाँवों पर स्वयं सकल धर्म हैं जो जंघाओं पर संस्थिताश्रित हैं।

ऊरु मध्येषु गन्धर्वाः खुरमध्येषु पन्नगाः।
खुराणां पश्चिमाग्रे च अपराश्च समाश्रिताः॥ 79॥

उनकी जंघाओं के मध्य में गन्धर्व और खुर के मध्यभाग में पन्नग विराजित हैं। वे खुरों के पश्चिम में अग्रभाग और अपरभाग में समाश्रित होते हैं।

रुद्रैकादशकं पृष्ठे वसवः सर्वसिद्धिषु।
श्रोणीतटस्थाः पितरः स्थिता योनौ च मातरः॥ 80॥

गायों की पीठ पर ग्यारह रुद्र, वसुगण और समस्त सिद्धियाँ होती हैं। उनके श्रोणी (कूल्हों के) तट पर पितृगणों और योनिदेश में मातरों की स्थिति है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्रीरपाने गवादभ्यन् नागा लाङ्गूल संस्थिताः।
आदित्यरश्मयो वाले पिण्डिभूता व्यवस्थिताः॥ 81॥

गाय के अपान (गोबर मार्ग) में श्रीदेवी रहती हैं और अन्य नागगण पूँछ में स्थित होते हैं। गायों के बालों में सूर्य की रश्मियाँ रहती हैं जो समूहभूत होकर अपनी स्थिति बनाए रखती हैं।

साक्षाद्गङ्गा च गोमूत्रे गोमये यमुनास्थिता।
अष्टाविंशद्देवकोट्यो रोमकूपेषु संस्थिताः॥ 82॥

गोमूत्र में साक्षात् देवनदी गंगा का निवास होता है जबकि यमुना गोमय में स्थित रहती हैं। गाय के रोमकूपों में अट्ठाईस करोड़ देवताओं का निवास होता है।

ऋषयश्च तथा सर्वे रोमरन्ध्रेषु संस्थिताः।
उदरे पृथिवीदेवी सशैलवनकाननाः॥ 83॥

इसी प्रकार समस्त ऋषिगण गायों के रोमरन्ध्रों में संस्थित हैं। गायों के पेट में समस्त पर्वतों, वन-कानन सहित पृथ्वीदेवी का निवास होता है।

चत्वारः सागराः पूर्णाः गवां ये च पयोधराः।
जठरे गार्ह्यपत्याग्नि हृदये दक्षिणाग्निकः॥ 84॥
मुखे चावहनीयोऽग्निः तथा चाङ्गे पतिव्रताः।
अस्थिशुक्ले स्थितस्सर्वो ह्यश्वमेधादिकः क्रतुः॥ 85॥

चारों ही पूर्ण सागर गायों के थनों में स्थिति लिए होते हैं। गायों के जठर भाग में तीन अग्नियों में से (1.) गार्हपत्याग्नि और हृदयदेश में (2.) दक्षिणाग्नि स्थित हैं जबकि मुख में (3.) आवाहनीयाग्नि होती है। उसके अंगों में पतिव्रता सतियों का निवास होता हैं। गायों की अस्थियों में समस्त शुक्लपदार्थ और अश्वमेधादिक यज्ञों की स्थिति होती हैं।

एतच्च कथितं सर्वं गोषु यच्च व्यवस्थितम्।
गोषुदत्तं हुतं भुक्तं गोषु सर्वं चराचरम्॥ 86॥

इस प्रकार सभी गायों में देवतादिकों के निवास-निवेश के सम्बन्ध में कहा गया हैं। यह समस्त चराचर गायों का दिया हुआ, उनका हवन किया हुआ और भुक्त किया हुआ है।

तस्माद्गावो न हिंस्यात्तु पालनीयाश्च सर्वदा।
गावस्तुल्याश्च वन्द्याश्च गावो मां पान्तु नित्यशः॥ 87॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इसीलिए गायों की कभी हिंसा नहीं करें और सर्वदा उनका पालन करना चाहिए। वे नित्य ही वन्दन के तुल्य है, वे हमारा पावन करें - ऐसा कहना चाहिए।

तस्य महामारी व्यपोहनस्तवनिरूपणम्। गोशान्तिः —

ब्रह्मणा ब्रह्मशब्देन स्तूयते प्रणवेन यः।[1]
स शिवः शाश्वतो देवः गोषु मारीं व्यपोहतु॥ 88॥[2]

(यदि गायें किसी व्याधि से पीड़ित हो जाएँ तो उपाय स्वरूप व्यपोहनस्तव) ब्राह्मण यदि ब्रह्मशब्द से प्रणव के साथ स्तुति करे तो शाश्वतदेव भगवान् शिव गायों की महामारी का हरण कर देते हैं।

सर्वरोगहरेणापि रविणा यः प्रणप्यते।[3]
स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु॥ 89॥

समस्त व्याधियों-रोगों के हरण के लिए जो सूर्य को प्रणाम करते हैं, वे शाश्वतदेव शिव गायों की बीमारियों का नाश कर देते हैं।

इहामुत्र स्थितानेक विघ्नेशगणपूजितः।
स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु॥ 90॥[4]

यहाँ-वहाँ स्थित अनेकानेक विघ्नेशगणों द्वारा जो पूजित हैं, वे शाश्वतदेव शिव गायों की महामारियों का हरण करते हैं।

श्रीमतां रुचिराङ्गेण घण्टाकर्णगणेन यः।
नित्यं प्रणम्यते भक्त्या हृष्टेनानन्य[5] चेतसा॥ 91॥

---

1. 'ब्रह्मणा ब्रह्मपादेन स्तूयते प्रणवेन सः' इति पाठः। (तुलनीय— व्रतखण्ड अध्याय 32, पृष्ठ 1030)
2. इत्यमनन्तर— 'लम्बोदरेण देवेन गजवक्त्रेण सुस्तुतः।' इति क्वचित् पाठः। इत्यमनन्तर— 'योऽर्च्यते च सदा भक्त्या विष्णुना प्रभविष्णुना। स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु॥' श्लोकमाह। (तुलनीय— उपर्युक्त, पृष्ठ 1030-31)

   विशेष— यह व्यपोहनस्तव लिंगपुराण में भी आया है और भविष्यपुराण में भी किंचित पाठान्तर के साथ उपन्यस्त है। लिंगपुराणकार ने स्पष्ट किया है कि नन्दिन से इसको महात्मा सनत्कुमार से सुना था, उनसे व्यास ने सुना और उनसे सूत ने श्रवण किया था, इससे स्पष्ट है कि लिंगपुराणकार ने यह स्तव शिवधर्मपुराण या अन्य किसी स्रोतोपस्कारग्रन्थ से प्राप्त किया था— व्यपोहनस्तवं वक्ष्ये सर्वसिद्धिप्रदं शुभम्। नन्दिनश्च मुखाच्छ्रुत्वा कुमारेण महात्मना॥ व्यासाय कथितं तस्माद्बहुमानेन वै मया। (लिंगपुराण 82, 1-2)
3. इत्यमनन्तर— 'लम्बोदरेण देवेन गजवक्त्रेण सुस्तुतः।' इति क्वचित् पाठः। इत्यमनन्तर— 'योऽर्च्यते च सदा भक्त्या विष्णुना प्रभविष्णुना। स शिवः शाश्वतो देवो गोषु मारीं व्यपोहतु॥' (तुलनीय— व्रतखंड, पृष्ठ 1030)
4. इदं श्लोकपाठः हेमाद्रिपाठे नोपलभ्यते।
5. 'हृष्टेनार्द्रेण।' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स शिवः शाश्वतोदेवो गोषु मारीं व्यपोहतु।

सुन्दरतम अंगों वाले श्रीमान् घण्टाकर्णगण और अनन्यचित्त होकर जो नित्यप्रति ही प्रणामरत रहते हैं, उनके लिए शाश्वतदेव शिव गायों की महामारियों को निकाल देते हैं।

नित्यं [1]रुद्रसमोपेतो रुद्रशक्तिसमन्वितः॥ 92॥
नन्दिना दण्डिना चाऽपि चण्डिना भारभूतिना।
एतैरन्यैर्गणैयक्षैः सर्वतोऽपि विशेषतः॥ 93॥
घण्टाकर्णगणोपेतः शिवज्ञान विना(? धा)यकः।
शिवतेजोतिभावेन गोषु मारीं व्यपोहतु॥ 94॥

इसी प्रकार नित्य ही जो रुद्रदेव के साथ रुद्र-शक्ति से युक्त होकर रहते हैं, ऐसे नन्दिन्, दण्डिन्, चण्डिन् और भारभूति सहित ऐसे ही अन्य विशेष यक्षगण तथा घण्टाकर्णगणों में मुख्य और शिवज्ञान के विधायक अतिशय शिवतेज के साथ गायों की महामारी का हरण करते हैं।

गोशान्त्युपायार्थमन्त्रमाह —

शिवाय देवदेवाय महादेवाय शम्भवे।[2]
रुद्राय स्थाणवे नित्यं हरायोग्राय ते नमः॥ 95॥
परमेशाय सिद्धाय [3]सर्वसिद्धि प्रदायिने।
त्रयम्बकाय [4]शान्ताय शान्तरूपाय ते नमः॥ 96॥
अभिमन्त्र्य [5]सदातोयं मन्त्रैरेतैर्यथाक्रमम्।
प्रोक्षयीत गवां देहं[6] ततः शान्तिर्भविष्यति॥ 97॥

(गायों में रोगों की शान्ति के लिए उपयोगी मन्त्रों का अर्थ) शिवाय! देवदेवाय! महादेवाय! शम्भवे! रुद्राय! स्थाणवे! नित्य हर! आय! उग्र! आपको नमस्कार है। परमेशाय! सिद्धाय! सर्वसिद्धिप्रदाय! त्रियम्बकाय! शान्ताय!

---

1. नित्यं रुद्रबलोपेतो रुद्रभक्तिसमन्वितः॥ घण्टाकर्णगणो देवः शिवज्ञानविधायकः। शिवयोगानुभावेन गोषु मारीं व्यपोहतु॥ इति क्वचित् पाठः। (तुलनीय— व्रतखंड, पृष्ठ 1030)
2. 'नमः शिवाय देवाय महादेवाय भाविने।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त, पृष्ठ 1031)
3. 'मन्त्रसिद्धिप्रदायिने।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
4. 'अनन्ताय नमो नमः।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
5. 'सदातोयमेतैर्मन्त्रैर्यथाक्रमम्।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
6. 'प्रार्थयीत गवां देवं' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शान्तरूपाय! आपको नमस्कार है। इन क्रमिक मन्त्रों से सदा जल को अभिमन्त्रित करें और गायों की देह का प्रोक्षण करें। इससे उनकी शान्ति होगी।

गोसावित्रीपाठमाहात्म्यमाह —

य इमां पठते गोषु रोगातीसु विशेषतः।[1]
गोसावित्रीं महापुण्यां गवां शान्तिर्भविष्यति॥ 98॥

जो व्यक्ति इस पाठ को गायों, विशेषकर रुग्ण होने पर पढ़े तो इस गो-सावित्री का महापुण्य मिलता है और गायों को शान्ति मिलती है।

प्रातरुत्थाय सततं गोसावित्रीमिमां पठेत्।
गवां चोत्सर्ग कालेषु प्रस्थाने वा समागमे॥ 99॥
आयुष्मान्बलवांछ्रिमान् गोमानर्थपतिर्भवेत्।
देहान्ते परमं स्थानं स गच्छेन्नात्र संशयः॥ 100॥

सदा प्रातःकाल उठते ही इस गो-सावित्री का पाठ करना चाहिए। विशेषकर गायों के उत्सर्ग, प्रस्थान और आगमन काल में इसका पाठ करने से गोपालक आयुष्मान, बलवान, श्रीमान् और गायों के सम्मान से धनवान होता है। देहान्त होने पर वह परमपद को जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

गोधनस्य प्रसन्नार्थोपाय फलञ्च —

प्रभूत तोयेषु बृहत्तृणेषु स पुङ्गवा नित्यमरोगवासाः।
चरन्तु गावः सुखिता वनेषु क्षीरं प्रयच्छन्तु सुखं स्वपन्तु॥ 101॥

पर्याप्त जलराशि, बहुत प्रकार के तृण-घास को गायों को देता हुआ जो व्यक्ति उन्हें प्रसन्न रखता है, वह नित्य ही अरोग बना रहता है। जहाँ गायें सुखपूर्वक वनों में चरती हैं और दूध देती हैं, वहाँ सुखपूर्ण नींद आती है अर्थात् कोई संकट नहीं रहता है।

शिवार्थाश्वदानफलमाह —

योलङ्कृत्य शिवायाश्वं उत्तमं विनिवेदयेत्।
सोऽश्वमेधसहस्रस्य फलमष्टगुणं भवेत्॥ 102॥

---

1. 'य इदं पठते गोपु प्रस्थाने वा समागमे।' इति क्वचित् पाठः। इत्यमनन्तरे केवलं— 'आयुष्मान् बलवान् भोगी श्रीमानर्थपतिर्भवेत्॥ देहान्ते च परं स्थानं गच्छेत्रात्र संशयः। सर्व्वपापविशुद्धार्थं गोशान्तिकमिदं पठेत्॥' (तुलनीय— व्रतखंड, पृष्ठ 1031)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो व्यक्ति उत्तम अश्व को अलंकृतकर शिव के प्रति निवेदित करता है, वह हजार अश्वमेध यज्ञों की अपेक्षा आठ गुना फल प्राप्त करता है।

दासीदानफलमाह —

सुविनीतां स्त्रियं दासीं हृद्यां वा विनिवेदयेत्।
नरमेधस्थ यज्ञस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 103॥

जो सुविनीता स्त्रियों को दासी के रूप में श्रद्धाभावपूर्वक शिव के प्रति भेंट करता है, उसको नरमेध यज्ञ की अपेक्षा आठ गुना फल प्राप्त होता है।

शिवार्थ नागदानफलमाह —

निवेदयीत यो नागं भक्त्या भद्रमलङ्कृतम्।
शिवाय पर्वदिवसे तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 104॥

(हे सनत्कुमार!) जो शिव के प्रति किसी पर्व दिवस पर भक्तिपूर्वक अच्छी तरह से सज्जित (धातु निर्मित) नाग को निवेदित करता है, उस दान का पुण्यफल सुनिये।

समन्तैरावतप्रख्यैः गजैर्युक्तैः सुशोभनैः।
प्रक्रीडते महायानैः शतसङ्ख्यैरनेकशः॥ 105॥
कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च।
रुद्रलोके वसेदन्ते भवेदिन्द्रः सुराधिपः॥ 106॥
चतुर्युगसहस्रान्ते स गां प्राप्य नराधिपः।
भवेदिन्द्रसमः श्रीमान् रूपवीर्यश्रुतान्वितः॥ 107॥

ऐसा दानी सैकड़ों की संख्या में ऐसे महायानों में विहार-क्रीड़ा-गमन करता है, जिसमें ऐरावत जैसे प्रमुख सुशोभन गजराज जुते हुए होते हैं। वह सैकड़ों, करोड़ों कल्पों तो क्या, हजारों, करोड़ों कल्पों तक रुद्रलोक में निवास करता है और अन्त में देवताओं का राजा इन्द्र होता है। तदोपरान्त, वह हजारों चतुर्युगों (कृतयुग, सतयुग, द्वापर और कलियुग) के अन्त में गाय को पाकर राजा होता है और इन्द्र के समान श्रीमान् रूप, पराक्रम का धनी होता है।

सर्वसस्यप्रोहिणीभूमिदानफलम् —

यः शिवाय जलोपेतां सर्वसस्य प्रोहिणीम्।
महीं महीपतिर्दद्यात् तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 108॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यावद्दण्डा भवेद्भूमिर्मीयमाना[1] समन्ततः।
तावत्कल्पसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 109॥

जो राजा भगवान् शिव के प्रति जल से भरी-पूरी और सभी फसलों को उगाने वाली भूमि का दान करता है, उसके पुण्यफल को सुनो। ऐसी भूमि में चारों ही ओर की सीमा तक जितने दण्डों के प्रमाण[2] की लम्बी-चौड़ी होती है, उतने हजार कल्पों तक वह रुद्रलोक में निवास करता है।

एवं सर्वत्र विज्ञेयं फलं दण्ड प्रमाणतः।
ग्राम-खेट-पुर-क्षेत्र-विषयादि विनिवेदने॥ 110॥

इसी प्रकार सर्वत्र दण्ड प्रमाण वाली भूमि के दान के पुण्यफल के सम्बन्ध में जानना चाहिए, फिर चाहे वह ग्रामदान हो, खेटकदान हो, पुरदान हो, खेत या विषय (प्रान्त, ग्राम समूह या मण्डल, प्रशासनिक क्षेत्र) आदि का दान हो।

ग्रामदानफलम् —

सर्वसस्यफलोपेतं सर्वबाधा विवर्जितम्।
ग्रामं शिवाय यो दद्यात् तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 111॥

सभी प्रकार की फसलों को उगाने वाले और समस्त बाधाओं से मुक्त ग्राम को जो शिव के प्रति दान करता है, उसका पुण्यफल सुनिये।

सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्।
सर्वदानेषु यत्पुण्यं ग्रामदानेन तल्लभेत्॥ 112॥

सभी तीर्थों के सेवन का जो पुण्य होता है, समस्त यज्ञों के सम्पादन से जो

---

1. यहाँ प्रयुक्त 'मीय' अथवा 'मेय' शब्द भूमि के साथ पाँचवीं सदी के दानपत्राभिलेखों से मिलना शुरू होता है। प्रभांजनवर्धन के निंगोदी-उड़ीसा दानपत्र, छठवीं सदी के विष्णुसेन के गुजरात से प्राप्त ताम्रपट्टाभिलेख और हर्षवर्धन के मधुबन-उत्तरप्रदेश के तामानुशासन में यह प्रयुक्त हुआ है : यथासमुचिततुल्यमेय भागभोगकर। (सेलेक्टेड इंस्क्रिप्शंस, द्वितीय भाग पृष्ठ 224, पंक्ति 15) इतिहासकारों ने इसका अर्थ कृषिभूमि से वस्तु के रूप में प्राप्त होने वाले राजस्व के रूप में लिया है किन्तु यहां भाग-भोग के विशेष अर्थ में लगता है जिसे तौला या मापा जा सके। उपर्युक्त श्लोक में भूमि की सीमा के अर्थ में ज्ञेय है।
2. दण्ड भूमाप का एक महत्वपूर्ण मापक है। पूर्वकाल में नल प्रमाण इसी का पर्याय रहा है। नारदस्मृति में धनुष अथवा दण्ड समानार्थी प्रतीत होते हैं : क्रूरं धनुः सप्तशतं मध्यम षटशतं स्मृतम्। मन्दं पञ्चशतं ज्ञेयमेष ज्ञेयो धनुर्विधः॥ (नारदस्मृति 4, 307) यहाँ 105 से 107 अंगुल प्रमाण को धनु या दण्ड कहा गया है। मार्कण्डेय पुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण और अर्थशास्त्र में सभी चार प्रकार के दण्ड छह फीट के होने की सूचना देते हैं। (लैण्ड सिस्टम इन नोर्दर्न इण्डिया : सरोज दत्ता, पृष्ठ 35)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

फल मिलता है और सभी प्रकार के दानों से जो पुण्य मिलता है, वह पुण्य ग्राम से प्राप्त होता है।

सूर्यकोटिप्रतीकाशैः दिव्यस्त्रीभिरलङ्कृतैः।
संयुक्तं कोटिशोनेकैः सर्वकाम समन्वितैः॥ 113॥
विमानैर्ग्रामदानेन त्रिसप्तकुल$_{21}$ संयुतः।
यथेष्टमैश्वरे लोके क्रीडते कालमक्षयम्॥ 114॥

ग्राम व विमान का दान करने वाला करोड़ों सूर्यों के समान चमक लिए दिव्य अलंकृत स्त्रियों से (घिरा रहता है) और अनेकों करोड़ कामनाओं को पूर्ण करता है। इस लाभ में उसके इक्कीस कुल भी साथ होते हैं। इसके फलस्वरूप वह अक्षयकाल तक ईश्वर के लोक में इच्छित क्रीड़ाओं को करता है।

नगरदेशादीनां दानफलम् —

पुण्यं नगरदानस्य ग्रामदाच्छताधिकम्।
देशदानेन चानन्त्यं न शक्यं परिकीर्तितम्॥ 115॥

पूर्वोक्त ग्रामदान से नगर के दान का पुण्य सौ गुना अधिक होता है और देश दान का पुण्य निस्सन्देह अनन्त कहा गया है।

रत्नान्नपानगोत्वाद्यं सर्वं भूमौ प्रजायते।
तस्माद्भूमि प्रदानेन नरो भवति सर्वदः॥ 116॥

नाना प्रकार के रत्न, अन्न, पीने योग्य द्रव्य, गोधनादि सभी भूमि से उपजते हैं, व्यक्ति को इन सबका लाभ भूमिदान से सदा मिलता है।

भूम्यादीनां हरणफलम् —

योऽन्यदत्तां स्वदत्तां वा भूमि हरति मानवः।
प्रपाच्यतेऽक्षयं कालं नरकेषु यथाक्रमम्॥ 117॥

किसी अन्य के द्वारा दान की गई अथवा स्वयं के द्वारा दी गई भूमि का जो मानव हरण करता है, वह अक्षयकाल तक यथाक्रम नरक में पकाया जाता है।

सर्वं वा भूमि हरणाद् हृतमेव न संशयः।
भूमिहर्ता वसेत्तस्य नरके कालमक्षयम्॥ 118॥

सभी प्रकार की भूमि का हरण करने वाला भूमिहर्ता निश्चय ही अक्षयकाल तक नरकलोक में निवास करता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

देवस्वानि हरन्तीह नरा नरकनिर्भयाः।
ब्रह्मस्वानि च यो मोहात्पच्यन्ते नरकेषु ते॥ 119॥

जो देवता के प्रति दिए गए दान को निर्भय-निश्शंक होकर हर कर लेता है और जो ब्राह्मण को दिए गए दान को मोहवश उससे छीन लेता है, वह नरक में पचाया जाता है।

देवब्रह्मस्वपुष्टानि वाहनानि महीपतेः।
युद्धकाले विशीर्यन्ते सैकताः सेतवो यथा॥ 120॥

देवताओं और ब्राह्मणों को दान किए वाहन आदि को जो राजा छीन लेता है, वह युद्धकाल में वैसे ही नष्ट हो जाता है, जैसे बालु का सेतु अकाल-अकारण ही धराशायी हो जाता है।

यत्प्रदानाद्वसेत्स्वर्गे यावत्कालस्य सङ्ख्यया।
तस्माच्छतगुणं कालं तद्धर्ता नरके वसेत्॥ 121॥

जिस दान को करने से जितने काल तक स्वर्ग में निवास मिलता है, उसके भी सौ गुना काल तक उस दान का अपहरण करने वाले को नरक में निवास मिलता है।

विंशत्यष्टौ च याः कोट्यो नरकाणां सुदारुणाः।
क्रमेण तासु पच्यन्ते देव-ब्रह्मस्वहारिणः॥ 122॥

अट्ठाइस करोड़ प्रकार के दारुण नरक हैं जिनमें क्रम से एक व्यक्ति पकाया जाता है जो देवताओं और ब्राह्मणों के धन का हरण करता है।

कल्पान्ते च समुत्तीर्णा वृक्षकीटादि योनिषु।
भ्रमन्ति सुचिरं कालं क्षुत्पिपासादि पीडिताः॥ 123॥

वह नराधम कल्पान्त में भी वृक्ष-कीटादि योनियों में अन्ततः भूख और प्यास से मारा-मारा भटकता रहता है।

केनचिच्छिवभक्तेन शिवार्चायतनादिषु।
उपयुक्ता भवन्तीह यावत्तावच्च पादपाः॥ 124॥
ततो निर्धूत पापास्ते मानवाः शिव तेजसा।
शिवं प्रयान्ति सन्त्यज्य शरीरं यातनात्मकम्॥ 125॥

शिवभक्ति के संयोगवश वह कभी कहीं शिवालय का उपयुक्त वृक्ष बनकर

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रहता है तो वहाँ अपने पापों को धोता है। शिव के तेज से वह मानव देह धारण करता है और फिर इस यातनात्मक देह के त्याग के उपरान्त शिवलोक में जाता है।

इति शिवधर्मपुराणे गवादि दानमाहात्म्य नामः अष्टमोऽध्यायः॥ 8 ॥[1]

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में गो आदि के दान माहात्म्य नाम का आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

*****

अथ नवमोऽध्यायः॥ 9 ॥

शैवव्रतों में शिवलिङ्ग महाव्रत के विधि–विधान और उसके कर्ताओं का कथन तथा उसके फलाफल का श्रीनन्दिकेश्वर द्वारा श्रीसनत्कुमार के प्रति वर्णन

शैवव्रतराज शिवलिङ्गव्रतश्च पूर्वकर्तावर्णनम्। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

अतः परमिदं पुण्यं वक्ष्यामि मुनिसत्तम!।
पुण्यातिशयसंयुक्तं सर्व्वदेवैरनुष्ठितम्॥ 1 ॥

(श्रीनन्दिकेश्वर ने सनत्कुमार के प्रति कहा कि) हे मुनिसत्तम! इसके आगे मैं परमपुण्य (शिवलिंग व्रत के) सम्बन्ध में कहता हूँ। पूर्व में इसका अतिपुण्य के साथ समस्त देवताओं द्वारा अनुष्ठान किया गया है।

ब्रह्मणा विष्णुना देव्या स्कन्देन्द्राभ्यां[2] यमेन च।
वरुणादित्य सोमाग्निमरुद्धनदनारदैः॥ 2 ॥

भगवान् ब्रह्मा, विष्णु, देवियों, स्कन्द, इन्द्र, यम, वरुण, आदित्य, सोम, अग्नि, मरुतगण, कुबेर और नारद;

धर्म्मश्री[3]शुक्रनक्षत्रविलोहितशनैश्चरैः ।
विश्वामित्रवसिष्ठात्रिबृहस्पतिबुधादिभिः ॥ 3 ॥

---

1. 'इति शिवधर्मपुराणे अष्टमोऽध्यायः' इति मातृकायाम्।
2. 'स्कन्द्रेन्द्रेण' इति पाठः। (तुलनीय— व्रतखण्ड अध्याय 31, पृष्ठ 880)
3. 'धर्म्मस्त्रीशुक्रे'ति पाठः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

धर्मराज, श्री, शुक्र, नानाविध नक्षत्रों, मंगल, शनिश्चर, विश्वामित्र, वसिष्ठ, अत्रि, बृहस्पति, बुधादि;

श्वेतागस्त्यवधीच्याद्यैः सर्वैश्च मुनिसत्तमैः।
भृङ्गमात्रमहाकाल[1] चण्डिदण्डिगणाधिपैः॥ 4॥

श्वेत, अगत्स्य, दधीचि आदि समस्त मुनिवरों, भृंगमात्र, महाकाल, चण्डिन्, दण्डिन् आदि गणाधिपों;

वृषवासुकिककोंटगु(!कु)लिकानन्ततक्षकैः ।
पद्मशङ्खमहापद्मैः अन्यैश्चाऽपि महोरगैः॥ 5॥

वृष, वासुकि, कर्कोटक, कुलिक, अनन्त, तक्षक, पद्म, शङ्ख, महापद्म और अन्य महान् सर्पों;

सिद्धैर्य्यक्षैश्च गन्धर्वैः भूतैः किंपुरुषादिभिः।
वसुभिश्चाप्सरैः सूर्यैः रक्षोभूतगणैरपि॥ 6॥[2]

सिद्धों, यक्षों, गन्धर्वों, भूतगणों, किंपुरुषादि सहित, वसु, अप्सराओं, सूर्य, राक्षस, भूतादि गणों;

विश्वेदेवैस्तथा सर्वैः तैस्तैः सुकृतिभिर्वरैः।
शिवे गतिर्यथा प्राप्ता सर्वगत्यतिशायिनी॥ 7॥
मया चेशप्रसादेन तथा विधिपरं शृणु।

विश्वेदेव तथा वे सभी जो सुकृत्यों के फलस्वरूप श्रेष्ठ हैं, उन्होंने इस व्रत के प्रभाव से भगवान् शिव से जैसी गति प्राप्त की, वह समस्त गतियों की अपेक्षा अतिशायिनी हैं। मुझे इस व्रत का विधान भगवान् शिव की कृपा से सुलभ हुआ है, इसकी समस्त विधि को आगे तुम सुनो।

शिवलिंगव्रतविधानमाह —

सितचन्दनतोयेन स्नाप्य लिङ्गं विलिप्य च॥ 8॥
श्वेतैर्विकसितैः पद्मैः सम्पूज्य प्रणिपत्य च।
तत्र पद्मासने सौम्ये निश्छिद्रे पुष्पिते सिते[3]॥ 9॥

---

1. 'भार्गवामित्रमहाकालैश्चेण्डेश्वरगणाधिपैः॥' इति पाठः (तुलनीय—व्रतखंड उपर्युक्त)
2. 'सिद्धैर्य्यक्षैः किंपुरुषैर्वसुभिश्च महात्मभिः। अप्सरोदैत्यगन्धर्वैरक्षोभूतगणैरपि॥' इति पाठः। (तुलनीय—उपर्युक्त)
3. पङ्कजे विमले सोमे निश्छिद्रे पुष्पिते घने॥ इति पाठः। (तुलनीय—उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

व्रतार्थी को चाहिए[1] कि वह जल में सफेद चन्दन को जल में घिसकर शिवलिंग को स्नान करवाएँ और विलेपन करें। इसके बाद सफेद कमलों को चढ़ाकर पूजा करें और शिव प्रणाम करें। इसके बाद वहीं पर पद्मासन पर बैठकर रमणीय, छेदविहीन सफेद पुष्पों को ग्रहण करें।

मध्ये केसरजालस्य स्थाप्य लिङ्ग कनीयसम्।
अङ्गुष्ठप्रतिमं लिङ्गं सर्वगन्धमयं शुभम्[2]॥ 10॥

इस पुष्पों के मध्य में केसर जाल होना चाहिए। इनसे एक कनिष्ठ लिंग की रचना करें। यह लिंग अँगूठे के बराबर होना चाहिए। इसको समस्त शुभ सुगन्धों से युक्त करना चाहिए।

स्थाप्य दक्षिणामूर्तौ तु बिल्वपत्रैस्तदर्चयेत्।
अगरुं दक्षिणे पार्श्वे पश्चिमे तु मनश्शिलाम्॥ 11॥

इस शिवलिंग को दक्षिणामूर्त्ति शिव के समीप स्थापित करें और फिर बिल्वपत्रों से अर्चना करें। तदोपरान्त उसकी दक्षिणपार्श्व में अगरु से और पश्चिम की ओर मनःशिला चढ़ाएँ।[3]

उत्तरे चन्दनं दद्याद् हरितालं तु पूर्वतः।
सुगन्धैः कुसुमैरन्यैः विचित्रैश्चापि पूजयेत्॥ 12॥

---

1. लिंगपुराण में यह महाव्रत किंचित प्रकारान्तर से आया है। वहाँ कहा गया है कि यह पशुपाश से मुक्तिप्रदाता शिवलिंग महाव्रत है। इसको देवताओं ने पहले किया था। पूर्वकाल में शिलाद के पुत्र नन्दी से सनत्कुमार ने पूछा था और जो कुछ नन्दी ने बताया, वह ऋषियों ने कहा। यह पहले देवताओं, दैत्यों, गन्धर्वों, सिद्धों, चारणों और महाभाग्यवान ऋषियों ने किया था। यह सांसारिक भोग, योग, काम और मुक्ति प्रदान करता है। इसे ब्रह्मा, विष्णु आदि ने भी पहले किया था। व्रत का विधान यहाँ आए विधान से तुलनीय है— कृत्वाकनीयसं लिङ्गं स्नाप्य चन्दनवारिणा। चैत्रमासादि विप्रेन्द्राः शिवलिङ्गव्रतं चरेत्। कृत्वा हैमं शुभं पद्मं कर्णिका केसरान्वितम्। नवरत्नैश्च खचितमष्टपत्रं यथाविधि॥ कर्णिकायां न्येसेल्लिङ्गं स्फाटिकं पीठसंयुतम्। तत्र भक्त्या यथान्यायमर्चयेद्बिल्वपत्रकैः॥ सितैः सहस्रकमलै रक्तैर्नीलोत्पलैरपि। श्वेतार्ककर्णिकारैश्च करवीरैर्बकैरपि॥ एतैरन्यैर्यथालाभं गायत्र्या तस्य सुव्रताः। सम्पूज्य चैव गन्धाद्यैर्धूपैर्दीपैश्च मङ्गलैः॥ नीरजनाद्यैश्चान्यैश्च लिङ्गमूर्तिं महेश्वरम्। अगरुं दक्षिणे दद्यादघोरेण द्विजोत्तमाः॥ पश्चिमे सद्यमन्त्रैण दिव्यां चैव मनःशिलाम्। उत्तरे वामदेवेन चन्दनं वापि दापयेत्॥ पुरुषेण मुनिश्रेष्ठा हरितालं च पूर्वतः। सितागरूद्भवं विप्रास्तथा कृष्णागरूद्भवम्॥ तथा गुग्गुलुधूपं च सौगन्धिकमनुत्तमम्। सितारं नामं धूपं च दद्यादीशाय भक्तितः॥ महाचरुर्निवेद्यः स्यादाढकान्नमथापि वा। एतद्वः कथितं पुण्यं शिवलिङ्गमहाव्रतम्॥ (लिङ्गपुराण पूर्व. 81, 9–18)
2. 'अङ्गुष्ठमात्रं विधिवत्सर्व्वं गन्धमयं शुभम्।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
3. 'स्थाप्य दक्षिणामूर्त्तौ तु बिल्वपत्रैः समर्चयेत्॥ अगुरुं दक्षिण पार्श्वे पश्चिमेन मनःशिलम्।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त तत्रैव भावार्थेऽपि—दक्षिणामूर्त्तिसमीपे)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उत्तर दिशा की ओर चन्दन प्रदान करें और पूर्व की ओर हरिताल चढ़ाएँ। इसके बाद उस पर सुगन्धों और अनेक रंगों वाले पुष्पों को चढ़ाकर पूजा करनी चाहिए।

धूपं कृष्णागरुं दद्यात् सघृतञ्चाऽपि गुग्गुलुम्।
वासांसि च सुसूक्ष्माणि [1]विकेशानि निवेदयेत्॥ 13॥

इस अवसर पर घृत सहित गुग्गुल और काले अगरु की धूप करनी चाहिए और शिव को उत्सुकतापूर्वक सूक्ष्म वस्त्र निवेदित करें।

पायसं घृतसंयुक्तं घृतदीपांश्च दापयेत्[2]।
सर्वं निवेद्य मन्त्रेण ततो गच्छेत्प्रदक्षिणम्॥ 14॥

इसी प्रकार घृत मिला दूध चढ़ाएँ और घृत का ही दीप प्रज्वलित करें। मन्त्रोच्चार के साथ समस्त प्रकार के नैवेद्य निवेदित करें और प्रदक्षिणा पर निकलें।

प्रणम्य भक्त्या देवेशं स्तुत्वा चान्ते क्षमापयेत्।
सर्व्वोपहारसंयुक्तं ततो लिङ्गं निवेदयेत्॥ 15॥

इसके बाद भक्तिपूर्वक देवेश शिव की स्तुति के साथ नमस्कार करें। अन्त में क्षमाकामना की जानी चाहिए। इस अवसर पर समस्त उपहारों को शिवलिंग के प्रति निवेदित करना चाहिए।

शिवलिंगव्रतस्य माहात्म्यमाह —

शिवाय शिवमन्त्रैश्च दक्षिणामूर्त्तिमाश्रितः।
अनेन विधिना देवाः सर्वेदेवत्वमागताः॥ 16॥

इस व्रत विधान से ही दक्षिणामूर्त्ति शिव के आश्रय में शिवमन्त्र के प्रभाव से समस्त देवताओं ने देवत्व को प्राप्त किया था।

देवी देवत्वमापन्ना गुहः स्कन्दत्वमागतः।
ब्रह्मा ब्रहत्वमापन्नो हरिर्विष्णुत्वमागतः॥ 17॥

देवियों ने अपने देवत्व को सिद्ध किया था। गुह (शिवपुत्र षण्मुख) ने अपने स्कन्दत्व को प्राप्त किया। ब्रह्मा ने ब्रह्मत्व को प्राप्त किया और हरि ने विष्णुत्व पाया था।

अनेन विधिना देवाः सर्वे देवत्वमागताः।

---

1. 'वासांसि चापि सूक्ष्माणि विकाशानि नवानि च।' इति पाठः। (व्रतखंड उपर्युक्त)
2. 'कारयेत्' इति क्वचित् पाठः। (उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इन्द्रश्च देवराजत्वं गणाश्च गणतां गताः॥ 18॥

इसी विधि के साथ सभी देवताओं ने अपने देवत्व को पाया था। इन्द्र ने देवराजत्व और गणों ने गणत्व प्राप्त किया।[1]

एवं योऽर्चयते लिङ्गं पद्मैर्गन्धमयं शुभम्।
सर्व्वपापविनिर्मुक्तः [2]शिवलोकमवाप्नुयात्॥ 19॥

इस प्रकार जो कमलों और सुगन्धों के साथ शिवलिंग का अर्चन-पूजन करता है, वह समस्त पापों से विमुक्त होकर शिवलोक को प्राप्त होता है।

एतद्व्रतोत्तमं गुह्यं शिवलिङ्ग महाव्रतम्।
भक्तस्य ते मयाख्यातं न देयं यस्य कस्यचित्॥ 20॥

यह उत्तम और गोपनीय व्रत शिवलिंग नामक महाव्रत है। (हे सनत्कुमार!) मेरे कहे हुए इस व्रत का विधान किसी भक्त को ही कहना चाहिए, ऐसे-वैसे अन्य किसी व्यक्ति को नहीं बताना चाहिए।

शिवभक्ते सदादेयं शिवेन कथितं पुरा।
चिरपर्युषितं माल्यं शिवस्थानयेत्तु यः॥ 21॥
गोसहस्रफलं तस्य भवतीह न संशयः।

यह सदा शिवभक्तों को देना चाहिए, ऐसा भगवान् शिव ने पहले कहा है। शिवालय में जो इस प्रकार चिरकालीन उपासना शृंखला का सम्पादन करता है, उसको हजार गायों के दान के समान फल मिलता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

इति शिवधर्मपुराणे[3] शिवलिङ्ग महाव्रतं नामः नवमोऽध्यायः॥ 9॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में शिवलिंग महाव्रत नामक नवाँ अध्याय पूरा हुआ।

*****

---

1. इन श्लोकों का भाव इस श्लोक से तुलनीय है— देवत्वं वा पितृत्वं वा देवराजत्वमेव च। गाणपत्यपदं वापि सक्तोपि लभते नरः॥ (लिङ्गपुराण पूर्व., 81, 53)
2. 'शिवमेवाभिगच्छति' इति पाठः। (उपर्युक्त)
3. 'शास्त्रे' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अथ दशमोऽध्यायः ॥ 10 ॥

शिवव्रतों के सम्बन्ध में विशेष कथन, अष्टमी और चतुर्दशी पर व्रत व शिर्वाचना का फल, नक्तादि का विधान और विविध दानादि का माहात्म्य

वर्षपर्यन्त प्रत्येकमासे उभयपक्षे चतुर्दश्याष्टम्योपवासपूर्वकं शिवार्चनं फलमाह।

श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः।
योब्दमेकं न भुञ्जीत शिवार्चनरतः शुचिः ॥ 1 ॥
यत्पुण्यमक्षयं प्रोक्तं सततं सत्रयाजिनाम्।

(श्रीनन्दिकेश्वर ने सनत्कुमार से शिवव्रतों[1] के सम्बन्ध में आगे कहा कि) एक वर्ष पर्यन्त प्रत्येक मास में शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की अष्टमी और चतुर्दशी को जो व्यक्ति भोजन नहीं करके पवित्रहृदय होकर शिवार्चना में निरत रहता है तो उसके इस वर्षभर चलने वाले व्रत-यज्ञ का पुण्य अक्षय कहा गया है।

सत्यवादिषु यत्पुण्यं यत्पुण्यं तीर्थगामिनाम् ॥ 2 ॥
अग्निहोत्रिषु यत्पुण्यं यत्पुण्यं यज्ञयाजिनाम्।
तत्पुण्यं सकलं प्राप्य शिवलोकं स गच्छति ॥ 3 ॥

जो पुण्य सत्यभाषण करने का कहा गया है, जो पुण्य तीर्थों की यात्राओं का कहा गया है, जो पुण्य अग्निहोत्र करने का कहा गया है और जो पुण्य यज्ञों के सम्पादन का कहा गया है, वह समस्त पुण्य इस व्रत से प्राप्त होता है और इसका कर्ता शिवलोक को प्राप्त होता है।[2]

पर्वप्रसङ्गात्पृथ्वीपात्रेभुक्तफलमाह —

पृथिवीं भाजनं कृत्वा भुक्तः पर्वसु यत्नतः।

---

1. इन व्रतों का विधान किंचित पाठान्तर के साथ लिंगपुराण में मिलता है। वहाँ कहा गया है कि ये व्रत पूर्वकाल में नन्दी ने बुद्धिमान् ब्रह्मापुत्र सनत्कुमार को बताया था। उनको व्यास ने पुनः कहा था जिस आधार पर सूतजी ने मुनियों से कहा था। इस प्रकार लिंगपुराणकार के लिए इन व्रतों के हेतु प्रस्तुत शिवधर्मपुराण आधारग्रन्थ रहा है। क्योंकि, इसमें नन्दिकेश्वर सनत्कुमार को यही वर्णन सुना रहे हैं। (लिंगपुराण पूर्वभाग, अध्या. 83)
2. तुलनीय— अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ॥ वर्षमेकं तु भुञ्जानो नक्तं यः पूजयेच्छिवम्। सर्वयज्ञफलं प्राप्यं स याति परमां गतिम् ॥ (लिंगपुराण पूर्व. 83, 3-4)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अहोरात्रेण चैकेन त्रिरात्रफलमश्नुते॥ 4॥[1]

विभिन्न पर्वों (चतुर्दशी, अष्टमी, पूर्णिमा व अमावस्या एवं सङ्क्रान्ति) पर प्रयत्नपूर्वक एक दिन-रात उक्त व्रत को धारण करके और पृथ्वी को पात्र बनाकर भोजन करने पर शिवभक्त तीन रात्रियों का फल प्राप्त कर लेता है।

पञ्चम्याः प्रतिपदव्रतफलम् —

द्वयोर्मासस्य पञ्चम्योः द्वयोप्रतिपदोर्नरः।[2]
सोपवासः सुगन्धाङ्गः शयीत प्रियया सह॥ 5॥
शेते निश्चलचित्तो यो रतिक्रीडादिवर्जितः।
शिवनुस्मृतचित्तस्य तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 6॥

दो मास तक दोनों पंचमी और दोनों प्रतिपदा तिथियों पर जो उपवास रखें और अंगों में सुगन्ध को धारण करें और अपनी प्रिया के साथ सोयें किन्तु निश्चलचित्त होकर रतिक्रीड़ा का परित्याग कर भगवान् शिव का स्मरण करता है, (हे सनत्कुमार!) उसके फल को सुनो।

दिव्यवर्षसहस्राणि दिव्यवर्षशतं तथा।
तपस्तप्तं महत्तेन भवेदेव न संशयः॥ 7॥
भवभक्ति सुपूतात्मा यद्यपि स्यात्सपापकृत्।
शिवलोके वसेन्नित्यं शिववत्संवृतो गणैः॥ 8॥

ऐसा व्रतार्थी दिव्य हजार वर्ष और दिव्य सौ वर्षों तक महानतम तपस्या करें, ऐसा (सिद्ध) हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है। भवभक्ति से पवित्रात्मा होकर चाहे वह पाप करने वाला ही क्यों न हो, वह नित्य शिवलोक में निवास करने वाला होता है और शिव के समान ही होकर गणों से घिरा रहता है।

नक्ताशीव्रतफलम् —

कृष्णाष्टम्यां तु नक्ताशी यावत्कृष्णचतुर्दशी।
इह भोगमवाप्नोति परत्र च शिवां गतिम्॥ 9॥[3]

---

1. तुलनीय— पृथिवीं भाजनं कृत्वा भुक्त्वा पर्वसु मानवः। अहोरात्रेण चैकेन त्रिरात्रफलमश्नुते॥ (पूर्ववत 83, 5)
2. लिंगपुराण में इस व्रत को क्षीरधाराव्रत अर्थात् मात्र दुग्ध के आहार पर रहने का व्रत कहा गया है : द्वयोर्मासस्य पञ्चम्योर्द्वयोः प्रतिपदोर्नरः। क्षीरधाराव्रतं कुर्यात्सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ (पूर्ववत 83, 6)
3. तुलनीय—कृष्णाष्टम्यां तु नक्तेन यावत्कृष्णचतुर्दशी। भुञ्जन्भोगानवाप्नोति ब्रह्मलोकं च गच्छति॥ (उपर्युक्त 83, 7)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मास में कृष्णपक्ष की अष्टमी से लेकर कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तक जो केवल रात्रि भोजन वाला शिवभक्त इस सांसारिक लोक में सुखों-भोगों को भोगकर परलोक में शिवलोक को जाता है।

वर्षमेकं पर्वावसरे नक्तव्रतमाह —

योब्दमेकं न भुञ्जीत नक्तं पर्वसु पर्वसु।
ब्रह्मचारी जितक्रोधः शिवार्चाजपतत्परः॥ 10॥
संवत्सरान्ते विप्रेन्द्रान् शिवभक्तान्सदक्षिणम्।
भोजयित्वा ततो ब्रूयात् प्रीयतां भगवांच्छिवः॥ 11॥[1]

जो एक वर्ष पर्यन्त पर्व-पर्व पर भोजन नहीं करके नक्त व्रत करता है और ब्रह्मचारी रहता है, क्रोध पर नियन्त्रण रखता है, शिव की अर्चना तथा जप में तत्पर रहता है तथा उसको वर्ष पूरा होने पर विप्रों व शिवभक्तों से दक्षिणा देकर भोजन करवाना चाहिए और भोजनार्थियों के प्रति यह कहना चाहिए—'भगवान् शिव की कृपा बनी रहे।'

कपालव्रतधारिणम्प्रतिभोजनफलम् —

भोजयेद्यस्तु विद्वांसं कपालव्रतधारिणम्।
भोजितास्तेन देवेशा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः॥ 12॥
कपालपूर्णमशनं भैक्षं योयस्त गृह्णति।
कुलं तस्योद्धरत्येव दशपूर्वं दशापरम्॥ 13॥

शिवव्रतार्थी को ऐसे विद्वानों को भोजन करवाना चाहिए जो कि कपालव्रत को धारण किए हुए हों तो उसे यह समझना चाहिए कि उसने देवेश ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर को भोजन करवाया है। खप्पर भरे हुए भोजन की भिक्षा जो जिससे ग्रहण करता है, उसके पूर्व के और बाद में दस कुलों का उद्धार हो जाता है अर्थात् इससे स्वयं सहित, पूर्वापर इक्कीस कुलों का उद्धार होता है।

पाद्यार्घ्याचमनीयानि गन्धपुष्पैः समन्ततः।
अर्चयेदतिनन्द्दृष्ट्वा पश्चाद्भैक्ष्येण तर्पयेत्॥ 14॥

उनके पाँवों में अर्घ्य देकर और आचमन करके तथा गन्ध-पुष्पादि से बहुत ही सम्मान करते हुए उनके दर्शन करें। तत्पश्चात् भोजन से तृप्त करें।

---

1. तुलनीय— योब्दमेकं प्रकुर्वीत नक्तं पर्वसु पर्वसु। ब्रह्मचारी जितक्रोधः शिवध्यानपरायणः॥ संवत्सरान्ते विप्रेन्द्रान भोजयेद्विधिपूर्वकम्। स याति शाङ्करं लोकं नात्र कार्या विचारणाः॥ (उपर्युक्त 83, 8-9)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पूजितस्तैः शिवः साक्षात् पूजितो नात्र संशयः।
अवमतेरवभतः स्यात् स्वयं वै परमेश्वरः॥ 15॥

इस प्रकार से उनकी पूजा से साक्षात् शिव की पूजा समझनी चाहिए, इसमें संशय नहीं करें। इस तरह यहाँ पर वे स्वयं परमेश्वर के स्वरूप होते हैं।

श्रद्धया परया युक्तः कपालेयः प्रयच्छति।
तत्तस्य फलते दानं व्रजेच्छतसहस्त्रधा॥ 16॥
एवं विधिसमायुक्तः शिवलोके महीयते।
न च स मानुष्यकं देहं पुनः सम्प्राप्नुयान्नरः॥ 17॥

परम श्रद्धा के साथ कपाल को जिस-जिस भोजन सामग्री से भरता है, उस-उसका दान फलित होता है और सैकड़ों-हजारों गुना हो जाता है। इस विधि से युक्त होकर व्रत का पालन करने वाला शिवलोक को जाता है और यदि मनुष्य देह नहीं भी रहे तो वह पुनः मनुष्यरूप में ही जन्म लेता है।

नक्तव्रतमाहात्म्यमाह —

उपवासात् परं भैक्षं भैक्षात्परमयाचितम्।
अयाचितात्परं नक्तं तस्मान्नक्तेन वर्तयेत्॥ 18॥

उपवास रखने की अपेक्षा भिक्षा माँगकर आहार करना उचित है, भिक्षा की अपेक्षा बिना माँगे प्राप्त भोजन करना उचित है और बिना माँगे प्राप्त भोजन की अपेक्षा नक्तव्रत उचित होता है। अतएव नक्तव्रत करना चाहिए।

देवैर्यु(? भु)क्तं तु पूर्वाह्णे मध्याह्ने ऋषिभिस्तथा।
अपराह्णे च पितृभिः सन्ध्यायां गुह्यकादिभिः॥ 19॥
सर्ववेलामतिक्रम्य नक्तभोजनमुत्तमम्।
कामचारो महादेवो नक्तेनोद्धरते नरम्॥ 20॥

इस प्रसंग में यह ज्ञातव्य है कि अपूर्वाह्ण में किया गया भोजन देवताओं का होता है, मध्याह्न में ऋषिगणों का, अपराह्ण में पितृगणों का और सन्ध्याकाल में किया गया भोजन गुह्यकादिगणों का होता है किन्तु सभी कालों का अतिक्रमण करके रात्रि में किया गया भोजन उत्तम होता है। कामचार महादेव रात्रि में भोजन करने वाले व्यक्तियों का उद्धार कर देते हैं।

हविष्यभोजनं स्नानं सत्यमाहारलाघवम्।
अग्निकार्यमधः शय्यां नक्तभोजी समाचरेत्॥ 21॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रात्रिकाल में भोजन करने वाले को हविष्यान्न ग्रहण करना चाहिए, स्नान करना चाहिए, सत्य का परिपालन करना चाहिए, अल्पहार करना चाहिए, अग्निहोत्र करना चाहिए और पृथ्वी पर शयन करना चाहिए।

मार्गशीर्षादिमासे नानानामात् शङ्करदेवमर्चनफलादीनां —

कृष्णाष्टम्यां प्रयत्नेन कृत्वा नक्तं विधानतः।
मार्गशीर्षे शुभे मासे शङ्करं देवमर्चयेत्॥ 22॥
पीत्वा शक्त्या च गोमूत्रं अनाहारो निशि स्वपेत्।
अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 23॥

मार्गशीर्ष (अगहन) में कृष्णपक्ष की अष्टमी को प्रयत्नपूर्वक विधान के अनुसार नक्त व्रत (रात्रिभोजन) करना चाहिए। इस शुभ मास में भगवान् शंकर की अर्चना करें। इस व्रत के साथ जो साधक अपने सामर्थ्य के साथ गोमूत्र का पान करता है और निराहार रहकर रात्रि में नींद लेता है, वह अतिरात्र यज्ञ का आठ गुना फल प्राप्त करता है।

एवं पुष्येऽपि सम्पूज्य शम्भुनामानमीश्वरम्।
कृष्णाष्टम्यां घृतं प्राश्य वाजपेयफलं लभेत्॥ 24॥

इसी प्रकार पौष मास में जो भगवान् शम्भु के नाम से ईश्वर की पूजा करता है और इसी मास में कृष्णपक्ष की अष्टमी को घी का प्राशन करता है तो वह वाजपेय नामक यज्ञ का फल प्राप्त करता है।

माघे माहेश्वरं नाम कृष्णाष्टम्यां प्रपूजयेत्।
निशि पीत्वा च गोक्षीरं गोमेधस्य फलं लभेत्॥ 25॥

माघ मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को जो माहेश्वर के नाम से पूजा करता है और केवल रात्रि में गोदुग्ध का सेवन करता है, उसको गोमेध का यज्ञ मिलता है।

फाल्गुन्यां तु महादेवं सम्पूज्य प्राशयेत्तिलान्।
राजसूयस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 26॥

फाल्गुन मास में (कृष्णपक्ष की अष्टमी को) जो महादेव के नाम से पूजा करता है और केवल तिल का प्राशन (आहार) करता है, उसको राजसूय यज्ञ की अपेक्षा आठ गुना फल प्राप्त होता है।

चैत्रे च स्थाणुनामानं कृष्णाष्टम्यां प्रपूजयेत्।
यवान्सुसञ्चितान्प्राश्य सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ 27॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चैत्र मास में कृष्णपक्ष की अष्टमी को जो स्थाणु नाम से भगवान् शिव की पूजा करता है और अच्छी तरह से एकत्रित किए गए जौ का (रात्रि में) आहार करता है, उसको अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है।

वैशाखे शिवनामानं इष्ट्वा रात्रौ कुशोदकम्।
पीत्वा पुरुषमेधस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 28॥

वैशाख मास में शिव के नाम से जो शंकरार्चना करता है और रात्रिकाल में केवल कुशोदक (कुशा के जल) का पान करता है, वह पुरुषमेध की अपेक्षा आठ गुना फल प्राप्त करता है।

ज्येष्ठे पशुपतिं पूज्य गवां शृङ्गोदकं पिबेत्।
गवां कोटिप्रदानस्य यत्पुण्यं तदवाप्नुयात्॥ 29॥

जो व्यक्ति ज्येष्ठ के महीने में पशुपतिनाथ की पूजा करता है और (रात्रिकाल में) गाय के शृंगोदक का पान करता है, उसको करोड़ गायों के दान के बराबर पुण्य मिलता है।

आषाढे चोग्रनामानं इष्ट्वा प्राश्य च गोमयम्।
सौत्रामणेस्तु यज्ञस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 30॥

आषाढ़ मास में जो उग्र के नाम से भगवान् शिव की अर्चना करता है और गोमय को (रात्रि में) आहार के रूप में ग्रहण करता है, उसको सौत्रामण यज्ञ की अपेक्षा आठ गुना फल मिलता है।

श्रावणे शर्वनामानं पिण्याकं निशि भक्षयेत्।
वर्षकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 31॥

श्रावण मास में जो शर्व के नाम से शिवार्चना करता है और रात्रि में केवल पिण्याक (तिलकूटा, खलकुट्टी) का आहार ग्रहण करता है, वह सैकड़ों, करोड़ों वर्षों के आगे तक भी शिवलोक में निवास करता है।

मासे भाद्रपदेऽष्टम्यां त्र्यम्बकं देवमर्चयेत्।
प्राशनं बिल्वपत्राणां अनन्तं फलमाप्नुयात्॥ 32॥

भाद्रपद मास में जो त्र्यम्बक नाम से महादेव की अर्चना करता है और केवल बिल्वपत्रों का आहार करता है, उसको अनन्त पुण्यों का फल प्राप्त होता है।

मासे चाश्वयुजेऽष्टम्यां ईश्वरं नाम पूजयेत्।
तण्डुलोदकमालिह्य पौण्डरीकाष्टकं लभेत्॥ 33॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

आसोज के महीने में जो ईश्वर के नाम से शिव की पूजा करता है और (रात्रि में) चावलों के जल (माँड) का सेवन करता है, उसको आठ पौण्डरीक सत्र-यज्ञ का लाभ मिलता है।

कार्तिके रुद्रनामानं सम्पूज्य प्राशयेद्दधि।
अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं लभेत्॥ 34॥

कार्तिक मास में जो रुद्र के नाम से शिव की पूजा करता है और (रात्रि में) दही का आहार करता है

वर्षान्ते भोजयेद्विप्रान् शिवभक्तिपरायणान्।
पायसं घृतसंयुक्त मधुना च परिप्लतम्॥ 35॥
शक्त्या हिरण्यवासांसि भक्त्या तेभ्यो निवेदयेत्।
निवेदयीत रुद्राय गां च कृष्णां पयस्विनीम्॥ 36॥

इस प्रकार के व्रतों के साथ जब एक वर्ष पूरा हो जाए तो शिवभक्त को चाहिए कि वह शिवभक्ति के परायण ब्राह्मणों को भोजन करवाएँ। इस भोजन में खीर और घी मिश्रित मधु का प्रयोग किया जाना चाहिए। अपने सामर्थ्य के अनुसार उनको सुवर्ण और वस्त्रादि भक्तिपूर्वक निवेदित करें। इसी प्रकार काली पयस्विनी गाय रुद्र के प्रति निवेदित करनी चाहिए।

वर्षमेकं कृष्णाष्टमीव्रतस्य फलमाह —

वर्षमेकं चरेदेवं नैरन्तर्येण यो नरः।
कृष्णाष्टमीव्रतं भक्त्या तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 37॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वैश्वर्यसमन्वितः।
वसेच्छिवपुरे नित्यं न भूयो भुवि जायते॥ 38॥

पूरे एक वर्ष तक जो व्यक्ति निरन्तर भक्तिपूर्वक कृष्णपक्ष की अष्टमियों को व्रत करता है। उसके पुण्यफल को (हे सनत्कुमार!) सुनो। इस प्रकार के वर्षभर के व्रत से व्यक्ति समस्त पापों से विमुक्त होकर समस्त ऐश्वर्य से युक्त हो जाता है और नित्य ही शिव के पुर में निवास करता है और पुनः पृथ्वी पर जन्म नहीं लेता है।

सर्वपुण्योत्सवेषु दानोपवासफलमाह —

पुण्योत्सवेषु सर्वेषु विषुव ग्रहणादिषु।
दानोपवासहोमाद्यं अक्षयं जायते कृतम्॥ 39॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वर्षभर में प्रत्येक पुण्यावसरों, उत्सवों, विषुव सङ्क्रान्ति (तुला व मेष राशिस्थ) और चन्द्र तथा सूर्य ग्रहण के दौरान किए गए समस्त दान-दक्षिणा, व्रतोपवास एवं यज्ञ-होमादि कृत्य अक्षय होते हैं।

प्रतिमासकरणीयोत्तमशिवव्रतवर्णनफलञ्च। तत्र पुष्मासेसेवनीयशिवव्रतम् —

प्रतिमासं प्रवक्ष्यामि शिवव्रतमिहोत्तमम्।
धर्मार्थकाममोक्षार्थं नरनार्यादि देहिनाम्॥ 40॥

अब मैं प्रत्येक महीने में सम्पादित करने योग्य उस उत्तम शिवव्रत का वर्णन करूँगा जो शरीरधारी नर-नारियों के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए होता है।

पुष्यमासेतु सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
जितेन्द्रियः सत्यवादी शालिगोधूमगोरसैः॥ 41॥
पक्षयोरष्टमीं यत्नाद् उपवासेन वर्तयेत्।[1]
त्रिसन्ध्यमर्चयेदीशं अग्निकार्यं च शक्तितः॥ 42॥

(पौष मास से इस व्रत को प्रारम्भ करने का निर्देश देते हुए श्रीनन्दिकेश्वर ने सनत्कुमार से कहा कि) पौष मास के आते ही जो व्यक्ति नक्तव्रत के नियमों से भोजन करता है और सभी इन्द्रियों को जीतता हुआ, सत्यवादी होता है और चावल, गेहूँ और गाय के दूध से बनी सामग्री का (रात्रि में) आहार के रूप में प्रयोग करता है तथा कृष्णपक्ष व शुक्लपक्ष की दोनों ही अष्टमियों को प्रयत्नपूर्वक उपवास रखता है, तीनों ही सन्ध्याकाल में ईश की अर्चना करता हुआ यथाशक्ति अग्निकार्य करता है;

भूमिशायी तु मासान्ते पौर्णमास्यां घृतादिभिः।
कृत्वा स्नानं महापूजा शिवे यत्नात् प्रकल्पयेत्॥ 43॥
नैवेद्यं यावक प्रस्थं क्षीरसिद्धं निवेदयेत्।
भोजयेच्च द्विजानष्टौ शिवभक्तान्सदक्षिणम्॥ 44॥
शिवायैवं गोमिथुनं कापिलं च निवेदयेत्।
अलङ्कृत्यं सुरूपं च तस्य पुण्यफलं शृणु॥ 45॥

---

1. तुलनीय— पुष्यमासे च सम्पूज्य यः कुर्यान्नक्तभोजनम्॥ सत्यवादी जितक्रोधः शालिगोधूम गोरसैः। पक्षयोरष्टमीं यत्नादुपवासेन् वर्तयेत्॥ भूमिशय्यां च मासान्ते पौर्णमास्यां घृतादिभिः। स्नाप्य रुद्रं महादेवं सम्पूज्य विधिपूर्वकम्॥ यावकं चौदनं दत्त्वा सक्षीरं सघृतं द्विजाः। भोजयेद्ब्राह्मणाञ्शिष्टाञ्जपेच्छान्तिं विशेषतः॥ तथा गोमिथुनं चैव कपिलं विनिवेदयेत्॥ भवाय देवदेवाय शिवाय परमेष्ठिने॥ स याति मुनिशार्दूल वाह्नेयं लोकमुत्तमम्। भुक्त्वा स विपुलान् लोकान् तत्रैव स विमुच्यते॥ (लिंगपुराण पूर्व. 83, 14-19)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

व्रतार्थी भूमि पर शयन करता है और मास के अन्त में, पौषी पूर्णिमा के दिन घृतादि से सप्रयत्न भगवान् शिव को स्नान करवाकर महापूजा करता है तथा नैवेद्य के रूप में प्रस्थ-प्रमाण (खाण्डे हुए) जौ की खीर (खीच[1]) तैयार करके निवेदित करता है और आठ शिवभक्त ब्राह्मणों को भोजन करवाता है, उनको दक्षिणा प्रदान करता है तथा देवादिदेव शंकर के प्रति स्वस्थ व सज्जित गोमिथुन (गाय और बैल) निवेदित करता है, उसका पुण्यफल सुनो।

सूर्यकोटि प्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः।
रुद्रकन्यासमाकीर्णैः महावृषभसंयुतैः॥ 46॥
सङ्गीतनृत्तवाद्याधैः अप्सरोगणसेवितैः।
चामरैर्धूयमानश्च स्तूयमानः सुरासुरैः॥ 47॥
त्रिनेत्रशूलपाणिश्च शिवैश्वर्यसमन्वितः।
गच्छेच्छिवपुरं रम्यं यत्रास्ते शङ्करः स्वयम्॥ 48॥

वह व्रतार्थी ऐसे विमान पर सवार होता है जो करोड़ों सूर्यों से दीप्तिमान होता है और जिसमें सभी कामनाएँ पूरी होती हैं। वह महावृषों से संयुक्त होता है। वह अनेकानेक रुद्रकन्याओं से घिरा रहता है; संगीत, नृत्त और वाद्यादि वादन में तत्पर अप्सराओं के गणों से सेवित होता है, उसकी प्रशस्तियों का गान करते हुए सुर-असुरगण चँवर डुलाते रहते हैं, वह तीन नेत्र और हाथ में त्रिशूल रखने वाले शिव के समस्त ऐश्वर्य से समन्वित होकर रम्य शिवपुर को जाता है जहाँ पर भगवान् शंकर स्वयं विराजित होते हैं।

यावत्तद्रोम सङ्ख्यानं तत्प्रसूति कुलेषु च।
तावद्यूगसहस्त्राणि सुखी शिवपुरे वसेत्॥ 49॥
त्रिसप्तकुलजैः सार्धं भोगान्भुङ्क्ते यथेच्छया।
ज्ञानयोगं समासाद्य स तत्रैव विमुच्यते॥ 50॥

उसके कुल में जन्म लेने वाले जनों के जितने केशों की संख्या होती है, उतने ही हजार युगों तक वह शिवपुर में निवास करता है। वह अपने इक्कीस कुलों में जन्म लेने वालों के साथ यथेच्छित भोगों को भोगता है और ज्ञानयोग को प्राप्त करके वहाँ मुक्त हो जाता है।

---

1. जौ को कुछ देर भीगोकर जब उखल में खाण्डा जाता है तो उसके छिलके उतर जाते हैं। उनको जब दूध में उबाला जाता है तो खीच तैयार होता है। मेवाड़ आदि प्रदेशों में आज भी शिवपर्वों और विशेषकर मकर संक्रान्ति के दिन खीच ही प्रमुख खाद्य सामग्री है। उत्तरायण को खीच का त्यौहार भी कहा जाता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

योगाद्दुःखान्तमाप्नोति ज्ञानाद्योगः प्रवर्तते।
शिवधर्मोद्भवं ज्ञानं शिवधर्मः शिवार्चनात्॥ 51॥
इत्येष वः समाख्यातः संसारार्णव वर्तिनाम्।
शिवमोक्षक्रमोपायः शिवाश्रम निषेवणम्॥ 52॥

यह ज्ञातव्य है कि योग से दुखों का अन्त प्राप्त होता है और साधक ज्ञानयोग में प्रवर्तित होता है। शिवधर्मानुसार ही भगवान् शिव की अर्चना से शिवधर्मोत्पन्न होने वाला ज्ञान होता है। इतना ही संसार सागर के अनुवर्तीजनों के लिए जीवन में करणीय कृत्य के रूप में कहा गया है। शिवाश्रम (शिवलोक) के सेवन के लिए यह भगवान् शिव द्वारा मोक्ष का उपाय बताया गया है।

माघमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च[1] —

माघ मासे शुभे प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
कृसरं घृतसंयुक्तं भुञ्जानस्संयतेन्द्रियः॥ 53॥
उपवासश्चतुर्दश्यां भवेदुभयपक्षयोः।
शिवाय पौर्णमास्यन्ते प्रदद्याद्धृतकम्बलम्॥ 54॥
कृष्णगोमिथुनं चात्र सुरूपं विनिवेदयेत्।
शेषं कृत्वा यथोद्दिष्टं पूर्वोक्तं लभते फलम्॥ 55॥
इन्द्रनील प्रतीकाशैः विमानैः सर्वकामिकैः।
गत्वा शिवपुरं दिव्यं भोगान्भुङ्क्ते यथेप्सितान्॥ 56॥[1]

उत्तम माघ महीने के आने पर जो व्यक्ति रात्रि भोजन करता है और आहार के रूप में घी मिश्रित खिचड़ी संयेन्द्रिय होकर ग्रहण करता है, कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की दोनों ही चतुर्दशी को उपवास रखता है और मास के अन्त में पूर्णिमा के दिन शिव को घृतकम्बल सहित काले रंग की सुन्दर गाय एवं बैल निवेदित करता है, साथ ही निर्दिष्ट नियम–व्रताचार ही परिपालन करता है तो वह पूर्वकथित समस्त फलों को प्राप्त कर लेता है। ऐसा व्रतार्थी इन्द्रनील के समान दीप्तिमान समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले विमान पर आरूढ़ होकर दिव्य शिवपुर को जाता है और वहाँ पर यथैच्छित भोगों को भोगता है।

---

1. तुलनीय— माघमासे तु सम्पूज्य यः कुर्यान्नक्तभोजनम्। कृशरं घृतसंयुक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः॥ सोपवासं चतुर्दश्यां भवेदुभयपक्षयोः। रुद्राय पौर्णमास्यां तु दद्याद्वै घृतकम्बलम्॥ कृष्णं गोमिथुनं दद्यात्पूजयेच्चैव शङ्करम्। भोजयेद्ब्राह्मणाश्चैव यथाविभवविस्तरम्॥ याम्यमासाद्य वै लोकं यमेन सह मोदते। (लिंग. पूर्व. 83, 20–23)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

फाल्गुनमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

सम्प्राप्ते फाल्गुन मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
श्यामाकक्षीरनीवारैः जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥ 57 ॥
चतुर्दश्यामथाष्टम्यां उपवासरतो भवेत्।

जब फाल्गुन मास आए, तब जो व्यक्ति नक्तव्रत करता है और साँवा की खीर तथा नीवार (बिना बोये ही उगने वाले जंगली चावल) का भोजन करता है एवं क्रोध को जीतकर जितेन्द्रिय रहता है तथा चतुर्दशी एवं अष्टमी को उपवासरत रहता है;

पौर्णमास्यां महास्नानं पञ्चगव्यघृतादिभिः ॥ 58 ॥
वल्मीकाग्रादिमृद्भिश्च गोमूत्रैर्गोमयादिभिः।
त्वग्भिश्च क्षीरवृक्षाणां धात्र गन्धादिभिः सह ॥ 59 ॥

मासान्त में पूर्णिमा को जो महास्नान करता है, इस महास्नान के लिए पंचगव्य, घृत, वल्मीक (बीमट) के आगे के भागादि की मृदा, गोमूत्र, गोमयादि सहित दूध वाले वृक्षों की छाल का चूर्ण, बहेड़ा में सुगन्ध मिलाकर नहाता है;

दद्याद्गोमिथुनं भक्त्या ताम्राभं परमेष्ठिने।
शेषमन्यद्यथोद्दिष्टं कृत्वाप्नोति महत्फलम् ॥ 60 ॥
पद्मरागप्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः।
गत्वा शिवपुरं दिव्यं पूर्वोक्तं लभते फलम् ॥ 61 ॥[1]

साथ ही व्रतार्थी ताँबे के वर्ण वाली गाय और बैल परमेष्ठि शिव के लिए भक्तिपूर्वक दान करता है तथा अन्य व्रत-नियम यथाविधि पालन करता है, वह महान् फल को प्राप्त करता है। वह पद्मराग जैसी रत्नदीप्ति वाले विमान में समस्त इच्छाओं को पूर्ण करता हुआ दिव्य शिवपुर को जाता है और पूर्वोक्त फलों को प्राप्त करता है।

चैत्रमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

चैत्र मासे शुभे प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
पिष्टकं पयसायुक्तं भुञ्जानो विजितेन्द्रियः ॥ 62 ॥

---

1. तुलनीय — फाल्गुने चैव सम्प्राप्ते कुयद्वि नक्तभोजनम्॥ श्यामाकान्नघृतक्षीरैजितक्रोधो जितेन्द्रियः। चतुर्दश्यामथाष्टम्यामुपवासं च कारयेत्॥ पौर्णमास्यां महादेवं स्नाप्य सम्पूज्य शङ्करम्। दद्याद्गोमिथुनं वापि ताम्राभं शूलपाणये॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु प्रार्थयेत्परमेश्वरम्। स याति चन्द्रसायुज्यं नात्र कार्या विचारणा॥ (लिंग. पूर्व. 83, 23-26)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दद्याद्गोमिथुनं चात्र पाटलं समलङ्कृतम्।
शिवायाति सुरूपं य शेषं पूर्ववदाचरेत्॥ 63॥
पुष्परागप्रभैर्यानैः दिव्याश्वगणसंयुतैः।
यायाच्छिवपुरं दिव्यं दुष्प्रापमकृतात्मभिः॥ 64॥[1]

शुभ चैत्र महीने के आने पर जो नक्तव्रत आरम्भ करता है और खीर में आटे को घोलकर आहार रूप में ग्रहण करता है तथा जितेन्द्रिय रहता है, साथ ही पाटलवर्ण के सुन्दर रूप वाले गाय-बैल को शिव के प्रति सुसज्जित करके दान करता है तथा शेष व्रताचार नियमों को पूर्व कथनानुसार परिपालित करता है, वह पुष्पराग के समान आभा वाले ऐसे यान में सवार होता है जिस पर दिव्य अश्वगण जुते हों और दिव्य शिवपुर को जाता है जिसको अपने आप प्राप्त करना बड़ा ही दुष्कर है।

वैशाखमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

वैशाख मासे सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
शाल्यन्नं क्षीरसंयुक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः॥ 65॥
गोष्ठशायि शिवध्यायी निशायामेकवस्त्रवृत्।
नियमं च यथोद्दिष्टं सर्वं सम्यक् समाचरेत्॥ 66॥

वैशाख महीने के लगते ही जो नक्तव्रत धारण करके भोजन के रूप में शाली अन्न (चावल) को दूध के साथ ग्रहण करता है और संयतेन्द्रिय होकर गोशाला में शयन करता है, शिवध्यान के परायण होकर रात्रिपर्यन्त एक ही वस्त्र का प्रयोग करता है तथा यथोदिष्ट समस्त नियमों का पालन करता हुआ, श्रेष्ठ आचरण करता है;

वैशाखपौर्णमास्यां तु कृत्वा स्नानं व्रतादिभिः।
शिवायालङ्कृतं श्वेतं दद्याद्गोमिथुनं शुभम्॥ 67॥
हिमकुन्देन्दुवर्णाढ्यैः महायानैरलङ्कृतैः।
सुश्वेतवृषसंयुक्तैः प्रयातीश्वर मन्दिरम्॥ 68॥
सर्वातिशयरूपाभिः स्त्रीभिश्च परिवारतः।
नीलोत्पलसुगन्धाभिः क्रीडते कालमक्षयम्॥ 69॥[2]

---

1. तुलनीय— चैत्रेपि रुद्रमभ्यर्च्य कुयद्वि नक्तभोजनम्। शाल्यं पयसा युक्तं घृतेन च यथासुखम्॥ गोष्ठशायी मुनिश्रेष्ठाः क्षितौ निशि भवं स्मरेत्। पौर्णमास्यां शिवं स्नाप्य दद्याद्गोमिथुनं सितम्॥ ब्राह्मणान् भोजयेच्चैव निर्ऋतेः स्थानमाप्नुयात्। (लिंग. पूर्व. 82, 27-29)
2. तुलनीय — वैशाखे च तथा मासे कृत्वा वै नक्तभोजनम्॥ पौर्णमास्यां भवं स्नाप्य पञ्चगव्यघृतादिभिः। श्वेतं गोमिथुनं दत्त्वा सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ (लिंग. पूर्व. 83, 29-30)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

व्रतोपरान्त वैशाखी पूर्णिमा के दिन व्रतसम्मत स्नानादि करता हुआ शिव के प्रति श्वेत वर्णवाले, सुन्दर गाय और बैल को निवेदित करता है, वह हिमकुन्द के समान देदीप्यमान सुसज्जित महायान द्वारा जिसमें सुन्दर सफेद वृष जुते हुए हों, ईश्वरधाम को जाता है। वह अत्यन्त रूप-लावण्यवती स्त्रियों से घिरा रहता है और नीलकमलों की सुगन्ध वाले परिवेश में अक्षयकाल तक रमण करता है।

ज्येष्ठमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

ज्येष्ठमासे शुभे प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
शाल्यन्नमम्भसाधौतं आज्यक्षीर विवर्जितम्॥ 70॥
विरसानि तु रात्रौ स्याद् दिवा गामनुगच्छति।
हितकारी गवां नित्यं अहङ्कारविवर्जितः॥ 71॥

उत्तम ज्येष्ठ मास के आते ही जो नक्तव्रत धारण करता है और भोजन के रूप में शाली चावल के अन्न को पानी से धोकर ग्रहण करता है तथा घृत, दूध का त्याग करके रात्रि में पूरी तरह विरसमय आहार लेता है और दिन में गायों के पीछे-पीछे विचरण करता है एवं अहंकार का त्याग करके गायों का नित्य हितकारी बना रहता है;

पौर्णमास्यां च पूर्वोक्तं कुर्यात्स्नादिकं विधिम्।
देयं गोमिथुनं चैव [धूम्रं रुद्रलोक महीयते]॥ 72॥
[सूर्यकोटिसम] प्रख्यैः महायानैर्मनोरमैः।
महासिंहनिबद्धैश्च क्रीडते कालमक्षयम्॥ 73॥[1]

साथ ही पूर्वकथित विधि के अनुसार पूर्णिमा के स्नानादि विविध कृत्यों करता हुआ धूम्र वर्ण के गाय-बैल का शिव के प्रति दान करता है, वह रुद्रलोक को जाता है। वह व्रतार्थी करोड़ों सूर्यों के समान दीप्तिमय मनोरम नामक ऐसे महायान में विराजता है, जिसमें महासिंह जुते हुए हों और रुद्रलोक में अक्षयकाल तक क्रीड़ारत रहता है।

तथाषाढमासेशिवव्रतविधानफलञ्च —

आषाढे सुशुभे प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
फुल्लखण्डाज्य सम्मिश्रं दद्याद्भक्तं सगोरसम्॥ 74॥

---

1. तुलनीय —ज्येष्ठे मासे च देवेशं भवं शर्वमुमापतिम्। सम्पूज्य श्रद्धया भक्त्या कृत्वा वै नक्तभोजनम्॥ रक्तशाल्यन्नमध्वा च अद्भिः पूतं घृतादिभिः॥ वीरासनी निशार्धं च गवां शुश्रूपणे रतः॥ पौर्णमास्यां तु सम्पूज्य देवदेवमुमापतिम्। स्नाप्य शक्त्या यथान्यायं चरुं दद्याच्च शूलिने॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वा च यथाविभवविस्तरम्। धूम्रं गोमिथुनं दत्त्वा वायुलोके महीयते॥ (लिंग. पूर्व. 83, 31-34)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शुभ आषाढ़ मास के आने पर जो नक्तव्रत ग्रहण करता है और आहार के रूप में फुल्लखाण्ड (मिश्रीचूर्ण) और घृत मिले दही के साथ दूध को ग्रहण करता है;

दद्याद्गोमिथुनं घो(? गौ)रं शिवायालङ्कृतं शुभम्।
सामान्यं च विधिं सर्वं यः कुर्यात्प्राक् प्रचोदितम्॥ 75॥
शुद्धस्फटिकं सङ्काशैः यानैः सारसवाहनैः।
अणिमादि गुणैर्युक्तः शिववद्विचरेदयम्॥ 76॥[1]

इसी प्रकार (मासान्त में आषाढ़ी पूर्णिमा को) गौरवर्ण वाले सुन्दर और अलंकृत गाय-बैल को भगवान् शिव के प्रति अर्पित करता है, अन्य सामान्य व्रत-विधियों का पूर्वकथनानुसार पालन करता है, वह शुद्ध स्फटिक के समान आभा वाले ऐसे यान में बैठता है जिसको सारस खींचते हैं और अणिमादि गुण-निधियों से युक्त होकर (रुद्रधाम में) शिव के समान विचरण करता है।

श्रावणमासेशिवव्रतविधानफलञ्च —

सम्प्राप्ते श्रावणमासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
क्षीरषाष्टिकभक्तेन सर्वभूतहिते रतः॥ 77॥
श्वेताग्रपादं पौण्ड्रं च दद्याद्गोमिथुनं शिवे।

श्रावण मास के लगते ही जो नक्तव्रत धारण करता है और भोजन के रूप में साठ दिनों में तैयार हो जाने वाले चावलों की खीर को ग्रहण करता है तथा सभी प्राणियों के हित में लगा रहता है और (मासान्त में पूर्णिमा को) शिव के प्रति सफेद खुरों और पौण्ड्र (लाल रंग वाला ईख, पैंडा गन्ना) गाय-बैल को अर्पित करता है;

सामान्यमखिलं कुर्याद् विधानं यत्प्रकीर्तितम्॥ 78॥
सुविचित्रैर्महायानैः विचित्राश्वनियोजितैः।
गत्वा शिवपुरं रम्यं पूर्वोक्तं लभते फलम्॥ 79॥[2]

इसके साथ ही अन्य समस्त सामान्य व्रत-विधानों का पूर्वकथनानुसार ही

---

1. तुलनीय—आषाढे मासि चाप्येवं नक्तभोजनतत्परः। भूरिखण्डाज्यसम्मिश्रं सक्तुभिश्चैव गोरसम्॥ पौर्णमास्यां घृताद्यैस्तु स्नाप्य पूज्य यथाविधि। ब्राह्मणान् भोजयित्वा च श्रोतियान् वेदपारगान्॥ दद्याद्गोमिथुनं गौरं वारुणं लोकमाप्नुयात्॥ (लिंग. पूर्व. 83, 35-37)
2. तुलनीय — श्रावणे च द्विजा मासे कृत्वा वै नक्तभोजनम्॥ क्षीरषष्टिकभक्तेन सम्पूज्य वृषभध्वजम्। पौर्णमास्यां घृताद्यैस्तु स्नाप्य पूज्य यथाविधि॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वा च श्रोत्रियान् वेदपारगान्। श्वेताग्रपादं पौण्ड्रं च दद्याद्गोमिथुनं पुनः॥ स याति वायुसायुज्यं वायुवत्सर्वगो भवेत्। (लिंग. पूर्व. 83, 37-40)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पालन करता है, वह ऐसे अच्छे विचित्र महायान में बैठता है जिसमें एकाधिक रंगों वाले अश्व जुते हुए होते हैं और रम्य शिवपुर को जाता है और पूर्वोक्त फलों का लाभ उठाता हैं।

ज्येष्ठमासेकरणीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

प्राप्ते भाद्रपदे मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
हुतशेषं प्रभुञ्जानो वृक्षमूलाश्रिते दिवा॥ 80॥
रात्रौ चायतने वासी सर्वभूतानुकम्पकः।

भाद्रपद मास के लगते ही जो नक्तव्रत को धारण करता है और हवन से शेष रही सामग्री के सहारे आहार करता है तथा दिन में वृक्ष के मूल में आश्रय ग्रहण करता है और रात्रि में अपने आवास में रहता हुआ चराचर के भूत-प्राणियों का हितचिन्तक, उपकारी बना रहता है;

नीलस्कन्धं वृष गां च शिवाय विनिवेदयेत्॥ 81॥
निशाकरकरप्रख्यैः वज्रवैडूर्यशोभितैः।
चक्रवाक समायुक्तैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 82॥
गत्वा शिवपुरं दिव्यं अमरासुरवन्दितः।
स क्रीडते महाभोगैः यावदाभूत सम्प्लवम्॥ 83॥[1]

(मासान्त में पूर्णिमा को) शिव के प्रति नीलस्कन्ध वाला बैल और गाय को निवेदित करता है, वह निशाकरकर नामक (चन्द्रमा की श्वेत किरणों के समान), हीरों और वैडूर्य से विजटित एवं चकवों से निबद्ध विमान में समस्त कामनाओं को पूरा करता हुआ दिव्य शिवपुर को जाता है और देवताओं-असुरों से अभिवन्दित होता है। वहाँ वह प्रलयकाल तक रमण करता हुआ महान् भोगों का लाभ उठाता है।

तथाश्वयुजमासेग्रहणीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

प्राप्ते चाश्वयुजे मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्।
घृताशनं प्रभुञ्जानः प्रसन्नात्मा जितेन्द्रियः॥ 84॥
वृषभं नीलवर्णं च उरोदेशे समानतम्।

---

1. तुलनीय—प्राप्ते भाद्रपदे मासे कृत्वैवं नक्तभोजनम्॥ हुतशेषं च विप्रेन्द्रान्वृक्षमूलाश्रितो दिवा॥ पौर्णमास्यां तु देवेशं स्नाप्य सम्पूज्य शङ्करम्॥ नीलस्कन्धं वृषं गां च दत्त्वा भक्त्या यथाविधि। ब्राह्मणान् भोजयित्वा च वेदवेदाङ्गपारगान्॥ यक्षलोकमनुप्राप्य यक्षराजो भवेन्नरः। (लिंग. पूर्व. 83, 40-43)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

विमुच्य दद्याद्रुद्राय गामेकामप्यलङ्कृताम्॥ 85॥
विधिशेषमशेषेण पूर्वोक्तं समुपाचरेत्।

आश्विन (आसोज, क्वार) मास के आने पर जो नक्तव्रत के रूप में केवल रात्रि में घृत का आहार ग्रहण करता है और प्रसन्न तथा जितेन्द्रिय रहता है और (पूर्णिमा पर) ऐसे नीलवर्ण के बैल का शिव के प्रति उत्सर्ग करें जिसका ऊरुप्रदेश समान हो और एक गाय भी अलंकृत करके दान करें और अन्य समस्त उन विधियों को पूरा करें जो पूर्व में कही गई हैं;

प्राणान्ते च शिवस्थानं प्रयाति शिववत्सुखी॥ 86॥
स्वच्छमौक्तिक सङ्काशैः इन्द्रनीलोपशोभितैः।
जीवं जीवकसंयुक्तैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 87॥
सङ्क्रीडते महाभोगैः यावदाभूत सम्प्लवम्।[1]

ऐसा व्रतार्थी प्राणान्त होने पर शिवधाम को जाता है और वहाँ शिव के समान ही सुखी रहता है। वह शिवधाम में जाने के लिए ऐसे कामनापूर्तिकर्ता विमान में आरूढ़ होता है जो स्वच्छ मोतियों की आभा लिए होता है और इन्द्रनीलों से विजटित होता है तथा उसमें जीवनमय जीवक (एक मरुत) होते हैं, वहाँ वह प्रलयकाल तक महाभोगों को भोगता है।

कार्तिकमासेसेवनीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

प्राप्ते तु कार्तिकमासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्॥ 88॥
क्षीरोदनं प्रभुञ्जानः सत्यवादी जितेन्द्रियः।
दद्याद्गोमिथुनं चात्र कापिलं च ज्वलत्प्रभम्॥ 89॥

कार्तिक मास के आने पर जो नक्तव्रत रूप में रात्रि में दूध व चावल का भोजन करता है और सत्यवादी तथा जितेन्द्रिय रहता है एवं (पूर्णिमा को) लौ के समान दीप्तिमय कापिल गाय और बैल का दान करता है;

पूर्वोक्त च विधिं कुर्याच्छिवतुल्यबलो भवेत्।
कल्पानलसमप्रख्यैः महायानैर्महाबलैः॥ 90॥

---

1. तुलनीय—ततश्चाश्वयुजे मासि कृत्वैवं नक्तभोजनम्॥ सघृतं शङ्करं पूज्य पौर्णमास्यां च पूर्ववत्। ब्राह्मणान् भोजयित्वा च शिवभक्तान् सदा शुचीन्॥ वृषभं नीलवर्णाभमुरोदेश समुन्नतम्। गां च दत्वा यथान्यायमैशानं लोकमाप्नुयात्॥ (लिंग. पूर्व. 83, 43-45)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महासिंहकृताटोपैः शिववच्चेष्टते सुखी।[1]

इसके अतिरिक्त जो पूर्वप्रतिपादित व्रत-नियमों का पालन करता है, वह शिव के समान बल-पराक्रम का धनी होता है। वह कल्पानल के समान नाम वाले महायान पर सवार होता है जिसमें महाबली, महासिंह जुते हुए होते हैं। वह शिव की चेष्टाओं को करता हुआ सुखों का उपभोग करता है।

इत्यमनन्तर मार्गशीर्षेकरणीयशिवव्रतविधानफलञ्च —

मार्गशीर्ष शुभे मासे यः कुर्यान्नक्तभोजनम्॥ 91॥
यवान्नं पयसायुक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः।

मार्गशीर्ष (अगहन) मास में जो नक्तव्रत रखकर भोजन के रूप में रात्रि में जौ के दानों को दूध में पकाकर (खीच बनाकर) ग्रहण करता है और अपनी समस्त इन्द्रियों को संयम में रखता है;

दद्याद्गोमिथुनं दिव्यं पाण्डुरं समलङ्कृतम्॥ 92॥
शिवाय शेषं पूर्वोक्त विधिना समुपाचरेत्।
सितपद्मनिभैर्यानैः श्वेताश्ववरसंयुतैः॥ 93॥
गत्वा शिवपुरं दिव्यं शिवतुल्यो बली भवेत्।[2]

(मासान्त में पूर्णिमा को) दिव्य पाण्डुरवर्ण की सुसज्जित गाय और बैल को शिव के प्रति निवेदित करता है और अन्य व्रत-विधियों को पूर्वकथनानुसार आचरण में लाता है, वह सफेद कमल के समान चमक वाले ऐसे यान पर सवार होता है जो सफेद अश्वों से निबद्ध होता है और वह दिव्य शिवपुर में जाता है तथा वहाँ पर शिव के समान बलवान होकर रहता है।

व्रतकालेऽन्यानुपालनीयनियमाः —

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दमो दया॥ 94॥
त्रिःस्नानं चाग्निहवनं भूशय्या नक्तभोजनम्।

---

1. तुलनीय—कार्तिके च तथा मासे कृत्वा वै नक्तभोजनम्। क्षीरोदनेन साज्येन सम्पूज्य च भवं प्रभुम्॥ पौर्णमास्यां च विधिवत्स्नाप्य दत्त्वा चरुं पुनः। ब्राह्मणान्भोजयित्वा च यथाविभवविस्तरम्॥ दत्त्वा गोमिथुनं चैव कापिलं पूर्ववद् द्विजाः। सूर्यसायुज्यमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा॥ (लिंग. पूर्व. 83, 46-48)
2. तुलनीय— मार्गशीर्षे च मासेपि कृत्वैवं नक्तभोजनम्। यवान्नैव यथान्यायमाज्यक्षीरादिभिः समम्॥ पौर्णमास्यां च पूर्वोक्तं शर्वाय शम्भवे। ब्राह्मणान् भोजयित्त्वा च दरिद्रान्वेदपारगान्॥ दत्त्वा गोमिथुनं चैव पाण्डुरं विधिपूर्वकम्॥ सोमलोकमनुप्राप्त सोमेन सह मोदते॥ (लिंग. पूर्व. 83, 49-51)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पक्षयोरुपवासेन चतुर्दश्यष्टमीषु च॥ 95॥
इत्येवमादि क्रिया यथा सञ्चरेत शिवव्रतम्।[1]

इस शिवव्रत के कर्ता को अहिंसापालन, सत्यभाषण, चोरी का त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन, दम और दया का पालन करना चाहिए। उसको तीनों काल (प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल) में स्नान करना चाहिए। अग्नि हवन करना चाहिए और भूमि पर नींद लेकर रात्रिकाल में भोजन करना चाहिए। उसको कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की चतुर्दशी और अष्टमी को इन सभी नियमों-क्रियाओं को करते हुए शिवव्रत को साधना चाहिए।

इत्यमनन्तर उमामहेश्वरव्रतविधानम्। तत्र उमामहेश्वरनामफलमाह[2]—

उमामहेश्वरं नाम सदा प्रीति विवर्धनम्॥ 96॥
अवियोगकरं शान्तं धर्मकामार्थ साधनम्।

(श्रीनन्दिकेश्वर बोले कि) उमा-महेश्वर का नाम सदा ही प्रेम को बढ़ाने वाला है। यह अवियोगकारक (जिससे विछोह नहीं हो), शान्त और धर्म-अर्थ तथा काम का साधन कहा गया है।

तत्रैव व्रतविधानफलञ्च —

पौर्णमास्याममावास्यां चतुर्दश्यष्टमीषु च॥ 97॥
नक्तमब्दं प्रकुर्वीत हविष्यं ब्रह्मचारिणी।

वर्षभर महीने-महीने पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी और अष्टमी को ब्रह्मचर्य के साथ नक्तव्रत करना चाहिए और आहार के रूप में रात्रि में हविष्य ग्रहण करना चाहिए।

---

1. तुलनीय— अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं क्षमा दया। त्रिःस्नानं चाग्निहोत्रं च भूशय्या नक्तभोजनम्॥ पक्षयोरुपवासं च चतुर्दश्यष्टमीषु च। इत्येतदखिलं प्रोक्तं प्रतिमासं शिवव्रतम्॥ कुर्याद्वर्षं क्रमेणैव व्युत्क्रमेणापि वा द्विजाः। स याति शिवसायुज्यं ज्ञानयोगमवाप्नुयात्॥ (लिंग. पूर्व. 83, 52-54)
2. उमामहेश्वरव्रत का यह वर्णन लिंगपुराणकार ने पूर्वभाग के अन्तर्गत 84वें अध्याय में उद्धृत किया है किन्तु किंचित् पाठान्तर है। इसमें प्रतिमा निर्माणकर स्थापित करने का निर्देश है और पूजार्चा से शिवसायुज्य की प्राप्ति का फल लिखा गया है— उमामहेश्वरं वक्ष्ये व्रतमीश्वरभाषितम्। नरनार्यादिजन्तूनां हिताय मुनिसत्तमाः॥ (लिंग. पूर्व., 84, 1) इसका कुछ अंश 76वें अध्याय की विषयवस्तु से भी तुलनीय है। हेमाद्रि ने (चतुर्वर्गचिन्तामणि व्रतखण्ड अध्याय 18, पृष्ठ 154) शिवधर्मपुराण के पाठ को ही उपन्यस्त किया है। भविष्यपुराण में इस व्रत के लिए कहा गया है कि इसके करने से पति-पत्नी का वियोग नहीं होता है और अनेक पुत्र-पौत्र, सुवर्ण, वस्त्र और सौभाग्य की प्राप्ति होती है। (उत्तरपर्व 23, 1-2)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उमामहेशप्रतिमां हेम्ना कृत्वा सुशोभनाम्॥ 98॥
राजतीं वापि वर्षान्ते[1] स्नापयित्वा घृतादिभिः।

वर्ष के अन्त में व्रतार्थी को चाहिए कि वह उमा-महेश्वर की सुन्दर सुवर्ण या फिर चाँदी की प्रतिमा (पाठान्तर के अर्थ से आधे कर्ष अर्थात् 8 माषा प्रमाण से) बनवाए और उसको घृतादि से स्नान करवाएँ।

गन्धमाल्यै[2]रलङ्कृत्य वस्त्रयुग्मैश्च शोभनैः॥ 99॥
भक्त्या[3] भोज्यैरशेषैश्च वितानध्वजचामरैः।

वह उसको विभिन्न गन्धों, मालाओं से अलंकृत करें और सुन्दर वस्त्रों का जोड़ा निवेदित करें तथा भक्तिपूर्वक (भक्ष्य सामग्री) भोजन का नैवेद्य देकर चँदोवा, ध्वज और चँवर निवेदित करें।

भोजयेच्छिवभक्तांश्च दीनानाथांश्च तर्पयेत्॥ 100॥
शक्त्या च दक्षिणां दत्वा शिवमन्त्रै क्षमापयेत्।

इसके अनन्तर शिवभक्तों को भोजन करवाएँ तथा दीनानाथ को परितृप्त करें। भोजन करने वालों को यथाशक्ति दान-दक्षिणा प्रदान करें और शिवमन्त्रपूर्वक क्षमापना की रीति करें।

अन्यदप्याह —

ताम्रकांस्यादि पात्रं वा सितवस्त्रावगुण्ठितम्॥ 101॥
कृत्वा वायतनं मध्ये प्रतिमान्तूपकल्पयेत्।
धृत्वा शिरसि तत्पात्रं वितानच्छत्रशोभितम्[4]॥ 102॥

शिव-व्रतार्थी को चाहिए कि वह ताँबा-काँसा आदि से बने पात्र को सफेद वस्त्रों से ढँककर शिवालय के बीच प्रतिमा को कल्पित करें। उस पात्र को सिर पर धारण करें और उसको चँदोवा, छत्र आदि से शोभित करें।

---

1. 'कपार्द्धे' इति पाठः। (तुलनीय— व्रतखण्ड, अध्या. 21, पृष्ठ 395) भविष्यपुराण में कहा गया है कि उद्यापन में यह प्रतिमा बनाएँ। भगवान् शंकर की चाँदी की और भगवती पार्वती की सुवर्ण की मूर्ति बनवाकर दोनों को चाँदी के वृषभ पर स्थापित करें और वस्त्राभरणों से अलंकृत करें। अनन्तर चन्दन, श्वेत पुष्प, श्वेत वस्त्र आदि से भगवान् शंकर की और कुंकुम, रक्त वस्त्र, रक्त पुष्प आदि से भगवती पार्वती की पूजा करनी चाहिए। वेदपाठियों, शिवभक्तों व शान्तचित्त ब्राह्मणों को भोजन व दक्षिणादि प्रदान करके यह मन्त्र पढ़ना चाहिए— उमामहेश्वरौ देवो सर्वलोकपितामहौ। व्रतनानेन सुप्रीतौ भवेतां मम सर्वदा॥ (उत्तरपर्व 23, 21)
2. 'पुष्पैरलङ्कृत्य' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
3. 'भक्ष्यभोज्यै' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
4. 'शिरस्याधाय तत्पात्रं शोभितं पुष्पमालया॥' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ध्वजशङ्ख्यादिविभवैः शिवस्यायतनं नयेत्।
लिङ्गमूर्तेर्महेशस्य व्रतस्यान्ते निवेदयेत्॥ 103॥
वेद्यन्ते स्थापयेत्पात्रमुपशोभा समन्वितम्[1]।

इसी प्रकार शिवालय तक ध्वजाओं और शंखादि के घोष सहित पहुँचाएँ। व्रत के अन्त में उसको महेश्वर की लिंगमूर्ति के सम्मुख निवेदित करें। वेदी के अन्त में उस पात्र को सुन्दर रूप सहित स्थापित करें।

पश्चात्[2]प्रदक्षिणीकृत्य प्रणिपत्य क्षमापयेत्॥ 104॥
समाप्य तद्व्रतं पुण्यं शृणु सा यत्फलं लभेत्।[3]

तदोपरान्त वहाँ की परिक्रमा करें और प्रणाम करके क्षमापना करें। इस प्रकार व्रत को सम्पूर्ण करें। अब इस व्रत को करने से प्राप्त फल के विषय में सुनो।

सूर्यकोटिप्रतीकाशैः विमानै सार्वकामिकैः[4]॥ 105॥
यथेष्टमैश्वरे लोके रुद्रैः सार्धं प्रमोदते।
कल्पकोटिसहस्त्राणि कल्पकोटिशतानि च॥ 106॥
तदन्ते सा महाभागो विष्णुलोके महीयते।

इस व्रत को करने वाला करोड़ों सूर्यों के समान दीप्तिमान ऐसे विमान में विराजता है जो समस्त अभीष्टों को पूर्ण करने वाला होता है और वह ईश्वर के लोक में आनन्द-प्रमोद को अपनी अपेक्षाओं के अनुसार भोगों भोगता है। वह वहीं सैकड़ों-करोड़ों कल्पों तक रहता है। अन्त में वह महाभाग विष्णुलोक को जाता है।

अन्यदपि —

ततः कर्मावशेषेण सर्वकाम समन्वितम्॥ 107॥
ब्रह्मलोकं समासाद्य परं सुखमवाप्नुयात्।
ब्रह्मलोकात्परिभ्रष्टा श्रीमती परिपूजिता॥ 108॥
प्राजापत्यमवाप्नोति लोकपाल नमस्कृता।
भोगांश्च रुचिरान्भुंक्त्वा सोमलोके महीयते॥ 109॥

उक्त विष्णुलोक में कर्मशेष रहने पर समस्त कामनाओं के साथ वह

---

1. 'तद्द्वेधा स्थापयेत्पात्रं उपशोभासमन्वितम्।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
2. 'शिवे प्रदक्षिणीकृत्य इति पाठः।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
3. 'समाप्यैतद्व्रतं पुण्यं शृणु यच्च फलं लभेत्।' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)
4. 'द्वादशादित्यसङ्काशैर्महायानैर्मनोहरैः॥' इति पाठः। (तुलनीय— उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है और वहाँ परम सुखों को प्राप्त करता है। ब्रह्मलोक से परिभ्रष्ट होकर वह वैभव के बुद्धिधन से पूजित प्राजापत्य को प्राप्त होता है जहाँ लोकपालों से अभिवन्दित होता जाता है। वहाँ पर रुचि के अनुसार भोगों को भोगता है और फिर सोमलोक को प्राप्त होता है।

सोमलोकादैन्द्रलोकं आसाद्येन्द्रपदं लभेत्।
ऐन्द्रलोकाच्च गान्धर्वं लोकं प्राप्य प्रमोदते॥ 110॥
गन्धर्वराजपतिना सार्धं भोगे वसेच्चिरम्।
महारत्नप्रभादीप्तैः उपशोभितमद्भुतम्॥ 111॥

सोमलोक के उपरान्त वह इन्द्रलोक को जाता है और देवराज के पद पर आसीन होने का लाभ उठाता है। इन्द्रलोक से वह गान्धर्वलोक को प्राप्त होकर वहाँ आनन्दित रहता है। वहाँ पर चिरकाल तक निवास करके गन्धर्वराज होकर भोगों को भोगता है और महारत्नों की प्रभा से दीप्ति के साथ अद्भुत रूप से शोभित होता है।

यक्षलोकमनुप्राप्य यथाकामं प्रमोदते।
सालोकालोकपर्यन्ते सर्वस्मिन्क्षितिमण्डले॥ 112॥
यत्र क्वचित्सुखं दिव्यं तदशेषमवाप्नुयात्।
एवं सर्वेषु लोकेषु भोगान्भुक्त्वा यथेप्सितान्॥ 113॥

इसके उपरान्त वह यक्षलोक को प्राप्त होता है, जहाँ जैसी इच्छा हो, वैसा आनन्द उठाता रहता है। इस प्रकार वह समस्त क्षितिमण्डल के सभी लोकालोक के अन्तर्गत जो भी कुछ दिव्य सुख बताए गए हैं, इच्छानुसार वह उन सभी लोकों को प्राप्त होकर उन-उन भोगों को भोगता है।

क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन्राजापतिमवाप्नुयात्।
युवानं रूपसम्पन्नं अशेषपृथिवीपतिम्॥ 114॥
धर्मार्थकाममोक्षं शिवभक्तं दृढव्रतम्।

क्रम से वह पुनः इस पृथ्वीलोक में आता है और ऐसा राजाधिराज होता है जो युवावस्थाधारक एवं सुन्दर रूप सम्पन्न तथा समस्त पृथ्वी का अधिपति होता है। वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का जानकार तथा शिवभक्त और दृढ़व्रती होता है।

ततोऽसौ कर्मशेषेण भवतीश्वरभाविता॥ 115॥
स्वकर्मवासनायोगात् पुनः प्रारभते शुभम्।
शुभाच्च पुनरप्येवं लोकान्याति सहस्रशः॥ 116॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्पश्चात् वह कर्मशेष से ईश्वरीय भाव के साथ शिवभक्त सिद्ध होता है। वह अपने कर्म की वासना के योग से पुनः शुभ कार्य में लग जाता है और लोककल्याण के हजारों कार्यों को सम्पादित करता है।

यावदाप्नोति निर्वेदं तावद्भ्रमति कर्मणा।
निर्वेदाच्चैव वैराग्यं वैराग्याज्ज्ञान सम्भवः॥ 117॥[1]
ज्ञानात्प्रवर्तते योगो योगाद्दुःखान्तमाप्नुयात्।

इस चक्र में जब तक उसको निर्वेद (जुगुप्सा, अतितृप्ति या अवसाद) प्राप्त नहीं होता, तब तक वह कर्मों के फेर में भ्रमणरत रहता है और निर्वेद होने पर वैराग्यवान हो जाता है। वैराग्य से ही ज्ञान सम्भव होता है। ज्ञान के फलस्वरूप वह योग में प्रवृत्त होता है और योग से दुखों का अन्त पा जाता है।[2]

ईश्वरोक्तमपरमुमामहेश्वरव्रतवर्णनम् —

उमामहेश्वरं नाम व्रतमीश्वरभाषितम्॥ 118॥
कारुण्यात्सर्वनारीणां नराणां च विशेषतः।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन ह्युमामाहेश्वरं व्रतम्॥ 119॥

इसके बाद, उमा-महेश्वर व्रत (के विषय में कहता हूँ) जो कि स्वयं ईश्वर शिव द्वारा विशेष रूप से नर-नारियों के प्रति करुणानुग्रहपूर्वक साथ कहा गया है। अतएव इस उमा-महेश्वर व्रत को सर्वसम्भव प्रयास करके करना चाहिए।

कर्तव्यं नरनारीभिः दुःखस्यान्तमवाप्नुयुः।
उमादेवीप्रियार्थं तु तुष्टे नैवान्तरात्मना॥ 120॥

नर-नारियों को इस व्रत को इसलिए भी करना चाहिए कि इससे दुखों का निवारण होता है। यह व्रत उमादेवी की प्रसन्नता के लिए करणीय है और इसको करने से अन्तरात्मा तुष्ट होती है।

----

1. 'तन निर्वेदाच्च वैराग्यं वैराग्याज्ज्ञान सम्भवः॥' इति पाठः। (कोलकाता मातृकायां पृष्ठ 30 ए)
2. इस प्रकार का विचार श्रीमद्भगवद्गीता में भी आया है— प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः। शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥ अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम्। एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम्॥ तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्। यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥ पूर्वाभ्यासेन तनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः। जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते॥ प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः। अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्॥ तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥ (गीता 6, 41-46)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां नियतब्रह्मचारिणी।
वर्षमेकं तु भुञ्जीत महापुण्यजिगीषया॥ 121॥
वर्षान्ते प्रतिमां कृत्वा [1]पूर्ववत् [द्विधिमाचरेत्]।
[2]स्नानाद्यन्तं व्रतं प्राप्त्वा पूर्वोक्तं लभते फलम्॥ 122॥

वर्षभर की समस्त अष्टमियों और चतुर्दशियों का ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए महापुण्यार्जन के साथ भोगों को नियन्त्रित-वशीभूत करने के प्रयास के साथ व्रत को धारण करें। वर्ष के अन्त में पूर्वकथनानुसार एक प्रतिमा बनाएँ और शिव को निवेदित करें। इस अवधि में स्नानादि के नियमों के साथ व्रत का समापन करें तो पूर्व वर्णित समस्त फलों की प्राप्ति होती है।

जाम्बूनदमयैर्यानैः चतुर्द्वारैरलङ्कृतैः।
गत्वा शिवपुरं दिव्यं अशेषं भोगमाप्नुयात्॥ 123॥[3]
शिवादि सर्वलोकेषु भोगान्भुक्त्वा यथेच्छया।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानां पतिमाप्नुयात्॥ 124॥

इस व्रत के प्रभाव से व्रतकर्ता जाम्बूनद सुवर्ण वाले ऐसे विमान पर सवार होता है जो कि चार द्वारों से विभूषित होता है। वह दिव्य शिवपुर को जाता है और अशेष भोगों का लाभ उठाता है। वह शिवादि समस्त लोकों में इच्छानुसार भोगों को भोगता है और क्रम से पुनः इस पृथ्वीलोक में आकर राजाओं का अधिपति होता है।

वर्षपर्यन्तकृष्णचतुर्दशीव्रतफलञ्च —

या नार्युपवसेदेकं अब्दं कृष्णचतुर्दशी।
वर्षान्ते प्रतिमां कृत्वा शालिपिष्टमयीं शुभाम्॥ 125॥
पीतानुलेपनैर्माल्यैः पीतवस्त्रैश्च पूजयेत्।
पूर्वोक्तमखिलं कृत्वा शिवाय विनिवेदयेत्॥ 126॥
सप्तभौमैर्महायानैः तप्तचामीकरप्रभैः।
युगकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 127॥

---

1. 'पूर्ववन्मोचकै...' इति मातृकायाम्।
2. 'स्नार्घ्यैस्तद्व्रतं प्राप्य पूर्वोक्तांस्तु गुणान् लभेत्।' इति पाठः। (अत्राप्युमामहेश्वर प्रतिमा कर्त्तव्या। पूर्ववदिति पूर्वव्रतोक्तवदित्यर्थः। व्रतखण्ड अध्या. 21, पृष्ठ 396)
3. इत्योपरान्त 'उमामहेश्वरं नाम व्रतमीश्वरभाषितम्॥ कारुण्यात् सर्वनारीणां नरानाञ्च विशेषतः। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन उमामहेश्वरव्रतम्॥ कर्त्तव्यं नरनारीभिः सुखमक्षयमाप्नुयात्। उमादेवीप्रियार्थन्तु नष्टेन परमार्थतः॥' इति क्वचित् श्लोकान्तरे पाठः। (व्रतखण्ड अध्या. 21, पृष्ठ 396)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवादि सर्वलोकेषु भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान्।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन्यथेष्टं पतिमाप्नुयात्॥ 128॥

जो नारी एक वर्ष तक समस्त कृष्णपक्ष की चतुर्दशियों को उपवास रखती है और वर्षान्त में शालिधान्य (साठ दिन में पकने वाले चावल) के आटे की सुन्दर प्रतिमा बनाकर उस पर पीले रंग का अनुलेपन लगाकर और पुष्पमालाओं सहित पील वस्त्रों को चढ़ाकर पूजा करती हैं तथा पूर्वोक्त समस्त विधि-विधान का सम्पादन करते हुए शिव के प्रति समर्पित कर देती है, वह सुवर्ण की चमक लिए सात मंजिले महायान पर सवार होकर सैकड़ों-करोड़ों युगों के आगे तक शिवलोक में निवास करती है। यही नहीं, वह शिवादि समस्त लोकों में इच्छित भोगों का उपभोग करती है और क्रम से पुनः इस लोक में आकर अपनी आकांक्षा के अनुरूप पति को प्राप्त करती है।

त्रिशूलदानव्रतफलञ्च —

याऽमावास्यां निराहारा भवेदब्दमतन्द्रिता।
शूलपिष्टमयं कृत्वा वर्षान्ते तु निवेदयेत्॥ 129॥
शिवाय राजतं पद्मं [1]अस्वर्णकरकृतकर्णकम्।
[2]भक्त्या विन्यस्य तन्मूर्ध्नि शेषं पूर्ववदाचरेत्॥ 130॥

(धर्मपरायण) स्त्री को चाहिए कि वह वर्षभर नियन्त्रित-संयमित रहकर अमावस्या तिथियों को निराहार व्रत रखें। वर्ष जब पूरा हो जाए तब आटे का त्रिशूल बनाकर शिव को निवेदित करे। इसी प्रकार उन्हें चाँदी का ऐसा कमल बनवाएँ जिसमें सुवर्णमयी कर्णिका हों और उसे शिवशीश पर चढ़ाएँ। साथ पूर्वकथित अन्य व्रत नियमों का पालन करे।

कामतोऽपि कृतं पापं [3]भ्रूणहत्यादि यद्भवेत्।
तत्सर्वं [4]शूलमानेनच्छिद्यान्नारी न संशयः॥ 131॥[5]

----

1. 'सौवर्णंकृतवर्णिकम्।' इति पाठः। (तुलनीय— व्रतखण्ड अध्या. 20, पृष्ठ 252)
2. 'भक्त्या च विन्यसेत् मूर्ध्नि शेषं पूर्ववदाचरेत्।' इति पाठः। (उपर्युक्त)
3. 'भ्रूणहत्यादिकञ्च यत्' इति पाठः। (तुलनीय व्रतखण्ड अध्या. 20, पृष्ठ 252)
4. 'शूलदानेन हत्वा नारीर्न संशयः।' इति पाठः। (उपर्युक्त)
5. तुलनीय— अमावास्यां निराहारां भवेदब्दं सुयन्त्रिता॥ शूलं च विधिनां कृत्वा वर्षान्ते विनिवेदयेत्। स्नाप्येशानं यजेद्भक्त्या सहस्रैः कमलैः सितैः॥ राजतं कमलं चैव जाम्बूनदसुकर्णिकम्। दत्त्वा भवाय विप्रेभ्यः प्रदद्याद्दक्षिणामपि॥ कामतोपि कृतं पापं भ्रूणहत्यादिकं च यत्। तत्सर्वं शूलदानेन भिन्द्यान्नारी न संशयः॥ सायुज्यं चैव माप्नोति भवान्या द्विजसत्तमाः। कुर्याद्यद्वा नरः सोपि रुद्रसायुज्यमाप्नुयात्॥ (लिंग. पूर्व. 84, 10-14)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ऐसे त्रिशूलदान के प्रभाव से वह नारी जानबूझकर किए पापों, भ्रूण-हत्यादि कृत्यों से होने वाले जो पाप हैं, उन सभी को विच्छिन्न कर डालती हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

महापद्मविमानेन [1]नानानारी समन्विता।
युगकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 132॥
[2]शिवादि सर्वलोकेषु भुक्त्वाभोगान्यथेप्सितान्।
इमं लोकं क्रमात्प्राप्य यथेष्टं पतिमाप्नुयात्॥ 133॥

इस दान-व्रत के प्रभाव से वह नारी ऐसे महापद्म विमान में सवार होती है जो अनेक नारियों से समन्वित होता है। इससे वह सैकड़ों-करोड़ों युगों के आगे तक शिवलोक को जाती है। वह शिवादि समस्त लोकों में इच्छित भोगों का उपभोग करती हैं और क्रम से इस पृथ्वीलोक में आकर अपने मनैच्छित पति को प्राप्त करती है।

तथा पौर्णमास्याममावास्यां गन्धव्रतफलञ्च —

पौर्णमास्याममावास्यां अब्दमेकं दृढव्रता।
वर्षान्ते सर्वगन्धाढ्यं प्रतिमाविनिवेदयेत्॥ 134॥
सुपवित्रैर्महायानैः दिव्यगन्धवहैः शुभैः।
वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते॥ 135॥[3]
यथेष्टमैश्वरे लोके भुक्त्वा भोगानशेषतः।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन्राजानं पतिमाप्नुयात्॥ 126॥

यदि पूरे एक वर्षपर्यन्त दृढ़व्रत को धारण करके जो प्रत्येक पूर्णिमा और प्रत्येक अमावस्या तिथि को (उपवास करके) और वर्षान्त में समस्त सुगन्धों से सुवासित प्रतिमा को शिव के प्रति निवेदित करते हैं तो वे व्रतकर्ता सुपवित्र महायान में विराजते हैं जो सुन्दर होता है और जिसमें दिव्यगन्ध प्रवहमान होती है। व्रतकर्ता

----

1. 'नरो नारीसमन्वितः' इति पाठः। (तुलनीय— पूर्वोक्त)
2. 'ईशलोकादिलोकेपु भुक्त्वा भोगाननेकथा। इह लोके क्रमात्प्राप्य यथेष्टं प्रतिमाप्नुयात्॥' इति पाठः। (उपर्युक्त)
3. सपाठान्तर तुलनीय— पौर्णमास्यामुपवसेदब्दमेकं सुयन्त्रितः। वर्षान्ते सर्व्वगन्धार्गी प्रतिमाबिम्ब निवेदयेत्॥ सुविचित्रैर्म्महायानैर्द्दिव्यगन्धविभूषितैः। युगकोटि शतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ यथेष्टमैश्वरे लोके भोगेमासाद्य यत्नतः। क्रमादागत्य लोकेस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात्॥ (व्रतखण्ड अध्या. 19, पृष्ठ 241)
पुराणपाठेऽपि तुलनीय व्रतवर्णनम् — पौर्णमास्याममावास्यां वर्षमेकमन्द्रिता। उपवासरता नारी नरोपि द्विजसत्तमाः॥ नियोगादेव तत्कार्यं भर्तृणां द्विजसत्तमाः। जपं दानं तपः सर्वमस्वतन्त्र यतः स्त्रियः॥ वर्षान्ते सर्वगन्धाढ्या प्रतिमां संनिवेदयेत्। सा भवान्याश्च सायुज्यं सारूप्यं चापि सुव्रता॥ लभते नात्र सन्देहः सत्यंसत्यं वदाम्यहम्। (लिंग. पूर्व. 84, 15-18)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सैकड़ों-करोड़ों दिव्य वर्षों तक शिवलोक में निवास करते हैं। उस ईश्वर के लोक में वे मनचाहे अक्षय भोगों को भोगते हैं और क्रम से पुनः इस लोक में प्राप्त होकर राजाओं के अधिपति होकर पहचाने जाते हैं।

इत्यमनन्तर स्त्रीलाभार्थे कार्तिकमासे शैवमहाव्रतफलञ्च —

सम्प्राप्ते कार्तिकमासे एकभुक्तेन वर्तयेत्।
क्षमाऽहिंसादिनियमैः संसक्ता ब्रह्मचारिणी॥ 137॥
गुडाज्यमिश्रं पिण्याकं मासेन विनिवेदयेत्।
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां उपवासरतो भवेत्॥138॥

कार्तिक मास के आने पर जो स्त्री पूरे महीने एक समय भोजन करती है और क्षमा, अहिंसादि नियमों का पालन करती हुई ब्रह्मचारिणी रहती है तथा गुड़-घी मिश्रित खली को शिव के प्रति निवेदित करती हैं और दोनों अष्टमी तथा चतुर्दशियों को पूर्णतः उपवास करती हैं;

इन्द्रनीलप्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः।
वर्षायुतशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 139॥
यथावत्सर्वलोकेषु भोगानासाद्य धर्मतः।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् यथेष्टं पतिमाप्नुयात्॥ 140॥

ऐसी व्रतपरायण स्त्री इन्द्रनील के समान चमक वाले और अभीष्टपूर्तिकारक विमान द्वारा परलोक जाती है और सैकड़ों अयुत वर्षों के उपरान्त भी शिवलोक में निवास करती है। वह सभी लोकों में उपलब्ध भोगों को यथाधर्म भोगती है और अन्त में क्रम से इस पृथ्वीलोक में आकर मनचाहे पति को प्राप्त करती है।[1]

सर्वव्रतेषु अनुशीलनीय सामान्यदशधर्माह[2] —

इत्येवं सर्वलोकेषु विधिस्तुल्यः प्रकीर्तितः।
एकभुक्तोपवासस्य फलं च सदृशं भवेत्॥ 141॥

---

1. तुलनीय— कार्तिक्यां वा तु या नारी एकभक्तेन वर्तते॥ क्षमाहिंसादिनियमैः संयुक्ता ब्रह्मचारिणी। दद्यात्कृष्णतिलानां च भारमेकमतन्द्रिता॥ सघृतं सगुडं चैव ओदनं परमेष्ठिने। दत्त्वा च ब्राह्मणेभ्यश्च यथाविभवविस्तरम्॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यामुपवासरता च सा। भवान्या मोदते सार्धं सारूप्यं प्राप्य सुव्रता॥ (लिंग. पूर्व. 84, 18-21)
2. लिंगपुराण में इन नियमों से इन्द्रियनिग्रह तक ही आए हैं— क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो रुद्रपूजनम्॥ (लिंग. पूर्व. 84, 22) हेमाद्रि ने शिवधर्म से जो श्लोक दिए हैं, वे

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रयनिग्रहः।
शिवपूजाग्निहोमश्च सन्तोषऽस्तेयभावना॥ 142॥
सर्वव्रतेषु यद्धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः।

इस तरह उपर्युक्त व्रतों की सभी लोकों के लिए विधि समान कही गई है। इनमें एक समय भोजनोपवास के फल भी समान ही होते हैं। इन सभी व्रतों में 1. क्षमा, 2. सत्य, 3. दया, 4. दान, 5. शौच, 6. इन्द्रियनिग्रह, 7. शिवपूजा, 8. अग्निहोम, 9. सन्तोष और 10. अस्तेय भावना— ये दस इनके सामान्य धर्माचरण स्मरणीय हैं, व्रतों में इनका पालन करना चाहिए।

इत्यमनन्तर मार्गशीर्षादिक्रमेण प्रतिमासव्रतमाह —

विशेषमपि वक्ष्यामि प्रतिमासं व्रतं प्रति॥ 143॥

(श्रीनन्दिकेश्वर बोले कि) अब प्रत्येक मास में किए जाने वाले विशेष व्रतों के बारे में कहता हूँ।

मार्गशीर्षव्रतविधानमाह —

मार्गशीर्षे शुभेमासे वृषं पिष्टविनिर्मितम्।
गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य शिवाय विनिवेदयेत्॥ 144॥
वृषयुक्तैर्महायानैः आरोहण सुशोभितैः।
वर्षायुतशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 145॥
सर्वदेव निकायेषु सम्प्राप्य सुखमुत्तमम्।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नयात्॥ 146॥

व्रतपरायण स्त्री मार्गशीर्ष के शुभ महीने में आटे का वृषभ बनाएँ और उसको गन्ध, पुष्पहारों से अलंकृत करके भगवान् शिव के प्रति निवेदित करें। इस नियम-व्रत के प्रभाव से व्रतार्थी स्त्री वृषभों से जुते सुशोभित महायान पर आरोहित होकर सैकड़ों अयुत वर्षावधि के उपरान्त भी शिवलोक में विचरण करती है। वह अन्य समस्त

पाठान्तर सहित इस प्रकार हैं— इत्येव सर्वमासेषु विधिस्तुल्यः प्रकीर्तितः। एकभक्तोपवासस्य फलन्तुं सदृशं विदुः॥ क्षमा सत्यन्दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। शिवपूजाग्निहोमश्च सन्तोषस्नेहभावनम्॥ सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधास्मृतः। (व्रतखण्ड अध्याय 28, पृष्ठ 849) गरुडपुराण में ये ही व्रतों के सामान्य धर्म कहे गए हैं— क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः॥ देवपूजाग्निहवने सन्तोषोऽस्तेयमेव च। सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः॥ (गरुडपुराण आचारकाण्ड 128, 8-9)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

देवताओं के लोक में उत्तम सुखों का उपभोग करती है और क्रम से इस पृथ्वीलोक में आकर राजा को पति रूप में प्राप्त करती है।

पौषमासे व्रतविधानम् —

पुष्ये मासे शुभे प्राप्ते शूलं कृत्वा पिनाकिने।
गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य शिवाय विनिवेदयेत्॥ 147॥
[ताम्रकांस्यादिपात्रे वा दत्त्वा दद्यात्पिनाकिने।[1]]
महापुष्पकयानेन दिव्यगन्धप्रवाहिना।
वर्षायुतशतं दिव्यं रुद्रलोके महीयते॥ 148॥
भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान् अशेषपुर सम्भवान्।
सम्प्राप्यैव क्रमाल्लोके यथेष्टं पतिमाप्नुयात्॥ 149॥

जो (स्त्री) शुभ पौष मास के आने पर भगवान् पिनानकी शिव के लिए त्रिशूल बनवाती हैं और उसको गन्ध, पुष्पादि से अलंकृत करके शिव को निवेदित करती है, वह ऐसे महापुष्पक यान पर आरूढ़ होती है जिसमें दिव्यगन्ध का प्रवाह बना रहता है, इससे वह सैकड़ों अयुत वर्षों तक दिव्य रुद्रलोक को जाती है। वहाँ पर विपुल भोगों को भोगकर पुनः शेष कर्मों के लिए इस धरालोक में आती है और अभिलषित पति को प्राप्त करती है।

माघमासे रथव्रतफलञ्च —

रथञ्चाश्वयुतं माघे दीपमाला प्रशोभितम्।
पैष्ट लिङ्गसमायुक्तं शिवायतनमानयेत्॥ 150॥
महारथोपमैर्यानैः श्वेताश्ववर(रथ!) संयुतैः।
वर्षायुतं शतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 151॥
अनुभूयातुलान्भोगान् अशेषपुर सम्भवान्।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात्॥ 152॥

जो अश्वों से जुते हुए और दीप-मालाओं से अलंकृत रथ में पिष्ट के बने लिंग को शिवालय तक पहुँचाता है, वह महारथ के आकार वाले ऐसे यान पर आरूढ़ होता है जिसमें बड़े-बड़े श्वेत घोड़े जुते हुए होते हैं। व्रतार्थी सैकड़ों अयुत वर्षों के बाद भी शिवलोक में रहता है। वहाँ पर उपलब्ध अतुलित भोगों को भोग्यानुभूत करता है और

---

1. हेमाद्रिकृत व्रतखण्डात्। (अध्या. 28, पृष्ठ 849)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

क्रम से इस पृथ्वीलोक में आकर राजाधिराज होता है। (स्त्री हो तो राजा को पति के रूप में पाती है)।

फाल्गुने व्रतविधानफलञ्च —

फाल्गुने प्रतिमां पैष्टीं कृत्वा रूप (चरु!)समन्विताम्।
गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य स्थापयेदीश्वरालये॥ 153॥
यानैरप्रतिमैर्दिव्यैः गीतवादित्र सङ्कुलैः।
वर्षायुतशतं साग्रं रुद्रलोके महीयते॥ 154॥
सर्वामरनिकायेषु प्राप्य भोगान्सुदुर्लभान्।
सम्प्राप्यैवं क्रमाल्लोके यथेष्टं पतिमाप्नुयात्॥ 155॥

फाल्गुन मास में जो स्त्री पैष्टी प्रतिमा (आटे की मूर्ति) बनाकर उसको सुरूप (चरुरूप) बनाकर गन्ध, मालादि से अलंकृत करके शिवालय में स्थापित करती है, वह अप्रतिम दिव्य यान पर आरूढ़ होती है जिसमें गीत गाने वालों और वाद्य बजाने वालों का समूह विद्यमान होता है। वह सैकड़ों अयुत वर्षों के उपरान्त भी रुद्रलोक में रहती हैं। वह समस्त देवताओं के लोकों में भी सुदुर्लभ भोगों को भोगती हुई क्रम से इस लोक में आकर मनचाहे वर को प्राप्त करती है।

चैत्रमासे व्रतफलञ्च —

चैत्रे भवकुमारं च कृत्वा पैष्टमलङ्कृतम्।
स्थाप्य पात्रे यथोक्ते च आनयेच्छिवमन्दिरे॥ 156॥
शरदिन्दुप्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः।
वर्षकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 157॥
कर्मक्षयादिहागत्य पुत्रपौत्र समन्विता।
अभीष्टं पतिमासाद्य लभेद्भोगान्सुदुर्लभान्॥ 158॥

चैत्रमास में जो स्त्री भगवान् शंकर और कुमार कार्तिकेय की प्रतिमा आटे से बनाकर उसको अलंकृत करके यथोक्त पात्र से शिवालय तक पहुँचाती है, वह शरद के चन्द्रमा के समान आभासित होने वाले और समस्त अभीष्टों को देने वाले विमान से शिव को जाती है और वहाँ सैकड़ों-करोड़ों वर्षों के बाद भी रहती है। पुण्यकर्मों के क्षय होने पर वह इस लोक में आती है और अभीष्ट पति को प्राप्त कर पुत्र-पौत्रों का साहचर्य पाती है। वह उन भोगों को भोगती है जो बहुत दुर्लभ होते हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वैशाखमासे कैलासव्रतफलञ्च —

तण्डुलाढकपिष्टेन कृत्त्वा कैलासपर्वतम्।
ईश्वरोमासमायुक्तं सर्वधातु विभूषितम्॥ 159॥
स्थाप्य पात्रे यथोक्ते च आनयेच्छिमन्दिरे।
शरदिन्दुप्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 160॥

चावल और तूअरी के आटे से कैलास पर्वत की रचना करें। उसको समस्त धातुओं से विभूषित शिव और उमा के साथ यथोक्त पात्र में विराजित करके शिवमन्दिर पर पहुँचाएँ। इससे शरद के चन्द्रमा के समान उज्ज्वल विमान की यात्रा मिलती है जो कि समस्त अभीष्टों को पूर्ण करने वाला होता है।

कन्दैर्विविधैश्चित्रैः लवणप्रस्थ संयुतैः।
सर्वरत्नसमायुक्तं स्थापयेदीश्वरालये॥ 161॥
कैलासव्रतमित्येतद् वैशाखे या समाचरेत्।
कैलासकोमलैर्यानैः शिवलोके महीयते॥ 162॥
शिवादि सर्वलोकेषु भुक्त्वा भोगानशेषतः।
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात्॥ 163॥

इसके लिए चित्र-विचित्र प्रकार की कन्दराओं बनाएँ और एक प्रस्थ लवण सहित समस्त नौ ही रत्नों को शिवालय में स्थापित करें। इस प्रकार यह कैलास व्रत है जिसको वैशाख मास में करना चाहिए। इसको करने से व्रतार्थी कैलासकोमल यान में सवार होकर शिवलोक को प्राप्त होता है। वह शिवादि समस्त लोकों के अशेष भोगों का उपभोग करता है। क्रम से वह पुनः इस लोक में आकर राजाधिपति होता है।

ज्येष्ठमासे पिष्टलिङ्गार्पणफलञ्च —

लिङ्गं पिष्टमयं कृत्वा ज्यैष्ठे मासे सवेदिकम्।
भक्त्या सम्पूज्य गन्धाद्यैः वस्त्रयुग्मेन वेष्टयेत्॥ 164॥
उपशोभाविशेषेण तत्र जागरमाचरेत्।
प्रभाते ध्वजशङ्खाद्यैः शिवाय विनिवेदयेत्॥ 165॥

ज्येष्ठ मास में आटे का लिंग वेदिका सहित बनाएँ और वस्त्रों के जोड़े में लपेटकर गन्धादि चढ़ाकर उसका भक्तिपूर्वक पूजन करे। उसकी विविध प्रकार की शोभा करें और इस अवसर पर जागरण करे। सुबह होते ही उसको ध्वज और शंखादि के साथ शिव के प्रति निवेदित करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शुद्धस्फटिक सङ्काशैः विमानैः सार्वकामिकैः।
वर्षकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 166॥
भुक्त्वा भोगान्यथाकामं अशेषपुर सम्भवान्।
क्रीडा विशेषभावैश्च मोदते शङ्करालये॥ 167॥
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजानं पतिमाप्नुयात्।

इस व्रत के करने वाला शुद्ध स्फाटिक की चमक लिए, अभीष्टों की पूर्ति करने वाले विमान में सवार होकर सैकड़ों-करोड़ों वर्षों के लिए शिवलोक को जाता है और इसके बाद भी वहाँ रहता है। वह वहाँ पर यथैच्छा अशेष भोगों का उपभोग करता है। वह शिवधाम में विशेष भाव सहित क्रीड़ाएँ करता हुआ प्रमुदित रहता है और क्रम से पुनः इस पृथ्वीलोक में आकर महाराजा का पद प्राप्त करता है।

आषाढमासे शिवार्थेपिष्टमयगृहनिवेदनफलञ्च —

गृहं पिष्टमयं कृत्वाह्याषाढे सप्तभौमिकम्॥ 168॥
सर्व बीजरसैश्चापि सम्पूर्णं शुभलक्षणम्।
गृहोपकरणैयुक्तं मुसलोदूखलादिभिः॥ 169॥

आषाढ़ मास में आटे से सात मंजिलों वाला एक गृह बनाएँ। उसको समस्त बीजों और रसों से पूरित करते हुए सम्पूर्णतः शुभलक्षणों वाला बनाना चाहिए। उस भवन में मूसल, उलूखलादि समस्त गृहोपकरण भी रखें।

सर्वधान्यसमायुक्तं सर्वमण्डनभूषितम्।
सर्वधातुसमाकीर्णं सर्वरत्नोपशोभितम्॥ 170॥
सर्वरत्नादिगोश्वाद्यैः दासीशय्याद्यलङ्कृतम्।
एतैः पिष्टमयैः सर्वैः सुदीपाद्युपशोभितम्॥ 171॥

उस भवन को समस्त धान्यों से युक्त और समस्त आभूषणों से विभूषित करें। उसको समस्त धातुओं से लकदक और समस्त नौ ही रत्नों से शोभित करें। उसको समस्त रत्नादि सहित गाय, अश्व, दासी, शय्या इत्यादि से परिपूरित करें और यह समस्त सामग्री आटे से ही तैयार करें और उसको अच्छे दीपक से रोशन करें।

सर्वभक्षसमाकीर्णं गन्धमाल्यैरलङ्कृतम्।
श्वेतरक्तासितैः पीतैः ध्वजवस्त्रोपशोभितम्॥ 172॥
चतुर्विधेन चरुणा संयुतं सर्षपैस्तथा।
आषाढे पौर्णमास्यां तु गृहे स्थाप्य शिवाग्रतः॥ 173॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उस गृह को समस्त भक्ष सामग्री से युक्त करें और गन्ध, पुष्पहारों से अलंकृत करें। उसको सफेद, लाल, काले, पीले ध्वजों और वस्त्रों से शोभायमान करें। इसके साथ ही चार प्रकार के चरु निवेदित करें जो कि सर्षपादि से भरे हुए हों। आषाढ़ की पूर्णिमा को इस गृह को शिव के आगे स्थापित करना चाहिए।

सर्वोकरणोपेतं प्रणिपत्य निवेदयेत्।
सप्तभूमैर्महायानैः सर्वभोगसमन्वितैः ॥ 174 ॥
वर्षकोटिशतं साग्रं शिवलोकं महीयते।
भुक्त्वातु विपुलान्भोगान्सर्वलोकेष्वनुक्रमात् ॥ 175 ॥
प्राप्नोति सर्वभोगाढ्यं सप्तभौमं गृहं लभेत्।
सर्वधातु समाकीर्णं विचित्रध्वजशोभितम् ॥ 176 ॥

इस अवसर पर समस्त उपकरणों को रखें और दण्डवत प्रणाम निवेदित करना चाहिए। इस व्रत के प्रभाव से व्रतार्थी सात मंजिलों वाले महायान पर आरूढ़ होता है जो समस्त भोग-सामग्री से परिपूर्ण होता है। इससे वह सैकड़ों-करोड़ों वर्ष के बाद भी शिवलोक में निवास करता है। वहाँ पर वह विपुल भोगों को भोगता हुआ क्रम से अन्य लोकों के समस्त भोगों का भी लाभ उठाता है और उसको सात मंजिलों वाले गृह में निवास मिलता है जो समस्त धातुओं से जटित और विचित्र ध्वजा-पताकाओं से सुशोभित होता है।

श्रावणमासे शिवार्थेतिलपर्वतनिवेदनफलञ्च —

निवेदयीत शर्वाय श्रावणे तिलपर्वतम्।
स्वच्छेन्द्रनीलसङ्काशैः यानैरप्रतिमैः शुभैः ॥ 177 ॥
वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोक महीयते।
भुक्त्वातु सकलान्भोगान् सर्वलोकेष्वनुक्रमात्।
क्रमाल्लोकमिमं प्राप्यं राजानं पतिमाप्नुयात्।

इसके बाद, श्रावण मास में शिव के प्रति तिलपर्वत निवेदित करना चाहिए। इसके प्रभाव से व्रतकर्ता स्वच्छ इन्द्रनील के समान आभा वाले अप्रतिम, सुन्दर यान पर सवार होता है और सैकड़ों-करोड़ों दिव्य वर्षों तक शिवलोक में निवास करता है। वह समस्त भोगों का सभी लोकों में अनुक्रम से उपभोग करता है और क्रम से इस लोक में आकर राजाओं का अधिपति होता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भाद्रपदमासे शिवार्थेधान्यपर्वतनिवेदनफलञ्च —

कृत्वा भाद्रपदे मासे विपुलं धान्यपर्वतम्॥ 179॥
सुवर्णवस्त्रसंयुक्तं शिवाय विनिवेदयेत्।
सुविचित्रैर्महायानैः वरभोगसमन्वितैः॥ 180॥
वर्षकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते।
रुद्रलोकादिलोकेषु भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान्॥ 181॥
सम्प्राप्ताऽस्मिन् क्रमाल्लोके राजानं पतिमाप्नुयात्।[1]

भाद्रपद मास में विपुलाकार धान्यपर्वत बनाकर उसको सुवर्ण के वस्त्रों से आच्छादित करते हुए शिव के प्रति निवेदित करना चाहिए। इस व्रत के प्रभाव से व्रतकर्ता सुविचित्र महायान में सवार होता है जो कि श्रेष्ठ भोगों से युक्त होता है। व्रतकर्ता इससे शिवलोक को जाता है और वहाँ सैकड़ों-करोड़ों वर्षों के बाद भी निवास करता है। वह रुद्रादि समस्त लोकों के भोगों को यथैच्छा भोगता है और क्रम से इस लोक में आकर राजाओं का अधिपति महाराजा होता है।

अथ महामेरुव्रतविधानफलञ्च —

सर्वधान्यसमायुक्तं सर्वबीजसमन्वितम्(!रसादिभिः)॥ 182॥
सर्वधातुसमायुक्तं सर्वरत्नोपशोभितम्।
शृङ्गैश्चतुर्भिः संयुक्तं वितानच्छत्रशोभितम्॥ 183॥
गन्धमाल्यैश्च पुष्पैश्च प्रदीपैश्चोपशोभितम्।

(महामेरु व्रत के लिए) समस्त धान्यों से युक्त, समस्त बीजों से समन्वित, समस्त धातुओं से युक्त तथा सभी रत्नों से शोभित (एक पर्वत की) रचना करें जिसके चार शिखर हों और उसको चँदोवा और छत्र से सुशोभित करें। उसको गन्ध, पुष्पहारों से सजाकर दीपों से सजाएँ।

विविधैर्गीतनृत्तैश्च शङ्खवीणादिभिस्तथा॥ 184॥
ब्रह्मघोषैस्तथा पुण्यैः मङ्गलैश्च निषेवितम्।
अष्टभिश्च ध्वजैर्युक्तं वितानच्छत्रशोभितम्॥ 185॥

---

1. हेमाद्रि ने इन श्लोकों के बाद आश्विनमास में बृहद् शिखिपर्वत बनाकर शिव को निवेदित करने सम्बन्धी श्लोक भी शिवधर्म. से उद्धृत किए हैं। इस पर्वत को सुवर्ण के वस्त्रों से सुशोभित करना चाहिए। इसके दान से अच्छी तरह से रंग-बिरंगे यान में श्रेष्ठ भोगों की प्राप्ति होती है और हजारों-करोड़ों वर्ष तक रुद्रलोक मिलता है— कृत्वा चाश्वयुजे मासि विपुलं शिखिपर्वतम्। सुवर्णवस्त्रसंयुक्तं शिवाय विनिवेदयेत्॥ सुविचित्रैर्महायानैर्वरभोगसमन्वितैः। वर्षकोटिशतं साग्रं रुद्रलोके महीयते। (व्रतखण्ड द्वितीय, अध्या. 28, पृष्ठ 851)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नगेन्द्रं मेरुनामानं त्रैलोक्याधारमुत्तमम्।
तस्य मूर्ध्नि शिवं कुर्यात् सर्वदेवसमन्वितम्॥ 186॥

इस अवसर पर वहाँ विविध प्रकार के गीतों का गायन आरम्भ करें और शंख, वीणादि का वादन करना चाहिए। ब्रह्मघोष करते हुए पुण्यप्रद मंगलाचार करें। वहाँ पर आठ ध्वजाओं को लगाएँ तथा वितान और छतरियों की शोभा करें। इस प्रकार पर्वतराज मेरु नामक पर्वत को बनाएँ जो कि तीन लोकों का उत्तम आधारस्वरूप कहा गया है। उसके शिखर पर समस्त देवताओं के साथ-साथ शिव को विराजमान करें।

दैत्यगन्धर्वसिद्धाद्यान् यक्षभूतगणांस्तथा।
विद्याधराप्सरोनागान् ऋषींश्चापि विशेषतः॥ 187॥
शालिपिष्टमयं सर्वं रूपं कृत्वा विचक्षणः।
देयस्य दक्षिणे हस्ते शूलं त्रिदशपूजितम्॥ 188॥
एवं सर्वेषु देवेषु कुर्यादस्त्राण्यनुक्रमात्[1]।
शिवस्य महतीं पूजां कृत्वा चित्र(!चरु)समन्विताम्॥ 189॥

शिव के साथ विराजित किए जाने वाले देवताओं के साथ दैत्य, गन्धर्व, सिद्ध, यक्ष-भूतगण हों। विद्याधर, अप्सराओं, नागों और ऋषिगणों को विशेष रूप से विराजित करें। बुद्धिमान को चाहिए कि इन सभी की रूप-रचनाएँ शालिधान्य के आटे से की जाए। भगवान् शिव के दक्षिण हाथ में देवपूजित त्रिशूल देना चाहिए। इसी प्रकार से समस्त देवताओं के हाथों में (प्रदक्षिणतः, दक्षिणाधः) क्रम से आयुधों की रचना की जानी चाहिए। इसके अनन्तर अनेकविध युक्तियों (चरुओं) से शिव की प्रधान पूजा की जानी चाहिए।

पूजयेत्सर्वदेवांश्च दशदिक्षु बलिं हरेत्।
विप्रांश्च(?व्रतान्ते)भोजयेत्पश्चाच्छिवभक्तान्सदक्षिणम्॥ 190॥
दीक्षितान्व्रतिनश्चैव अनुगम्य च सायुगान्।
आचार्यानुगतान्सर्वान् सार्धं मेरुमुपस्थितान्॥ 191॥
सर्वालङ्कारसंयुक्तं यथाविभवकल्पितम्।
निवेदयीत रुद्राय कार्तिके नगमुत्तमम्॥ 192॥

---

1. यहाँ स्मरणीय है कि भवानी के हाथ में हेमभूषित पद्म, विष्णु के हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म, ब्रह्मा के हाथों में अक्षमाला व उत्तम कमण्डलु, इन्द्र के हाथ में वज्र, अग्नि के हाथ में शक्ति संज्ञक आयुध, यम के हाथ में दण्ड, निशिचर निर्ऋति के हाथ में खड्ग, वरुण के हाथ में नाग संज्ञक महापाश, वायु के हाथ में यष्टि या छड़ी, कुबेर के हाथ में गदा और ईशान के हाथ में टंक होगा।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यः कुर्यात्सकृदप्येवं तस्याः पुण्यफलं शृणु।

इसी क्रम में समस्त देवताओं की पूजा की जानी चाहिए और दसों ही दिशाओं (पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, आकाश और पाताल) में बलि निवेदित करें। इसके उपरान्त सभी ब्राह्मणों को भोजन करवाएँ। शिवभक्तों को दक्षिणा प्रदान करे। (इसके बाद शोभायात्रा का आयोजन करते हुए उसमें) व्रतदीक्षितों का अनुगमन करें और सभी आचार्यों का अनुकरण करते हुए पर्वतराज मेरु को उपस्थित करना चाहिए। इसको यथा सामर्थ्य समस्त आभूषणों से समन्वित करते हुए उक्त उत्तम पर्वत को कार्तिक मास में शिव के प्रति निवेदित करना चाहिए। (हे सनत्कुमार!) इस प्रकार के अर्पण-कृत्य से जो पुण्यफल मिलता है, उसको सुनो।

[देवतुल्यगणो भूत्वा गुणरूपसमन्वितः।
शिववद्विचरेन्नित्यं निश्चलं भुवनं सदा॥]

ऐसा व्रतधारक देवता के बराबर गण होता है, वह गुण, रूप से युक्त होता है, वह शिव के समान इस लोक में सदा ही विचरण करता है।[1]

सर्वागमेषु[2] यत्पुण्यं मुनिभिः कथितं पुरा॥ 193॥
तत्सर्वं[3] कोटिगुणितं प्राप्नुयात्सा न संशयः।

पुरातन काल में मुनिवरों ने समस्त आगमों के अन्तर्गत जिस पुण्य को वर्णित किया है, वह सब पुण्य करोड़ गुना होकर इस व्रत को करने वाले को प्राप्त होता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

महारत्नप्रभैर्यानैः सर्वकामसमन्वितैः॥ 194॥
गीतनृत्तादिभिर्वाद्यैः अप्सरोगणशोभितैः।
सूर्यकोटिसम्प्रख्यैः विमानैर्मेरुसन्निभैः॥ 195॥
नरनारीगणाकीर्णैः दिव्यगन्धोपशोभितैः।
देवदानवगन्धर्वैस्तूयमाना नराधिपैः॥ 196॥

वह महारत्नों की आभा बिखरने वाले ऐसे यान से उड़ान प्राप्त करता है जो कि समस्त अभीष्टों को प्रदान करता है जिसमें गीत-नृत्य-वाद्य वादन करने वाली

---

1. व्रतखण्डात्। (अध्या. 28, पृष्ठ 852)
2. 'सदागमेषु' इति पाठः। (तत्रैव पृष्ठ 852)
3. 'तत्पुण्यं' इति पाठः। (तत्रैव)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अप्सराओं के गण सौंदर्य की सृष्टि करते हैं। यह विमान कोटिसूर्य नामक होता है और मेरु के समान दिखाई देता है। इसमें दिव्य नर-नारियों की भीड़ होती है और वह दिव्य गन्ध से सुन्दरता लिए होता है। इसमें उसका देवता, दानव, गन्धर्व और राजागण यशोगान करते रहते हैं।

स्वच्छन्दा सर्वगाभूत्वा प्रयातीश्वरमन्दिरम्।
कल्पकोटिशतं दिव्यं मोदते सा महातपाः॥ 197॥
एवं सर्वेषु लोकेषु भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान्।
पुण्यक्षयादिहागम्य राजानं पतिमाप्नुयात्॥ 198॥
सुरूपा सुभगा नित्यं भवेदीश्वरभाविता।[1]

वह (आकाशचारी होता हुआ) स्वच्छन्द रूप से सर्वत्र गमन करता है और शिवधाम को जाता है। वहाँ वह महातपस्वी सैकड़ों-करोड़ों कल्पों तक दिव्य भोगों का आनन्द उठाता है। इसी प्रकार से अन्य सभी लोकों के भोगों का इच्छानुसार उपभोग करता है और जब पुण्य क्षीण होते हैं, वह इस पृथ्वीलोक में आकर राजाओं का अधिपति होता है। वह बहुत सुन्दर काया वाला, सौभाग्य का धनी और नित्यप्रति ईश्वर के प्रति भावना का पोषक होता है।

यद्यत्कामं समुद्दिश्य नरनारी नपुंसकाः॥ 199॥
पूजयन्ति शिवं भक्त्या तत्तदेवाशु जायते।

जिस-जिस कामनाओं के उद्देश्य से स्त्री, पुरुष और नपुंसक लोग भगवान् शिव की भक्तिपूर्वक पूजा करते हैं, वे कामनाएँ उनकी पूरी होती जाती हैं।

अन्यदप्याह —

मृण्मयं दारुजं शैलं ऐष्टकं वा सुकल्पितम्॥ 200॥
कृत्वा गृहं मठं वापि यथा विभवविस्तरम्।
सर्वोपकरणोपेतं सर्वधान्य प्रपूरितम्॥ 201॥
शिवाय तद्गृहं दत्वा सर्वान्कामानवाप्नुयात्।

इनके अतिरिक्त यथा वित्त सामर्थ्य मिट्टी से बनाकर अथवा लकड़ी या पाषाण या फिर ईंटों से गृह अथवा मठ तैयार कर उसको समस्त आवश्यक उपकरणों-

---

1. इत्यमनन्तरे— इति शिवधर्मोक्तमपरशैवव्रतम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सामग्रियों सहित समस्त धान्यों से परिपूरित करके जो भगवान् शिव के प्रति निवेदित करता है, उसकी सभी कामनाएँ पूरी होती हैं।[1]

हेमन्तकाले शिवरथव्रतविधिफलञ्च —

कृत्वैक[2]भुक्तं हेमन्ते [3]मासमेकं सुयन्त्रितः ॥ 202 ॥
मासान्ते[4] च रथं कुर्यात् चित्रवस्त्रोपशोभितम्।
श्वेतैश्चतुर्भिः संयुक्तं वृषभैः समलङ्कृतम् ॥ 203 ॥
शोभितं [5]ध्वजदीपाद्यैः छत्रचामरदर्पणैः।

हेमन्त ऋतुकाल में एक मास (पाठान्तर से माघ मास) पर्यन्त इन्द्रियों पर संयम रखते हुए एक समय आहार ग्रहण करें और मास के अन्त में रथ की रचना करें। उसको रंग-बिरंगों वस्त्रों से सुशोभित करें। उसको चार सुसज्जित बैलों से संयुक्त करें और फिर उसे ध्वजाओं, दीपादि के साथ-साथ छतरियों और चँवरों, दर्पणों से शोभायमान करें।

तण्डुलाढकपिष्टेन लिङ्गं कृत्वा सवेदिकम् ॥ 204 ॥
विन्यस्य रथमध्ये तु पूजयेत्कृतलक्षणम्।
तद्रात्रौ राजमार्गेण शङ्खभेर्य्यादि निःस्वनैः ॥ 205 ॥
भ्रामयित्वा शनैः (? ततः) पश्चाच्छिवायतनमानयेत्।

इस रथ के बीच में चावल, तूवर (अर्थान्तर से एक आढ़क प्रमाण) के आटे से वेदिका सहित लिंग बनाकर विराजित करें और यथाविधि पूजा करें। इसके बाद, उसको राजमार्ग पर रवाना करें। इस रथयात्रा में शंख, भेरी आदि का घोष हो। धीरे-धीरे भ्रमण के उपरान्त उसको शिवालय तक पहुँचाना चाहिए।

तत्र जागरपूजाभिः प्रदीपाद्युपशोभया(!शोभितैः) ॥ 206 ॥
प्रेक्षणीयै प्रदानैश्च क्षपयित्वा शनैर्निशाम्।
प्रभाते स्नपनं कृत्वा तद्भक्तानां च भोजनम् ॥ 207 ॥

---

1. यही वर्णन भविष्यपुराण के ब्राह्मपर्व के अन्तर्गत सूर्यव्रतवर्णन के अन्तर्गत आया है। इसमें शिव की अपेक्षा सूर्य के प्रति निवेदन करने का विधान किया गया है। (ब्राह्मपर्व 168, 1-20)
2. 'शुक्तिं' इति मातृकायाम्। (तुलनीय —व्रतखण्ड अध्या. 29, पृष्ठ 859)
3. 'माघमासे तु यन्त्रितः' इति व्रतखण्डे। (उपर्युक्त)
4. 'माघान्ते' इति व्रतखण्डे। (उपर्युक्त)
5. 'ध्वजमालाभिश्चित्रचामरदर्पणैः' इति व्रतखण्डे। (उपर्युक्त)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दीनान्धकृपणानां च यथाशक्त्या च दक्षिणाम्।
रथं शोभासमायुक्तं शिवाय विनिवेदयेत्॥ 208॥
भुक्त्वा च बान्धवैः सार्धं प्रणम्येशं गृहं व्रजेत्।

वहीं पर जागरण का आयोजन करें और पूजादि कृत्य किए जाएँ। इस दौरान दीपों को जलाकर शोभा की जानी चाहिए। प्रेक्षणीय दानों का प्रबन्ध हों और शनै-शनै वह रात्रि व्यतीत करें। प्रभात होने पर स्नान करें और भक्तजनों को भोजन करवाएँ। धनहीनों, अन्धों और कृपणों को यथाशक्ति दान-दक्षिणा दें और उपर्युक्त शोभायुक्त रथ को भगवान् शिव के प्रति निवेदित करते हुए बान्धवों सहित भोजनोपरान्त शिव को प्रणामकर अपने घर को प्रस्थान करें।

दानव्रतादीनां प्रसङ्गोपसंहारमाह —

सर्व्वव्रतानां प्रवरं अस्मिन्धर्मः समाप्यते॥ 209॥
व्रतं शिवना(? र)थं नाम सर्वकामार्थ साधकम्।
सर्वभूतेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्॥ 210॥
तत्सर्वं शिवना(? र)थे नैव तत्पुण्यफलभाग्भवेत्।[1]

इस प्रकार सभी व्रतों में प्रवर-व्रत विषयक धर्म-नियमों का विवरण-कथन पूरा हुआ। यह शिवरथ नामक व्रत सभी कामनाओं का साधक है। सभी भूतप्राणियों के हित से जो पुण्य कहा गया है और समस्त यज्ञों से जो फल बताया गया है, वह समस्त फल इस शिवरथ व्रत से व्रतार्थी को मिल जाता है।

सूर्यायुत प्रतीकाशैः विमानैः सार्वकामिकैः॥ 211॥
त्रिसप्तकुलमुद्धृत्य$_{21}$ शिवलोके महीयते।
भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान् सर्वलोकेष्वनुक्रमात्॥ 212॥
कल्पकोट्युतं साग्रं तस्यान्ते स महीपतिः।
सुरूपा सुगुणं चैव सर्वभोगसमन्वितम्॥ 213॥
लभते कुलजं शुद्धं पतिं सा सर्वमानयेत्।

इस व्रत का कर्ता दस हजार सूर्यों की चमक के बराबर दीप्तिमान ऐसे विमान में बैठता है जो समस्त अभीष्टों को प्रदान करने वाला होता है और वह अपने इक्कीस

---

1. सपाठान्तर तुलनीय—सर्वव्रतेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्॥ सर्व्वं शिवरथेनैव तत्पुण्यं सकलं भवेत्। सूर्य्यायुतप्रतीकाशैर्विमानैः सार्व्वकामिकैः। त्रिसप्तकुलजैः सार्द्धं शिवलोके महीयते॥ (पूर्ववत पृष्ठ 860)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

कुलों का उद्धार करता हुआ शिवलोक को जाता है। वह क्रमानुसार अन्य सभी लोकों में विपुल भोगों का उपभोग करता है। हजारों-करोड़ों कल्पों के उपरान्त वह राजा होता है। वह रूप-सौन्दर्य का धनी और समस्त भोगों का उपभोगकर्ता होता है। वह विशुद्ध कुल में जन्म पाता है और सभी का आदर-सम्मान पाने वाला अधिपति होता है।

इत्यमनन्तर शिवशय्याव्रतमाह —

पञ्च तुलीसमायुक्तां मृद्वीखट्वां सुकल्पिताम्॥ 214॥
सर्वोपकरणोपेतां शिवशय्यां प्रकल्पयेत्।
शिवं देवीसमायुक्तं पैष्टमस्यां निवेदयेत्॥ 215॥

(इसके अतिरिक्त) पाँच तुली (कपास) की रस्सियों से बुनी हुई मुलायम खाट तैयार करें। इसको आवश्यक उपकरणों सहित सजाकर शिव-शय्या का रूप दिया जाना चाहिए। इस पर आटे से शिव और उमा को बनाकर अर्पित करना करें।

शिवज्ञानार्थ तत्त्वज्ञं आचार्यं विनयान्वितम्।
सम्पूज्य गन्धपुष्पाद्यैः वस्त्रालङ्कारचामरैः॥ 216॥
भक्ष्यभोज्यैरशेषैश्च ततः शय्यां निवेदयेत्।

इसकी शिवधर्म के अर्थ के तत्त्वज्ञ आचार्य विनय से युक्त होकर गन्ध, पुष्पादि से पूजा करें और वस्त्र, आभूषण सहित चँवर, भक्ष्य भोज्य सामग्री के साथ इस शिवशय्या को शिव के प्रति निवेदित करें।

तन्तलेवस्त्रतन्तूनां परिसङ्ख्या तु यावती॥ 217॥
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते।
शिवादि सर्वलोकेषु भुक्त्वा भोगानशेषतः॥ 218॥
क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् सिंहासनपतिर्भवेत्।

इस शय्या के तल के लिए बुनी गई रस्सियों-पट्टों में जितने तन्तुओं का प्रयोग हुआ हो, उनकी संख्या की अपेक्षा हजार वर्षों तक इस शय्यादान व्रत का कर्ता रुद्रलोक में निवास करता है। वह शिवादि समस्त लोकों में अशेष भोगों को भोगता है और क्रम से इस पृथ्वीलोक को प्राप्त होकर सिंहासनपति अर्थात् राजाधिराज होता है।

वृषभैकादशीदानविधानफलञ्च —

दश गावो वृषश्चैको वृषभैकादशी स्मृता॥ 219॥
शिवाय विनिवेद्यैवं अवधारय तत्फलम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रुद्रैकादशतुल्याढ्यो बलभोगादिभिर्गुणैः ॥ 220 ॥[1]

(इसी प्रकार) दस गायों और एक वृषभ को वृषभ एकादशी के दिन दान करना चाहिए। (हे सनत्कुमार!) इसको शिव के प्रति निवेदित करने का फल सुनो। इस व्रत को करने वाला ग्यारह रुद्रों के तुल्य बल और भोगादि गुणों से युक्त होता है।

शिवादि सर्वलोकेषु यथेष्टं मोदते सुखी।
कल्पकोटिसहस्राणि कल्पकोटिशतानि च ॥ 221 ॥
भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान् अशेष कुलजैः सह।
तदन्ते ज्ञानमासाद्य प्रसादात्परमेष्ठिनः ॥ 222 ॥
विमुच्य मोहकलिलं स्वातन्त्र्यवावतिष्ठति।

वह (देहान्तोपरान्त) शिवादि के साथ ही समस्त लोकों में यथेष्ट आनन्द पाकर सुखी होता है। वह सैकड़ों ही नहीं, हजारों-करोड़ों कल्पों तक अशेष, विपुल भोगों को अपने कुलजनों के साथ भोगता है। तदनन्तर वह परमेष्ठिन शिव की कृपा से ज्ञान को प्राप्त करता है और मोहरूपी कीचड़ से मुक्त होकर स्वतन्त्र होकर रहता है।

सवृषशतगोदानफलमाह —

सवृषं गोशतं दद्यात् शिवायातीव शोभनम् ॥ 223 ॥
त्रिसप्तकुलजैः$_{21}$ सार्धं शृणु यत्फलमाप्नुयात्।
सूर्यकोटिप्रतीकाशैः सर्वकाम समन्वितैः ॥ 224 ॥
महायानैरसङ्ख्यातैः अमरासुरपूजितः।
शतरुद्रबलोपेतो वीरभद्र इवापरः ॥ 225 ॥

(उक्त दानसम्मत व्रतों के अतिरिक्त) जो अति ही सुन्दर वृषभ सहित सौ गायों का भगवान् शिव के प्रति दान करता है, वह अपने इक्कीस कुलों सहित उसका फल प्राप्त करता है। वह ऐसे महायान में सवार होता है जो करोड़ों सूर्यों की आभा लिए रहता है और जिसमें समस्त अभीष्टों की पूर्ति होती है तथा उसमें असंख्य देवता और असुर पूजा करते हैं। वह सौ रुद्रों का बल प्राप्त करता है और फिर वीरभद्र होता है।

---

1. सपाठान्तर तुलनीय— दश गावः स वृषभा वृषभैकादशी स्मृता। शिवाय विनिवेद्यैवं विशुद्धेनान्तरात्मना॥ रुद्रैकादशतुल्यात्मा बलभोगादिभिर्गुणैः। शिवादिसर्वलोकेषु यथेष्टं मोदते वशी॥ (चतुर्वर्गचिन्तामणि दानखण्ड अध्या. 7, पृष्ठ 567; तत्रैव भविष्यपुराणात् उद्धरणम्, वर्तमान पाठ— दश गोभिः सह वृषं ता वृषैकादशाः स्मृताः। सूर्याय विनिवेद्येह यत्फलं लभते शृणु॥ द्वादशादित्यतुल्यात्मा अणिमादिगुणैयुतः। सर्वत्र मोदते राजन्सूर्यस्यानुचरो भवेत्॥ ब्राह्मपर्व 169, 19-20)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गत्वा शिवपुरं दिव्यं अशेषाधिपतिर्भवेत्।
भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान् प्रलये समुपस्थिते॥ 226॥
मोहकञ्चुकमुत्सृज्य स कैवल्यमवाप्नुयात्।
सर्वज्ञः परमः शुद्धः सामान्येव व्यवस्थितः॥ 227॥
शिववत्परिपूर्णश्च शिववत्पतिरव्ययः।[1]

वह दिव्य शिवपुर को जाता है और वहाँ अशेषाधिपति होता है। वहाँ के विपुल भोगों का उपभोग करता हुआ जब प्रलयकाल आता है तब वह मोहरूपी कंचुक को त्याग करके कैवल्य को प्राप्त होता है। वह धर्मात्मा सर्वज्ञ और परमशुद्ध होकर सामान्य रूप में व्यवस्थित और शिव के समान परिपूर्ण एवं शिव की तरह अव्यय होकर रहता है।

उभयतोमुखीदानफलम् —

यो दद्यादुभयमुखीं शिवायातीव शोभनम्॥ 228॥
सप्तद्वीपां क्षितिं दत्वा यत्पुण्यं तदवाप्नुयात्।
पादद्वयं शिरोर्ध्वं च यदा वत्सो विनिर्गतः॥ 229॥
तदादौ पृथिवी ज्ञेया तद्दातास्यान्महीप्रदः।[2]

जो उभयतोमुखी (ब्याती हुई) शोभाजनक गाय का भगवान् शिव के प्रति दान करता है, वह सातद्वीपों वाली पृथ्वी के दान के बराबर पुण्य को प्राप्त करता है। यह ज्ञातव्य है कि (गर्भ से निकलते हुए) बछड़े के दो पाँव और आधा सिर जब तक योनि

---

1. उक्त 223-227 श्लोक भविष्यपुराण में आए श्लोकों से तुलनीय है। पाठान्तर और भावार्थ इतना ही पृथक है कि भविष्यपुराणकार ने सूर्य के प्रति दान करने का निर्देश दिया है— सवृषं गोशतं दत्त्वा भास्कराय नराधिपः। त्रिःसप्तकुलजैः सार्धं शृणु यत्फलमाप्नुयात्। वरकोटिप्रतीकाशैः सर्वकामसमन्वितैः। महायानैरसङ्ख्येयैरमरासुरपूजितै॥ द्वादशादित्यसङ्काशो दिवाकर इवापरः। गत्वादित्यपुरं रम्यं क्रीडते सूर्यमण्डपे॥ भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान्प्रलये सर्वदेहिनाम्। मोहकञ्चुकमुत्सृज्य विशत्यादित्यमण्डले॥ सर्वज्ञः सूरपरमः शुद्धः स्वात्मन्यवस्थितः। सर्वगः परिपूर्णत्वात्सूर्यवदीप्तिमान्भवेत्॥ (ब्राह्मपर्व 170, 1-5)
2. याज्ञवल्क्यस्मृति में आया है कि उभयोमुखी गाय का देने वाला व्यक्ति उतने ही युगों तक स्वर्ग में रहता है, जितने रोएँ गाय और बछड़े के शरीर पर मिलाकर होते हैं। बछड़े के दो पैर और मुख जब तक योनिगत ही दिखाई पड़ते हैं, तब तक वह उभयतोमुखी होती है। जब तक प्रसव नहीं हो जाता, उस स्थिति में वह पृथ्वी के समान समझी जाती है— सवत्सारोमतुल्यानि युगान्युभयतोमुखीम्। दाताऽस्याः स्वर्गमाप्नोति पूर्वेण विधिना ददत्॥ यावद्वत्सस्य पादौ द्वौ मुखं योन्यां च दृश्यते। तावद्गौः पृथ्वी ज्ञेया यावद्गर्भं न मुञ्चति॥ (आचाराध्याय 206-207)
उक्त श्लोक भविष्यपुराण में आए हैं किन्तु वहाँ पाठ खण्डित हैं— यो दद्यादुभयमुखीं सौरभेयीं दिवाकरे। सप्तद्वीपां महीं दत्त्वा यत्फलं तदवाप्नुयात्॥ पादद्वयं शिरोऽर्धं च सशैलवनकानना॥ (भविष्य. ब्राह्मपर्व 170, 6)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

में ही दिखाई पड़ते हों, जब तक गाय अपने बछड़े का प्रसव नहीं कर देती, तब तक उसको पृथ्वी के समान समझना चाहिए और उसका दाता उपर्युक्त प्रमाण भूमि का दाता होता है।

इति शिवधर्मपुराणे[1] व्रतोपवासगोप्रदानाऽध्यायो नाम दशमोऽध्यायः॥ 10॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में व्रतोपवास गोप्रदान अध्याय नामक दसवाँ अध्याय पूरा हुआ।

*****

अथ एकादशोऽध्यायः॥ 11॥

समस्त वर्णों व शिवाश्रमवासियों के लिए शिवधर्म का कथन, शिवार्थ विविध कृत्यों का निरूपण तथा जटा, रुद्राक्षादि धारण का फल और माहात्म्य

अथ स्वयं सदाशिवप्रवर्तितशिवधर्मम्। श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

सर्वेषामेव वर्णानां शिवाश्रमनिषेविणाम्।
शिवधर्माः शिवेनोक्तो धर्मकामार्थमुक्तये॥ 1॥

(श्रीनन्दिकेश्वर ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार के प्रति बोले) सभी वर्ण वालों के लिए और शिवाश्रम में निवास करने वालों के लिए भगवान् शिव द्वारा धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष के लिए पालनार्थ शिवधर्म कहा गया है।

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः स्त्रीशूद्रो वा शिवाश्रमी।
ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः॥ 2॥

(यह शिवधर्म) ब्राह्मणों के लिए, क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों, शिवाश्रम के निवासियों, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासियों के लिए विहित है।

शिवाश्रमे दिशानुसारेण नानास्थापत्यरचनापरिकल्पनम् —

स्वाश्रमादुत्तरे कुर्यात् पुष्पारामं सुशोभनम्।
आग्नेय्यामगन्यगारं च ऐशान्यामीश्वरालयम्॥ 3॥

---

1. 'शास्त्रे' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्तों को चाहिए कि वे अपने आश्रम के उत्तर भाग में सुन्दर पुष्पवाटिका का निर्माण करवाए। आग्नेय (पूर्व-दक्षिण) में अग्नि का आगार (रसोई, महानस) बनवाएँ और ईशान कोण (उत्तर-पूर्व) दिशा में ईश्वरालय का निर्माण करवाएँ।

शिवालयक्षेत्रे अभ्यागतालयनिर्देशम् —

प्रदेशासम्भवे कुर्यात् यत्र स्थाल्यसम्भवो भुवः।
शिवस्य दक्षिणे कुर्यात् तद्भक्ताऽभ्यागतालयम्॥ 4॥

किसी प्रदेश में जहाँ-जहाँ भूमि उपलब्ध हो, वहाँ भगवान् शिव के मन्दिर बनवाएँ और शिव के दक्षिण में उनके अपने भक्तों के रहने के लिए अभ्यागतालय (अतिथिगृह) बनवाना चाहिए।

नैर्ऋत्यादिकोणेकरणीयनिर्माणम् —

नैर्ऋत्यां च समिद्देशं वारुण्यामुदकाश्रयम्।
वायव्या धान्यदेशं वै कौबेर्यां भाण्डगूढकम्॥ 5॥

उक्त आश्रम के नैर्ऋत्य कोण (दक्षिण-पश्चिम) के पूरे प्रदेश में और पश्चिम दिशा में जलस्रोत का निर्माण करना चाहिए। वायव्य कोण (पश्चिम-उत्तर) में धान्यप्रदेश और उत्तर दिशा में भण्डार गृह बनवाना चाहिए।

त्रिकाले त्र्यम्बकमाग्निकार्य निर्देशमाह —

त्रिसन्ध्यमर्चयेदीशं अग्निकार्यं च शक्तितः।
एककालं त्रिकालं वा पूजयेच्छक्तितः शिवम्॥ 6॥

दिन में तीनों ही सन्ध्याकाल (प्रातः, मध्याह्न व सायंकाल) में महादेव का अपने सामर्थ्य के अनुसार हवनादि अग्निकर्म करना चाहिए तथा एक बार या तीनों ही काल में अपनी शक्ति के अनुसार शिवपूजन करना चाहिए।

शिवपूजारहितभोजनं निषेधमाह —

असम्पूज्य शिवं मोहात् न भुञ्जीत कदाचन।
एव धर्मः परो ज्ञेयः शेषो भवतु वा न वा॥ 7॥

मोहवश कभी बिना शिव के पूजन के भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए। इसे परमधर्म समझें, अन्य कुछ कार्य चाहे करें या नहीं करें।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वकाले शिवपूजानिर्देशमाह —

कार्यातिपात संरोधाद् राष्ट्रविभ्रमणादिषु।
मनसा पूजयेद्भक्त्या वाचिकैर्वा जपादिभिः॥ 8॥

यदि कभी काम-काज में लगे रह जाएँ, कैद में जाना पड़ जाए अथवा राष्ट्र में उपद्रव हो जाए तब भी शिव की भक्तिपूर्वक मानस-पूजा, वाचिक पूजा या जपादि कार्य तो करना चाहिए।

शिवाश्रमाश्रितैः पूजा कर्तव्या भक्तितः सदा।
मनसा पूजयेद्योगी पुष्पैर्रारण्य सम्भवैः॥ 9॥

शिवाश्रम में रहते हुए सदा भक्तिपूर्वक शिव की पूजा करनी चाहिए। योग-मानस पुरुष अपनी मानसिक पूजा पूरी करें और वनप्रदेश में निवास करने वाले पुष्पों से पूजन कार्य सम्पादित करें।

कुत्र पुष्पहिंसानिषेधादीनां —

शिवार्थं पुष्पहिंसायां न भवेत्तु स हिंसकः।
यद्यल्पमपि चात्मार्थं हिंसते हिंसकस्तथा॥ 10॥

भगवान् शिव के लिए पुष्पों के चुनते समय जो हिंसा होती है[1], उससे कोई हिंसक नहीं कहलाता है परन्तु यदि थोड़ा भी अपने स्वार्थ के लिए पुष्पों को तोड़ता है तो वह कार्य हिंसा ही कहलाएगा।

पर्वतिथ्यादीनां शैवपूजनस्वरूपमाह —

शिवार्चनपरो नित्यं तद्भक्तातिथिपूजकः।
पर्वमैथुनवर्जी स्याद् धीमांच्छिवगृहाश्रमी॥ 11॥

जो नित्य प्रति शिव की अर्चना के परायण है और शिवभक्तों सहित अतिथि का पूजक है तथा जो पर्व तिथियों (14, 8, 15, 30 एवं सङ्क्रान्ति) में सम्भोग से रहित रहता है, वह बुद्धिमान शंकर-गृहाश्रमी होता है।

देवादीनार्थाऽन्नपचनफलम् —

देवाग्न्यतिथिभैक्षार्थं पचेन्नैवार्थकारणात्।
आत्मार्थं यः पचेन्मोहात् नरकार्थं स जीवति॥ 12॥

---

1. लिंगपुराण में कहा गया है कि शिव के लिए सदा पुष्पहिंसा की जा सकती है। उनको नानाविध पुष्पों की सेवा प्रिय है : शिवार्थं सर्वदा कार्या पुष्पहिंसा द्विजोत्तमाः। (लिंग. पूर्व. 78, 14)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

देवताओं, अग्नियों और अतिथियों के निमित्त जो अन्न को पकाता है, वह अर्थकारण का (व्यर्थ, पापप्रद) नहीं होता, परन्तु मोहवश आपने लिए अन्न को पकाता है, वह नरक के लिए ही जीता है।

देवार्थं पचनं येषां सन्तानार्थं च मैथुनम्।
स्वर्गार्थं जीवितं तेषां नरकार्थं विपर्यये॥ 13॥

जो केवल देवताओं के लिए आहार तैयार करते हैं और केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए सम्भोग करते हैं, वे स्वर्ग के लिए जीवन जीने वाले हैं और इसका उलटा करने वाले नरक के लिए ही जीते हैं।

शिवाग्निगुरुपूजाभिः पापैरेतैर्न लिप्यते।
अन्यैश्च पातकैर्घोरैः तस्मात् सम्पूजयेत्त्रयम्॥ 14॥

शिव की, अग्नि की और गुरु की पूजा करने वाला पाप से लिप्त नहीं होता है। अन्य सभी कार्य घोर पाप होते हैं। अतः उक्त तीनों का पूजन करना चाहिए।

शिवपूजार्थ उपार्जितधनभागादीनां —

वित्ततृतीयभागेन प्रकुर्वीत शिवार्चनम्।
कुर्वीत वा तदर्धेन यतोऽनित्यं हि जीवितम्॥ 15॥

अपने उपार्जित धन के तीसरे भाग से शिवार्चना करनी चाहिए। इस धन के आधे हिस्से को भी इस अर्थ में यह जानकर व्यय किया जाना चाहिए कि यह जीवन अनित्य अर्थात् नाशवान है।

न्यायेनोपार्जयेद्वित्तं अन्यायं परिवर्जयेत्।
अन्यायेनार्जितैर्द्रव्यैः नरकार्थं स जीवति॥ 16॥

धन का उपार्जन सदैव न्यायपूर्वक किया जाना चाहिए। धनोपार्जन में अन्याय को छोड़ देना चाहिए क्योंकि अन्याय से धनोपार्जन करना नरक के अर्थ में ही जीवन जीना होता है।

शैवब्रह्मचारीधर्माह —

यः शिवब्रह्मचारी स्यात् स शिवार्चाग्नितत्परः।
भवेज्जितेन्द्रियः शान्तो नैष्ठिको भौतिकोऽपि वा॥ 17॥
सर्वरोगविनिर्मुक्तः कन्दमूलफलाशनः।

जो शैव ब्रह्मचारी हो, उसको शिवार्चना और अग्निहोत्र में तत्पर रहना

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चाहिए। इस क्रम में यह आवश्यक है कि वह शैव ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय और शान्त हो तथा यदि भौतिक जीवनमय भी हो तो नैष्ठिक अर्थात् नियमित जीवन जीने वाला हो। वह समस्त रोग-शोकादि से निर्मुक्त हो और कन्द-मूल का आहार करने वाला हो।

शैववैखानसलक्षणमाह —

शिववैखानसो ज्ञेयः शिवार्चनपरो भवेत्॥ 18॥
निवृत्तः सर्वरागेभ्यः शिवध्यानरतः सदा।

जो शैव वैखानस हो, वह भी शिवार्चनपरायण होता है। यह आवश्यक है कि वह समस्त रागों से निवृत्त हो और सदा भगवान् शिव के ध्यान में तत्पर हो।

शिवयतीन्द्रलक्षणम् —

ज्ञेयः शिवयतीन्द्रोऽयं भस्मनिष्ठो जितेन्द्रियः॥ 19॥
रुद्राक्षकङ्कणं हस्ते जटैका चैव मस्तके।
लिङ्गं शिवाश्रमस्थानां भस्मना च त्रिपुण्ड्रकम्॥ 20॥

उसको शिवयतीन्द्र जानना चाहिए जो कि सदा भस्मनिष्ठ और जितेन्द्रिय होता है। वह शिवयतीन्द्र अपने हाथों में रुद्राक्ष के कंकण धारण करता है और अपने सिर पर एक जटा रखता है। शिवाश्रम जैसे स्थानों में शिवलिंग भी भस्म और त्रिपुण्ड जैसा तिलकधारक होता है।

शिरसाधारयेत्कोटिं कर्णयोश्च सहस्रकम्।
शतकोटिगलेबद्धं सहस्रं बाहुमध्यतः॥ 21॥

उस शिवयतीन्द्र के सिर पर करोड़ रुद्राक्ष होंगे, कानों में हजार तथा गले में शतकोटि और बाहुओं के मध्य में हजार रुद्राक्ष बन्धे हुए होंगे।

रुद्राक्षधारणफलमाह —

अप्रमाणफलं हस्ते रुद्राक्षस्य तु धारणात्।
उच्छिष्टो वापि कण्ठेन युक्तो वा सर्वपातकैः॥ 22॥
हरन्ति सर्वपापाश्च रुद्राक्ष स्पर्शनेन तु।

रुद्राक्ष को धारण करने से अनगिनत फल हस्तगत होते हैं। कण्ठ चाहे उच्छिष्ट हो (झूठे बोल बोलने वाला) अथवा व्यक्ति समस्त पापों से युक्त क्यों न हो, रुद्राक्ष का स्पर्श करने से वह सभी पापों से छूट जाता है।

रुद्राक्षकण्ठमाश्रित्य श्वानोऽपि क्रियते यदि॥ 23॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सोऽपि रुद्रत्वमाप्नोति किं पुनर्मानवादयः।

यदि रुद्राक्ष को श्वान के गले में भी धारण करवा दिया जाए तो वह रुद्रत्व को प्राप्त हो जाता है, फिर मानव की तो बात ही क्या है!

हस्ते मूर्ध्न्युपवीते वा रुद्राक्षं धारयेत यः॥ 24॥
आगम्य सर्वसत्वानां रुद्रलोकं स गच्छति।

जो कोई हाथ में और सिर पर उपवीत अथवा रुद्राक्ष धारण करता है, वह सभी सत्वों-प्राणियों के लिए अगम्य रुद्रलोक में जाता है।

जटाधारणफलमाह —

रुद्रभक्तैः सदाधार्या रुद्रसङ्ख्या₁₁ जटाः शुभाः॥ 25॥
ध्वङ्सनि सर्वदुःखानां ताभी रुद्रत्वमाप्नुयात्।
सितेन भस्मना कुर्यात् त्रिसन्ध्य सत्त्रिपुण्ड्रकम्॥ 26॥
सर्वपाप विनिर्मुक्तः शिवलोके महीतये।

भगवान् शिव के भक्त को सदा ही ग्यारह की संख्या में सुन्दर जटा को धारण करना चाहिए। यह समस्त दुखों के लिए ध्वंसकारक है और उससे रुद्रत्व प्राप्त होता है। उसको तीनों ही सन्ध्याओं में सफेद भस्म से त्रिपुण्डतिलक करना चाहिए। इससे वह समस्त पापों से विनिर्मुक्त होकर शिवलोक को जाता है।

रुद्राग्निभस्मात् स्नानफलमाह —

रुद्राग्नेर्यत्परं वीर्यं तद्भस्म परिकीर्तितम्॥ 27॥
ध्वङ्सनं सर्वदुःखानां सर्वपाप विशोधनम्।

रुद्राग्नि के अन्दर जो परम वीर्य (पराक्रमी) हैं, उसको भस्म कहा जाता है। वह समस्त दुखों का निवारण करती है और समस्त पापों का शोधन करने वाली है।

योगी सर्वाङ्गिकस्नानं आपादतलमस्तकम्॥ 28॥
त्रिसन्ध्यमाचरेन्नित्यं आशु योगमवाप्नुयात्।

योगी अपने पाँव के तल से लेकर मस्तक पर्यन्त सर्वांगिक रूप से इस भस्म से ही स्नान करता है। तीनों ही सन्ध्याकाल में ऐसा आचरण करने वाला शीघ्र ही योगसिद्ध हो जाता है।

यः स्नानमाचरेन्नित्यं आग्नेयं संयतेन्द्रियः॥ 29॥
कुलैकविंशमुतार्य₂₁ स गच्छेत्परमां गतिम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो नित्य संयतेन्द्रिय होकर इस आग्नेयस्नान या भस्मस्नान को करता है, वह अपने इक्कीस कुलों को तारता है और परमगति को प्राप्त होता है।

भस्मस्नानं जलस्नानाद् असङ्ख्येयगुणाधिकम्॥ 30॥
तस्माद्वारुणमुत्सृज्य स्नानमाग्नेयमाचरेत्।

भस्मस्नान में जलस्नान की अपेक्षा अधिसंख्य गुण होते हैं। इससे जलस्नान को छोड़कर आग्नेय या भस्मस्नान को करना चाहिए।

सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्॥ 31॥
तत्फलं लभते सर्वं भस्मस्नानान्न संशयः।

सभी तीर्थों के सेवन का जो पुण्य होता है और जो फल सभी यज्ञों को करने से मिलता है, वह समस्त फल भस्मस्नान से सुलभ होता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

महापातकयुक्तो वा युक्तो वा सर्वपातकैः॥ 32॥
भस्मस्नानं निषेवेत मुच्यते सर्वपातकैः।
भस्मस्नानात्परं स्नानं पवित्रं नैव विद्यते॥ 33॥

कोई महापाप वाला हो अथवा समस्त पापों को करने वाला हो, भस्म स्नान को करने से वह समस्त पापों से निजात पाता है। भस्मस्नान से परमस्नान अन्य कोई स्नान नहीं है, यह जानना चाहिए।

इत्युक्त्वा मुनिदेवेभ्यः स्नातोऽनेन शिवः स्वयम्।
ततः प्रभृति ब्रह्माद्या[1] मुनयश्च शिवार्थिनः॥ 34॥
सर्वपर्वसु यत्नेन भस्मस्नानं प्रचक्रिरे।

मुनियों और देवताओं ने भी यही कहा है कि स्वयं शिव भी इस भस्म से ही स्नान करते हैं। इसी कारण शिवार्थी ब्रह्मादि मुनिजन भी समस्त पर्वों के अवसर पर प्रयत्नपूर्वक भस्मस्नान करते हैं।

तस्मादेतच्छिवस्नानं आग्नेयं यः समाचरेत्॥ 35॥
अनेनैव शरीरेण स रुद्रो नात्र संशयः।

अतएव इस भस्म वाले शिवस्नान को करना चाहिए। इस स्नान को करने वाला इसी शरीर से रुद्र हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है।

---

1. मुनियों की दृष्टि से यहाँ ब्रह्माण पाठ समीचीन लगता है। क्योंकि मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, क्रतु, दक्ष, अत्रि और वसिष्ठ ये नौ ऋषि ब्रह्मा के मन से उत्पन्न बताए गए हैं और ब्रह्मवादी होने के कारण ये नव ब्रह्माण कहे जाते हैं। (लिंगपुराण पूर्व. 44, 31-32 एवं पूर्व. 70, 181-183)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवशासनसंयुक्तनरस्य माहात्म्यमाह —

दुःशीलयुक्तो वा यो वा कोवाऽप्य लक्षणम्॥ 36॥
भूतिशासनसंयुक्तः स पूज्ये राजपुत्रवत्।

कोई दुराचारी हो अथवा अन्य किसी भी (दुष्ट) लक्षण वाला ही क्यों न हो, वह शिवशासन से युक्त होता है तो राजपुत्र[1] की तरह पूजा जाता है।

गुणवत्पात्र पूजायां तस्य शासनपूजनम्॥ 37॥
शासनं पूजयेत्तस्माद् अविचारं शिवाज्ञया।
शिवाज्ञापूजनात्साक्षात् शिवो भवति पूजितः॥ 38॥

उसके शासन की मान्यता (पूजावत्) गुणशाली पात्र के रूप में होती है। बिना कोई विचार किए ऐसे शासन की पूजा करनी चाहिए, यह शिव की आज्ञा है। शिवाज्ञा से ऐसा पूजन करने से पूजित होकर साक्षात् शिव हो जाता है।

अविकल्पमतिस्तस्मात् पूजयेच्छिव शासनम्।
सोऽपि यां गतिमाप्नोति न तां यज्ञशतैरपि॥ 39॥

इसलिए बिना किसी विकल्प के शिवशासन से पूजा करनी चाहिए। उसको वह गति मिलती है जो सैकड़ों यज्ञों के सम्पादन से नहीं मिल पाती है।

आचमनभस्मगन्धलेपश्चापि भावशुद्ध्यामहत्वञ्च —

आचमेत्तोय विधिनानिर्लेपः शिवभस्मना।
गन्धलेपविशुद्ध्यर्थं नित्यमद्भिरुपस्पृशेत्॥ 40॥
गन्धलेपविहीनोऽपि भावतुष्टो विशुद्ध्यति।
भावशुद्ध्या भवेच्छुद्धिः शुद्धभावस्ततो भवेत्॥ 41॥

साधक को चाहिए कि वह विधिपूर्वक जल से आचमन करके शिवभस्म का लेपन करे। विशुद्धि के लिए गन्ध का लेपन करें और फिर जल का प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट समझना चाहिए कि कोई गन्धलेप से विहीन ही क्यों न हो, यदि

---

1. यहाँ राजपुत्र शब्द का सामान्य अर्थ राजा का पुत्र नहीं है, वरन् राज्य का पुत्र है। पुराण के रचनाकाल तक कई जातियाँ आततायियों की तरह पहचानी जा रही थी और उनके देशीय-प्रदेशीय सहित अन्य कई पहचानपरक चिह्न-लक्षण थे। उन्होंने अपने अधिकार क्षेत्र को शिवशासन सम्मत किया जिसमें शिव को ही राजा के संरक्षक के रूप में स्वीकृत कर प्रचारित किया गया, ऐसे राज्य-शासन के सूत्रधार को राजपुत्र के रूप में पहचाना गया। यही राजपुत्र शब्द कालान्तर में राजपूत के रूप में रूढ़ हो गया।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वह भावतुष्ट है तो वह विशुद्ध है। भावशुद्ध होने से ही शुद्धि होती है, इससे वह भावशुद्ध हो जाता है।[1]

भस्मस्नानेन यत्पूर्वं पापमामरणान्तिकम्।
जन्मान्तरकृतं यत्तद् दहत्यग्निरिवेन्धनम्॥ 42॥

जिसने मरने से पूर्व अपने जीवनकाल में पापाचरण किया हो अथवा जन्म-जन्मान्तर में भी जो पाप किए हों, वे सभी पाप भस्मस्नान से उसी तरह भस्मीभूत हो जाते हैं, जैसे अग्नि इन्धन को जला डालती है।

अथ पञ्चविधस्नानमाह —

स्नानं वारुणमाग्नेयं दिव्यं वायव्यमानसे।
पञ्चस्नानानि विप्राणां विहितानि विशुद्धये॥ 43॥

यह स्मरणीय है कि 1. जलस्नान, 2. भस्मस्नान, 3. दिव्यस्नान, 4. वायव्यस्नान और 5. मानसस्नान— ये पाँच स्नान विप्रों के लिए विशुद्धि के अर्थ में विहित है।

ऐतेषां विवरणं पश्चात् स्फुटीभविष्यति —

वारुणं वारिणां स्नानं आग्नेयभस्मना भवेत्।
वृष्ट्या सातपया दिव्यं वायव्यं रजसा गवाम्॥ 44॥
मानसं ध्यानमात्रेण विहितं शिवयोगिनाम्।

उक्त स्नानों[2] में से प्रथम जलस्नान पानी से किया गया स्नान होता है। दूसरा आग्नेयस्नान भस्म से होता है। तीसरा दिव्यस्नान वृष्टि और आतप से, चौथा गायों की रज

---

1. तुलनीय— नैर्मल्यं भावशुद्धिश्च विना स्नानं न जायते। तस्मान्मनोविशुद्ध्यर्थं स्नानमादौ विधीयते॥ (पद्मपुराणम् शब्दकल्पद्रुम भाग 5, पृष्ठ 453) जो व्यक्ति भाव से शुद्ध नहीं है, वह स्नान और भस्मस्नान से भी शुद्ध नहीं होता, जो व्यक्ति भावशुद्ध है, वही शिव का ध्यान करने का अधिकारी है, अन्य कदापि नहीं। इसमें कोई संशय नहीं है कि जो भावशुद्ध नहीं है, वह नदियों, सरोवरों और तालाबों में चाहे प्रलयकाल तक भी स्नान करें, अन्ततः शुद्ध नहीं हो सकता है— भावदुष्टोऽम्भसि स्नात्वा भस्मना च न शुद्ध्यति। भावशुद्धश्चरेच्छौचमन्यथा न समाचरेत्॥ सरित्सरस्तडागेषु सर्वेष्वाप्रलयं नरः। स्नात्वापि भावदुष्टश्चेन्न शुद्ध्यति न संशयः॥ (लिंग. 25, 10-11)
2. परवर्ती ग्रन्थों में स्नान सात प्रकार के बताए गए हैं— 1. मान्त्रम्, भौमम्, 3. आग्नेयम्, 4. वायव्यम्, 5. दिव्यम्, 6. वारुणम्, 7. मानसम्। योगियाज्ञवल्क्यः— मान्त्रं भौमं तथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च। वारुणं मानसञ्चैव सप्तस्नानं प्रकीर्तितम्॥ आपोहिष्ठेति वै मान्त्रं मृदालम्भस्तु पार्थिवम्। आग्नेयं भस्मस्नानं वायव्य गोरजः स्मृतम्। यत्तु सातपवर्षेण स्नानं तद्दिव्यमुच्यते। वारुणञ्चावगाह्यञ्चमानसं विष्णुचिन्तनम्। समस्तं स्नानमुद्दिष्टं मन्त्रस्नानक्रमेण तु। कालदोषादसामर्थ्यात् सर्वं तस्य फलं स्मृतम्॥ (शब्दकल्पद्रुम भाग 5, पृष्ठ 452-453)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

से किया गया वायव्यस्नान[1] और पाँचवाँ मानसस्नान ध्यान मात्र से होता है— ये स्नान शिवयोगियों के लिए निर्धारित है।

उदकुम्भसहस्रेण मृदाढक शतेन वा॥ 45॥
अपि वर्षसहस्रेण भावदुष्टो न शुद्ध्यति।

कोई व्यक्ति हजारों कलशों और सैकड़ों मिट्टी के आढ़कों से हजार वर्ष भी स्नान कर ले किन्तु यदि दुष्टभाव है तो वह शुद्ध नहीं हो सकता है।

शौचादीनामाचरणम् —

भावपूतं चरेच्छौचं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्॥ 46॥
दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं सत्यपूतं वचो वदेत्।[2]

भाव से पवित्र होकर शौचाचरण करना चाहिए, वस्त्र से छानकर पानी पीना चाहिए, दृष्टि रखकर अपना पाँव आगे बढ़ाना चाहिए तथा सत्य को धारण करके ही भाषण करना चाहिए।

वपन वा केशमुण्डनमाह —

जटाकलापधारी स्यात् पक्षे वा वपनं भवेत्॥ 47॥
यदेवपुण्यं यज्ञेन तत्पुण्यं वपनाद्भवेत्।

शिवभक्त जटा-कलापधारी हो या पक्ष में केशमुण्डित[3] करवाने वाला हो सकता है, किन्तु यदि वह मुण्डन भी करवाता है तो वह यज्ञ के बराबर पुण्य को पाता है।

जटामुण्डीशिखी वापि भिक्षाशी विगतस्पृहः॥ 48॥
मौनीभूतानुकम्पश्च यतिः शान्तमनाश्चरेत्।
माधूकरीं चरेद्वृत्तिं एकान्नं परिवर्जयेत्॥ 49॥

---

1. पद्मपुराण में कहा गया है कि जो मनुष्य गायों के खुर से उड़ने वाली रज को सिर पर धारण करता है, वह मानो तीर्थ के जल में स्नान कर लेता है और समस्त पापों से छुटकारा पा जाता है— गवां रजः खुरोद्भूतं शिरसा यस्तु धारयेत्। स च तीर्थजले स्नातः सर्वपापः प्रमुच्यते॥ (सृष्टिखण्ड 50, 165)
2. तुलनीय— चक्षुष्पूतं व्रजेन्मार्गं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्॥ सत्यपूतां वदेद् वाणीमिति धर्मानुशासनम्। (वायुपुराण अध्या. 16, 6-7) चक्षुःपूतं चरेन्मार्गं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्। सत्यपूतं वदेद्वाक्यं मनःपूतं समाचरेत्॥ (लिंग. पूर्व 89, 7)
3. वपन का अर्थ बीजों की बुवाई करना और क्रियाचरण के अर्थ में केशमुण्डन करवाना होता है। मनु ने कहा है— शूद्राणां मासिकं कार्यं वपनं न्यायवर्तिनाम्। (मनुस्मृति 5, 140) पारस्करसूत्र में भी आया है— कार्यमिति कृत्यानां कर्तरि वा। (पा. सू. 2, 3, 71)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उपवासात्परं भैक्षं एकान्नं गृहिणाऽऽहृतम्।
यः सर्वसङ्गनिर्मुक्तः शिवः शिवपरायणः॥ 50॥
सोऽपीह वपनं कृत्वा योगीन्द्रानुचरो भवेत्।
वसेदायतने नित्यं सगणः शिवधार्मिकः॥ 51॥

यह ज्ञातव्य है कि जटी हो या मुण्डी या फिर शिखी, यदि वह भिक्षा से आहार करने वाला, विगतस्पृह, मौनी, भूतप्राणियों के प्रति अनुकम्पा करने वाला, यति, शान्तमन से आचरण करने वाला, भिक्षा माँगकर अपना जीवन चलाने वाला और एक बार आहार नहीं करने वाला तथा उपवास की अपेक्षा उस भिक्षा को श्रेष्ठ मानने वाला जो गृहस्थधर्मियों से एक समय आहार के लिए ग्रहण की जाती हो— ऐसा समस्त संग-दोषादि से विनिर्मुक्त शिवपरायण शिव होता है। वह केशमुण्डित करवाकर भी योगीन्द्रों का अनुयायी हो जाता है। वह नित्य शिवधार्मिकों, गणों के साथ शिवलोक में निवास करता है।

अन्यदानादीनां—

योगिनामन्नदानेन योगस्थानमवाप्नुयात्।
पुष्पारामैककर्तात्मा पुष्पवाटी क्रियापरः॥ 52॥
त्रिस्नानपूजां संयुक्तः कौपीनाच्छादनः सदा।
योगिनां भक्तियोगेन योगस्थानमवाप्नयात्॥ 53॥

योगियों को अन्नदान करने वाला योगी जनों के स्थान को प्राप्त करता है। पुष्पों के एक उद्यान को बनाने वाला पुष्पों की बाड़ी बनाने से अपरक्रियासिद्ध होता है। तीन स्नानों को करके और सदा ही कौपीन को धारण करने वाला योगीजन भी भक्तियोग से योगस्थान को प्राप्त कर लेते हैं।

शिवध्यानपरः शान्तः शिवधर्मपरायणः।
सर्वं एवाश्रमा ज्ञेयाः शिवधर्मा शिवाश्रमाः॥ 54॥

इसी प्रकार शिवध्यानपरक व्यक्ति शान्त और शिवधर्मपरायण होता है। वह सभी आश्रमों को शिवधर्म के और शिवाश्रम ही समझता है।

ईशानोक्त महाव्रताष्टकमाह —

महाव्रताष्टकं कार्यं ईशानोक्तं शिवार्थिभिः।
सर्वव्रतानां प्रवरं अस्मिन्धर्मः समाप्यते॥ 55॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवसाधक को चाहिए कि वह आठ महाव्रतों का पालन करें, जिनका उपदेश भगवान् शिव ने अपने भक्तों के लिए कहे हैं। ये सभी व्रतों में सर्वश्रेष्ठ है और इनका उपसंहार इस धर्म में आकर होता है।

शिवेभक्तिः शिवेशान्तिः अहिंसा सर्वदा शमः।
सन्तोषः सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं तथाष्टकम्॥ 56॥

1. शिव में भक्ति और 2. शिव में शान्ति के साथ ही 3. अहिंसा, 4. सर्वदा शमभाव को रखना, 5. सन्तोष स्वीकारना, 6. सत्य बोलना, 7. अस्तेय और 8. ब्रह्मचर्य— ये आठों महाव्रताष्टक कहे गए हैं।

मनसावाचाकर्मणाशिवपूजानिर्देशमाह —

यथासम्भवपूजाभिः कर्मणा मनसागिरा।
शिवेभक्तिः सदाकार्यो तद्वच्च शिवयोगिषु॥ 57॥

कर्म से, मन से और वचन से, जब भी जैसी पूजा सम्भव हो, शिव की सदा भक्ति करनी चाहिए और वैसे ही शिवयोगियों का भी पूजन करना चाहिए।

शिवभक्तार्थ शिवाचार वा पालनीयकर्तव्यमाह —

स्वदेहान्निर्विशेषेण शिवभक्तांश्च पालयेत्।
भयदारिद्र्यरोगेभ्यः तेषां कुर्यात्प्रियाणि च॥ 58॥

(सक्षमों को चाहिए कि) अपनी काया की अपेक्षा भी अधिक शिवभक्तों का पालन करें। उन्हें भय से, दरिद्रता और रोगों से बचाकर उनका प्रियकार्य करें।

शिवस्य परिपूर्णस्य किं नाम क्रियते जनैः।
यत्कृतं शिवभक्तानां तत्कृतं च शिवे भवेत्॥ 59॥

शिव के सर्वथा परिपूर्ण होने से फिर उनके कार्य करने वाले जनों का क्या नाम करना! जो कार्य शिवभक्तों के लिए किए जाते हैं, वे कार्य शिव के निमित्त ही होते हैं।

सदूरमपि गन्तव्यं यत्र माहेश्वरो जनः।
प्रयत्नेननापि द्रष्टव्यं तत्र सन्निहितो हरः॥ 60॥

जहाँ महेश्वर के जन रहते हैं, उनके लिए दूर भी जाना पड़े तो जाएँ और यह समझने का प्रयत्न करें कि वहाँ उनके दर्शन हों क्योंकि वहाँ स्वयं शिव निहित हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

माहेश्वरस्य भक्तस्य शिवार्चनरतस्य च।
पूजां कृत्वा यथान्यायं अश्वमेधफलं भवेत्॥ 61॥

महेश्वर के भक्तगणों तथा शिवार्चन में जुटे रहने वाले वालों की यथान्याय पूजा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल होता है।

नित्यं शिवकथासक्तो नित्यं शिवपरायणः।
अर्चयित्वा यथान्यायं गाणपत्यमवाप्नुयात्॥ 62॥

नित्य ही शिव की कथा के प्रति आसक्त रहने वालों और प्रतिदिन शिव के परायण रहने वालों की यथान्याय पूजा करने से गाणपत्य पद प्राप्त होता है।

शिवभक्तसेवायां फलमाह —

शिवाश्रमगतान्भक्त्या शिवभक्तान्प्रपूजयेत्।
स्वागतासनपाद्यार्घ्य मधुपर्कादिभोजनैः॥ 63॥
पूजयित्वा यथान्यायं यः कुर्यादभिवादनम्।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते॥ 64॥

भक्ति का संकल्प करके शिवाश्रम में जाने और शिवभक्तों का सम्मान-पूजन करने तथा ऐसे शिवभक्तों को आया हुआ जानकर आसन व पाँवों में अर्घ्य देने, मधुपर्कादि सामग्री का भोजन करवाने तथा उनकी पूजा सहित यथान्याय अभिवान करने से दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में निवास मिलता है।

प्राप्ताय शिवभक्ताय तुष्टिं व्रजति यो नरः।
वर्षकोटिसहस्राणि वसेद्वैश्रवणालये॥ 65॥

जो व्यक्ति शिवभक्त को प्राप्त करके तुष्टि अनुभव करता है, वह हजारों-करोड़ों वर्षों तक वैश्रवणालय (कुबेर के लोक) में निवास करता है।

प्राप्ताय शिवभक्ताय दो दद्याच्छुभमासनम्।
त्रिंशद्वर्ष$_{30}$सहस्राणि पुरन्दरपुरे वसेत्॥ 66॥

जो व्यक्ति शिवभक्तों को आया जानकर उनको शुभ आसन देता है, वह तीस हजार वर्षों तक इन्द्र के पुर (अमरावती) में निवास करता है।

शिवभक्तस्य विप्रस्य पादौ प्रक्षालय भक्तितः।
घृतेनाभ्यज्य चोद्वर्त्यं विष्णुलोके महीयते॥ 67॥

जो व्यक्ति शिवभक्त और विप्र को अपने यहाँ आया जानकर भक्तिपूर्वक

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उनके पाँवों का प्रक्षालन करता है और घृत मलकर आज्य-घी से उबटन करता है, वह विष्णुलोक को प्राप्त होता है।

शिवभक्तान्द्विजान्प्राप्तान् मधुपर्काद्यनुक्रमात्।
भोजयित्वा यथान्यायं शिवलोके महीयते॥ 68॥

शिवभक्त और विप्रों के मिलने पर जो नियमक्रम से मधुपर्कादिक भोजन यथान्याय करवाता है, वह शिवलोक को प्राप्त होता है।

संवाहनशय्यादानफलम् —

श्रान्तसंवाहनं कृत्वा सोमलोके महीयते।
मृदुशय्याप्रदानेन सिंहासनपतिर्भवेत्॥ 69॥

थके-हारे के लिए जो वाहन उपलब्ध करवाता है, वह सोमलोक को प्राप्त करता है और जो मुलायम शय्या प्रदान करता है, वह सिंहासनपति (राजा) होता है।

प्रतिश्रयजलदानफलम् —

प्रतिश्रयप्रदानेन हैमं स्वर्गेगृहं लभेत्।
[जलं] सुशीतलं दत्वा सर्वान्कामानवाप्नुयात्॥ 70॥

आश्रय (छाया अथवा विश्रान्तिगृह) का दान करने पर स्वर्ग में सोने के भवन मिलते हैं। सुशीतल जल प्रदान करने से समस्त मनोकामनाएँ पूरी होती हैं।

दीपादीनां दानफलम् —

लभेद्दीपप्रदानेन ज्ञानचक्षुरतीन्द्रियम्।
दत्वाम्भः स्नानशौचार्थं वारुणं लोकमाप्नुयात्॥ 71॥

दीपदान करने वाले को अतीन्द्रिय ज्ञानचक्षु मिलते हैं और स्नान एवं शौच के लिए जल का दान करने वाले को वरुणलोक मिलता है।

संवीजतालवृन्तदानफलम् —

स्वेदबिन्दुपरीताङ्गं अध्वनःश्रमकर्शितम्।
संवीज्यतालवृन्तेन वायुलोके महीयते॥ 72॥

जो व्यक्ति पसीने से तरबतर हो और जो श्रम से थकाहारा हो, उसको यदि ताड़ का वीजण (ताड़ का पंखा) दिया जाए तो वायुलोक मिलता है।

क्षुत्पिपासातुररोगीसेवाफलम् —

क्षुत्पिपासातुरं शान्तं आर्तं रोगिणमेव वा।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पालयित्वा यथान्यायं सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ 73॥

भूख और प्यास से आतुर को शान्ति देने और दुखी तथा रोगी का यथान्याय परिपालन (तिमारदारी) करने से सभी पापों का विमोचन हो जाता है।

रोगार्तस्य शिवं कृत्वा भेषजाद्यैः प्रयत्नतः।
युगकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 74॥
कालात्पुनरिहायातः समस्तज्ञानपारगः।
सुरूपः सुभगः श्रीमान्निर्मलो निरुपद्रवः॥ 75॥

व्याधिपीड़ितों का कल्याण और दुखियों के लिए प्रयासपूर्वक ओषधि-प्रबन्ध करने वाले को सैकड़ों करोड़ वर्षों के उपरान्त भी शिवलोक में निवास मिलता है और कालक्रम से पुनः इस पृथ्वीलोक में आकर वह समस्त ज्ञान-विज्ञान का विद्वान होता है तथा सुन्दर रूपवान, सौभाग्यवान, निर्मलकाय और निरुपद्रव होकर रहता है।

शरणागतादीनां आश्रयफलम् —

शरणागतमुद्विग्नं आक्रान्तं रिपुतस्करैः।
माभैषिरिति चाश्वास्य शिवलोके महीयते॥ 76॥

शरणागतों, दुखियों तथा शत्रुओं व चोर-डाकुओं के कारण आक्रान्तों को 'डरो मत' ऐसा अभयकारक वचन कहने वाले का शिवलोक में निवास होता है।

दारिद्र्यार्णवनिर्मग्नं हाहाभूतमचेतसम्।
समुद्धृत्य यथाशक्त्या सर्वान्कामानवाप्नुयात्॥ 77॥

दरिद्रता के अपार सागर में डूबे हुए लोगों और जो हाहाकार करते-करते अचेत हो गए हों, उनको जो यथाशक्ति उबारने का प्रयास करता है, उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

तथान्नादिदानमहिमाफलञ्च —

पतिताः शस्त्रसङ्कीर्णाः श्वचाण्डालादिपक्षिणाम्।
कारुण्यात्सर्वभूतानां देयमन्नं स्वशक्तितः॥ 78॥

पतितों, शस्त्रों के कारण पीड़ित (युद्धपीड़ितों अथवा सैनिकों के संयोग से जो संकीर्ण उत्पन्न हुए हों), कुत्तों, चाण्डालादि सहित पक्षियों और अन्य समस्त भूतप्राणियों पर करुणा करते हुए अपनी शक्ति के अनुसार अन्नदान करना चाहिए।

अत्यल्पमपि कारुण्याद् दत्तं भवति चाक्षयम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तत्मात्सर्वेषु भूतेषु कारुण्याद्दानमुत्तमम् ॥ 79 ॥

अरे! करुणा-दयापूर्वक दिया गया दान यदि अत्यल्प भी तो वह दान अक्षय हो जाता है। इसलिए सभी भूतप्राणियों को दयाव्रत का पालन करते हुए दान करना सर्वोत्तम होता है।

अभावे तृणभूम्यम्भः पत्रमूलफलानि च।
दत्वागताय नार्योऽपि स्वर्गं यान्ति प्रियेण वा ॥ 80 ॥

(यदि अन्नादि किसी द्रव्य का) अभाव हो तो तृण, भूमि, जल, पत्र, मूल, फल आदि कोई भी सामग्री क्यों न हो और पात्र यदि अनार्य भी तो उसको दान करने से स्वर्ग प्राप्त होता है।

मधुरवाग्व्यवहारफलमाह —

महीभृत्स्वर्गसोपानं यथालोके प्रियं वचः।
इहामुत्र सुखं तेषां वाग्येषां मधुरस्वरा ॥ 81 ॥

वे राजा जो इस लोक में प्रियवचन बोलते हैं, स्वर्ग के सोपान होते हैं। वे मधुर वाणी-व्यवहार से इहलोक और परलोक में सुखी होते हैं।

अमृतस्यन्दिनीं वाचं चन्दनस्पर्शशीतलाम्।
धर्माविरोधिनीमुक्त्वा सुखमक्षयमाप्नुयात् ॥ 82 ॥

वाणी अमृत की वाहिनी होती है, वचन चन्दन के स्पर्श के समान शीतलता देने वाले होते हैं। अतः किसी भी धर्म की विरोधी बात नहीं कहनी चाहिए। इससे अक्षय सुख की प्राप्त होती है।

अम्लं दानेन विप्रेन्द्र यजनाध्ययनेन वा।
इदं तत्सर्गसोपानं अमलं यत्प्रियं वचः ॥ 83 ॥

ब्राह्मणों को यदि विशुद्ध द्रव्य का दान यजन-अध्ययन के निमित्त किया जाता है और उनके प्रति निर्मल वचनों का प्रयोग किया जाता है तो इस लोक में ही स्वर्ग के सोपान की सिद्धि जाननी चाहिए।

इत्यमनन्तरागतस्वागतकृत्यफलम् —

प्रत्युत्थायाभिगमनं वर्ज्यं चैवाप्रियं वचः।
पूर्वाभिभाषणं तुष्टः प्रत्येकं स्वर्गहेतवः ॥ 84 ॥

स्वर्ग की इच्छा करने वाले को चाहिए कि सामने आने वाले का उठकर

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स्वागत करें, उसके प्रति कोई अप्रिय वचन नहीं बोले और उसके अभिभाषण से पूर्व ही उसको यथेष्ट सन्तुष्ट करें।

सम्पृच्छेदागतं भक्त्या चागतं स्वागतं वदेत्।
गमनेऽप्यस्य वक्तव्यं पन्थानः स इते शिवाः॥ 85॥

आगन्तुक से कोई भी बात सम्मानपूर्वक पूछे और आगत का स्वागत करें। प्रस्थान करने पर उसकी यात्रा की मंगलकामना करनी चाहिए।

शिवं भवतु मे नित्यं अशेषार्थप्रसाधकम्।
आशीर्वादमिदं वाच्यं सर्वकार्येषु सर्वदा॥ 86॥

उनके सभी कार्यों में सदा यह आशीर्वादपूर्ण वचन कहना चाहिए—'आपका नित्य कल्याण हो और समस्त अर्थों के साधक बने रहिए।'

नमस्काराभिवादेषु स्वस्तिमङ्गलवाचने।
शिवं भवतु वा ब्रूयात् सर्वकार्येषु सर्वदा॥ 87॥

नमस्कार करने और अभिवादन में तथा स्वस्तिपाठ एवं मंगलवाचन करने से हमारा कहा हुआ सभी कार्यों में सदैव ही कल्याणकारी होता है। (अर्थान्तर से यह आशय भी है कि नमस्कार, अभिवादन, स्वस्तिवाचन और मंगलपाठ सहित सर्वदा सभी कार्यों में 'शिवं भवतु' कहना चाहिए)।

एवमादि शिवाचारं अनुष्ठाय शिवाश्रमी।
अशेषपापनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते॥ 88॥

इस तरह के शिवाचारों का (आजीवन) पालन करते हुए शिवाश्रमी (शैव-व्रतार्थी) को अनुष्ठान-आचरण करना चाहिए। इससे वह सभी पापों से मुक्त होकर शिवलोक में निवास करता है।

शिवभक्तेषु या भक्तिः तद्भक्ते[1] [चान्यजनाः]।
शिवे भवति सा नित्यं भक्तिर्भक्तेष्वनुष्ठिता॥ 89॥

शिवभक्तों के लिए जो भक्ति विहित है, उनके अनुयायियों तथा अन्यजनों के लिए भी वही निश्चित है, इसी से उनका कल्याण होता है क्योंकि वे भक्तिपूर्वक भक्तों के अनुष्ठित हो चुके होते हैं।

----

1. '... तेजलैः' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तथा चान्यमूल्यगुणादीनां —

आकृष्टस्ताडितो वापि यो नाक्रोशेन्नताडयेत्।
वागाद्यविकृता स्वस्था क्षान्तिरेषां सुनिर्मला॥ 90॥

किसी कारण खींचतान करने पर अथवा ताड़ना देने पर भी जो आवेश में आकर प्रत्युत्तर में प्रताड़ित नहीं करता और वचन व्यवहार में असंयत नहीं होता एवं अपनी स्वाभाविक स्थिति में बना रहता है, वह निर्मलहृदयी क्षमा गुणधारक होता है।

सर्वेषामेवतीर्थानां तीर्थं ज्ञानस्य पारगम्।
ज्ञानतीर्थात्परं तीर्थं यत्पूर्णं क्षान्तिवारिणा॥ 91॥

समस्त तीर्थों में बड़ा तीर्थ वह है जो ज्ञान में पारंगत होता है। ऐसे ज्ञानतीर्थ से भी बड़ा वह है जो क्षमा रूपी जल से पूरित होता है।

क्रोधाऽऽवेशस्य निन्दा —

ज्ञानयोगतपोजप्य यज्ञदानादि सत्क्रियाः।
क्रोधिनस्तु वृथा यस्मात् तस्मात्क्रोधं विवर्जयेत्॥ 92॥

ज्ञान, योग, तपस्या, जप, यज्ञ, दान इत्यादि समस्त सत्क्रियाएँ क्रोधी व्यक्ति के लिए व्यर्थ हो जाती है। इसलिए सदा क्रोध से बचना चाहिए।

मर्मास्थिप्राणहृदयं निर्दहेदप्रियं वचः।
न वाच्यमप्रियं तस्मात् शिवभक्तैर्विशेषतः॥ 93॥

अप्रियभाषण, कटुवचन, क्रोध में किया गया भाषण व्यक्ति के मर्मस्थल तो क्या, अस्थि, प्राण और हृदय तक को जला डालता है, इसलिए कभी भी अप्रिय वचन नहीं कहना चाहिए। शिवभक्त को तो विशेषकर ऐसा वाग्व्यहार नहीं ही करना चाहिए।

क्षमागुणमाहात्म्यमाह —

क्षमादानं तपः सत्यं क्षमाऽहिंसा क्षमाश्रुतम्।
क्षमास्वर्गश्च मोक्षश्च क्षमयैतज्जगतद्वृतम्॥ 94॥

क्षमादान तपस्या है, सचमुच में क्षमा अहिंसा और क्षमा ज्ञान है। क्षमा ही स्वर्ग और मोक्ष है। क्षमा से ही यह चराचर आवृत्त है।

स शूरः सात्विको धीमान् स तपस्वी जितेन्द्रियः।
येनाशु क्षान्तिशस्त्रेण क्रोधशत्रुर्विवर्जितः॥ 95॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वही शूरवीर, सात्विक, बुद्धिमान, तपस्वी और जितेन्द्रिय है जिसने क्षमा रूपी आयुध के प्रयोग से क्रोधरूपी शत्रु को पराभूत कर दिया हो।

निर्मलैः क्षान्ति सलिलैः लोकमाह्लाद्य शीतलैः।
इह सौख्यमवाप्नोति परत्र च शिवां गतिम्॥ 96॥

क्षमा के जल से निर्मल हुआ व्यक्ति समस्त लोक को शीतलता से आह्लादित कर देता है, वह इहलोक में तो सुख पाता है ही, परलोक में शिवगति प्राप्त करता है।

अहिंसागुणप्रशंसामाह —

आत्मवत्सर्वभूतेषु यो हिताय शिवाय च।
स यथावर्तते नित्यं अहिंसेयमुदाहृता॥ 97॥

जो अपने समान ही सभी प्राणियों को मानता है, जो शिव के लिए हितकारी हैं और ऐसा व्यवहार नित्यप्रति रखता है, वह अहिंसक कहा गया है।

सर्वशास्त्रेषु वेदेषु सर्वयज्ञेषु यत्फलम्।
यो न हिंसति भूतानि तस्य पुण्यं ततोऽधिकम्॥ 98॥

सभी शास्त्रों और वेदों में वर्णित समस्त यज्ञों का जो फल कहा गया है, उससे अधिक पुण्य उसको मिलता है जो प्राणियों की हिंसा नहीं करता है।

त्रैलोक्यमपि यो दद्यात् अखिलं रत्नपूरितम्।
चरेत्तपांसि सर्वाणि न तत्तुल्यमहिंसया॥ 99॥

तीनों ही लोकों को यदि कोई समस्त रत्नों से परिपूरित कर दान कर दें अथवा सभी तपस्याओं को करें— ये कृत्य भी अहिंसा की बराबरी नहीं कर सकते है।

अहिंसा परमो धर्मः शक्तानां परिकीर्तितम्।
अशक्तानामयं धर्मो दानयज्ञादिपूर्वकः॥ 100॥
नातः परं प्रपश्यामः क्वचिदप्यागमे वयम्।

अहिंसा परमधर्म है जो शक्तिमानों के द्वारा (वीरों के लिए) कहा गया है। जो अशक्तजन हैं, उनके लिए दान-यज्ञादिपूर्वक धर्म कहा गया है। (श्रीनन्दिकेश्वर ने श्रीसनत्कुमार से कहा कि) इससे बड़ा परमधर्म मैं कुछ नहीं देखता हूँ। कतिपय आगमों तक में हमें इससे बड़ा धर्म नहीं मिलता है।

अभयदानप्रशंसामाह —

पुंसामभय दानात्तु दानद्धुतमुत्तमम्॥ 101॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वभूताभयं दत्वा यश्चरेच्छान्तमानसः।
इहैव सर्वभूतेभ्यो न भयं तस्य विद्यते॥ 102॥

लोगों को अभयदान देने से उत्तम अन्य कोई दान नहीं है। सभी प्राणियों को अभयदान देकर भी जो व्यक्ति शान्तमानस रहता है अर्थात् कोई बहादुरी नहीं दिखाता है, उससे इस लोक में सभी भूत-प्राणियों को कोई भय नहीं रहता है।

यो न हिंसति भूतानि स्थवराणि चराणि च।
सर्वदुःखविनिर्मुक्तः परां शान्तिमवाप्नुयात्॥ 103॥

जो प्राणियों की हिंसा नहीं करता है, चाहे वे प्राणी स्थावर या चलने-फिरने वाले ही क्यों न हों, वह व्यक्ति सभी दुखों से मुक्त होकर परमशान्ति को प्राप्त करता है।

पापे रमन्ति पापिष्ठा अतिक्रूरा नराधमाः।
आभूत सम्प्लवं यावत् पच्यन्ते नरकाग्निषु॥ 104॥

पापिष्ठ लोग पाप में ही प्रसन्न रहते हैं, वे अतिक्रूर नराधम होते हैं। वे जब तक समस्त प्राणी प्रलय को प्राप्त होते हैं, तब तक नरक की अग्नि में पकाए जाते रहेंगे।

प्राणिघातनिवारणफलम् —

स्वदेशे या नृपः कुर्यात् प्राणिघातनिवारणम्।
स नृपः सहदेशेन मोदते विभवैश्चिरम्॥ 105॥
देहान्ते च महाभोगैः समस्तकुलसंयुतः।
कल्पकोटिशतं साग्रं शिवलोके महीयते॥ 106॥

जो राजा अपने राज्य में प्राणिघात अर्थात् आखेट-शिकार-युद्ध पर रोक लगा देता है, वह राजा अपने समस्त देशवासियों के साथ चिरकाल तक आनन्द में रहता है और देहान्त होने पर भी वह अपने समस्त कुलजनों के साथ महाभोगों को भोगता है तथा सैकड़ों-करोड़ों कल्पों के उपरान्त भी शिवलोक में निवास करता है।

तत्रैव शान्तिलक्षणफलञ्च —

यः स्वार्थं वा परार्थं वा समस्तेन्द्रिय संयमः।
अकार्ये न प्रवर्तेत तमाहुः शान्तिलक्षणम्॥ 107॥
यः प्रशान्तेन्द्रियग्रामः सदा चन्द्रांशु निर्मलः।
स प्राप्नोति शिवस्थानं शान्तः शान्तेन चेतसा॥ 108॥

जो व्यक्ति अपने अथवा दूसरों के लिए अपनी समस्त इन्द्रियों पर संयम

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रखता है और कभी अकार्य में प्रवृत्त नहीं होता, उसमें ही शान्ति के लक्षण कहे जाते हैं। जो अपने समस्त इन्द्रियग्राम को प्रशान्त रखता है और सदैव चन्द्रमा की किरणों जैसा शीतल व निर्मल रखता है, वह शान्तचेतस् शान्त शिवस्थान को प्राप्त करता है।

सन्तोषलक्षणफलं च —

यथा कालोपपन्नेन वृत्तिन्यायागतेन च।
उत्पन्नार्थेषु यस्तोषः सन्तोषः परिकीर्तितः॥ 109॥

समय बीतने पर न्यायवृत्ति की गति से जो सन्तोष अर्थ से उत्पन्न होता है, उसे ही तोष-सन्तोष कहा जाता है।

अतीतनागतार्थेषु वर्तमानेषु सर्वदा।
नानुस्मरत्यतीतार्थान् सन्तोषोऽयमुदाहृतः॥ 110॥
तेमसर्वमरैररिष्टं तेन चाप्तं च तत्फलम्।

व्यतीत के और भविष्य के अर्थ में तथा वर्तमान के अर्थ में सदा जो तीर्थों का अनुस्मरण नहीं करता, उसे ही सन्तोष कहा गया है। उससे समस्त देवताओं को भी अभीष्ट आप्तफल प्राप्त होता है।

येन तृष्णाग्रहं त्यक्तं सन्तोषं सम्यग्राश्रितः॥ 111॥
सन्तोषैश्वर्ययुक्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम्।
देवासुरमनुष्याणां कुतः स्वप्नेऽपि तत्सुखम्॥ 112॥

जिसने तृष्णा रूपी आग्रह को छोड़कर सन्तोष का सम्यक् आश्रय लिया है, सन्तोष-ऐश्वर्य से युक्तों को जो सुख मिलता है, वह सुख शान्तचित्त वाले को मिलता है। देवताओं, असुरों और अन्य मनुष्यों को स्वप्न में भी ऐसा सुख कहाँ मिलता है!

सत्यलक्षणमाह —

स्वानुभूतं स्वदृष्टं च यः पृष्टार्थं न गृह्यते।
यथा भूतार्थकथनं इत्येतत्सत्यलक्षणम्॥ 113॥
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं एतावत्सत्य लक्षणम्।

जिसे अपने द्वारा वस्तुतः जाना गया और स्वयं द्वारा देखा-परखा गया हो और जिसे पहचान कर भी अन्य कोई विकल्पात्मक (उहापोह में) प्रश्न नहीं उठाया जा सकता हो, वह सत्य का लक्षण है। सत्य सत्य है, बार-बार पूछे जाने पर जो सत्य सत्य ही होता है, वह सत्य का लक्षण है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

परपीडाविनिर्मुक्तं यथावद्वचनं शुभम्॥ 114॥
अश्वमेधायुतं पुण्यं सत्यं च तुलयाधृतम्।
अश्वमेधायुतात्सत्यं अयुतं दशभिर्गुणैः॥ 115॥

अन्य किसी को भी पीड़ा पहुँचाए बिना जो यथावत रूप में कहा जाता है, वह शुभ होता है। दस हजार अश्वमेध यज्ञों के पुण्यों को और सत्य को यदि एक तुला में रखकर तौला जाए तो सौ अयुत अश्वमेध के पुण्य से भी सत्य का पुण्य दस गुने अयुतों के बराबर होता है।

सत्ये प्रतिष्ठितं ज्ञानं धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः।
सत्ये प्रतिष्ठितं शौचं मोक्षः सत्ये प्रतिष्ठितः॥ 116॥

सत्य में ज्ञान प्रतिष्ठित है। धर्म भी सत्य में ही स्थापित है। सत्य में ही शौच की प्रतिष्ठा है और सत्य में ही मोक्ष की प्रतिष्ठा है।

अस्तेयलक्षणम् —

स्वामिना रक्ष्यमाणानां उत्सृष्टानां च सम्भ्रमात्।
परस्वानामनादानं इदमस्तेय लक्षणम्॥ 117॥

अपने स्वामी की रक्षा करने में तथा उहाओं को निकालने में और पराये धन का दान नहीं करने में अस्तेय के लक्षण प्रकट होते हैं।

अलोभेन परस्वेषु योमनागपि वर्तते।
कर्मणा मनसा वाचा स तृप्तः शिवतां व्रजेत्॥ 118॥

पराये धन में लोभ नहीं रखने और जो अर्जित नहीं किए गए धन के प्रति ऐसा ही व्यवहार करते हैं तथा जो मनसा-वाचा-कर्मणा सर्वथा सन्तुष्ट रहते हैं, वे शिवत्व को प्राप्त होते हैं।

ब्रह्मचर्यलक्षणम् —

मैथुनस्यासमाचारः तदचित्तमजल्पनम्।
लक्षणं ब्रह्मचर्यस्य समस्तेन्द्रिय संयमम्॥ 119॥

सम्भोग नहीं करना और उसका चित्त में विचार भी नहीं लाना— ये ब्रह्मचर्य के लक्षण बताए गए हैं। यह समस्त इन्द्रियों का संयम है।

ब्रह्मचर्येस्थितं सत्यं ब्रह्मचर्ये स्थितं तपः।
ब्रह्मचर्येस्थितं ज्ञानं ब्रह्मचर्ये स्थिता क्षमा॥ 120॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

ब्रह्मचर्य में सत्य स्थित है और ब्रह्मचर्य में तप विद्यमान है। ब्रह्मचर्य में ज्ञान स्थित है और ब्रह्मचर्य में ही क्षमा अवस्थित है।

ये स्थिता ब्रह्मचर्येण ते नित्यं संस्थिताः शिवे।
एकरात्रोषिता यापि सा गति ब्रह्मचारिणः॥ 121॥
सा गृहस्थैर्न सम्प्राप्ता कृतयज्ञशतैरपि।

जो व्यक्ति ब्रह्मचर्य से रहते हैं, उनके सम्बन्ध में यह जान लेना चाहिए कि उन्होंने नित्य शिव में ही निवास कर रखा है। एक रात्रि उपवास करने वालों को जो गति मिलती है, वही गति ब्रह्मचारी की कही गई है। वह गृहस्थी नहीं बनकर भी सैकड़ों यज्ञों को करने वाला हो जाता है।

यः सम्भवे समुत्सृज्य चेतसाऽऽस्ते निराकुलम्॥ 122॥
अहो पतिवरः श्रीमान् नोपयाति स्त्रियं रतौ।
पर्ववर्जंव्रजन्नोऽपि परदार विवर्जिताः॥ 123॥
ब्रह्मचारिण एतेऽपि विज्ञेया हि शिवाश्रमे।
शिवाग्न्यतिथिगुर्वर्थं कुर्यात्कर्मणि सर्वदा॥ 124॥

जिस व्यक्ति ने अपने चित्त की निराकुलता को (भगवान् शिव के प्रति) समर्पण करके सर्वथा छोड़ दिया है, ऐसा जो पतिश्रेष्ठ है, जो पर्वों पर अपनी स्त्री के साथ सहवास नहीं करता है और पराई स्त्रियों में रतिवर्जित हैं, वे भी ब्रह्मचारी ही हैं, ऐसा शिवाश्रमों में भी जाना जाता है, जहाँ कि शिव, अग्नि (यज्ञ), अतिथि और गुरुदेव के कार्यों में सदा-सर्वदा लगे रहने वाले शिवसाधक होते हैं।

अहिंसाकल्पविज्ञेयो न स तस्याश्रमत्रये।
शिवाग्निगुरुकार्येषु समुद्युक्तः सदा नरः॥ 125॥
तस्य सिध्यन्ति कर्माणि मनसाचिन्तितान्यपि।

वे अहिंसाव्रती और कल्पविज्ञ होते हैं और उनके तीन आश्रम नहीं होते। जो व्यक्ति सदा ही शिव, अग्नि और गुरु के कार्यों में तत्पर रहते हैं, उनके मन में विचारे हुए कर्म भी सिद्ध हो जाते हैं।

एष धर्मव्रतः श्रीमान् अष्टशाखः शिवोद्भवः॥ 126॥
न शक्यो विस्तराद्वक्तुं उपशाखा प्रभेदतः।

हे श्रीमान् सनत्कुमार! यही धर्मव्रत है, जो आठ शाखाओं के साथ शिव से उद्भूत है। इनको विस्तार से उपशाखाओं के भेद सहित कह पाना संदिग्ध है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

य: पठेत शिवे भक्त्या आचाराध्यामुत्तमम् ॥ 127 ॥
त्रिसप्तकुलजैः सार्धं शिवलोके महीयते।

शिव के प्रति भक्तिवान जो व्यक्ति इस उत्तम आचाराध्याय को पढ़ता है, वह अपने इक्कीस कुलों में उत्पन्न होने वाले जनों सहित शिवलोक को जाता है।

इति शिवधर्मपुराणे[1] शिवाश्रमाचारो नाम एकादशोऽध्याय: ॥ 11 ॥

इस प्रकार शिवधर्मपुराण में शिवाश्रम आचार नामक ग्यारहवाँ अध्याय पूरा हुआ।

*****

अथ द्वादशोऽध्याय: ॥ 12 ॥

शिव द्वारा आदिशाखाओं और उपशाखाओं का आदिक्रम से कथन, शिवलिङ्ग का दर्शन व पूजन फलादि निर्देश, वारुणी सेवन निषेधादि वर्णन, शिवावतार स्थलों का माहात्म्य

श्रीनन्दिकेश्वर उवाच —

अथ सङ्क्षेपतो वक्ष्ये शिवभक्तानुकम्पया।
आद्यशाखोपशाखार्थं शिवभक्ति समुद्भवम् ॥ 1 ॥

श्रीनन्दिकेश्वर ने (ब्रह्मपुत्र श्रीसनत्कुमार से कहा कि) अब संक्षेप में शिवभक्तों की अनुकम्पा के लिए शिवभक्ति के उदयार्थ आदिशाखाओं (प्रारम्भिक क्रम) और उनकी उपशाखाओं (आरोही क्रम) को कहता हूँ।

शिवभक्ता: कर्त्तव्यमाह —

क्वचिद्गच्छन्यदा पश्येत् शिवलिङ्ग प्रपूजितम्।
सदा सम्पूज्य यो गच्छेत् स रुद्रो नात्र संशय: ॥ 2 ॥

---

1. 'शास्त्रे' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भक्तगण को चाहिए कि वह यथावसर (शिवस्थान पर) जाकर शिवलिंग का दर्शन और पूजन करें। जो सदा ही पूजा के लिए शिवालय जाता है, वह रुद्र ही है, इसमें संशय नहीं है।

शिवमुद्दिश्यदानफलम् —

स्नाननैवेद्यवस्त्राणि नाददीत प्रियाण्यपि।
दत्तं यच्छिवमुद्दिश्य तस्माद्दानेन यत्फलम्॥ 3॥

स्नान, नैवेद्य और वस्त्रों को यदि किसी ने प्रेम से दान नहीं किया हो, परन्तु वही शिव को उद्देश्य में रखकर दिया हो तो उसमें भी दान का फल मिल जाता है।

शिवालये दर्शनं नमस्कारश्च —

दृष्ट्वायतनमासाद्य नमस्कृत्वा शिवं व्रजेत्।
चतुष्पथं नदीं शैलं शिवयोगिनमेव च॥ 4॥

शिवभक्त को चाहिए कि यदि कहीं शिवालय दीख जाए तो उसमें पहुँचकर शिव को नमस्कार करें। किसी चौराहे पर, नदी तट और पहाड़ पर शिवयोगी के दर्शन हो जाएँ तो नमस्कार करना चाहिए।

अवतीर्य नमस्कृत्वा दृष्ट्वा लिङ्गं दृढव्रतः।
हस्तियानासनत्वेभ्यः शिवयोगितपस्विनम्॥ 5॥
तत्रस्थोऽपि नमस्कृत्वा शिवलोके महीयते।

यदि हाथी पर भी सवार हो अथवा आसन पर भी आरूढ़ हो तो उतरकर शिव के दृढ़व्रत से दर्शन करें और शिवयोगियों, तपस्वियों को नमस्कार करना चाहिए। वहाँ रहने वालों के प्रति भी नमस्कार करने से शिवलोक में निवास मिलता है।

शिवभक्तहेत्वार्थ त्याज्याऽऽहारमाह —

यूकाश्वोष्ट्रवयोमत्स्यमांसं लशुनकृ(गृ)ञ्जनम्॥ 6॥
कवकद्वयं च सौवीरं कुत्सितानि विवर्जयेत्।
निर्यासमप्यवक्रान्नं नित्यमेव विवर्जयेत्॥ 7॥

यूका (जूँ) के अतिरिक्त अश्व, ऊँट, बया, मछली और माँस सहित लहसुन, गाजर, दोनों प्रकार के कवक, सौवीर (राज बदर)— इन कुत्सित आहारों का त्याग

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

करना चाहिए। इसी प्रकार निर्यास (गोंद या राल से तैयार सामग्री), बिना पके हुए अन्न का नित्य त्याग करना चाहिए।

सर्वदानोग्रतपसां अश्वमेधायुतस्य च।
फलं प्राप्नोति यत्नेन मत्स्यमांसस्य वर्जनात्॥ 8॥

सभी प्रकार के दानों और उग्र तपस्याओं तथा दस हजार अश्वमेध यज्ञों का फल मछली और माँस का सेवन प्रयत्नपूर्वक त्यागने मात्र से मिलता है।

वारुणीदोषमाह —

सर्वदोषाश्रयं मद्यं इति पुराद्विवर्जयेत्।
क्व मद्यं क्व शिवेभक्तिः क्व मांसं क्व शिवार्चनम्॥ 9॥

मदिरा तो सभी दोषों का घर है। इसे तो नगर से ही मना कर देना चाहिए। कहाँ मदिरा और कहाँ शिवभक्ति, कहाँ माँस और कहाँ शिवार्चन (इनका दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं है)।

मद्यमांस प्रसक्तानां दूरे तिष्ठति शङ्करः।
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम्॥ 10॥
तत्फलं लभते सर्वं यो मद्यं परिवर्जयेत्।

अरे! मद्य और माँस के आसक्तजनों से तो भगवान् शंकर दूर ही रहते हैं। सभी तीर्थों के सेवन का जो पुण्य है और सभी यज्ञों के सम्पादन से जो फल मिलता है, वह सब उसको मिलता है जो मद्य को छोड़ देता है।

भोजनस्पर्शादिनिषेधमाह —

गर्भादि सर्वसंस्कारे श्मशानान्ते च भोजनम्॥ 11॥
रजस्वलादि संस्पृष्टिं शिवभक्तो विवर्जयेत्।

गर्भाधान से लेकर अन्तिम श्मशान पर्यन्त समस्त (सोलह) संस्कारों के अर्थ में तैयार भोजन और रजस्वला स्त्री का स्पर्श शिवभक्त को छोड़ देना चाहिए।

नास्पृशेत्ऽऽक्रामेतश्छायानिर्माल्यादीनां —

न गोब्राह्मणभस्मानि लिङ्गच्छायां पदास्पृशेत्॥ 12॥
न लङ्घयीत निर्माल्यं अप्सु तिष्ठेन्न नग्नतः।

गाय, ब्राह्मण, भस्म और लिंग की छाया को पाँव तक से स्पर्श नहीं करना

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

चाहिए।[1] इसी प्रकार निर्माल्य (पूजा में काम आई हुई वस्तु, जल-पुष्पादि) को कभी लांघना नहीं चाहिए। जल में कभी निर्वस्त्र होकर नहाना नहीं चाहिए।[2]

धारयेच्छिवनिर्माल्यं भक्त्या लेह्यं च भक्षयेत्॥ 13॥
भक्षणान्नरकान्गच्छेत् तद्विलङ्घ्य च मूढधीः।
न तद्यः स्नानपूजाद्यं प्रतिगृह्णाति शङ्करः॥ 14॥

शिव के निर्माल्य को भक्तिपूर्वक सिर पर धारण करना चाहिए। (यदि वह नैवेद्य है तो) अवलेह की तरह निगल जाएँ, चबाकर खाने वाले वाला नरकगामी होता है और लांघने वाला मूढ़बुद्धि होता है। भगवान् शिव उससे स्नान-पूजा भी ग्रहण नहीं करते हैं।

यत्र नैवेद्य निर्माल्यं अखलत्पूजयेच्छिवम्।
भूप्रदेशे यथा कश्चित् स्वदेहमलदूषितम्॥ 15॥
नाश्रयेत तथा रुद्रो नरं निर्माल्य दूषितम्।
असंस्पृश्यो भवेत्सोयं यो यस्याङ्गमलं स्पृशेत्॥ 16॥
तस्यां न संस्पृशेल्लिङ्गं नरो निर्माल्यदूषितः।

जहाँ पर शिव को समर्पित नैवेद्य और निर्माल्य रहता हो, शिव का निरुपद्रव पूजन होता है, उस भूक्षेत्र को कभी अपने देह के मल से दूषित नहीं करना चाहिए। वैसे भी शिवनिर्माल्य दूषित व्यक्ति को रुद्र कभी आश्रय नहीं देते हैं, वह अस्पृश्य हो जाता है, जो उसके अंग के मल तक को को छूता है। इसलिए शिव निर्माल्य से दूषित व्यक्ति को शिवलिंग का स्पर्श नहीं करना चाहिए।

यत्र नैवेद्यनिर्माल्यं सङ्कीर्णं कलशादिभिः॥ 17॥
स्नानं वै क्रियते भक्त्या न तद्गृह्णाति शङ्करः।

जहाँ पर (अवितरित) नैवेद्य और निर्माल्य सामग्री को सुवर्ण के कलशों तक

---

1. शास्त्रों की आज्ञा है कि देवप्रतिमा, ब्राह्मण, गुरु, राजा, स्नातक, आचार्य, चैत्यवृक्ष, ध्वजा, यज्ञ में दीक्षित व्यक्ति, गाय, तेजोमय पदार्थ, रोगी और पतित इनकी छाया का इच्छापूर्वक उल्लंघन नहीं करना चाहिए— चैत्यपूज्यध्वजाशस्तच्छायाभस्मतुषाशुचिन्। (अष्टांगहृदय सू. 2, 33) देवतायतनं प्राज्ञो देवानां चैव सत्रिणाम्। नाक्रामेत कामतश्छायां ब्राह्मणां च गोरपि॥ (पद्मपुराण स्वर्ग. 55, 92; कूर्मपुराण उत्तर. 16, 91) सुरार्चा गुरुभूपानां ब्राह्मणानां विशेषतः। नाक्रमेच्च तथा छायां श्वपचस्य च भार्गव॥ (विष्णुधर्मोत्तरपुराण 2, 89, 19)
2. इसी प्रकार निर्वस्त्र होकर जल प्रवेश की मनाही है— न नग्नः प्रविशेज्जलम्। (सुश्रुतसंहिता, चिकित्सा. 24, 100) नग्नस्नानं न कुर्वीत। (स्कन्दपुराण मा. कौ. 41, 157) न नग्नः स्नानमाचरेत्। (कूर्मपुराण उत्तर. 16, 65; मनु. 4, 45; बौधायनस्मृति 2, 3, 51)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

में भर कर रखा जाता है, वहाँ भक्तिपूर्वक स्नान करवाने पर भी शिव उसको आदृत नहीं करते हैं।

शिवमूर्त्याः निन्दानिषेधवचनम् —

मूर्तयो याः शिवस्याष्टौ तासु निन्दां विवर्जयेत्॥ 18॥

शिव की जो आठ मूर्तियाँ (आकाश, पृथ्वी, वायु, तेज, जल, यजमान, सूर्य तथा चन्द्रमा[1]) कही गई हैं, उनकी निंदा कदापि नहीं करनी चाहिए।

अष्टम्यादि तिथ्यायां श्मश्रुकर्माञ्जनाभ्यङ्गनिषेधमाह—

गुरौ च शिवभक्तेषु नृप-साधु-तपस्विषु।
अष्टम्यादिषु सर्वेषु पक्षयोरुभयोरपि॥ 19॥
श्मश्रुकर्माञ्जनाभ्यङ्गं प्रस्थानं च विवर्जयेत्।
कुर्याद्विशेषतः पूजां नक्तं चात्र समाचरेत्॥ 20॥

गुरु, शिवभक्त, राजा, साधु-संन्यासी और तपस्वी को महीने के कृष्णपक्ष एवं शुक्लपक्ष की अष्टमी इत्यादि (पर्व) तिथियों में क्षौरकर्म, अंजन लगाना, मसाज करना और प्रस्थान करना वर्जित समझना चाहिए। (यदि परिस्थितिवश ऐसा करना पड़ जाए तो) इन तिथियों में विशेषकर नक्तव्रत रखना चाहिए।

समन्त्रपूजानिर्देशः —

परमेश्वरपूजां च कुर्यान्मन्त्री समाहितः।

परमेश्वर शिव की पूजा समाहित चित्त होकर मन्त्रों के साथ करनी चाहिए।

शौचशुद्धिविधानादीनां —

शौचं च मृज्जलैः कुर्याद् गन्धलेपापनुत्तये॥ 21॥
योऽऽश्नीयादन्नमस्नातः पापमद्यात्स केवलम्।

---

1. लिंगपुराण में स्पष्ट किया गया है कि यह जगत् देवदेव महादेव की अष्टमूर्ति है। आकाश, पृथ्वी, वायु, तेज, जल, यजमान, सूर्य और चन्द्रमा- इन आठ मूर्तियों के बिना यह जगत् नहीं हो सकता है, ये सब उसी के स्वरूप है— किमत्र देवदेवस्य मूर्त्यष्टकमिदं जगत्॥ विनाकाशं जगन्नैव विना क्ष्मां वायुना विना। तेजसा वारिणा चैव यजमानं तथा विना। भानुना शशिना लोकस्तस्यैतास्तनवः प्रभोः। विचारतस्तु रुद्रस्य स्थूलमेतच्चराचरम्॥ इन श्लोकों की नीलकण्ठी टीका में कहा गया है— मूर्त्यष्टमष्टमूर्तिरूपम् अत एव व्यावहारिकसत्तामादाय नैयायिकैर्व्योम दिशोर्भेदमंगीकृत्य भगवतोष्टमूर्तय एव मुख्यनवद्रव्यत्वेनोपपादिताः। तदुक्तं 'क्षित्यप्तेजोमरुद्व्योमकाल दिग्देहिनो मनः' इति। विचारतः विचारेणावलोकिते सति एतच्चराचरं रुद्रस्य स्थूलं मायिकं रूपमित्यन्वयः। यत्तु सूक्ष्मं रूपं तत्र वक्तुमशक्यमित्यर्थः। (लिंग. पूर्व. 28, 15–17)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तस्मात्स्नात्वा प्रभुञ्जित भस्मना सलिनेन वा॥ 22॥
प्रातः स्नात्वाम्भसा गच्छेद्भस्मना च शिवं पदम्।

शौच शुद्धि मिट्टी और जल से करनी चाहिए और गन्धलेपन करना चाहिए। जो व्यक्ति बिना स्नान किए ही भोजन करता है, वह केवल पापाचरण ही करता है। इसलिए स्नान करके ही भोजन करना चाहिए। स्नान चाहे भस्म का हो या जलस्नान हो, करना ही चाहिए। सुबह जल से स्नान करे और भस्म धारण करे तो वह शिवपद को जाता है।

त्रिसन्ध्याऽऽचरणफलम् —

त्रिसन्ध्यमाचरेद्यस्तु शिवार्चामग्नि पूजनम्॥ 23॥
पापकञ्चुकमुत्सृज्य शिवलोके महीयते।

दिन की तीनों ही सन्ध्याओं की वेला में जो उक्त प्रकार का आचरण करता है और शिव की अर्चना तथा अग्निपूजन करता है, वह पापों की केंचुली को उतारकर शिवलोक को प्राप्त होता है।

चातुर्मासकर्त्तव्यफलञ्च —

कुर्यात्प्रतिचतुर्मासं महापूजा प्रवर्तनम्॥ 24॥
भोजनं शिवभक्तानां शक्त्या दानं प्रकल्पयेत्।
त्रिसप्तकुल$_{21}$ संयुक्तः समस्तैश्वर्य संयुतः॥ 25॥
वसेच्छिवपुरे नित्यं चातुर्मास्य प्रवर्तनात्।

प्रत्येक चातुर्मास की अवधि में शिव की महापूजा की परम्परा रखनी चाहिए, शिवभक्तों को भोजन करवाकर यथाशक्ति दान-दक्षिणा देनी चाहिए। ऐसे चातुर्मास का व्रतधारी अपने इक्कीस कुलों के साथ समस्त ऐश्वर्यों से सम्पन्न होता है और नित्य शिवपुर में निवास करता है।

पर्वोत्सवादिकाले रुद्रपूजनफलञ्च —

एवं पर्वोत्सवे श्राद्धे पुण्येषु दिवसेषु च॥ 26॥
शिवं सम्पूज्यनैवेद्यः पूजयेच्छिवयोगिनम्।
पितरः सर्वदेवाश्च शिवमाश्रित्य संस्थिताः॥ 27॥
प्रीते शिवे तु ते सर्वे सुप्रीताः स्युर्न संशयः।

इसी प्रकार पर्व दिवसों, उत्सव दिवसों, श्राद्धावसर और संक्रान्ति इत्यादि

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुण्य दिवसों में भगवान् शिव की सनैवेद्य पूजा करनी चाहिए। फिर शिवयोगियों का पूजन करना चाहिए। पितरों और शिव के आश्रय में स्थित समस्त देवताओं का भी पूजन करे तो शिव की अच्छी प्रीति होती है, इसमें कोई संशय नहीं है।

श्राद्धावसरे शिवयोगिनप्रतिभोजनिर्देशः —

ज्ञानवैराग्यसम्पन्न भस्मनिष्ठं जितेन्द्रियम्॥ 28॥
भोजयेच्छान्तमनसं श्राद्धेषु शिवयोगिनम्।

जो ज्ञान और वैराग्य से सम्पन्न, भस्मनिष्ठ तथा जितेन्द्रिय हैं, ऐसे शिवयोगियों को श्राद्ध के अवसर पर शान्तमानस होकर भोजन करवाना चाहिए।

तत्र ज्ञानवैराग्यश्च लक्षणम् —

यदीश्वरादितत्त्वानां परिज्ञानं विवेकता॥ 29॥
भवेत्साधर्म्यवैधर्म्यात् एतज्ज्ञानस्य लक्षणम्।

ईश्वरादि तत्त्वों का सम्यक् ज्ञान और बुद्धिमता तथा साधर्म्य और वैधर्म्य के प्रति समझ— यह ज्ञान का लक्षण कहा गया है।

नानिष्टद्वेष्टि सम्प्राप्तं न चेष्टमभिनन्दति॥ 30॥
रागद्वेषविहीनो यः सवैराग्येषु वर्तते।

जो इष्ट और अनिष्ट की प्राप्ति होने पर प्रसन्न-अप्रसन्न नहीं होते और राग-द्वेष से विहीन होकर रहते हैं[1], वे लोग वैराग्य में बरतते हैं।

भस्मनिष्ठा प्रतिष्ठस्य दिवसेनापि यत्फलम्॥ 31॥
न तच्छक्यं गृहस्थेन प्राप्तुं क्रतुशतैरपि।

जिसकी भस्म में निष्ठा स्थित हो गई हो, उसके एक दिन का भी जो फल होता है, वह गृहस्थ के लिए सौ यज्ञों के सम्पादन से भी अशक्य होता है अर्थात् गृहस्थ भी यदि भस्मनिष्ठ हो जाए तो उसे वह फल मिलता है।

जितेन्द्रियलक्षणम् —

वश्येन्द्रियः प्रसन्नात्मा यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति॥ 32॥
शब्दादि विषयान्भोगान् स विज्ञेयो जितेन्द्रियः।

---

1. तुलनीय— गीता में कहा गया है कि जो प्रिय के मिलने से प्रसन्न नहीं हो और अप्रिय की प्राप्ति पर उद्विग्न नहीं हो, वह स्थिरबुद्धि, संशय रहित, ब्रह्मवेत्ता पुरुष परब्रह्म में एकीभाव से विद्यमान होता है— न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्। स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः॥ (श्रीमद्भगवद्गीता 5, 20)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अपनी समस्त इन्द्रियों को वश में करके जो प्रसन्न रहता है और न किसी द्वेष रखता है एवं न ही कोई आकांक्षा करता है, जो शब्दादि समस्त विषयों और भोगों से रहित होता है, उसको जितेन्द्रिय जानना चाहिए।

शिवयोगीश्च शिवयोगमाह —

ज्ञानवैराग्यसम्पन्नः शिवः शान्तेन चेतसा॥ 33॥
युक्तः षडङ्गयोगेन शिवयोगी प्रकीर्तितः।

ज्ञान और वैराग्य से सम्पन्न होकर और शिव के प्रति शान्तचेता होकर जो छह अंगों वाले योग (षडङ्ग तत्त्व)[1] को धारण करता है, वह शिवयोगी कहा जाता है।

शिवधर्मोद्भवं ज्ञानं ज्ञानाद्वैराग्य सम्भवः॥ 34॥
ज्ञानवैराग्ययुक्तस्य शिवयोगः प्रवर्तते।
शिवयोगाच्च सर्वज्ञः परिपूर्णः सुनिर्वृतः॥ 35॥
स्वात्मन्यवस्थितः शुद्धः शिववत्सर्वगो भवेत्।

शिवधर्म से ज्ञान होता है, ज्ञान से वैराग्य होता है और ज्ञान एवं वैराग्य से युक्त होने से शिवयोग प्रवर्तित होता है। शिवयोग से साधक सर्वज्ञ होता है और उसकी पूर्णता पर वह अच्छी तरह निवृत्त हो जाता है। वह अपनी ही आत्मा में अवस्थित होकर शुद्धचित्त शिव के समान ही गमन कर सकने वाला हो जाता है।

शिवयोगीराटस्य श्रेष्ठताप्रतिपादनम् —

सर्वेषामेव भूतानां उत्तमं मानुषं स्मृतम्॥ 36॥

---

1. वायुपुराण में महेश्वर प्रोक्त पाँच अंगों वाले योग का वर्णन मिलता है— प्राणायामस्तथा ध्यानं प्रत्याहारोऽथ धारणा। स्मरणं चैव योगेऽस्मिनपञ्च धर्मा प्रकीर्तिताः॥ (वायु. 10, 75-76) महेश्वर के षडङ्ग का अवश्य उल्लेख आया है— विदित्वा सप्त सूक्ष्माणि षडङ्गं च महेश्वरम्। कहा गया है कि जो योगी क्रिया-कलाप में दक्ष होते हैं, वे ही परब्रह्म को प्राप्त करते हैं। विधितत्त्व के जानकारों ने महेश्वर के षडङ्ग को इस प्रकार बताया है— सर्वज्ञता, तृप्ति, अनादि बुद्धि, स्वतन्त्रता, नियत अविनश्वर शक्ति और अनन्त शक्ति : सर्वज्ञता तृप्तिरनादिबोधः स्वतन्त्रता नित्यमलुप्तशक्तिः। अनन्तशक्तिश्च विभोर्विधिज्ञाः षडाहुरङ्गानि महेश्वरः॥ (उपर्युक्त 12, 32-33) योग के अङ्गों की संख्या को लेकर अन्य ग्रन्थों में मत-मतान्तर मिलते हैं। लिङ्गपुराण में अष्टाङ्गयोग की मान्यता आई है और वहाँ उनके फल को भी बताया गया है— योगशब्देन निर्वाण माहेशं पदमुच्यते। तस्य हेतुर्ऋषेर्ज्ञानं ज्ञानं तस्य प्रसादतः॥ ज्ञानेन निर्दहेत्पापं निरुध्य विषयान् सदा। निरुद्धेन्द्रियवृत्तेस्तु योगसिद्धिर्भविष्यति॥ (लिङ्ग. पूर्व. 8, 5-6) सम्भवतः वायुपुराण का पाठ प्राचीन होने से उसमें पञ्चाङ्गों की ही मान्यता है तथापि 104वें अध्याय में आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, यम, नियम एवं समाधि का क्रमशः नामोल्लेख हुआ है— आसनं प्राणरोधश्च प्रत्याहारश्च धारणा॥ ध्यानं समाधिरेतानि यमैश्च नियमैः सह। अष्टाङ्गानि यदर्थं च चरन्ति मुनिपुङ्गवाः॥ (तत्रैव 104, 24-25)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वेषामेव वर्णानां त्रैवर्ण्याः पुरुषा वराः।
पुरुषेभ्यो द्विजः श्रेष्ठो द्विजेभ्यो वेदपारगः॥ 37॥

चराचर में सभी प्राणियों में मनुष्य को उत्तम जानना चाहिए। सभी वर्णों में तीन वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) के पुरुष श्रेष्ठ कहे गए हैं। इन पुरुषों में भी द्विज श्रेष्ठ हैं और उनमें भी वे द्विज श्रेष्ठ हैं जो वेद के ज्ञाता होते हैं।

वेदविद्भ्यस्तु विद्वांसः तेभ्यस्तत्वार्थचिन्तकः।
तत्त्वविद्भ्यश्च नानात्वं(र्थ!) प्रतिबुद्धो विशिष्यते॥ 38॥

इन वेदविदों में भी विद्वान और उन विद्वानों में तत्त्वार्थ के चिन्तक और तत्त्वविदों में भी नानात्व में जो प्रतिबुद्ध होते हैं, उनकी विशेषता होती है।

नानार्थतत्त्वकोटिभ्यो विशिष्टो योगमाश्रितः।
योगिनां योगकोटिभ्यः परमः शिवयोगिराट्॥ 39॥

ऐसे नानार्थतत्त्व के करोड़ों विशारदों में योगाश्रित विशिष्ट होता है और ऐसे करोड़ योगियों में भी परम तो शिवयोगीराज को कहा गया है।

तत्त्वार्थवेदिकोटिभ्यः शिवयोगी विशिष्यते।
योगज्ञा योगसिद्धाश्च पितरो योगसम्भवाः॥ 40॥
भुंक्ते प्रीणन्ति ते तस्माद्विशेषोऽतीव योगिनः।

(यह ज्ञातव्य है कि) करोड़ों तत्त्वार्थवेदियों में शिवयोगी विशिष्ट होता है। योग के जानकारों, योग को सिद्ध करने वालों और योगसम्भव पितरों की अपेक्षा शिवयोगियों को प्रीतिपूर्वक भोजन करवाना अतिविशेष होता है।

शिवयोगीभोजफलम् —

सर्वयज्ञतपोदानैः कृतैर्दत्तैश्च यत्फलम्॥ 41॥
तत्फलं लभते सर्वं सम्भोज्य शिवयोगिनम्।

समस्त यज्ञों, तपों और दान-दक्षिणादि करने से जो फल मिलता है, वह फल शिवयोगियों को भोजन करवाने से मिल जाता है।

ऋत्विजश्च यज्ञलक्षणम् —

यश्चाग्निरुद्रात्माकालदक्षिणा भवऋत्विजः॥ 42॥
ऋग्यजुस्सामसंयोग एवं यज्ञः प्रकीर्तितः।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जो अग्नि, रुद्रात्मा, अकाल दक्षिणा वाला हो, वह ऋत्विज होता है, ऋक्, यजु और सामवेद से सम्पन्न होने वाला यज्ञ कहा जाता है।

अथाघोरपञ्चलक्षणम् —

ब्रह्मचर्यं जपो मौनं क्षान्तिराहार लाघवम्॥ 43॥
इत्येत्तत्तपसो रूपं अघोरं पञ्चलक्षणम्।

1. ब्रह्मचर्य, 2. जप, 3. मौन, 4. क्षमा और 5. अल्प भोजन— ये सभी तपस्याओं के स्वरूप हैं और ये पाँचों अघोर के लक्षण हैं।

दानलक्षणम् —

यद्यदिष्टं विशिष्टं च न्यायप्राप्तं च यद्भवेत्॥ 44॥
तत्तद्गुणवते देयं एतद्दानस्य लक्षणम्।

जो इष्ट हो, विशिष्ट हो और न्याय से अर्जित हुआ हो, उस द्रव्य को गुणवान् को दान करना चाहिए, यही दान का लक्षण है।

भूमिदानलक्षणम् —

सर्वदोषैर्विरहितां सर्वसस्य प्ररोहिणीम्॥ 45॥
दद्याद्भूमिं जलोपेतां भूमिदानं तदुच्यते।

(ऊषर इत्यादि) सभी दोषों से रहित और समस्त धान्यों को उगाने वाली, जलपूरित भूमि का दान करना भूमिदान कहा जाता है।

महीदानलक्षणम् —

एकच्छत्रां महीं कृत्वा द्विजेभ्यः प्रतिपादयेत्॥ 46॥
सम्पूर्णां यो नृपः कश्चिन् महीदानं तदुच्यते।

एकच्छत्र पृथ्वी को जो कोई राजा ब्राह्मणों को सम्पूर्णतः दान करता है, उसे महीदान कहा जाता है।

कन्यादानलक्षणफलञ्च —

कन्यामलङ्कृतां दद्याद् अलं जीवनसंयुताम्॥ 47॥
द्विजाय वेदविदुषे कन्यादानं तदुच्यते।

आवश्यक और जीवनोपयोगी समस्त सामग्रियों सहित कन्याओं को अलंकृत करके वेद के विद्वान ब्राह्मणों को दान करना कन्यादान कहा जाता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्ताय विप्राय दत्वा कन्यां स्वलङ्कृताम्॥ 48॥
कुलत्रयं समुद्धृत्य स्वर्गं प्राप्नोति निश्चलम्।

शिवभक्तों और ब्राह्मणों को आभूषणों से अलंकृत कन्या का जो दान करता है, वह अपने तीन कुलों को तारकर निश्चल स्वर्ग को प्राप्त हो जाता है।

गोदानलक्षणम् —

सर्वदोषविनिर्मुक्तं तरुणीं य पयस्विनीम्॥ 49॥
यो गामलङ्कृतां दद्याद् गोदानमिति कीर्तितम्।

सभी दोषों-विकारों से रहित जो तरुणवयी और दूध देने वाली हो, ऐसी गाय को सजा-धजाकर जो दान किया जाता है, वह गोदान कहा जाता है।

वस्त्रदानलक्षणम् —

मध्यमोत्तमवस्त्राणि यो दद्यात्तु नवानि च॥ 50॥
एतत्समासतो ज्ञेयं वस्त्रदानस्य लक्षणम्।

मध्यम प्रकार के और उत्तम प्रकार के नए वस्त्रों का दान करना वस्त्रदान का लक्षण है, इसको संक्षिप्त रूप से जानना चाहिए।

उपवासलक्षणम् —

ब्रह्मचारी समाधिस्थः शान्तः शिवपरायणः॥ 51॥
अहोरात्रं न भुञ्जीत उपवासस्य लक्षणम्।

ब्रह्मचारी रहकर समाधि अवस्था में अवस्थित, शान्तचित्त और शिव के परायण होकर दिन-रात आहार नहीं करना, उपवास का लक्षण है।

चान्द्रायणव्रतविधिः —

चत्वारिंशत्समायुक्तं पिण्डानां हि शतद्वयम्॥ 52॥
मासेनाद्याद्यथाकालं इति चान्द्रायणं स्मृतम्।

मास के आरम्भ से लेकर अन्त तक कुल दो सौ चालीस ग्रास-पिण्ड यथाकाल ग्रहण करना चान्द्रायणव्रत के रूप में स्मृत है।[1]

---

1. गरुडपुराण में आया है कि पूरे मास में दो सौ चालीस ग्रास मात्र हविष्यान्न ग्रहण किया जाए, यह चान्द्रायणव्रत का एक प्रकार है— यथा कथञ्चित् पिण्डानां चत्वारिंशच्छतद्वयम्। मासेनैवोपयुञ्जीत चान्द्रायणमथापरम्॥ (गरुड. आचार., 105, 68)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तीर्थलक्षणम् —

ऋषिभिः सर्वशास्त्रज्ञैः तपोनिष्ठै जितेन्द्रियैः ॥ 53 ॥
देवैश्च सेवितं तोयं द्वितौ तीर्थं तदुच्यते।

सर्वशास्त्रज्ञ, तपोनिष्ठ और जितेन्द्रिय ऋषियों ने जहाँ जल से देवताओं की सेवा की हो, उस स्थान को तीर्थ कहा जाता है।

एवमाद्यानि दानानि तपांसि नियमानि च॥ 54॥
समस्तानि ममाशक्यं [मर्हसि] वक्तुमेव च।
सूक्ष्माणि साधकान्यद्य मुने वक्ष्यामि तानि ते॥ 55॥

इस प्रकार दान और तप के नियम इत्यादि को मैंने कहा है, इनको सम्पूर्ण रूप से कहना मेरे लिए कठिन है तथापि मुनियों ने इस सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, उसको यहाँ संक्षिप्त रूप से बताया है।

रुद्रावतारस्थानपुण्यक्षेत्रश्च निर्दिशेत् —

रुद्रवतारस्थानानि पुण्यक्षेत्राणि निर्दिशेत्।
मृतानां तेषु रुद्रत्वं शिवक्षेत्रेषु देहिनाम्॥ 56॥

(हे सनत्कुमार! अब मैं) रुद्रावतार के स्थानों और पुण्यक्षेत्रों के सम्बन्ध में बताता हूँ। उन शिवक्षेत्रों में काया त्यागने वाले देहधारियों को रुद्रत्व की प्राप्ति होती है।

स्थाणाष्टकं महोदयरुद्रक्षेत्रवर्णनम् —

वस्त्रापदं[1](!थं) [2]महाकोटिरविमुक्तमहालयम्।
गोकर्णं भद्रकर्णञ्च सुवर्णाक्षं च दीप्तिमत्॥ 57 ।
स्थाणीश्वरं च विख्यातं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्।
स्थानाष्टमिदं स्थाणवन्तं रुद्रक्षेत्र महोदयम्॥ 58॥
वस्त्रापथादि[3] स्थाणवन्तं रुद्रसायुज्यमाप्नुयात्।

---

1. 'वस्त्रापद' इति मातृकायाम्। 'भस्त्रापद' इति कोलकाता मातृकायाम्। स्कन्दपुराण के प्रभासखण्ड में वस्त्रापथ क्षेत्र माहात्म्य आया है। यह रेवतक पर्वत का क्षेत्र है : तद्वस्त्रापथमाहात्म्यं यत्र रैवतको गिरिः ॥ दामोदरं रैवतके भवं वस्त्रापथे तथा। एतद्रैवतकं क्षेत्रं वस्त्रापथमिति स्मृतम्॥ (प्रभासखण्ड द्वितीय, 1, 1-2)
2. 'रुद्रकोटि' इति कोल. मातृकायाम्।
3. दीप्तेश्वर नामक तीर्थ का वर्णन व्यासतीर्थ नामक तपोवन के प्रसंग में कूर्मपुराण में आया है। यहाँ नर्मदा वापस हो गई थी और दक्षिण की ओर चली गई थी— ततो दीप्तेश्वरं गच्छेद् व्यासतीर्थं तपोवनम्। निवर्तिता पुरा तत्र व्यासभीता महानदी। हुङ्कारिता तु व्यासेन दक्षिणेन ततो गता॥ प्रदक्षिणं तु यः कुर्यात् तस्मिंस्तीर्थे युधिष्ठिर। प्रीतस्तस्य भवेद व्यासो वाञ्छितं लभते फलम्॥ (कूर्म. उत्तर. 39, 25-26)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

1. वस्त्रापथ (जूनागढ़-रैवतक, गिरनार), 2. महाकोटि (नैमिष वनान्तर्गत एक तीर्थ), 3. अविमुक्त (अविमुक्तेश्वर, वाराणसी), 4. महालय (एक समुद्रवर्ती तीर्थ), 5. गोकर्ण (गोवा के दक्षिण में), 6. भद्रकर्ण (अर्बुदगिरि के पास), 7. दीप्तिमत सुवर्णाक्ष (सम्भवतः नर्मदा में, भृगुतीर्थ में[1]) और 8. स्थाणीश्वर (थानेश्वर, अम्बाला[4])— ये विख्यात शैवतीर्थ तीनों ही लोकों में विख्यात हैं। ये आठों ही स्थान स्थाण्वन्त (स्थूलकाय) रुद्रक्षेत्र है जो महान हैं। इन वस्त्रापथादि सभी स्थाण्वन्त शिवस्थानों का सेवन करने से रुद्र सायुज्य प्राप्त होता है।

पवित्राष्टकरुद्रक्षेत्रम् —

छगलण्डंचिरण्डं च माकोटं मण्डलेश्वरम्॥ 59॥
कालञ्जरं शङ्कुकर्णं स्थूलेश्वरं स्थलेश्वरम्।
पवित्राष्टकमित्येतत् महापुण्य विवर्धनम्॥ 60॥
मृताः प्रयान्ति तत्रैव शिवाख्यं परमं पदम्।

इसी प्रकार 1. छगलण्ड (छागलाण्ड[2]), 2. चिरण्ड या एरण्ड[3], 3. माकोट[4], 4. मण्डलेश्वर (वाराणसी), 5. कालंजर (कालिंजर), 5. शंकुकर्ण (वाराणसी), 7.

---

1. लिंगपुराण में स्थाणेश्वर के सम्बद्ध में क्षुप राजा और दधीचि का आख्यान आया है और कहा गया है कि यह युद्धस्थान था जो बाद में तीर्थ बन गया, इसका सेवन करने से मनुष्य शिव-सायुज्य प्राप्त कर लेता है। (लिंग. पूर्व. 36, 77)
2. तुलनीय मत्स्यपुराण (13, 43) जहाँ प्रचण्डा देवी के स्थान की महिमा आई है। यह हिमाचलस्थ होना चाहिए। इसी पुराण में अन्यत्र आया है कि छागलाण्ड तीर्थ में श्राद्ध प्रदान करने वाले लोग परमपद को प्राप्त हो जाते हैं। तीर्थं वेदशिरो नाम तथैवौघवती नदी॥ तीर्थं वसुप्रदं नामच्छागलाण्डं तथैव च। एतेषु श्राद्धदातारः प्रयान्ति परमं पदम्॥ (22, 71-72)
3. 'दूरनताश्व' इति कोलकाता मातृकायाम्। प्रस्तुत पाठ के अनुसार यह चिरण्ड की अपेक्षा एरण्ड सम्भव है। एरण्डपल्ली का उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में आया है। एरण्ड नामक एक नदी बड़ौदा क्षेत्र में भी प्रवहमान है। पद्मपुराणके स्वर्गखण्ड में भी इसका उल्लेख है। कूर्मपुराण में एरण्डी तथा नर्मदा के संगम स्थल के शैवतीर्थ रूप में विख्यात होने का वर्णन है— एरण्ड्या नर्मदायास्तु सङ्गमं लोकविश्रुतम्। तत्र तीर्थं महापुण्यं सर्वपापप्रणाशनम्॥ उपवासपरो भूत्वा नित्यं व्रतपरायणः। तत्र स्नात्वा तु राजेन्द्र मुच्यते ब्रह्महत्यया॥ (कूर्म. उत्तर. 40, 29-30)
4. माकोट सम्भवतः हिमाचल प्रदेश की शिवालिक पहाड़ियों में स्थित चमकौर स्थान हो सकता है, जहां से प्राचीन नगर के अवशेष मिल चुके हैं। यदि चमसोद पाठ है तो सरस्वती नदी के विनशन तीर्थ के उपरान्त इसकी स्थिति होनी चाहिए जिसके लिए महाभारत में आया है कि वहां की प्रसिद्धि शिवोद्भेद, नागोद्भेद जैसे ह्रदों के कारण है और वहां स्नान करने से अग्निष्टोम का फल मिलता है— चमसेऽथ शिवोद्भेदे नागोद्भेदे च दृश्यते। स्नात्वा तु चमोद्भेदे अग्निष्टोमफलं लभेत्॥ (वनपर्व 82, 112) चर्मकोट के नाम से एक तीर्थ का वर्णन मत्स्यपुराण (22, 42) में आया है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

स्थूलेश्वर और 8. स्थलेश्वर— ये पवित्राष्टकमय शिवक्षेत्र महापुण्यों का अभिवर्धन करने वाले हैं। इन आठों तीर्थों में मरने वाले वहीं से शिव नामक परमपद को प्राप्त होते हैं।

गुह्याष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् —

गया चैव कुरुक्षेत्रं नखलं नरवलं(!कनखलं) तथा॥ 61॥
विमलं चाट्टहासं[1] च महेन्द्रं भीममष्टकम्।
एतद्गुह्याष्टकं नाथं सर्वपाप विमोचनम्॥ 62॥
गत्वा तु पुरुषः श्रीमान् प्राप्नोति शिवमन्दिरम्।

इसी प्रकार 1. गया (बिहार), 2. कुरुक्षेत्र (हरियाणा), 3. नखल, 4. नरवल (? कनखल), 5. विमल (कश्मीर में मार्तण्ड मन्दिर के पास[2]), 6. अट्टहास (हिमालय में एक पितृतीर्थ), 7. महेन्द्र (गया के बाद व सप्तगोदावरी, वेणा व पम्पा के पहले) और 8. आठवाँ भीम (नर्मदा के अन्तर्गत भीमेश्वर)— ये गुह्याष्टक है। इनके सेवन से स्वामी शिव समस्त पापों का विमोचन कर देते हैं। इनका सेवन करने वाला श्रीमान् व्यक्ति शिवमन्दिर को प्राप्त करता है।

गुह्यातिगुह्याष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् —

श्रीपर्वतं हरिश्चन्द्रं जल्पमाम्रादिकेश्वरम्॥ 63॥
मध्यमं च महाकालं केदारं भैरवं तथा।
एतद्गुह्यातिगुह्यञ्च अष्टकं समुदाहृतम्॥ 64॥
सन्तर्प्य च पितृन्सर्वान् शिवं शान्तं पदं व्रजेत्।

1. श्रीपर्वत (कुर्नूल जिलान्तर्गत कृष्णा नदी के पास), 2. हरिश्चन्द्र (वाराणसी स्थित श्राद्धस्थल), 3. जल्प (जल्पीश जिसका उल्लेख कालिकापुराण में आया है), 4. आम्रादिकेश्वर (भुवनेश्वर), 5. मध्यम (पुष्कर या वाराणसी में), 6. महाकाल (उज्जैन) 7. केदार (केदारेश्वर) और 8. भैरव (वाराणसी)— ये गुह्यातिगुह्य आठ शिवक्षेत्र कहे गए हैं। यहाँ अपने कुल के समस्त पितरों का तर्पण करने वाला शिव के शान्तपद को जाता है।

---

1. 'विमलेश्वरश्च दहास' इति कोलकाता मातृकायां पाठः।
2. कूर्मपुराण में विमलेश्वर तीर्थ का वर्णन नर्मदा और समुद्र संगम के तीर्थों के साथ आया है। उपवास के बाद वहाँ दर्शन से सात जन्मों के पापों से मुक्ति बताई गई है—तत्रोपवासं यः कृत्वा पश्येत विमलेश्वरम्। सप्तजन्मकृतं पापं हित्वा याति शिवालयम्॥ (कूर्म. उत्तर. 40, 34)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुण्यात्मिकाष्टकशिवक्षेत्रवर्णनम् —

अमरेशं प्रभासं च नैमिशं पुष्करं तथा॥ 65॥
आषाढीदण्डिमुण्डी च भारभूतिश्चलाकुलम्।
लकुलीश्वरं च विख्यातं तथा प्रत्यात्मको महान्॥ 66॥
पुण्यात्मिकाष्टकमिदं क्षेत्रं रुद्रस्य कीर्तितम्।
तत्र यान्ति मृताः सर्वे रुद्रस्य परमं पदम्॥ 67॥

1. अमरेश (अमरकण्टक), 2. प्रभास (सोमनाथ, सौराष्ट्र), 3. नैमिश (नैमिषारण्य), 4. पुष्कर (राजस्थान), 5. आषाढ़ी 6. दण्डिमुण्डी (नर्मदा के अन्तर्गत), 7. भारभूति चलाकुल (नर्मदा के अन्तर्गत) और 8. लकुलीश्वर[1] (बड़ौदा के पास)— ये विख्यात पुण्यात्मक महान् (पश्चिमी देश के) हैं। ये प्रत्यात्मिकाष्टक रुद्र के क्षेत्र कहे गए हैं। जो इनमें मरता है, वे सब रुद्र के परमपद को प्राप्त होते हैं।

पञ्चाष्टकमिदं ज्ञेयं शिवक्षेत्रस्य लक्षणम्।
दानाद्यावसथ कूपं उद्यानं देवतालयम्॥ 68॥
स्थानेष्वेतेषु यः कुर्यात् सोऽक्षयं फलमाप्नुयात्।

उक्त पाँच प्रकार के शिवक्षेत्राष्टकों के नामों और लक्षणों जानना चाहिए। उक्त स्थानों में जो दानादि कार्य करता है अथवा अवसथ (वसतीक्षेत्र, विश्रामालय, सराय), कूप, उद्यान और मन्दिर बनवाता है, वह अक्षय फल प्राप्त करता है।[2]

---

1. लकुलीश्वर तीर्थ कायावरोहण में है, जहाँ मुनियों ने माहेश्वर धर्म का प्रवर्तन किया था। वहाँ किया गया श्राद्ध, दान, तप, होम तथा उपवास अक्षय होता है। वहाँ जो प्राण त्याग करता है, वह रुद्रलोक में जाता है। उत्तम नकुलीश्वर तीर्थ गुह्यस्थानों में भी अत्यन्त गुह्य है, वहाँ श्रीमान् भगवान् नकुलीश्वर विराजमान हैं— कायावरोहणं नाम महादेवालयं शुभम्। यत्र माहेश्वरा धर्मा मुनिभिः सम्प्रवर्तिताः॥ श्राद्धं दानं तपो होम उपवासस्तथाक्षयः। परित्यजति यः प्राणान् रुद्रलोकं स गच्छति॥ गुह्याद्गुह्यतमं तीर्थं नकुलीश्वरमुत्तमम्। तत्र सन्निहितः श्रीमान् भगवान् नकुलीश्वरः॥ (कूर्म. उत्तर. 42, 7-9 एवं 12)
विशेष— इन शैव तीर्थों का समग्रतः नाम स्कन्दपुराण में आया है : पृथिव्यां यानि तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च। लाकुलिं भारभूतिं च आषाढि दण्डिमेव च॥ पुष्करं नैमिषं चैव अमरेशं तथा परम्। भैरवं मध्यमं कालं केदारं कणवीरकम्॥ हरिश्चन्द्रस्तु शैलेशस्तथा वस्त्रान्तिकेश्वरः। अट्टहासं महेन्द्रं च श्रीशैलं च गया तथा। एतानि सर्वतीर्थानि देव सोमेश्वरं प्रभुम्। प्रदक्षिणं प्रकुर्वन्ति तत्र लिङ्गं स्तुवन्ति च॥ (प्रभासक्षेत्र माहात्म्य 4, 103-106)
2. इन शैवतीर्थस्थलों का वर्णन मस्त्यादि पुराणों में आया है। मत्स्यपुराण में कालक्रमानुसार यहाँ शिव की स्थिति कही गई है अर्थात् ये पूर्व और पश्चिमी दिशाओं में स्थिति लिए हैं। वस्त्रापथ (जूनागढ़-गिरनार), रुद्रकोटि, सिद्धेश्वर, महालय, गोकर्ण, रुद्रकर्ण और सुवर्णाक्ष, अमरकण्टक, महाकाल (उज्जयिनी) और कायावरोहण (कायावार गुजरात) ये सभी स्थल प्रातः और सन्ध्याकाल में शिव की सन्निधि से पुण्य-पवित्र माने जाते हैं। कालिंजर, शंकुकर्ण और स्थाणीश्वर भी शिव सन्निधि ये पवित्र हैं। अविमुक्त-काशी क्षेत्र में शिव का सदा ही

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तथाष्टङ्गपरंपात्रलक्षणम् —

क्षमास्पृहा दयासत्यं दानं शीलं तपःश्रुतम्॥ 69॥
एतदष्टाङ्गमुद्दिष्टं परं पात्रस्य लक्षणम्।

1. क्षमा, 2. स्पृहा, 3. दया, 4. सत्य, 5. दान, 6. शील, 7. तप और 8. श्रुत— ये आठ परमपात्र के अंगीभूत लक्षण कहे गए हैं।

शिवधर्मस्यलक्षणम् —

शिवे भक्तिः क्षमासत्यं अशेषेन्द्रिय संयमः॥ 70॥
सर्वभूतेषु मैत्री च शिवधर्मस्य लक्षणम्।

शिव में भक्ति, क्षमा, सत्य, सम्पूर्णतः इन्द्रिय संयम और समस्त प्राणियों में मैत्री का भाव— ये शिवधर्म के लक्षण कहे गए हैं।

शिवपात्रस्यलक्षणम् —

शिवयोगी शिवज्ञानी शिवधर्मरतश्च यः॥ 71॥
इत्येतत्त्रिविधं ज्ञेयं शिवपात्रस्य लक्षणम्।

1. शिवयोगी (शैवयोग को साधने वाला), 2. शिवज्ञानी (शिवतत्त्वविशारद) और 3. शिवधर्मरत (शैवमतावलम्बी)— लक्षणानुसार ये त्रिविध शिवपात्र होते हैं।

शिवयोगीप्रतिभोजफलम् —

यज्ञोपवासदानानि तपस्तीर्थफलानि च॥ 72॥
सम्पूर्णानि लभेद्भक्त्या सम्भोज्य शिवयोगिनम्।

यज्ञ, उपवास, दान, तपस्या और तीर्थसेवन का फल— इन सभी का लाभ शिवयोगियों को भोजन करवाने से उठाया जा सकता है।

शिवमुद्दिश्य दातव्यं अनपेक्ष्य गुणाश्रयम्॥ 73॥
वित्तमीश्वरभक्तेभ्यः शिवदानस्य लक्षणम्।

निवास है। हरिश्चन्द्र, आम्रातकेश्वर, जालेश्वर, श्रीपर्वत, महालय तथा शुभदायक कृमिचण्डेश्वर, केदार और महाभैरव ये आठ शिवस्थल परम गुह्य हैं और शिव सन्निधि से पवित्र है— वस्त्रापथं रुद्रकोटिं सिद्धेश्वरमहालयम्। गोकर्णं रुद्रकर्णं च सुवर्णाक्षं तथैव च॥ अमरं च महाकालं तथा कायावरोहणम्। एतानि हि पवित्राणि सांनिध्यात् सन्ध्ययोर्द्वयोः॥ कालिञ्जरवनं चैव शङ्कुकर्णं स्थलेश्वरम्। एतानि च पवित्राणि सांनिध्याद्धि मम प्रिये॥ अविमुक्ते वरारोहे त्रिसन्ध्यं नात्र संशयः॥ हरिश्चन्द्रं परं गुह्यं गुह्यमाम्रतकेश्वरम्। जालेश्वरं परं गुह्यं गुह्यं श्रीपर्वतं तथा। महालय तथा गुह्यं कृमिचण्डेश्वरं शुभम्। गुह्यातिगुह्यं केदारं महाभैरवमेव च॥ अष्टवेतानि स्थानानि सांनिध्याद्धि ममप्रिये। अविमुक्ते वरारोहे त्रिसन्ध्यं नात्र संशयः॥ (मत्स्यपुराण 181, 25-30)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अतएव शिव के उदेश्य से दान करना चाहिए, उसमें गुणाश्रय की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। शिव के भक्तों का इस प्रकार किया गया दान शिवदान होता है।

शिवभक्तिद्विजं भक्त्या यः श्राद्धादिषु भोजयेत्॥ 74॥
कुलत्रयं समुद्धृत्य शिवलोके महीयते।
बहुनात्र किमुक्तेन शिवभक्तं प्रपूजयेत्॥ 75॥

शिवभक्त और ब्राह्मण भक्तों को जो श्राद्धावसर पर भोजन करवाता है, वह अपने तीन कुलों को तारकर स्वयं शिवलोक में जाता है। इस प्रसंग में अधिक कहने से क्या लाभ है? शिवभक्त की श्रद्धा से पूजा करनी चाहिए।

शिवभक्तः स्थितो भुङ्क्ते साक्षाद्भुङ्क्ते सदाशिवः।
द्विजानां वेदविदुषां कोटिं सम्भोज्य यत्फलम्॥ 76॥
तत्फलं कोटिगुणितं सम्भोज्य शिवयोगिनम्।
[कोटिक्रतुः] वीतरागाय भिक्षादानेन तद्भवेत्॥ 77॥

शिवभक्त को बिठाकर भोजन करवाएँ तो साक्षात् शिव को ही भोजन करवाया है, ऐसा समझना चाहिए। वेद के विद्वान करोड़ ब्राह्मणों को भोजन करवाने का जो फल है, वह फल करोड़ गुना होकर शिवयोगियों को भोजन करवाने से मिलता है। करोड़ यज्ञों का जो फल है, वह वीतराग को भिक्षादान करने से होता है।

तस्माच्छ्राद्धे विशेषेण पुण्येषु दिवसेषु च।
शिवमुद्दिश्य विप्रेन्द्रान शिवभक्तांश्च भोजयेत्॥ 78॥

इसलिए श्राद्धों में और विशेषकर पुण्य दिवसों (अयनादि संक्रान्ति काल) में शिव को उद्देश्य बनाकर ब्राह्मणों और शिवभक्तों को भोजन करवाना चाहिए।

वंशपात्रस्य दानफलम् —

मृद्भस्माधार पात्राणि [1]वंशालाबुकृतानि च।
सोऽपि यां गतिमाप्नोति सोऽपि यज्ञशतैरपि॥ 79॥

शिव के निमित्त मिट्टी और भस्म रखने के लिए बनाए जाने वाले बाँस (और तुम्बी आदि) के पात्रों का दान करने वाला सौ यज्ञों के करने से मिलने वाली गति को प्राप्त करता है।

---

1. 'वंशाऽलाम्बुकृतानि' इति स्यात्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

मान्यश्च पूजश्च रक्षानिर्देशम् —

तस्मान्मान्यश्च पूज्यश्च रक्षणीयश्च सर्वदा।

लोगों के लिए सम्माननीय और पूजनीय जन सर्वदा रक्षणीय होते हैं, उनकी सुरक्षा करनी चाहिए।

क्षणार्धेशिवनाममाहात्म्यमाह —

नाममात्रप्रसन्नोऽपि क्षणाधर्ममपि यः शिवे॥ 80॥
स मुनिः स महासाधुः स योगी स शिवं व्रजेत्।

यदि केवल आधा क्षण भी शिव का नाम लिया जाए तो वे प्रसन्न होते हैं। ऐसा करने वाला मुनि है, वह महान् साधु है, वह योगी है। वह भगवान् शिव के समीप जाता है।

श्राद्धस्थलस्य पुण्यफलम् —

गृहे श्राद्धस्य यत्पुण्यं अरण्ये तच्छताधिकम्॥ 81॥
तन्नदीष्वयुतं पुण्यं अनन्तं स्याच्छिवालये।

अपने घर में श्राद्धकृत्य सम्पादित करने का जो पुण्य होता है, वह वनारण्य क्षेत्र में करने से सौ गुना होता है। नदी के तट पर श्राद्ध करने से दस हजार गुना और यदि शिवालय में श्राद्ध किया जाए तो अनन्त पुण्य होता है।

वेत्रास्यासन वा गजदन्तमयासन दानफलम् —

निवेदयीत यः सम्यग् आसनं रुद्र वेत्रजम्॥ 82॥
नागदन्तमयं वापि सिंहासनपतिर्भवते।

जो अच्छी प्रकार से बना हुआ वेत्र का आसन (आसन्दी) अथवा हाथीदाँत जटित आसन (बाजोट, बैठकी) शिव के प्रति भेंट करता है, वह राजा होता है।[1]

कार्पासनिर्मितकौपीनदानफलम् —

कौपीनादीनि कार्पासं निवेद्य शिवयोगिने॥ 83॥

---

1. कालिकापुराण में पुष्पमय आसन, लकड़ी से निर्मित, वस्त्र, चमड़े और कुश से बने— इन पांच प्रकार के आसनों का वर्णन आया है। पुष्प से, पुष्पों के समूह से तथा कुश, सूत्र आदि से बने हुए आसन देवताओं को विशेष प्रिय बताए गए हैं— पौष्पं पुष्पौघरचितं कुशसूत्रादि संयुतम्। अतिप्रीतिकरं देव्या ममाप्यन्यस्य भैरव॥ ऐन्धनं चार्मणं वास्त्रं तैजसं च चतुष्टयम्। आसनं साधकानां च सततं परिकीर्तितम्। तत् सर्वमासनं शस्तं पूजाकर्मणि साधके॥ (कालिकापुराण 68, 7 एवं 23)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

युगकोटिसहस्त्राणि शिवलोके महीयते।

शिवयोगियों को जो कपास के सूत के बने कौपीन का दान करता है, वह हजारों-करोड़ों युगों तक शिवलोक में निवास करता है।[1]

और्णप्रावरणदानफलम् —

और्णं प्रावरणं दत्वा विस्तीर्णं शिवयोगिने॥ 84॥
रोम्णि रोम्णि सुवर्णस्य दत्तस्य फलमाप्नुयात्।

ऊन से बने हुए लम्बे-चौड़े दुशाले (शाल, कम्बल) का जो शिवयोगियों का दान करता है, तो उसके एक-एक रोम के बराबर सुवर्णमुद्रा के दान का फल मिलता है।

व्याघ्रमृगचर्मादिदानफलम् —

व्याघ्रजं मृगचर्मादि तिलपिष्टविमर्दितम्॥ 85॥
मृदुरक्तं कषायेण निवेद्य शिवयोगिने।
यावत्तद्रोमसङ्ख्यातं मृगव्याघ्रादि चर्मणि॥ 86॥
तावद्युगसहस्त्राणि रुद्रलोके महीयते।

व्याघ्रचर्म और मृगादि की चर्म को तिल की खल से मसाज करके मुलायम और सुर्ख कषाय जैसी बनाकर जो व्यक्ति शिवयोगी को दान करता है तो उन मृग-व्याघ्रादि चर्म पर जितनी संख्या में रोम होते हैं, उतने ही हजार युगों तक दाता रुद्रलोक में निवास करता है।

सत्राणपवित्रजलस्थलदानफलम् —

जलस्थलपवित्राणि निवेद्य शिवयोगिने॥ 87॥
त्राणार्थं सूक्ष्मतन्तूनां अब्दलक्षं वसेद्दिवि।

शिवयोगी को पवित्र जलस्थल (पानेरा) समर्पित करने चाहिए। उसके बचाव के लिए सूक्ष्म तन्तुओं का खोल (आवरण) भी प्रदान करें तो दानदाता को लाखों वर्षों तक दिव्यलोक में निवास मिलता है।

---

1. सिद्धान्तशेखर में कौपीन के लिए कहा गया है कि वह एक हाथ विस्तार की हो और दो हाथ की चौड़ाई वाली होनी चाहिए, उसमें लटकने वाला भाग इसका तीसरा भाग होगा, इसी प्रकार इसका आच्छादन के लिए प्रयोग करना चाहिए— एकहस्तप्रविस्तारं करद्वन्द्वसमायतम्। विलम्बिततृतीयांश गुह्याच्छादनमीरितम्॥ (वीरमित्रोदय लक्षणप्रकाश, पृष्ठ 636-637)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सत्रिपदीकमण्डलुदानफलम् —

त्रिविष्कम्भसमायुक्तं यः प्रदद्यात्कमण्डलुम्॥ 88॥
महासरांसि यद्दत्वा तत्पुण्यं सकलं लभेत्।

तीन पायों वाले आधार (तिपाई, त्रिपदी, घड़ौंचियाँ) के साथ जो कमण्डलु भेंट करता है, वह महासरोवर के दान के बराबर समस्त पुण्यों से लाभान्वित होता है।

मृदुवासदानफलम् —

मृदुवासश्च सुश्लिक्ष्णं व्रणदोष विवर्जितम्॥ 89॥
निवेद्य शिवयोगिभ्यः सर्वयज्ञफलं लभेत्।

अच्छी तरह से बुना हुआ ऐसा नरम वस्त्र जो गाँठ-गठिला नहीं हो, शिवयोगियों को दान करने से समस्त यज्ञों का फल मिलता है।

भोजनपात्रदानफलम् —

द्व्यंशदारुगर्वाद्यं सुकृतं भैक्षभाजनम्॥ 90॥
निवेद्य शिवयोगिभ्यः सदा सत्र फलं लभेत्।

अगरु, बाँसादि की लकड़ियों का बना भिक्षापात्र यदि शिवयोगियों को भेंट किया जाए तो सदैव यज्ञ का फल मिलता है।

दन्तधावनश्चोष्णीषनिवेदनफलम् —

दन्तधावनमुष्णिषं निवेद्य शिवयोगिने॥ 91॥
दिव्यस्त्रीभोगसंयुक्तं हैमं स्वर्गे पुरं लभेत्।

दाँतुन और पगड़ी यदि शिवयोगी को भेंट किए जाएँ तो दिव्य स्त्रियों के साथ भोग और सुवर्ण जैसे स्वर्ग के पुर में निवास मिलता है।

योगपट्टोपवीतनिवेदनफलम् —

योगपट्टोपवीतानि निवेद्य शिवयोगिने॥ 92॥
वस्त्रयुग्मसहस्त्रस्य दत्तस्य फलमाप्नुयात्।

शिवयोगी को योगपट्ट (अलफी)[1] और उपवीत दान करने से हजारों अलफियों के दान के बराबर फल मिलता है।

---

1. सिद्धान्तशेखर में तीन प्रकार के योगपट्ट बताए गए हैं। पहला वह है जो व्याघ्रादि के चर्म से बनता है, दूसरा वह है जो मृग के चर्म से बनता है, तीसरा तन्तुओं से निर्मित होता है। इसमें चार मात्रा के प्रमाण से विस्तार

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

उपानत्काष्ठपादुकानिवेदनफलम् —

शिवभक्ताय यो दद्याद् उपानत्काष्ठपादुके ॥ 93 ॥
स वराश्वसहस्त्रस्य दत्तस्य फलमाप्नुयात्।

जो शिवभक्तों को जूते अथवा लकड़ी की खड़ाऊ भेंट करता है, उसको हजार श्रेष्ठ घोड़ों के दान के समतुल्य फल मिलता है।

शिवयोगिने लगुडदानफलम् —

कल्माषदण्डं यो दद्याद् अन्यं वा शिवयोगिने ॥ 94 ॥
बलावष्टम्भयुक्तात्मा भवेद्दण्डाधिनायकः।

जो कल्माष (गन्धशाल या विचित्र वर्णों वाला) निर्मित अथवा अन्य प्रकार का दण्ड शिवयोगी को दान करता है, वह आठ प्रकार के बलाधिकार-सामर्थ्यों से युक्त होकर दण्डाधिनायक (न्यायाधिपति) होता है।

आतपत्रनिवेदनफलम् —

ताम्रं वंशातपत्रं वा निवेद्य शिवयोगिने ॥ 95 ॥
एकच्छत्रं स भुञ्जित मण्डलं शतयोजनम्।

ताँबे के दण्ड वाला अथवा बाँस निर्मित छाता यदि शिवयोगी को निवेदित किया जाए तो दानदाता एकछत्र पृथ्वी और सौ योजन पर्यन्त प्रसारित राज्य-मण्डल का उपभोग करता है।

नानावस्तु दानफलम् —

पात्रान्तरविशेषेषु दत्तेषु शिवयोगिने ॥ 96 ॥
भवेत्क्षितिपतिः श्रीमान् कुलाधारो गुणान्वितः।

इसी प्रकार जो अन्य विशेष (आराधनोपकरणादि) उपयोगी वस्तुएँ शिवयोगियों को दान करता है, वह वैभव सम्पन्न, कुल का आधार (वंश प्रवर्तक) और गुणों का धारक पृथ्वीपति राजा होता है।

पुस्तकदानफलम् —

शिवज्ञानाभियुक्ताय यो दद्यात्पुस्तकं महत् ॥ 97 ॥

होता है और वैसी ही चौड़ाई होती है— त्रिविधं योगपट्टं स्यादाद्यं व्याघ्रजिनोद्भवम्। द्वितीयं मृगचर्माद्यं तृतीयं तन्तुनिर्मितम्॥ चतुर्मात्रप्रविस्तारं दैर्घ्यं स्याद्यज्ञसूत्रवत्॥ (वीरमित्रोदय लक्षणप्रकाश पृष्ठ 636)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

युगकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते।
भवेदिहागतः श्रीमान् सुखाढ्यो वेदपारगः॥ 98॥
सम्यग्ज्ञानार्थवक्ता च बृहस्पतिसमो भवेत्।

शिव सम्बन्धी ज्ञान से परिपूर्ण महत् पुस्तक का जो दान करता है, वह सैकड़ों-करोड़ों दिव्य युगों तक शिवलोक में निवास करता है। वहाँ से लौटकर इस पृथ्वीलोक में वैभव सम्पन्न, सुखों का उपभोग करने वाला, वेदों का विद्वान तथा आचार्य बृहस्पति के समान सम्यक् ज्ञान का भाषण करने वाला होता है।

वपनकार्य फलम् —

यः कुर्यात्कारयेद्वापि वपनं शिवयोगिनाम्॥ 99॥
वर्षलक्षं महायानैः शिवलोके महीयते।

जो शिवयोगियों का मुण्डन करता है और करवाता है, वह लाखों वर्ष तक महायान में आरूढ़ होकर शिवलोक में निवास करता है।

यः कारयेच्च भक्तानां वपनं शिवयोगिनाम्॥ 100॥
इहलोके सुखं प्राप्य सोऽन्ते मुक्तिमवाप्नुयात्।

इसी प्रकार शिवयोगियों के भक्तों का जो केशमुण्डन करवाता है, वह इस लोक में सुख भोगता है और अन्तकाल में मुक्ति को प्राप्त करता है।

एवं वस्तुविशेषेषु दत्तेषु शिवयोगिने॥ 101॥
भवेद्भक्तिविशेषेणः फलं पात्र विशेषतः।

इस प्रकार शिवयोगी को किसी भी वस्तु विशेष का दान करने से श्रद्धाभाव और पात्र के अनुसार फल की प्राप्ति होती है अर्थात् 'जैसा भाव, वैसा पाव' उक्ति चरितार्थ समझनी चाहिए।

शिवयोगीदीनां शिवतुल्यताम् —

शिवयोगी शिवज्ञानी शिवधर्मरतश्च यः॥ 102॥
शिवं प्राप्नोति तुल्यत्वात् सर्वतुल्यगुणाः स्मृताः।

जो शिवयोगी, शिवज्ञानी और शिवधर्मरत हैं, वे शिव की बराबरी पाते हैं, उनमें शिव समान ही सर्वगुण सम्पन्नता होती है।

रुद्राक्षदानादीनां फलमाह —

रुद्रो रुद्राक्षदानेन भवतीति किमद्भुतम्॥ 103॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तन्मालया सदाह्ल(द्ध)स्ते रुद्रश्च क्रमते क्षितौ।
रुद्राक्षाणि स्वयं रुद्रो ये च रुद्राक्षधारका: ॥ 104 ॥

रुद्राक्ष के दान से दाता रुद्र होता है, क्या यह अद्भुत नहीं है! जो उन रुद्राक्षों की माला को सदा हाथ में रखता है, वह इस पृथ्वी पर क्रम से रुद्र हो जाता है। रुद्राक्ष स्वयं ही रुद्र है और रुद्राक्षधारक भी शिव है।

रुद्राक्षधारणात्तस्माद् इह रुद्रः परत्र च।
रुद्राक्षमालां यो धत्ते भक्त्या कण्ठे करेऽपि वा ॥ 105 ॥
शतार्धार्ध प्रमाणेन स रुद्रो नात्र संशयः।

रुद्राक्ष को धारण करने के कारण वे इहलोक में भी रुद्र हैं और परलोक में भी। जो भक्तिपूर्वक रुद्राक्ष की माला चाहे वह संख्या में सौ दानों की हो, आधे (पचास) या फिर आधे के आधे (पच्चीस) रुद्राक्ष के दानों की माला ही हो, वह रुद्र ही है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

जपाच्च रुद्रमन्त्राणां कोटिकोटिगुणोत्तरम् ॥ 106 ॥
हस्तेमूर्ध्न्युपवतीते वा कृत्वा रुद्राक्षमालिकाम्।
यश्च भुञ्जित तद्भुक्तं रुद्रो भुङ्क्ते स्वयं प्रभुः ॥ 107 ॥
रुद्राक्षधारणं तस्मात् नित्यमेव प्रशस्यते।
परात्मानुग्रहार्थाय ब्राह्मणस्य विशेषतः ॥ 108 ॥

इससे रुद्रमन्त्र (ॐ नमः शिवाय) के करोड़ जाप भी करोड़ गुना हो जाते हैं। रुद्राक्षमाला हाथ में लेकर अथवा सिर पर उपवीत रखकर जो भोजन करता है, उसने स्वयं प्रभु रुद्र को ही भोग लगाया है, ऐसा समझना चाहिए। इसलिए रुद्राक्ष को नित्य धारण करना प्रशस्त होता है। परात्मा का अनुग्रह मिले, इसके लिए ब्राह्मण को तो विशेषकर रुद्राक्ष धारण करना ही चाहिए।

यतिप्रतिदानफलम् —

यतिमात्रोपकरणं दत्वाल्पमपि भक्तितः।
वर्षलक्षं महाभोगैः शिवलोके महीयते ॥ 109 ॥

यतियों को मात्र उपकरण ही दान किए गए हों, भले ही वे अत्यल्प प्रमाण हों, इस दान के प्रभाव से व्यक्ति एक लाख वर्षों तक शिवलोक में निवास कर महाभोग प्राप्त करता है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवयोगीप्रत्याऽऽवसथनिर्माणफलम् —

कुर्यादावसथं सौम्यं सुगुप्तं शिवयोगिनाम्।
शिवालयकृतेर्यावत् तावत्पुण्यं समं भवेत्॥ 110॥

अच्छी तरह गुप्त निवास करने वाले शिवयोगियों के लिए सुन्दर आश्रयस्थल बनवाएँ। इससे शिवालय के निर्माण के बराबर तब तक पुण्य मिलता है, जब तक कि वह निर्मिति विद्यमान रहती है।

यथा शिवस्तथा योगी यथा योगी तथा शिवः।
तेन योगीन्द्रपात्रेषु दानमण्वपि चाक्षयम्॥ 111॥

जैसे शिव है, वैसे ही योगी है, जैसे योगी हैं, वैसे ही शिव है। इसलिए पात्र योगीन्द्र को अणुमात्र दान करना भी अक्षय हो जाता है।

यद्यदस्योपयुज्यते तद्देयं तस्य भक्तितः।
उपयोगप्रदानेन प्रशस्तं लोकमाप्नुयात्॥ 112॥

जैसा-जैसा उपयोग हो, वैसी-वैसी सामग्री का उनके प्रति भक्तिपूर्वक दान करना चाहिए। उपयोगी वस्तुओं के दान से प्रशस्त लोकों में निवास होता है।

शिवधर्मस्यव्याख्यानस्थले मण्डपनिर्माणनिर्देश —

व्याख्याने शिवधर्मस्य कृत्वा मण्डपमुत्तमम्।
शोभितं मृदुगन्धाद्यैः न्यसेत्तत्रासनं शुभम्॥ 113॥

शिवधर्म के सम्बन्ध में जिस स्थल पर व्याख्यान होता हो, वहाँ पर उत्तम मण्डप का निर्माण करवाना चाहिए। वह मण्डप[1] भीनी-भीनी गन्धादि से सुरभित-शोभित हो। वहाँ पर सुन्दर आसन रखना चाहिए।

----

1. वास्तुशास्त्रों में आया है कि जपमण्डप अथवा वेदाध्यापन, व्याख्यान मण्डप के चिरकाल स्थायित्व के लिए अधिष्ठान की रचना करनी चाहिए। इसी प्रकार उनको उपपीठ, स्तम्भपाली सहित बनाएँ और चित्र सहित अलंकरणों से युक्त करे। इन मण्डपों के मुख या आगे एवं बाजू के भाग में आँगन की रचना की जानी चाहिए। उनको चतुर्दिक आँगन सहित भी बनाया जा सकता है। ये सावरण और आवरण रहित भी बनाए जा सकते हैं। इसी प्रकार इन मण्डपों में स्तम्भों को समरेखीय संयोजित करते हुए तिर्यक् प्रसार जैसे दृष्टिदोषादि से रहित रखे और उनमें समान रूप से ऊँचाई और व विशालता वाले स्तरों पर अश्वमुखों का उत्कीर्णन करे या गजमुखों की रचना करे। उन्हें यालीरूप तक्षण (सिंह से कहीं अधिक बलवान गजरिपु) और पार्श्व में चक्रादि की रचना की सुन्दरता से युक्त करे : जपमण्डपकं वाऽपि वेदाध्ययनमण्डपम्॥ अधिष्ठानयुतं प्रायश्चिरकालाय कल्पते। सोपपीठस्तम्भपालिं चित्रालङ्करणान्वितम्॥ मुखाङ्गणसमोपेतं पार्श्वाङ्गणसमन्वितम्। चतुरङ्गणयुक्तं वा सवारं वा विवारकम्।। समरेखादृष्टिहीनं समोत्तुङ्गविशालकम्। वाजिवक्त्रेण संयुक्तं गजंवक्त्रान्वितं क्वचित्॥ यालीमुखसमोपेतं पार्श्वचक्रसमन्वितम्। (विश्वकर्मवास्तुशास्त्रम् 74, 10-13)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

पुस्तकं तद्गुरोः स्थाप्य पूजयेदुभयं ततः।
शिवधर्मप्रवक्तारं आचार्यं पूजयेत्ततः॥ 114॥

वहाँ पर धर्म की पुस्तक और गुरु की स्थापना की जानी चाहिए। तदोपरान्त शिवधर्म के प्रवक्ता आचार्य की पूजा करनी चाहिए।

शिवश्च शिवं धर्मश्च तुल्यमेव न संशयः।
पूजयेच्छिवधर्मं च तुल्यमेतद्द्वयं यतः॥ 115॥

शिव और शिवधर्म बराबर हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं रखना चाहिए। अतएव शिव और उनके धर्म की पूजा करें। ये दोनों ही समतुल्य है।

इत्योपरान्त शिवधर्मशास्त्रस्य माहात्म्यमाह —

य एवं न्यायतो भक्त्या शिवधर्मं शृणोति च।
आयुर्विद्यां यशः सौख्यं लब्ध्वान्ते तु शिवं व्रजेत्॥ 116॥

जो इस शिवधर्म (पुराण, शास्त्र) को न्यायपूर्वक भक्ति सहित सुनता है, वह आयु, विद्या, यश और सुख को प्राप्त करता है और अन्त में शिवलोक को जाता है।

इत्येषवः समाख्यातः शिवधर्म सनातनः।
सर्वेषां शिवभक्तानां अयं वाच्यो विजानता॥ 117॥

सनातन शिवधर्म इतना ही कहा गया है। इसको सभी शिवभक्तों के प्रति कथन करना-सुनाना चाहिए।

शिवाश्रमेषु यो भक्त्या शिवधर्मं प्रवर्तयेत्।
शृणुयाच्च भवेत्तस्य शास्त्रोक्तमखिलं फलम्॥ 118॥

जो भक्तजन शिवाश्रमों में इस शिवधर्म का प्रवचन करते अथवा सुनते हैं, उनको समस्त शास्त्रों का फल मिलता है।

श्रुत्वैवमखिलं धर्मं आख्यातं ब्रह्मसूनुना।
चन्द्रात्रेयसगोत्राय शिवभक्ताय सारवत्॥ 119॥

स्कन्दपुराण में पुष्पों का मण्डप बनाने का वर्णन आया है जिसके ऊपर सुन्दर चँदोवा लगाने और वहाँ पर गीतों व बाजों की मधुर ध्वनि करने का निर्देश है : पुष्पमण्डपिका कार्या वितानं चैव शोभनम्॥ रात्रौ जागरणं कार्यं गीतवादित्रनिःस्वनैः॥ (श्रावणमास माहात्म्य, 6, 26-27) इसी में कहा गया है कि केले के खम्भों से सुशोभित मण्डप भी बनाया जा सकता है। उसे अनेक प्रकार के फलों और रेशमी वस्त्रों से सजाना चाहिए : पुष्पमण्डपिका कार्या कदलीस्तम्भमण्डिता। नानाविधैः फलैश्चैव पट्टकूलैश्च भूषयेत्॥ (श्रावणमास. 7, 4)

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सारात्मकं समुद्धृत्य चन्द्रात्रेयेण धीमता।
उक्तं द्वादशकाऽध्यायं धर्मशास्त्रं शिवात्मकम्॥ 120॥

यह समस्त धर्म सुनकर ब्रह्मापुत्र श्रीसनत्कुमार ने जो चन्द्रात्रेय गोत्र हैं, शिवभक्तों के प्रति सारतः कहा है। जैसा सुना, उस सार को भी साररूप में उद्धरित करके उक्त बुद्धिमान चन्द्रात्रेय ने बारह अध्यायों में शिवात्मक धर्मशास्त्र को कहा है।

यावदस्योपदेशेन शिवधर्मं समाचरेत्।
तावत्तस्यापि तत्पुण्यं उपदेष्टुर्नसंशयः॥ 121॥

जब तक इस शिवधर्म के उपदेश व्यवहृत (पढ़े-सुने-आचरित) होते रहेंगे तब तक उसका पुण्य भी उसके उपदेशकर्ता को निरन्तर मिलता रहेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

उपदेशं विना यस्मात् धर्मो ज्ञातुं न शक्यते।
न च कर्तुमविज्ञानात् तस्तात्तुल्यं तयोः फलम्॥ 122॥

उपदेश के बिना इस धर्म को जाना नहीं जा सकता है और इसका उपदेश अविज्ञान से नहीं करें, अन्यथा उसके तुल्य ही इसका फल होता है।

उपदेष्टानुमन्ता च कर्ताकारयिता च यः।
कृतानुपालकश्चैव पञ्चतुल्यफलाः स्मृताः॥ 123॥

इस धर्मशास्त्र के जो उपदेष्टा, अनुमन्ता, कर्ता, कारयिता तथा कर्ता के जो प्रभावी अनुपालक हैं— इन पाँचों को फलाफल समान ही मिलता है।

कर्तुरप्यधिकं पुण्यं तत्कृतं यस्तु पालयेत्।
यस्मादायतनं क्षिप्रं नाशं गच्छेदपालितम्॥ 124॥

उपदेशकर्ता से भी अधिक फल उसको मिलता है जो उसका सम्पादन करके पालन करता है। (अन्यथा सुनकर वैसे ही विस्मृत हो जाता है जैसे) ध्यान नहीं रखने पर कोई भवन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

भूमिरत्नाश्च नागानां गोहिरण्यादि वाससाम्।
भवेत्पूर्वोपसृष्टानां दानाच्छ्रेयोऽनुपालनम्॥ 125॥

यह ज्ञातव्य है कि भूमि, रत्नों, हाथियों, गायों और सुवर्ण सहित वस्त्रों-परिधानों का पूर्व उपसृष्टाओं द्वारा किया गया दान श्रेयपूर्वक अनुपालन से ही होता है।

दातुरप्यधिकं पुण्यं तद्दत्तं योऽनुपालयेत्।
तत्पालितं तु तद्यात्नात् शीघ्रमेव प्रणश्यते॥ 126॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

दानकर्ता से अधिक पुण्यलाभ उसको मिलता है जो उन द्रव्य-वस्तुओं का पालन करता है। यत्नपूर्वक पालन नहीं होने पर वे शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं।

तस्मादुपदिशेद्धर्मं स्वयं वापि समाचरेत्।
कारयेदनुमन्यैत कृतमन्यैश्च पालयेत्॥ 127॥
इति पञ्चप्रकारोऽयं शिवधर्मः प्रकीर्तितः।
धर्मार्थं काममोक्षार्थं सर्वभूतानुकम्पया॥ 128॥

इसलिए इस धर्म का उपदेश करें किन्तु यह आवश्यक है कि स्वयं भी उसे आचरण में लाएँ। इसका पालन करवाएँ। इसके अनुमन्ता हों, अन्य से कराएँ और उसका पालन करें। इस प्रकार से इस शिवधर्म के पालन के पाँच प्रकार बताए गए हैं। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए शिव सभी भूत-प्राणियों पर अनुकम्पा बनाए रखें।

इत्योपरान्त स्तोत्रम् —

कपालमालिन्देवेश! महाकाल नमोऽस्तुते।
चन्द्रार्धमूर्धन् भूतेश! चर्मवासः सदाप्रिय!॥ 129॥

हे कपालमाली देवेश! महाकाल आपको नमस्कार हैं। अर्धचन्द्रमा को सिर पर धारण करने वाले चन्द्रशेखर! भूतेश! आप सदैव चर्म के परिधानप्रिय हैं।

गजचर्मरत! स्वामिन्! चण्डनाथ! नमोऽस्तुते।
त्रिशूलपाणे! देवेश! त्रिनेत्र त्रिदशेश्वर!॥ 130॥
त्रिमूर्त च महायोगिन्! त्रिपुरान्तकः! ते नमः।
सर्वेश! हे! सर्वगत! सर्ववित्सर्वतोमुख!॥ 131॥
सर्वत्रावस्थितोऽनन्त! सर्वव्यापिन्नमोऽस्तुते।

आप गज की चर्म को धारण करने वाले हैं। हे स्वामिन्! चण्डनाथ! आपको नमस्कार हैं। हे त्रिशूलपाणि! हे देवाधिपति! त्रिनेत्र! (ब्रह्मादि देवताओं के) त्रिदशेश्वर! हे त्रिमूर्ति! महायोगी! त्रिपुर का अन्त करने वाले आपको नमस्कार है। हे सर्वेश! हे सर्वगत! सर्ववित्त! हे सर्वतोमुख! सर्वत्र अवस्थित! अनन्त! सर्वव्यापि आप शिव को नमस्कार हैं।

स्थूलसूक्ष्मविभा[वेन] व्याप्तं येन चराचरम्॥ 132॥
अनन्तानादिकाव्यक्त व्यक्ताव्यक्ताय ते नमः।

आप इस चराचर में स्थूल और सूक्ष्मभावों से व्याप्त हैं। अनन्त! अनादि! अव्यक्त! व्यक्त! अव्यक्त! आपको नमस्कार हैं।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अनन्तं शाश्वतं विश्वं ध्रुवं नित्यमुमापतिम्॥ 133॥
श्रीकण्ठं सर्पकण्ठं च नीलकण्ठं नमाम्यहम्।

अनन्त! शाश्वत! विश्व! ध्रुव! नित्य! उमापति! श्रीकण्ठ! सर्पकण्ठ और नीलकण्ठ को मैं नमस्कार करता हूँ।

विद्यामयी तनुर्यस्य विद्याधीनं च तत् स्थितम्॥ 134॥
सकलं निष्कलं चैव कलाहीन! नमोऽस्तुते।

आपका देह विद्यामय हैं! आप विद्या के अधीन हैं! आप विद्या में ही स्थित हैं! सकल! निष्कल! कलाहीन! आपको नमस्कार हैं।

योगाधिपो योगगम्यो योगात्मा योगसम्भवः॥ 135॥
महायोगधरो यश्च योगेश्वर! नमोऽस्तुते।

हे योगाधिप! योगगम्य! योगात्मा! योगसम्भव! महायोगधर! योगेश्वर! आपको नमस्कार हैं।

सर्वं तेजोमयं देहं तेजसामपि तेजसम्॥ 136॥
तेजोनिधिश्च यश्चेदं तेजोतीत नमोऽस्तुते।

आप समस्त तेजमय हैं। आपकी काया तेजों से तेजस है। आप तेज की निधि हैं, आप तेजों से अतीत हैं। आपको नमस्कार हैं।

ओमित्येकाक्षरं यत्तु प्रख्यातं भुवनत्रये॥ 137॥
तस्याप्यर्थपयोरस्तु सदाशिव नमोऽस्तुते।
अर्धमात्रापरार्धं यत् तस्यार्थस्य तु योऽधिपः॥ 138॥

जिनका ओम यह एक अक्षर है, जो तीनों ही भुवनों में प्रख्यात है, उसके अर्थ भी आप शिव ही हैं, आपको नमस्कार हैं। अर्धमात्रा से लेकर परार्ध तक और उस अर्ध के भी आप अधिपति हैं।

परापरं परं शान्तं शान्त्यातीत नमोऽस्तुते।
अकारोकारयोरूर्ध्वं मकारो बिन्दुरेव च॥ 139॥
निर्वाणपरमातीत! तदतीत नमोऽस्तुते।

परापर! पर! शान्त! शान्त्यातीत! आपको नमस्कार हैं। अकार ऊर्ध्वकार हैं और मकार बिन्दु की तरह हैं। निर्वाण! परमातीत! अतीत! आपको नमस्कार हैं।

वालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितं च यत्॥ 140॥

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अनौपम्यमनामं च शिवशान्त नमोऽस्तुते।

बाल के आगे के भाग के भी सौवें भाग की तरह जो कल्पित हैं। ऐसे अनौपम्य! अनाम! शिव! शान्त! आपको नमस्कार हैं।

अनन्तानादिमव्यक्तं देहस्थं देहवर्जितम्॥ 141॥
हृदिस्थं सर्वभूतेषु व्योमस्थं यन्नमोऽस्तुते।

अनन्त! अनादि! अव्यक्त! देहस्थ! देहवर्जित! सभी प्राणियों के हृदयस्थल में स्थित, आकाश में स्थित आपको नमस्कार हैं।

अग्राह्यमिन्द्रियैर्वायत् सर्ववस्तुविवर्जितम्॥ 142॥
स्वदेशे गूढमानन्त गुहावास नमोऽस्तुते।

आप इन्द्रियों से अग्राह्य! यावतवस्तु! सर्ववस्तु से विवर्जित हैं। स्वदेश में गूढ़! अनन्त! गुहावासी! आपको नमस्कार हैं।

गुहातीतश्च गूढात्मा गुह्यानां गुह्यगोचर!॥ 143॥
शुभवासश्च यो नित्यं गूढार्थं च नमोऽस्तुते।

गुहातीत! गूढ़ात्मा! गुह्यों में गुह्यगोचर! जो नित्य शुभवस्त्रों में रहते हैं, गूढ़ार्थ आपको नमस्कार हैं।

महादेव महाबोध! महामाय! महाबल!॥ 144॥
महाज्ञान! परातीत! ज्ञानगुह्य नमोऽस्तुते।

महादेव! महाबोध! महाकाय! महाबल! महाज्ञान! परातीत! ज्ञानगुह्य! आपको नमस्कार हैं।

ईशानमीश्वरं ब्रह्म सदाशिवमजं परम्॥ 145॥
निर्द्वन्द्वं निर्मलं साक्षात् यं महेश नमोऽस्तुते।

ईशान! ईश्वर! ब्रह्म! सदाशिव! अज! परम! निर्द्वन्द्व! निर्मल! साक्षात् महेश्वर! आपको नमस्कार हैं।

एकाक्षरं चतुर्भेदं चतुर्मन्त्रैरलङ्कृतम्॥ 146॥
चतुष्कलं कलातीतं बिन्द्वातीत! नमोऽस्तुते।

एकाक्षर! चतुर्भेद वाले! चारमन्त्रों से अलंकृत! चतुष्कल! कलातीत! बिन्दु से अतीत! आपको नमस्कार है।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इदं स्तोत्रमाहात्म्याह—

इति स्तवेन दिव्येन यः स्तौति परमेश्वरम्॥ 147॥
स मुक्तः सर्वपापेभ्यः शिवसायुज्यमाप्नुयात्।

इस दिव्य स्तवन से जो परमात्मा शिव की स्तुति करता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है और शिव का सायुज्य प्राप्त करता है।

ग्रन्थान्तेमङ्गलकामनाह —

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वोभद्राणि पश्यतु॥ 148॥
सर्वः सुगतिमाप्नोतु सर्वस्य तु भवेच्छिवम्।

सभी दुस्तर गतियों से तैर जाएँ, सभी भद्र-शुभाचारी दिखाई दें। सभी को सुगति प्राप्त हों और सभी का शिव अर्थात् कल्याण हों।

इति शिवधर्मपुराणे[1] नन्दिकेश्वर प्रोक्ते शिवधर्मशास्त्रे द्वादशोऽध्याय॥ 12॥

इस प्रकार नन्दिकेश्वर प्रोक्त शिवधर्मपुराण का बारहवाँ अध्याय पूरा हुआ।

*****

॥ शिवधर्मं पूर्वं सम्पूर्णम्॥

*****

---

1. 'शास्त्रे' इति मातृकायाम्।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्लोकानुक्रमणिका

अकामतोऽपि सर्वाणि ५.२११
अकालमृत्यमथनं ६.२
अक्षमालार्पितकरः ६.२५
अक्षमालाशिरोग्रस्तु ६.२७
अगरुं दशसाहस्रं ५.१२८
अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य ५.१३१
अग्निष्टोमादयो यज्ञा १.६
अग्निहोत्राश्च वेदाश्च ७.२
अग्निहोत्रिषु यत्पुण्यं १०.३
अग्निहोत्रि सहस्रेभ्यः ७.७८
अतः परमिदं गुह्यं ६.१
अतः परमिदं पुण्यं ९.१
अतीतनागतार्थेषु ११.११०
अतिदीप्ताश्च ये प्रेता ६.२३८
अतिसूक्ष्मोऽतिविक्रान्तः ६.२३
अत्यल्पमपि कारुण्याद् ११.७९
अथ वैद्राज्यमाकाङ् ३.७१
अथ सङ्क्षेपतो वक्ष्ये १२.१
अदृष्टान्तमधश्चोर्ध्वं ३.८
अनन्तकान्तिसम्पन्न! ३.९३
अनन्तकान्ति (सम्पन्न) ३.१०
अनन्तानादिकाव्यक्त १२.१३३
अनन्ताय नमस्तुभ्यं ७.११९
अनादि देव देवेश! ३.९
अनादि देव देवेश! ३.९२
अनुग्रहपरो नित्यं ७.५१
अनुभूयातुलान्भोगान् १०.१५२
अनुराधा तथा ज्येष्ठा ६.१४६
अनेकरूपधारिण्य ६.२२८
अनेन विधिना देवाः ९.१८
अनेनैव शरीरेण स ११.३६
अनेनैव स देहेन ३.७४
अनौपम्यमनामं च १२.१४१
अपक्वं यातयामं च ५.९०
अपराधसहस्रं तद् ५.१२६
अपहृत्य विषं घोरं ६.१८६
अपामार्ग सहस्रेभ्यो ५.७७
अपि वर्षसहस्रेण ११.४६
अपुण्यवत्सु चोपेक्षां ७.८३
अप्यामलकमात्रं वा ३.८२
अप्रमाणफलं हस्ते ११.२२
अबालो बालरूपेण ६.११
अभावे तृणभूम्यम्भः ११.८०
अभिजिन्नाम नक्षत्रं ६.१४७
अभिमन्त्र्य सदातोयं ८.९७
अमरावतीपुरी नाम ६.७९
अमृतस्यन्दिनीं वाचं ११.८२
अम्लं दानेन विप्रेन्द्र ११.८३
अयुतं योगवान्दद्यात् ५.१८
अर्कस्य पुष्पे चैकस्मिन् ५.७२
अर्घ्यं पुष्पजलोपेतं ५.१९४
अर्घ्यं पुष्पजलोपेतं यः ५.४५
अर्घ्यमष्टाङ्गमापूर्य ५.४७
अर्चयन्तः सदाकालं ६.१४५

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

अर्चयन्ति सदारुद्रं न १.१७
अर्थकामोलभेदर्थं ६.२५५
अलिङ्गी लिङ्गीरूपेण ३.८९
अलोभेन परस्वेषु ११.११८
अवतीर्य नमस्कृत्वा १२.५
अविकल्पमतिस्तस्मात् ११.३९
अवियोगकरं शान्तं १०.९७
अशोकश्वेतमन्दार ५.१००
अश्वमेधसहस्त्रस्य ५.१६५
अश्वमेधायुतं पुण्यं ११.११५
अश्विनौ पार्थिवं लिङ्गं ३.३७
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां १०.१२१
अष्टम्यादिषु सर्वेषु ५.५
अष्टेष्टका समायुक्तं ४.२५
असम्पूज्य शिवं मोहात् ११.७
अहं कर्ताह्ययं कर्ता ३.३
अहिंसाकल्पविज्ञेयो ११.१२५
अहिंसा परमो धर्मः ११.१००
अहो पतिवरः श्रीमान् ११.१२३
अहोरात्रं न भुञ्जीत १२.५२
आकाशं लिङ्गमित्याहुः ३.२६
आकृष्टस्ताडितो वापि ११.९०
आक्रोशयति ये मोहात् ८.६३
आगम्य सर्वसत्वानां ११.२५
आग्नेय्यां दिग्विभागे ६.८४
आचमेत्तोय विधिना-११.४०
आत्मनो विभजेत्तेन ३.८६
आत्मवत्सर्वभूतेषु ११.९७
आत्मारामोद्भवैर्वाऽपि ५.७०
आपः क्षीरं कुशाग्राणि ५.४८
आपुरायं दिशः सर्वाः ५.१३५
आभूत सम्प्लवं यावत् ५.१८७
आमिलात कुसूमैश्च ५.१०४
आयुः श्रियं बलं सौख्यं ६.५१
आयुष्मान्बलवांछ्रिमान् ८.१००
आर्तिं हरतु मे प्रीता ६.३८
आलिङ्गं वेदिपर्यन्तं ८.१९
आल्मली कुसुमं पत्र ५.८४
आषाढीदण्डिमुण्डी १२.६६
आषाढे चोग्रनामानं १०.३०
आषाढे सुशुभे प्रासे १०.७४
इच्छाया वा भवेद्राजा ८.४४
इति पञ्चप्रकारोऽयं १२.१२८
इति पूजाविधिं पुण्यं ५.२२९
इति विज्ञाय यत्नेन ५.२२१
इत्यर्चना प्रकाराद्यैः ५.६८
इत्युक्त्वा मुनिदेवेभ्यः ११.३४
इत्युक्त्वा वचनं ध्यायन् ८.३८
इत्येतत्त्रिविधं ज्ञेयं १२.७२
इत्येत्तत्तपसो रूपं १२.४४
इत्येवं सर्वलोकेषु १०.१४१
इत्येवमादि क्रिया यथा १०.९६
इत्येष वः समाख्यातः १०.५२
इत्येषवः समाख्यातः १२.११७
इत्येष वः समासेन १.३८
इन्द्रनील प्रतीकाशैः १०.५६
इन्द्रनीलप्रतीकाशैः १०.१३९
इन्द्रनीलमयं लिङ्गं ३.३१
इन्द्रस्यार्धासने तावद् ५.१४१
इष्टकाद्द्विगुणं पुण्यं ४.२३

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

इष्ट्वा तु परया भक्त्या ७.८५
इहलोके सुखं प्राप्य १२.१०१
इहलोके सुखं प्राप्य ५.२२२
इहामुत्रकृतं पापं ५.३८
इहामुत्र स्थितानेक ८.९०
ईशानं पूजयन्त्येतत् ६.१४८
ईशानं सर्वभूतानां ५.२२८
ईशानः परमोदेवः सर्व-६.१०३
उच्चैर्यष्टिप्रदीपाद्यैः ५.४
उत्तराफाल्गुनी श्रेष्ठा ६.१४४
उत्तरे चन्दनं दद्याद् ९.१२
उदकान्तोययन्त्रैश्च ८.१४
उद्धृत्य दिवि संस्थाप्य ३.७५
उपदेशं विना यस्मात् १२.१२२
उपदेष्टानुमन्ता च १२.१२३
उपवासात्परं भैक्षं ११.५०
उपवासात् परं भैक्षं १०.१८
उपवासश्चतुर्दश्यां १०.५४
उपवीतं शिवे दद्याच् ८.४१
उपशोभाविशेषेण १०.१६५
उपोष्य कृष्णाष्टम्यां ७.९
ऊरु मध्येषु गन्धर्वाः ८.७९
ऊर्ध्वकेशोत्कटाक्षामा ६.४७
ऋक्षाणि च ककुद्देशे ८.७८
ऋषयः किन्नरा यक्षा-१.९
ऋग्यज्तुस्सामसंयोग १२.४३
ऋषयश्च तथा सर्वे ८.८३
एकः पूजयते भक्त्या ८.१०
एककर्णद्विकर्णाय ७.१०६
एककालद्विकालाय ७.१०४
एकच्छत्रं स भुञ्जित १२.९६
एकजिह्वद्विजिह्वाय ७.१०५
एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति ८.७१
एकदंष्ट्रद्विदंष्ट्राय ७.१०८
एकनासद्विनासाय ७.१०७
एकनेत्रद्विनेत्राय ७.१०९
एकपत्रारविन्दाग्रा ५.१०३
एकपादद्विपादाय ७.११३
एकवक्त्रद्विवक्त्राय ब ७.११०
एकशस्त्रद्विशस्त्राय ७.११२
एकहस्तद्विहस्ताय ७.१११
एकान्त भक्तिमास्याय ४.१०
एकाहमपि यो लिङ्गे ५.११
एतच्च कथितं सर्वं ८.८६
एतत्समासतो ज्ञेयं १२.५१
एतत्सोमव्रतं नाम कृत्वा ८.३९
एतत्स्नानत्रयं कृत्वा ५.३५
एतदष्टाङ्गमुद्दिष्टं परं १२.७०
एतद्व्रतोत्तमं गुह्यं ९.२०
एता नद्यो महापुण्याः ६.१९६
एताश्चान्यश्च बह्योप ६.१९८
एते ग्रहा महात्मानः ६.१२६
एते दक्षिणदेशे तु ६.१५४
एतेन क्रमयोगेन ७.२४
एतेन मातरो रुद्रो ५.२०१
एवं देवाः सगन्धर्वाः ३.४७
एवं निर्वहते यस्तु ३.५४
एवं पुष्येऽपि सम्पूज्य १०.२४
एवं योऽर्चयते लिङ्गं ९.१९
एवं वित्तानुसारेण ३.७९

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

एवं विधिसमायुक्तः १०.१७
एवं शिवाश्रमारामं ४.५३
एवं संवेष्ट्य वस्त्राभ्यां ८.३२
एवं सर्वासु वेलासु ७.३२
एवं सर्वत्र विज्ञेयं ८.११०
एवं सर्वेषु देवेषु १०.१८९
एवं सर्वेषु लोकेषु १०.१९८
एवं स्तुतो महादेवो ७.१२१
एवं स्वस्तिकपद्माद्यैः ५.२०५
एवमादि शिवाचारं ११.८८
एवमेव फलं ज्ञेयं ७.१५
एषामेकतमं स्नानं यः ५.३०
एष्टव्या बहवः पुत्राः ३.६०
ऐरावतगजारूढा ६.४५
ओषधानामलाभे तु ५.९३
कण्ठे रेखात्रयोपेतो ६.१७७
कदलीहेमयूथाद्यैः ५.१२०
कनकनि कदम्बानि ५.८७
कन्दरैर्विविधैश्चित्रैः १०.१६१
कपालपूर्णमशनं १०.१३
कपालमालिनीदेवी ६.४८
कपालमालिन्देवेश! १२.१२९
कपिलां यः पिबेच्छूद्रः५.१४
कपिला पञ्चगव्येन ५.१०
कपिला पञ्चगव्येन ५.१२
कमण्डलुधरः श्रीमान् ६.३०
करञ्जनागदन्तीश्च ५.१०२
करवीर सहस्रेभ्यो ५.७५
करोतु मे महाकालः ६.१९
करोतु मे महायोगी ६.२६
करोतु मे महाशान्तिं ६.१७
करोतु मे महाशान्तिं ६.१७६
करोतु मे महाशान्तिं ६.१८०
कर्कटो वृश्चिको मीना ६.१५६
कर्णयोरश्विनीदेवौ ८.७६
कर्तव्यं नरनारीभिः १०.१२०
कर्तुरप्यधिकं पुण्यं १२.१२४
कर्पूरागरुतोयेन यो ५.३१
कर्मक्षयादिहागत्य १०.१५८
कर्मशाठ्येन यः कुर्यात् ५.२०९
कल्पकोटिशतं दिव्यं ८.४३
कल्पकोटि सहस्राणि ५.७९
कल्पकोटिसहस्राणि ८.१०६
कल्पकोटिसहस्रेषु ५.१६
कल्पकोट्युतं साग्रं १०.२१३
कल्पान्ते च समुत्तीर्णा ८.१२३
कल्पान्ते यस्य लिङ्गस्य ३.२३
कल्पायुतशतं दिव्यं ५.१६२
कल्पायुतसहस्राग्रं ५.१७२
कल्पायुतसहस्राणि ५.१६४
कवकद्वयं च सौवीरं १२.७
कवाटद्वारकुड्यान्तं ५.१३३
कांस्यलोहमयीं वापि ५.१७७
कामतोऽपि कृतं पापं १०.१३१
कारयेच्चित्र शास्त्रज्ञैः ४.४६
कारुण्यात्सर्वनारीणां १०.११९
कार्तिके रुद्रनामानं १०.३४
कार्यातिपात संरोधाद् ११.८
कालञ्जरं शङ्कुकर्णं १२.६०
कालात्पुनरिहायातः ११.७५

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

किङ्किणीरवकोपेतं ५.१६९
किञ्चिद्वेदमयं पात्रं ४.११
कीर्तयिष्यन्ति ये रुद्रं १.१६
कुङ्कुमच्छविभा ६.११९
कुर्यादावसथं सौम्यं १२.११०
कुर्वन्तु शान्तिं जगतः ६.२४४
कुलत्रयं समुद्धृत्य १२.४९
कुलत्रयं समुद्धृत्य १२.७५
कुलीनां कपिलां दत्वा ८.५०
कुलैकविंशमुतार्य ११.३०
कुशापामार्गकुमुद ५.१०१
कुशोदकेन यो लिङ्गं ५.२६
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा ५.२२३
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा ७.८६
कृताञ्जलिपुटो विष्णुः ३.२८
कृत्तिकोमाग्निरुद्राङ्ग ६.१२
कृत्वा गृहं मठं वापि १०.२०१
कृत्वाऽऽरामन्नपानादि ५.२१०
कृत्वा वायतनं मध्ये १०.१०२
कृत्वा शिवालये य प्रान्ते ५.१९३
कृशापूतरुकृत्ये वा ३.८५
कृष्णगोमिथुनं चात्र १०.५५
कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां ७.७
कृष्णागरूद्भवो धूपः ५.१३२
कृष्णागरोर्विशेषेण ५.६१
कृष्णायसमयं लिङ्गं ३.४३
कृष्णाष्टम्यां घृतस्नानं ५.१७
कृष्णाष्टम्यां तु नक्ताशी १०.९
कृष्णाष्टम्यां प्रयत्नेन १०.२२
केतकी माधवी चैव ५.८३
केनचिच्छिवभक्तेन ८.१२४
कैलासव्रतमित्येतद् १०.१६२
क्रमादागत्य लोकेऽ- १०.२१९
क्रमादागत्य लोकेऽ-१०.११४
क्रमादागत्य लोकेऽ-१०.१६८
क्रमान्मोक्षं गमिष्यन्ति ७.३६
क्रमाल्लोकमिमं प्राप्यं १०.१७९
क्रीडमानोऽपि यः कुर्याद् ४.२६
क्वचित्कलशविन्यस्तां ४.४४
क्वचिद्रच्छन्यदा पश्येत् १२.२
क्षणार्धेनापि यत्पुण्यं ७.८१
क्षमा सत्यं दया दानं १०.१४२
क्षमादानं तपः सत्यं ११.९४
क्षरन्ति सर्वदानानि ४.३६
क्षितिं गाश्चैव रत्नानि ७.४६
क्षितेःपतिर्वरयो देवः ६.२८
क्षीरोदनं प्रभुञ्जानः १०.८९
क्षुत्पिपासातुरं शान्तं ११.७३
खण्डं स्फुटितं संस्कारं ४.५१
गच्छेच्छिवपुरं दिव्यं ५.१०९
गच्छेत्सोऽपि शिवं लोकं ५.१५९
गजचर्मरत! स्वामिन्! १२.१३०
गणमाताम्बिका त्र्यक्षा ६.२०
गणानां देवमुख्यानां १.१२
गत्वा तु पुरुषः श्रीमान् १२.६३
गत्वा शिवपुरं दिव्यं १०.२२६
गत्वा शिवपुरं दिव्यं १०.८३
गत्वा शिवपुरं दिव्यं १०.९४
गन्धचन्दन तोयेन ५.२७
गन्धमाल्यैश्च पुष्पैश्च १०.१८४

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

गन्धर्वराजपतिना १०.१११
गन्धलेपविहीनोऽपि ११.४१
गन्धहीनमपि ग्राह्यं ५.८६
गन्धोदकेन सम्मिश्रं ५.४६
गभस्तिमाली भगवान् ६.११६
गर्भबालग्रहा ये तु ६.२४१
गर्भिणी लभते पुत्रं ६.२५६
गवां शृङ्गोदक स्नानात् ८.५८
गवामयुत दानस्य ५.९८
गावो देयाः सदारक्ष्याः ८.६२
गिरिकन्दरदुर्गेषु ६.१११
गिरिकन्दरदुर्गेषु ६.२१८
गिरिकन्दरदुर्गेषु ये ६.१८७
गिरिशृङ्गेषु तुङ्गेषु ७.४०
गीतनृत्तादिभिर्वाद्यैः १०.१९५
गीतनृत्तोपहारेण ८.५
गुडखण्डाज्य सम्मिश्रं ५.१४५
गुडाज्यमिश्रं पिण्याकं १०.१३८
गुरौ च शिवभक्तेषु १२.१९
गुह्यानि यानि तीर्थानि ६.१९९
गोपतिं धूर्वहं वाऽपि ८.४८
गोभिर्वेदास्समुत्कीर्णाः ८.७३
गोमती चाऽपि कावेरी ६.१९२
गोसहस्रफलं तस्य ९.२२
गोष्ठशायि शिवध्यायी १०.६६
ग्रहणे विषुवे चैव ८.८
ग्रामखेटपुराणां च २.१३
घण्टाकर्णगणोपेतः ८.९४
घृताभिषेकं यः कुर्याद् ८.४
घृताभिषेकं यः पश्येत् ८.९
घृताभ्यङ्गे घृतस्नाने ५.४२
घृतेन पाचितानां तु ५.१४७
घृतेनैव चतुर्दश्यां ५.१५४
चतुर्थी च महापुण्या ६.१३३
चतुर्थीत्वष्टमी चैव ६.१२९
चतुर्दशीमनःस्थेन ६.१३६
चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां १०.१
चतुर्दश्यामथाष्टम्यां १०.५८
चतुर्दश्याममावास्यां ७.२१
चतुर्मुखश्चतुर्बाहुः ६.५
चतुर्युगसहस्रान्ते स ८.१०७
चतुर्विधेन चरुणा १०.१७३
चतुर्वेदिगृहे जन्म ५.१२२
चतुष्कलं कलातीतं १२.१४७
चत्वारः सागराः पूर्णाः ८.८४
चन्दनागरुकर्पूरैः ५.६२
चन्द्रभागा महापुण्या ६.१९५
चन्द्रस्यभानोरुत्पन्ना ६.१३९
चन्द्रार्धं मस्तके यस्य ६.२३४
चरे सदावसत्येव ३.६३
चातुर्मास्यकृतं पुण्यं ७.२०
चामरासक्तहस्ताग्र ५.६७
चामुण्डा चण्डरूपेण ६.५०
चारुकाञ्चनमालाभिः ६.२१६
चारुचामीकरच्छाया ६.११३
चारुभोगकृताटोपो ६.१७३
चैत्रे च स्थाणुनामानं १०.२७
चैत्रे भवकुमारं च १०.१५६
चैत्र मासे शुभे प्राप्ते १०.६२
छत्राभिरामनाट्याद्यं ८.२१

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

जङ्गमस्यावमानेन ३.६५
जगदोमिति यद्भूते ७.४८
जगद्व्याप्यावतिष्ठन्त्यो ६.५३
जठरे लीयते सद्यः जगत् ३.२५
जनोलोके च ये देवा ६.१०७
जय जातविशुद्धाय ६.२५३
जय दानैकशूराय ६.२४६
जय देवादिदेवाय ६.२५०
जय निर्मितलोकाय ६.२४९
जय प्रकटदेवाय ६.२४७
जय मन्मथनाशाय ६.२५२
जयाधाराय देवाय ६.२५१
जय वाक्य विशुद्धाय ६.२४८
जलस्नानं पलशतं ५.४१
जागरं गीतनृत्ताद्यैः ८.२०
जाती विजयराजार्क ५.११९
जातेनात्मरुद्रुहा ये न १.१८
जाम्बूनदमयैर्यानैः १०.१२३
जिह्वा चपलभावेन ३.१५
जिह्वा चापलभावेन ३.९८
जीवेद्वर्षशतं साग्रं ६.२६५
ज्येष्ठमासे शुभे प्राप्ते १०.७०
ज्येष्ठे पशुपतिं पूज्य १०.२९
ज्वलद्भिः स महायानैः ८.७
ज्वालाभिर्मोहितो ३.६
ज्वालामालावृतं दिव्य-३.५
ज्ञानयोगं समासाद्यं ५.१६०
ज्ञानयोगतपोजप्य ११.९२
ज्ञानविज्ञानशुद्धा ७.८९
ज्ञानवैराग्ययुक्तस्य १२.३५
ज्ञानात्प्रवर्तते योगो १०.११८
डाकिन्यो विविधाकारा १.४०
तच्छेषं दधिभक्तेन ५.२००
तण्डुलाढकपिष्टेन १०.१५९
ततः प्रभृति ब्रह्माद्याः ३.२१
ततो निर्धूत पापास्ते ८.१२५
तत्तद्गुणवते देयं १२.४५
तत्त्वार्थवेदिकोटिभ्यः १२.४०
तत्पुण्यं कोटिगुणितं ६.२६३
तत्फलं कोटिगुणितं १२.७७
तत्फलं कोटिगुणितं ७.७५
तत्फलं लभते सर्वं ११.३२
तत्फलं लभते सर्वं १२.११
तत्फलं लभते सर्वं १२.४२
तत्सर्वं कोटिगुणितं १०.१९४
तत्सर्वं शिवना(? र)थे १०.२११
तत्र ज्वालापरीताङ्गा ६.८५
तत्र धूम्रेण देहेन कृष्णः ६.९५
तत्र मौक्तिकसङ्काशः ६.१०२
तत्र मौक्तिकसङ्काशः ६.९२
तत्रस्थोऽपि नमस्कृत्वा १२.६
तत्रोषित्वा महाभोगे ४.२९
तदन्ते स चतुर्वेदं ४.३८
तदन्ते सा महाभागो १०.१०७
तदर्धं सलिलस्यापि ५.१४८
तदादौ पृथिवी ज्ञेया १०.२३०
तदेव जयशब्दस्य ८.४६
तद्य नमः शिवायेति ७.६०
तन्नदीष्वयुतं पुण्यं १२.८२
तन्मालया सदाह्व(द्ध)स्ते १२.१०४

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तपःशील गुणोपेते ५.७१
तपोलोके च ये देवाः ६.१०६
तप्तचामीकरच्छायः ६.१२०
तयोः सम्पूजनाद्भक्त्या ५.११७
तयोर्दर्पापहारार्थं ३.४
तयोऽस्तुष्टौ महादेवो ३.२०
तर्जयन्ती सदा विघ्नान् ६.४४
तस्माच्छ्राद्धे विशेषेण १२.७८
तस्मात्तत्रैव संयोज्या ८.५२
तस्मात्त्रिभाग वित्तस्य ४.१७
तस्मात्पर्वसु यत्नेन ७.१३
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन ३.१७
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन ३.१००
तस्मादावसथं कुर्या-५.२१५
तस्मादुपदिशेद्धर्मं १२.१२७
तस्मादेकमना भूत्वा ३.५२
तस्मादेतत्समुत्पन्नं ७.५४
तस्माद्गावो न हिंस्यात्तु ८.८७
तस्माद्वारुणमुत्सृज्य ११.३१
तस्मान्मान्यश्च पूज्यश्च १२.८०
तस्मालिङ्गं प्रतिष्ठाप्य ३.२७
तस्य गावो वृषो विष्णुः ८.६७
तस्य चित्तं महच्चित्रं १.१९
तस्य पात्रस्य माहात्म्याद् ४.१३
तस्य रोगा न बाधन्ते ६.२६०
तस्य सिध्यन्ति कर्माणि ११.१२६
तस्यां न संस्पृशेल्लिङ्गं १२.१७
तस्याद्विप्राश्च गावश्च ८.७२
तस्यान्ते देवराजत्वं ८.१८
तस्यान्ते धर्मशेषेण ५.१३६
तस्यान्ते स महीपालो ५.१५३
तस्याप्यर्थपयोरस्तु १२.१३८
ताडयेद्यस्तु गां मोहात् ८.६४
तानि साक्षात्प्रगृह्णाति ५.११८
तान्सर्वान्शीघ्रमाप्नोति ६.२५७
ताम्रकांस्यादिपात्रे वा १०.१४८
ताम्रपात्रेऽर्घ्यदानेन ५.५०
ताम्रलिङ्गं सदाकालं ३.४०
तारकोऽग्निमुखो दैत्यः ६.१६५
तावत्पत्रैः फलैः पुष्पैः ५.५८
तावद्भ्रमन्ति संसारे ४.४१
तावद्युग सहस्राणि ५.१८९
तावद्युग सहस्राणि ८.४९
तावद्युगसहस्राणि १२.८७
तावद्युगसहस्राणि ५.१४०
तावद्युगसहस्राणि ५.१५६
तावद्वर्ष सहस्राणि ५.१२१
तावद्वर्षसहस्राणि १०.२१८
तावद्वर्षसहस्राणि ५.१४६
तिस्रो मात्राः शिवस्यैताः ७.५२
तुलसीकुरवांकोल ५.१०५
तुल्यं गोशतदानस्य ८.६०
तुल्यमेव फलं प्रोक्तं ५.५६
तेजसा चाति सप्तेन ६.१७५
तेजसा तस्य देवस्य ६.२२७
तेजसा तस्य देवस्य ६.२३१
तेजसा तस्य देवस्य ६.२३७
तेजसा तस्य देवस्य ६.२४०
तेजसा तस्य देवस्य ६.२४३
तेजोनिधिश्च यश्चेदं १२.१३७

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

तेजोराशिर्विमानस्थः ५.१५५
तेऽपीह तत्समा ज्ञेयाः ७.७२
तेमसर्वमररैरिष्टं तेन ११.१११
तेषां ददाति विश्वेशो ५.१७५
तेषां मध्ये समुत्थाय १.४
तैरेव सार्धं विप्रेन्द्रैः ८.२८
त्वमतीव शिवभक्तः ३.१
त्वरितं व्याधिरभ्येति ५.२१९
त्रपुसीसमयं लिङ्गं ३.४४
त्रयो गुणास्त्रिवर्गाश्च ७.५३
त्राणार्थं सूक्ष्मतन्तूनां १२.८८
त्रिःसप्तकुलमुद्धृत्य ५.२१७
त्रिःस्नानं चाग्निहवनं १०.९५
त्रिनेत्रशूलपाणिश्च १०.४८
त्रिमूर्त च महायोगिन्! १२.१३१
त्रिशूलवज्र शङ्खाब्ज ५.२
त्रिसन्ध्यं योऽर्चयेद्बिम्बं ३.७३
त्रिसप्तकुलजैः सार्धं १०.२२४
त्रिसप्तकुलजैः सार्धं १०.५०
त्रिसप्तकुलजैः सार्धं ११.१२८
त्रिसप्तकुलमुद्धृत्य १०.२१२
त्रिसन्ध्यमर्चयेदीशं ११.६
त्रिसन्ध्यमाचरेन्नित्यं ११.२९
त्रिस्नानपूजां संयुक्तः ११.५३
त्रैलोक्यनमितः श्रीमान् ६.६
त्रैलोक्यमपि यो ११.९९
त्रैलोहिकं सदालिङ्गं ३.४५
दग्ध्वाज्येन तु सम्मिश्रं ५.१३०
दत्वोपवीतं रुद्राय ५.१३८
दद्यात्पश्चिमभागे तु ३.७८
दद्याद्गोमिथुनं घो(? गौ)रं १०.७५
दद्याद्गोमिथुनं चात्र १०.६३
दद्याद्गोमिथुनं भक्त्या १०.६०
दद्याद्भूमिं जलोपेतां १२.४६
दधिभक्तमयं लिङ्गं ५.१९७
दध्यन्नपानरवानाद्यैः ८.१५
दन्तेषु मौक्तिकं तस्य ८.२४
दर्पणैर्ध्वजमालाभिः ५.१९९
दशकोटिसहस्राणि ५.४४
दशमी यमसंयुक्ता ६.१३५
दशापराधं तोयेन ५.३९
दातुरप्यधिकं पुण्यं १२.१२६
दानोपवासनियमैः ७.११
दारुवेण्वर्घ्यं पात्रेण ५.४९
दारिद्र्यार्णवनिर्मग्नं ११.७७
दास्यन्ति च सदानित्यं ८.६८
दिव्यवर्षसहस्राणि १०.७
दिव्यस्त्रीभोगसंयुक्तं १२.९२
दिव्यस्त्री सुखसम्भोग ५.११३
दिव्याम्बरधरा देवी ६.८
दीक्षितान्व्रतिनश्चैव १०.१९१
दीनान्धकृपणानां च १०.२०८
दीप्तभोगकृताटोपः ६.१८५
दीप्तानामपि दीप्ताय ७.९३
दीप्ताय दीप्तरूपाय ७.९४
दुकूलपट्टदेवाङ्गैः ५.१८८
दुर्लभं प्राप्य मानुष्यं १.२०
दूरतः शिखर दृष्ट्वा ४.३०
दृष्ट्वायतनमासाद्य १२.४
दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं ११.४७

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

देवब्रह्मस्वपुष्टानि ८.१२०
देवस्वानि हरन्तीह ८.११९
देवाकार्यं समुद्दिश्य ५.१३
देवाग्न्यतिथिभैक्षार्थं ११.१२
देवानामऽपि देवाय ७.८८
देवार्थं पचनं येषां ११.१३
देवी देवत्वमापन्ना ९.१७
देवेन्द्रः सततं हृष्टः ६.८२
देवैर्यु(?भु)क्तं तु पूर्वाह्ने १०.१९
देवैश्च सेवितं तोयं द्वितौ १२.५४
देहान्ते च महाभोगैः ११.१०६
दैत्यगन्धर्वसिद्धाद्यान् १०.१८७
दोषैः कृतैर्नलिप्येत ७.३७
द्वयोर्मासस्य पञ्चम्योः १०.५
द्विगुणं तण्डुलानां तु ८.३१
द्विजाय वेदविदुषे १२.४८
धनमायुर्यशोविद्या-१.४४
धनुश्चक्रप्रहरणा ६.२२
धर्मार्थकाममोक्षं १०.११५
धर्म्मश्रीशुक्रनक्षत्र-९.३
धवल सूत सुधया ४.५०
धूपं कृष्णागरुं दद्यात् ९.१३
धूपितानि शिव दद्याद् ५.१३९
धूम्रदेहयुतः क्रूरः ६.१२५
धृतराष्ट्रो महातेजाः ६.२११
ध्वङ्सनं सर्वदुःखानां ११.२८
ध्वङ्सनि सर्वदुःखानां ११.२६
ध्वजशङ्ख्यादिविभवैः १०.१०३
नक्तमब्दं प्रकुर्वीत १०.९८
नक्षत्रामन्तरो ह्येताः ६.१४२
नगेन्द्रं मेरुनामानं १०.१८६
न तच्छक्यं गृहस्थेन १२.३२
न तत्तपोभिरत्युग्रैः न ४.२०
न तस्य नागाहिंसन्ति ६.१९०
न तस्य शक्यते वक्तुं ७.७०
न ते भूयः प्रयास्यन्ति ७.३५
न दीना नापि मलिना ४.७
नन्दिना दण्डिना चाऽपि ८.९३
न पाणि पाद वाक्चक्षु ४.८
नमस्कारात्म यज्ञेन ७.५५
नमस्कारादि संयुक्तं १.३७
नमस्काराभिवादेषु ११.८७
नमस्कारे तथा तेषां २.१६
नमस्कृता महादेवं ५.१६६
नमस्ते भगवन्दीप्त! ७.११७
नमस्तेऽस्तु महायोगिन्! ७.११४
नमस्तेऽस्तु महारूप! ७.११५
न मे प्रियश्चतुर्वेदी १.३०
नरनारीगणाकीर्णैः १०.१९६
न लङ्घ्यीत निर्माल्यं १२.१३
न विषं क्रमते देहे ६.२६१
न शक्यो विस्तराद्वक्तुं ११.१२७
नाकाले म्रियते राजा ७.७३
नागदन्तमयं वापि १२.८३
नातः परं प्रपश्यामः ११.१०१
नात्यन्तफल कष्टा १.७
नानागणसमाकीर्णा ६.१०१
नाना नागपरीताङ्गी ६.४९
नानार्थतत्त्वकोटिभ्यो १२.३९
नानावर्णश्च कुसुमै ५.३

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

नाभिचारकृतैर्दोषैः ६.२६२
नारुद्रः संस्मरेद्रुद्रं १.२५
नार्चयेद्यः सदात्मस्थं १.३२
नाश्रयेत तथा रुद्रो १२.१६
नास्ति रुद्रसमो देवो ४.५२
नास्ति लिङ्गार्चनादन् ३.५५
नाहारवशजीर्णाया ४.३२
नित्यं शिवकथासक्तो ११.६२
निरञ्जन! निराधार! ३.१४
निरञ्जन! निराधार! ३.९७
निर्गन्धान्युग्रगन्धानि ५.८५
निर्द्धूतमलदेहाय ४.५४
निर्द्वन्द्वं निर्मलं साक्षात् १२.१४६
निर्मलैः क्षान्ति सलिलैः ११.९६
निर्वाणपरमातीत! १२.१४०
निवृत्तः सर्वरागेभ्यः ११.१९
निवेदयीत शर्वाय १०.१७७
निवेदयीत यो नागं ८.१०४
निवेदयेत शर्वाय सोऽश्व-५.१४३
निवेदयेन्ममात्मानं ७.५७
निवेद्य शिवयोगिभ्यः १२.९०
निवेद्य शिवयोगिभ्यः १२.९१
निशाकरकरप्रख्यैः १०.८२
नीराजनौषधीबीजा २.३
नीलकण्ठाय शर्वाय ४.५५
नीलाञ्जनसमः श्रीमान् ६.१२४
नीलोत्पल सहस्रेण ५.७८
नेत्राणान्तु सहस्रेण ६.८१
नैर्ऋते तु दिशाभागे ६.९१
नैर्ऋत्यां च समिद्देशं ११.५
नैरञ्जना नाम नदी ६.१९७
नैरन्तर्येण यः कुर्यात् ४.३७
नैरन्तर्येण यो मासं ५.४०
नैरन्तर्येण षण्मासं ७.१४
नैरन्तर्यैण मासार्धं तस्य ५.१२३
नैव तत्काञ्चनं रौप्यं ३.१९
नैवेद्यं यावक प्रस्थं १०.४४
न्यायेनोपार्जयेद्वित्तं ११.१६
पक्षयोरष्टमीं यत्नाद् १०.४२
पञ्चगव्यं सकृत्पीत्वा ७.८
पञ्चगव्यपयःस्नाने २.४
पञ्चबिन्दुकृताभासो ६.१७९
पञ्चाशद्गुणितं पुण्यं ७.२६
पञ्चाष्टकमिदं ज्ञेयं १२.६८
पतित नरोऽपि यतस्मिन् ५.२१४
पतिताः शस्त्रसङ्कीर्णाः ११.७८
पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे १.३१
पत्राणामप्य लाभे तु ५.९२
पद्मरागप्रतीकाशैः १०.६१
पद्मरागनिभेनाऽपि ६.११७
पद्मरागप्रभा देवी ६.३४
परं ग्रन्थ शरीरं च ३.२२
परमं सर्वधर्माणां १.११
परमेशाय सिद्धाय ८.९६
परमेशार्चनरताः शान्तिं ६.७३
परमेश्वरपूजां च १२.२१
पराय परमेशाय ४.५६
परापरं परं शान्तं १२.१३९
परापर विमुक्ताय ७.९१
परावर! परातीत! ३.९४

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

परावरपरातीत! उत्पत्ति-३.११
पर्यन्तं शोभितं कृत्वा ५.१६३
पर्वताः सर्वतः सर्वे ६.२२२
पवनः परमो देवः ६.९६
पश्चात्परापराणीय ७.६६
पश्यन्परिहरञ्जन्त्र(न्तृ!) ४.३१
पांसुना क्रियमाणोऽपि ३.८७
पाटलोत्पल पद्मानि ५.२९
पातले भूतले प्रेता ये ६.२३९
पाताले भूतले याश्च ६.२३०
पाताले भूतले ये तु ६.२३६
पाद्यार्घ्याचमनीयानि १०.१४
पापं प्रणश्यते यस्मात् ८.५६
पापकञ्चुकमुत्सृज्य १२.२४
पापे रमन्ति पापिष्ठा ११.१०४
पायसं घृतसंयुक्तं ९.१४
पालाशेनैव दण्डेन ८.६५
पितृमुद्दिश्य यो लिङ्गं ५.३३
पीतश्यामाऽति सौम्येन ६.७
पीतानुलेपनैर्माल्यैः १०.१२६
पीत्वा शक्त्या च गोमूत्रं १०.२३
पुण्यं तदेव फल्गुन्यां ७.१७
पुण्यं नगरदानस्य ८.११५
पुण्यक्षयात्क्षितिं ३.८३
पुण्यात्मिकाष्टकमिदं १२.६७
पुण्योत्सर्वेषु सर्वेषु १०.३९
पुष्टिं बलं तथा वीर्यं ६.१६६
पुष्पजाति विशेषेण ५.७४
पुष्पमालापरिक्षिप्तं ४.२७
पुष्पमालापरिक्षिप्तैः ५.१०७
पुष्परागप्रभैर्यानैः १०.६४
पुष्पोदकेन सावित्र्यं ५.२८
पुष्पैरारण्य सम्भूतैः ५.६९
पुष्यमासेतु सम्प्राप्ते १०.४१
पुष्ये मासे शुभे प्राप्ते १०.१४७
पुस्तकं तद्गुरोः स्थाप्य १२.११४
पूजनोक्तविशेषैश्च २.९
पूजयन्ति शिवं भक्त्या १०.२००
पूजयित्वा यथान्यायं ११.६४
पूजयेत्सर्वदेवांश्च १०.१९०
पूजितस्तैः शिवः साक्षात् १०.१५
पूज्यानामपि पूज्याय ७.९२
पूर्णभद्रो महायक्षः ६.२१३
पूर्वं तु भासयन्त्येते ६.१५२
पूर्वभागे स्थिता ह्येताः ६.१४३
पूर्वमेकार्णवे घोरे ३.२
पूर्वस्माद्द्विगुणं पुण्यं ५.१५७
पूर्वाभ्यासेन तेनैव ८.४०
पूर्वोक्त च विधिं कुर्याच्-१०.९०
पृथिवीं भाजनं कृत्वा १०.४
पृथिव्यां यानि तीर्थानि ८.१
पौर्णमास्याममावास्यां १०.१३४
पौर्णमास्यामवास्यां ७.६
पौर्णर्मास्यां च पूर्वोक्तं १०.७२
पौर्णमास्यां तु वैशाख्यां ८.३७
प्रच्छाद्योपरिपद्मेन ८.३५
प्रणम्य भक्त्या देवेशं ९.१५
प्रतिपद्वह्निसंयुक्ता ६.१३२
प्रतिमासं प्रवक्ष्यामि १०.४०
प्रतिश्रयप्रदानेन हैमं ११.७०

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रत्यब्धं यः प्रकुर्वीत ४.४९
प्रत्युत्थायाभिगमनं ११.८४
प्रदक्षिण नमस्कार २.११
प्रदक्षिणीकृता तेन ८.५५
प्रदेशासम्भवे कुर्यात् ११.४
प्रभूत तोयेषु बृहत्तृणेषु ८.१०१
प्रवालकमयं लिङ्गं ३.४२
प्रहरं तिष्ठते जातिः ५.८८
प्राजापत्यमवाप्रोति १०.१०९
प्रातः स्नात्वाम्भसा १२.२३
प्रातरुत्थाय यो लिङ्गं ७.२८
प्रातरुत्थाय सततं ८.९९
प्राप्ताय शिवभक्ताय ११.६५
प्राप्ताय शिवभक्ताय ११.६६
प्राप्ते चाश्वयुजे मासे १०.८४
प्राप्ते भाद्रपदे मासे यः १०.८०
प्राप्रोति परमं स्थानं ८.७०
प्राप्रोति सर्वभोगाढ्यं १०.१७६
प्रियश्च गुग्गुलर्नित्यं ५.१२९
प्रिया ह्येषा तु परमा ६.१३१
प्रीते शिवे तु ते सर्वे १२.२८
प्रेक्षणीयै प्रदानैश्च १०.२०७
फलं कोटिं सुवर्णस्य ५.५४
फलं क्वथित विद्धं ५.९१
फलमेवं समासेन ५.११५
फलोदकेन यो लिङ्गं ५.२३
फाल्गुने प्रतिमां पैष्टीं १०.१५३
फाल्गुन्यां तु महादेवं १०.२६
बकपुष्प सहस्राणां ५.७६
बलावष्टम्भयुक्तात्मा १२.९५
बहुयक्षसमाकीर्णो ६.२०६
बहुरूप! महारूप! ३.९५
बहुरूप! महारूप! ३.१२
बहुलौहमयं लिङ्गं ३.४६
ब्रह्मचर्येस्थितं सत्यं ११.१२०
ब्रह्मचारिण एतेऽपि ११.१२४
ब्रह्मचारि सहस्रेभ्यो ७.७७
ब्रह्मचारी शुचिर्भूत्वा ७.१०
ब्रह्मणा ब्रह्मशब्देन ८.८८
ब्रह्मणा विष्णुना देव्या ९.२
ब्रह्मघोषैस्तथा पुण्यैः १०.१८५
ब्रह्मलोकं समासाद्य १०.१०८
ब्रह्मशब्देन दिव्येन ६.३१
ब्रह्माणी सौम्यवदना ६.३५
ब्रह्मा पूजयते नित्यं ३.३०
ब्रह्मा ब्रह्माक्षरैर्दिव्यैः ३.२९
ब्रह्माहरिश्च रुद्रश्च ७.४९
ब्रह्मेन्द्रविष्णुवन्द्याय ४.५९
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः ११.२
भक्तिरष्टविधा ह्येषा १.२९
भक्त्या निवेद्य रुद्राय ५.६४
भक्त्या प्रचोदितः कुर्याद-४.१८
भक्त्या भोज्यैरशेषैश्च १०.१००
भक्षणान्नरकान्गच्छेत् १२.१४
भक्ष्यभोज्यैरशेषैश्च १०.२१७
भक्ष्यभोज्यैरनेकैश्च ३.७७
भक्त्या वित्तानुसारेण ४.१५
भगवन्सर्वधर्मज्ञ! शिवधर्म १.५
भरणी च महावीर्या ६.१५०
भवनानि मनोज्ञानि १.२२

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

भवन्तु मे श्रियै नित्यं ६.१३०
भवभक्तिपरा ये तु १.२१
भवभक्ति सुपूतात्मा १०.८
भवभावसमायुक्तः ७.७६
भवेत्क्षितिपतिः श्रीमान् १२.९७
भवेत्साधर्म्यवैधर्म्यात् १२.३०
भवेद्भक्तिविशेषेणः १२.१०२
भस्मस्नानं निषेवेत ११.३३
भस्मस्नानेन यत्पूर्वं ११.४२
भावनामात्र सन्तुष्टा ६.९
भिन्नाञ्जनं समच्छायः ६.१२३
भुंक्ते प्रीणन्ति ते तस्मा-१२.४१
भुक्त्वा च बान्धवैः १०.२०९
भुक्त्वा तु विपुलान् १०.२२२
भुक्त्वा तु विपुलान्भोगान् १०.१४९
भुक्त्वा भोगान्यथा- १०.१६७
भुक्त्वा शिवपुरे भोगां-५.१२४
भुङ्क्ते समुद्रपर्यन्तां ५.१७६
भूतलात्सकलान् ३.७०
भूतले ये पिशाचाश्च ६.२३३
भूतानां मातरः सर्वाः ६.५२
भूतिशासनसंयुक्तः ११.३७
भूपाताले ग्रहा ये ६.२४२
भूमिरत्नाश्च नागानां १२.१२५
भूमिशायी तु मासान्ते १०.४३
भूलोकेऽथ भुवर्लोके ६.१०४
भोगार्थी लभते भोगान् ७.१२०
भोजनं घृत सम्पूर्णं ८.३०
भोजनं शिवभक्तानां १२.२५
भोजयेच्छान्तमनसं १२.२९
भोजयेच्छिवभक्तांश्च ८.२७
भोजयेद्यस्तु विद्वांसं १०.१२
भ्रामयित्वा शनैः (? ततः) १०.२०६
मणिदण्डमवच्छत्रं ५.१७३
मण्डनं मौक्तिकं श्रीमान् ५.१८६
मत्कथाश्रवणे भक्तिः १.२८
मद्भक्तजन वात्सल्यं १.२७
मद्यमांस प्रसक्तानां १२.१०
मधुस्नानेन यत्प्रोक्तं २.५
मध्यमं च महाकालं १२.६४
मध्ये केसरजालस्य ९.१०
मध्यं दिनगते सूर्ये ७.२९
मनुजैः स्थापिते लिङ्गे ५.२१३
मनुर्दक्षो वसिष्ठोऽथ ६.१५९
मन्त्रमाहशिवः साक्षात् ७.६४
मन्त्राष्टशतजप्तेन ५.३२
मन्वन्तरसहस्रं तु ५.१७०
मया चेशप्रसादेन ९.८
मयूरवाहना देवी ६.३९
मयूरव्यजनं दत्वा ५.६५
मर्मास्थिप्राणहृदयं ११.९३
मलोत्सर्गं च यः कुर्यात् ८.६६
महतीं श्रियमाप्नोति ८.६९
महर्लोके जनालोके ६.१०९
महर्लोके च ये देवा ६.१०८
महाघोरविषं हत्वा ६.१८४
महाचित्रैः ध्वजैश्चित्रैः ८.१२
महाज्ञान! परातीत! १२.१४५
महाध्वजाष्टकं वापि ५.१७१
महाजम्भो हयग्रीवः ६.१६८

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

महान्वैश्रवणोदेवः ६.२००
महापद्मविमानेन १०.१३२
महापापविषं हत्वा ६.१७२
महाभोगाकृताटोपः ६.१७१
महाभोगीन्द्रभूषाय ४.५७
महामहिषमारूढः ६.८९
महायानैरसङ्ख्यातैः १०.२२५
महायोगधरो यश्च १२.१३६
महारथोपमैर्यानैः १०.१५१
महाविभव सम्पन्नो ६.२०१
महाव्रताष्टकं कार्यं ११.५५
महासरांसि यद्दत्वा १२.८९
महासिंहकृताटोपैः १०.९१
महीभृत्स्वर्गसोपानं ११.८१
महोदया नाम पुरी ६.९७
महोलोके च ये देवाः ६.१०५
माघ मासे शुभे प्राप्ते १०.५३
माघमासे समुद्युक्तः ७.१८
माघे माहेश्वरं नाम १०.२५
माणिभद्रो महायक्षो ६.२०२
मातृतः पितृतश्चैव ३.६९
मानसं ध्यानमात्रेण ११.४५
मार्गशीर्षे शुभेमासे १०.१४४
मार्दवार्जव सम्पन्नाः ४.३
मालाभिर्वासु घटितैः ५.९५
मासान्ते च रथं कुर्यात् १०.२०३
मासार्धमपि यो ७.२७
मासार्धं मात्र(! धूप)दानेन ५.१२५
मासे चाश्वयुजेऽष्टम्यां १०.३३
मासेनाद्याद्यथाकालं १२.५३
मासे भाद्रपदेऽष्टम्यां १०.३२
मासे मासे तु योश्नीयात् ७.२३
मासैश्चतुर्भिर्यत्पुण्यं ७.१६
माहेश्वर परं सर्वं त्रैलोक्यं ३.५७
माहेश्वरस्य भक्तस्य ११.६१
मिथुनश्च तुलाकुम्भौ ६.१५५
मुक्तादाम वितानेन ४.२८
मुक्तापुष्पार्चने यच्च २.८
मुक्ताफलमयं लिङ्गं ३.४१
मुखे चावहनीयोऽग्निः ८.८५
मुखे यस्या स्थितो मृत्युः ६.१२७
मुखवाद्येन यत्पुण्यं ८.४५
मुचुकुन्दः सुकुन्दश्च ६.१६९
मृगशीर्षा शिवेभक्ता ६.१४१
मृण्मयात्कोटिगुणितं ४.२२
मृताः प्रयान्ति तत्रैव १२.६१
मृत्कुम्भात्ताम्रकुम्भेन ५.३६
मृदुरक्तं कषायेण १२.८६
मृद्दारुर्विष्टकशैलं वा ४.२१
मृद्भस्मगोमयात्पिण्डैः ३.८४
मृद्भस्माधार पात्राणि १२.७९
मेरुपृष्ठ समासीनं १.३
मेरुमन्दरमात्रोऽपि ७.३४
मेधावी सुभगः श्रीमान् ८.३४
मैथुनस्यासमाचारः ११.११९
मोहकञ्चुकमुत्सृज्य १०.२२७
मौनीभूतानुकम्पश्च ११.४९
यः कुर्यात्कुट्टिमं ४.४३
यः कुर्यात्पर्वकालेषु ८.११
यः कुर्यात्सकृदप्येवं १०.१९३

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यः कुर्यात्सकृदप्येवं ५.१३४
यः कुर्यात्सकृदप्येवं ५.१९५
यः कुर्यात्सर्वकार्याणि ४.३५
यः कुर्यादर्चनं मासं ७.५
यः कुर्यादिष्टकागारं ५.१९१
यः पुनः सङ्गमुत्सृज्य ७.२५
यः पुनः स्थान सङ्कल्प्यं ७.४२
यः पूजयति भक्त्या ३.५१
यः प्रदद्याद्गवां लक्षं ७.२२
यः प्रशान्तेन्द्रियग्रामः ११.१०८
यः शिवं पूजयेन्नित्यं ७.४
यः शिवब्रह्मचारी स्यात् ११.१७
यः शिवाय जलोपेतां ८.१०८
यः स्मरेद्देवमीशानं ७.६२
यः स्वार्थं वा परार्थं ११.१०७
य इदं पठते नित्यं १.३९
य इमं कीर्तयेत्पुण्यं ४.६१
य इमां पठते गोषु ८.९८
य एवं न्यायतो भक्त्या १२.११६
य कृत्वा पार्थिवं लिङ्गं ३.७२
यक्षकोटिसहस्रेण ६.२१४
यक्षलोकमनुप्राप्य १०.११२
यक्षासङ्ख्येन संयुक्तो ६.२०८
यक्षिणी यक्षकन्याभिः ६.२०४
यक्षिण्यो विविधाकाराः ६.२२०
यक्षो यक्षपतिर्देवो ६.२१०
यजेदेकं विरूपाक्षं ७.३८
यतिमात्रोपकरणं १२.१०९
यतीनां दक्षिणां दद्यात् ८.४२
यत्किञ्चित्सकृप्प्येवं ३.८०
यत्नेन कपिलां तस्मात् ८.५१
यत्पुण्यं स्थापिते २.२
यत्पुण्यमक्षयं प्रोक्तं १०.२
यत्प्रदानाद्वसेत्स्वर्गे ८.१२१
यत्सन्धार्य जगत्पुण्यं ५.१९०
यत्र क्वचित्सुखं दिव्यं १०.११३
यत्र क्वापि गतः पुण्यं ४.२४
यत्र नैवेद्य निर्माल्यं १२.१५
यत्र वा दृश्यते लिङ्गं १.१५
यत्र वा रमते बुद्धिः ७.४१
यथा कालोपपन्नेन ११.१०९
यथा माघे तथाषाढे ७.१९
यथा शिवस्तथा योगी १२.१११
यथावत्सर्वलोकेषु १०.१४०
यथासम्भवपूजाभिः ११.५७
यथेष्टमैश्वरे लोके १०.१३६
यथेष्टमैश्वरे लोके ५.१८१
यथेष्टमैश्वरे लोके १०.१०६
यदप्यन्यद्भवेत्सूक्ष्मं २.१७
यदेवपुण्यं यज्ञेन ११.४८
यद्यदस्योपयुज्यते १२.११२
यद्यदिष्टं विशिष्टं च ५.२०८
यमरूपशतानीका ६.८८
य याति नरकं घोरं ८.५३
यवान्नं पयसायुक्तं १०.९२
यस्तमर्चयते भक्त्या ७.४४
यस्तु सर्वत्र सम्पूज्य ७.४३
यस्मात्तस्मात्सदा मन्त्रं ७.५८
यस्मात्सर्वेषु भूतेषु ३.५८
या नार्युपवसेदेकं १०.१२५

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

यानैरप्रतिमैर्दिव्यैः १०.१५४
यान्त्यां नमः शिवायेति ७.५९
यान्यांश्चिन्तयते कामान् ७.१२२
याऽमावास्यां निराहारा १०.१२९
यावच्च सर्वकालेषु ७.१२
यावज्जिघ्रति तद्गन्धं ८.५९
यावत्तद्रोम सङ्ख्यानं १०.४९
यावत्पर्वाणि विधिवत् ५.७
यावदस्योपदेशेन १२.१२१
यावदाप्नोति निर्वेदं १०.११७
यावद्दण्डा भवेद्भूमि-८.१०९
यावद्धस्ता भवेद्भूमिः ४.४५
यावन्ति रुद्ररुपाणि ४.४७
यावन्त्यहानि कुरुते ५.९
यावन्नेन्द्रिय वैकल्यं ५.२२०
युक्तः षडङ्गयोगेन १२.३४
युगकोटिशतं दिव्यं १२.९८
युगकोटिशतं दिव्यं ५.१८२
युगकोटिसहस्राणि १२.८४
युगकोटिसहस्राणि ८.३३
युगायुतशतं दिव्यं ५.१८०
ये पिशाचा महात्मानः ६.२३२
ये वाञ्छन्ति महाभोगान् १.२३
ये स्थिता ब्रह्मचर्येण ११.१२१
ये स्मरन्ति सदाकालं ७.१
योगाद्दुःखान्तमाप्नोति १०.५१
यो गामलङ्कृतां दद्याद् १२.५०
योगिनामन्नदानेन ११.५२
योगैश्वर्ययुताः सर्वे ६.२१९
यो न पूजयते मोहात् ३.५०
यो न हिंसति भूतानि ११.१०३
योऽन्यदत्तां स्वदत्तां वा ८.११७
योब्दमेकं न भुञ्जीत १०.१०
यो मां सर्वत्रगं पश्येत् १.३३
योलङ्कृत्य शिवायाश्वं ८.१०२
यो लिङ्गं द्वेष्टि सम्मोहात् ३.५६
यो लिङ्गं स्थापयेदेकं ३.६८
यो लिङ्गमर्धरात्रे तु ७.३१
योऽऽश्नीयादन्नमस्नातः १२.२२
रक्ताम्बरधरः श्रीमान् ६.१८
रजस्वलादि संस्पृष्टिं १२.१२
रत्नप्राकारनिचिताः ६.८०
रत्नान्नपानगोत्वाद्यं ८.११६
रथश्चाश्वयुतं माघे १०.१५०
राक्षसाः सर्वतः सर्वे ६.२२४
रागद्वेषविहीनो यः १२.३१
राजतीं वापि वर्षान्ते १०.९९
रात्रौ चायतने वासी १०.८१
रुद्रकन्यासमाकीर्णैः ५.१०८
रुद्रध्यानैकपरमाः ६.६५
रुद्रदेव निकार्येषु ४.४०
रुद्रपादार्चने युक्ताः ६.१८८
रुद्रपूजापरो नित्यं ६.२१७
रुद्रप्रणामपरमा ६.१२८
रुद्रभक्तामहापुण्या ६.४०
रुद्रभक्त्या महावीर्या ६.३७
रुद्रवतारस्थानानि १२.५६
रुद्रवत्सर्वलोकेषु ५.१८८

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

रुद्रसद्भावसम्पन्नो ६.११८
रुद्राक्षकङ्कणं हस्ते ११.२०
रुद्राक्षधारणं तस्मात् १२.१०८
रुद्राक्षधारणात्तस्माद् १२.१०५
रुद्रात्मानो रुद्रपरा ४.९
रुद्रार्चनरता नित्यं ६.५९
रुद्रार्चन समुद्युक्तः ६.२१५
रुद्रैकादशकं पृष्ठे ८.८०
रुद्रैकाहितचेतस्काः ६.२२९
रुद्रैकाहितचेतस्काः ६.६१
रुद्रैकाहितचेतस्काः ६.६३
रूपं पिष्टमयं कृत्वा ८.२३
रोगार्तस्य शिवं कृत्वा ११.७४
रोम्णि रोम्णि सुवर्णस्य १२.८५
रौद्रं संध्याबलिं कृत्वा ५.१९६
रौप्यपात्रप्रदानेन यत् ५.५२
रौप्यपात्रेण विज्ञेयं ५.५१
लङ्घयित्वा ततो याति ५.१५२
लब्धा नरवरः श्रीमान् ८.१७
लभते कुलजं शुद्धं १०.२१४
लभेद्दीपप्रदानेन ११.७१
लम्बकैर्मुक्तादामैश्च ५.१८४
ललाटे पार्वतीदेवी ८.७५
ललाटे वाऽथ हस्ताभ्यां ५.१६१
लाभस्तेषां मनुष्याणां १.३६
लिङ्गं पिष्टमयं कृत्वा १०.१६४
लिङ्गं शीताम्बुना ५.३४
लिङ्गं हेममयं कान्तं ३.३३
लिङ्गद्वयं समाख्यातं ३.६२
लिङ्गमध्ये परं लिङ्गं ३.१८
लिङ्गमन्त्रमयं पुण्यं ३.३९
लिङ्गमित्थं प्रतिष्ठाप्य ३.६६
लिङ्गमूर्तेर्महेशस्य ५.१
लिङ्गमेवं प्रतिष्ठाप्य ३.९१
लिङ्गस्य दर्शनं पुण्यं ५.३७
लिङ्गस्यालेपनं कुर्याद् ५.५९
लिङ्गहस्तशतं साग्रं५.२१२
लिङ्गार्चन विधिं पुण्यं २.१
लिङ्गे देवो महादेवः ३.४९
लिङ्गोत्पत्तिस्तवं पुण्यं ३.१६
लिङ्गोत्पत्तिस्तवं पुण्यं ३.९९
वंश-कांस्यादिवादित्रं ५.१७९
वञ्चिको नाम यक्षेन्द्रः ६.२०७
वज्रसिद्धिव्यतीपाता ६.१३८
वरं प्राण परित्याग ३.५३
वराहघोषाविकटा ६.४३
वरुणः परमाभक्त्या ६.९३
वर्षकोटिशतं दिव्यं १०.१७८
वर्षकोटिशतं दिव्यं ५.१५१
वर्षकोटिशतं साग्रं १०.१७५
वर्षकोटिशतं साग्रं १०.१८१
वर्षकोटिसहस्रेषु ५.१५
वर्षमेकं चरेदेवं १०.३७
वर्षलक्षं महायानैः १२.१००
वर्षान्ते प्रतिमां कृत्वा १०.१२२
वर्षान्ते भोजयेद्विप्रान् १०.३५
वल्मीकाग्रादिमृद्भिश्च १०.५९
वसवः क्षणिकं लिङ्गं ३.३६
वसेच्छिवपुरे नित्यं १२.२६
वस्त्रपूतेन तोयेन यः ४.३४

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

वस्त्रपूतेन तोयेन यो ५.२५
वस्त्रयुग्मसहस्रस्य १२.९३
वस्त्रापथादि स्थाण्वन्तं १२.५९
वस्त्रापदं (!थं) महाकोटि-१२.५७
वस्त्रालङ्कार दानेन २.१०
वामाय वामरूपाय ४.६०
वायव्ये दिग्विभागे तु ६.९४
वायुः पूजयते भक्त्या ३.३५
वारुणं वारिणां स्नानं ११.४४
वारुणीमाश्रिते सूर्ये ७.३०
वाल्मीकिः कौशिकः ६.१६०
विंशत्यष्टौ च याः कोट्यो ८.१२२
विघ्नभूतास्तथा ये च ६.५६
विचित्रमेकवर्णं वा ५.१८३
वितानवस्त्रपूजायां २.१२
वित्ततृतीयभागेन ११.१५
वित्तमीश्वरभक्तेभ्यः १२.७४
वित्तशाठ्येन यः कुर्याद्ध-४.१६
विद्याधरा महात्मानो ६.१६३
विधूय सर्वपापानि ६.२५४
विनिर्जित्याशु तान्शत्रून् ६.२५८
विनिहत्य विषं घोरं ६.१८२
विन्यस्य रथमध्ये तु १०.२०५
विधिशेषमशेषेण १०.८६
विभवे सति यो मोहान् ५.५७
विमलं चाट्टहासं च १२.६२
विमानैः सर्वसम्भोगैः ५.१७४
विमानैर्ग्रामदानेन ८.११४
विमुच्य मोहकलिलं १०.२२३
विरसानि तु रात्रौ स्याद् १०.७१
विलेपनैश्च गन्धाद्यैः २.७
विश्वं विश्वेश्वरं देवं ५.२२५
विश्वेदेवा महात्मानौ ३.३४
विश्वेदेवैस्तथा सर्वैः ९.७
विषदर्पबलोन्मत्तो ६.१८३
विषशस्त्राग्निसन्तापं ६.१७८
वेदविद्भ्यस्तु विद्वांसः १२.३८
वेद्यन्ते स्थापयेत्पात्र-१०.१०४
वृषभं नीलवर्णं च १०.८५
वृषयुक्तैर्महायानैः १०.१४५
वृषवासुकिकर्कोटगु(! कु) ९.५
वृषश्च वरदः कन्या ६.१५३
वृषो वृषपतिः श्रीमान् ६.२९
वैवस्वती पुरी नाम ६.८७
वैशाखपौर्णमास्यां १०.६७
वैशाख मासे सम्प्राप्ते १०.६५
वैशाखे शिवनामानं १०.२८
व्याख्याने शिवधर्मस्य १२.११३
व्याधिभिर्नाभिभूयेत् ६.२५९
व्योम प्रमाण देहाय ७.१०३
व्योम प्रमाण मोक्षाय ७.१०२
व्योम प्रमाण रूपाय ७.९९
व्योम प्रमाण सद्याय ७.१०१
व्योम प्रमाणाकारा ७.१००
व्रतं शिवना(? र)थं १०.२१०
शक्ताय शक्तिरूपाय ७.९६
शक्त्या च दक्षिणां १०.१०१
शक्त्या हिरण्यवासांसि १०.३६
शक्रोऽपि देवराजेन्द्रो ३.३२
शङ्खचक्रगदाहस्ता ६.४१

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शङ्खभेर्यादि निर्घोषैः ५.६
शङ्खभेर्यादिनिर्घोषैः ८.१३
शङ्खशूलाब्जरुचिरैः ६.१८१
शतधा भेदमायाति ७.६३
शतादूर्ध्वमधस्तस्य ३.७
शतार्धार्ध प्रमाणेन स १२.१०६
शतेन स्थापितं लिङ्गं ८.३
शत्रवो नाशमायान्ति १.४१
शब्दादि विषयान्भोगान् १२.३३
शमीपुष्पं बृहत्याश्च ५.८१
शरच्चन्द्रांशु गौरेण ६.११२
शरणागतघाती च ६.२६६
शरणागतमुद्विग्नं ११.७६
शरदिन्दुप्रतीकाशैः १०.१५७
शान्ता स्मितमुखा ४.४
शान्तिं करोतु मे नित्यं ६.१३
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.१३७
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.१४०
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.१५१
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.१५७
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.१९४
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.२२६
शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.५४
शान्तिं करोतु मे प्रीता ६.१०
शान्तिं करोतु मे प्रीता ६.२१
शान्ति करोतु मे प्रीतः ६.१००
शान्तिं करोतु मे शान्तो ६.१५
शान्तिं स्वस्त्ययनं क्षेमं ६.२२१
शालिर्पिष्टमयं लिङ्गं ३.७६
शालिपिष्टमयं सर्वं १०.१८८
शासनं पूजयेत्तस्माद् ११.३८
शिरसा धारयन्पात्रं ५.१९९
शिरसाधारयेत्कोटिं ११.२१
शिरस्थानस्थ योगस्थं ५.२२७
शिवं प्राप्नोति तुल्यत्वात् १२.१०३
शिवं भवतु मे नित्यं ११.८६
शिवं सम्पूज्यनैवेद्यः १२.२७
शिवं सम्पूज्य यत्नेन ६.७८
शिवगङ्गेति तज्ज्ञेयं तत्र ५.२१६
शिवज्ञानार्थ तत्त्वज्ञं १०.२१६
शिवतुल्यबलो भूत्वा ५.१७८
शिवदक्षिणमूर्तौ तु ७.६८
शिवधर्मस्य सारोऽयं १.२६
शिवधर्मोडुपः श्रीमान् १.१३
शिवध्यानपरः शान्तः ११.५४
शिवध्यानपरो भूत्वा ६.२४५
शिवध्यानरतो नित्यं ६.२०३
शिवपूजाजपोद्युक्तो ६.८६
शिवपूजाविधिं कुर्याद् ५.२१८
शिवपूजा समायुक्ताः ६.६९
शिवपूजा समायुक्ताः ६.७५
शिवपूजासमायुक्ताः ६.७७
शिवप्रणामपरमः ६.३३
शिवप्रसादसम्पन्नाः ६.१५८
शिवभक्तः शिवध्याता ६.२१२
शिवभक्तः स्थितो भुङ्क्ते १२.७६
शिवभक्तद्विजं सम्यग् ८.३६
शिवभक्तस्य विप्रस्य ११.६७
शिवभक्ताः सुमनसः ६.१८९
शिवभक्तान्द्विजान् ११.६८

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शिवभक्ता महात्मानः ६.६७
शिवभक्ता महोत्साहाः ४.१
शिवभक्तिपराः सर्वे ६.७१
शिवभक्ते सदा देयं ६.२६८
शिवभक्ते सदादेयं ९.२१
शिवभक्तेषु या भक्तिः ११.८९
शिवभक्तैः सुराद्यैश्च ६.८३
शिवभक्तो जितक्रोधः ७.८०
शिवमण्डलकं कृत्वा ५.२०३
शिवमन्त्रेण सततं ७.६९
शिवमाख्यापनयनं ५.२०२
शिवमादौ शिवं मध्ये १.२
शिवमार्ग प्रणेतारं ५.२२४
शिवमिष्ट्वा नरः सोऽपि ७.३९
शिवमुद्दिश्य यद्दत्तं ५.२०७
शिवयज्ञोपकरणं ५.२०६
शिवयोगीभोजनादि २.१५
शिवलिङ्गं महापुण्यं ७.३३
शिववत्परिपूर्णश्च १०.२२८
शिवश्च शिवं धर्मश्च १२.११५
शिवस्य परिपूर्णस्य ११.५९
शिवाग्नि कार्यं यः कृत्वा ५.१९२
शिवाग्निगुरुपूजाभिः ११.१४
शिवादि सर्वलोकेषु १०.१२४
शिवादि सर्वलोकेषु १०.१२८
शिवादि सर्वलोकेषु १०.१३३
शिवादि सर्वलोकेषु १०.१६३
शिवादि सर्वलोकेषु १०.२२१
शिवादि सर्वलोकेषु ५.११४
शिवाध्यानार्चने युक्ताः ६.१६२
शिवाय गुरवे चैव ५.१५०
शिवाय चामर दत्वा ५.६६
शिवाय तच्चरुं दद्यात् ५.१४४
शिवाय तत्फलं तस्य ५.१४९
शिवाय तद्गृहं दत्वा १०.२०२
शिवाय तेन दत्तं स्यात् ८.४७
शिवाय देवदेवाय ८.९५
शिवाय राजतं पद्मं १०.१३०
शिवाय विनिवेद्यैवं १०.२२०
शिवाय शिवमन्त्रैश्च ९.१६
शिवाय शेषं पूर्वोक्त १०.९३
शिवायैवं गोमिथुनं १०.४५
शिवार्चनपरो नित्यं ११.११
शिवार्चनरताभक्ता ६.४२
शिवार्थं पुष्पहिंसायां ११.१०
शिवाश्रमगतान्भक्त्या ११.६३
शिवाश्रमाश्रितैः पूजा ११.९
शिवाश्रमेषु यो भक्त्या १२.११८
शिवेदत्तं हुतं तप्तं ४.१४
शिवेभक्तिः शिवेशान्तिः ११.५६
शिवो देव्या च पुत्रेण ५.११६
शुद्धस्फटिकं सङ्काशैः १०.७६
शुद्धस्फटिक सङ्काशैः १०.१६६
शुद्धाय शुद्धरूपाय ७.९७
शुभवासश्च यो नित्यं १२.१४४
शूलपाणिर्महाप्राज्ञः ६.१४
शेते निश्चलचित्तो यो १०.६
शेषाणां पुष्पजातीनां ५.८०
शोभितं ध्वजदीपाद्यैः १०.२०४
शोभितं पुष्पमालाद्यैः ५.१११

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

शौचाचार समायुक्ता ४.५
श्मश्रुकर्माञ्जनाभ्यङ्गं १२.२०
श्यामपीताम्बरधरो ६.३२
श्रद्धया परया युक्तः १०.१६
श्रवणात्फलमाप्नोति ६.२६४
श्रवणादस्य भावेन ६.२६७
श्रविष्ठाशतभिषक् ६.१४९
श्रान्तसंवाहनं कृत्वा ११.६९
श्रावणे शर्वनामानं १०.३१
श्रीकण्ठं सर्पकण्ठं च १२.१३४
श्रीफलं चाऽऽज्यसम्मिश्रं ५.१२७
श्रीमतां रुचिराङ्गेण ८.९१
श्रीमान्यमो महातेजाः ६.९०
श्रीमान्विभण्डको ६.२०९
श्रीरपाने गवादभ्यन् ८.८१
श्रुत्वैवमखिलं धर्मं १२.११९
शृङ्गाग्रे सर्वतीर्थानि ८.७४
श्रौतस्मार्तस्मृतिपारगः८.२
श्वेतमन्दारकुसुमं ५.८२
श्वेतागस्त्यवधीच्याद्यैः ९.४
श्वेताग्रपादं पौण्ड्रं च १०.७८
श्वेतार्कस्य विशेषेण ५.७३
श्वेतैर्विकसितैः पद्मैः ९.९
संवत्सरान्ते विप्रेन्द्रान् १०.११
संविभागपराः प्राज्ञाः ४.६
संवीज्य तालवृन्तेन ५.६३
संसारस्थूलबन्धानां ७.६१
संसेव्यते परो धर्मः ते १.१४
संस्कारेण वियुक्तं चेत् ८.५४
सकलं निष्कलं चैव १२.१३५
सकृद्दीपं शिवे दद्यात् ५.१५८
स गवां कोटिदानस्य ५.९९
स गोमेधसमं पुण्यं ८.६१
स गोलक्ष प्रदानस्य ५.९७
सङ्क्रीडते महाभोगैः १०.८८
सङ्गीतनृत्तवाद्याधैः १०.४७
स च यत्फलमाप्नोति ५.१०६
सततं च शिवात्मानं ६.१७०
सततं बालवत्साभि-८.५७
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं ११.११४
सत्यलोके च ये देवा ६.११०
सत्ये प्रतिष्ठितं ज्ञानं ११.११६
सदाढकेन पयसा ५.१९
सदा यजति यज्ञेन ७.३
सदूरमपि गन्तव्यं ११.६०
सन्तर्प्य च पितृन्सर्वान् १२.६५
सन्तोषैश्वर्ययुक्तानां ११.११२
सन्ध्यानां च जपेदेनं ७.६७
ससद्वीपां क्षितिं दत्वा १०.२२९
ससभौमैर्महायानैः १०.१२७
ससमी रवि संयुक्ता ६.१३४
समन्तैरावतप्रख्यैः ८.१०५
समस्तपापनिर्मुक्तः ८.६
समस्तानि ममाशक्यं १२.५५
समाप्य तद्व्रतं पुण्यं १०.१०५
समासक्तं यथा चित्तं ४.४२
स मुक्तः सर्वपापेभ्यः १२.१४८
समुद्धृत्य तथा ह्यन्ते ३.६१
समुद्राः सर्वतः सर्वे ६.२२३
स मुनिः स महासाधुः १२.८१

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सम्पर्केणापि यः ४.३९
सम्पृच्छेदागतं भक्त्या ११.८५
सम्पूज्य पशुभर्तारं ७.८४
सम्पूज्य प्रोक्षितैर्भक्त्या ५.११०
सम्पूज्याः ससुराः सर्वे १.१०
सम्पूर्णां यो नृपः कश्चिन् १२.४७
सम्पूर्णानि लभेद्भक्त्या १२.७३
सम्प्राप्ताऽस्मिन् क्रमाल् १०.१८२
सम्प्राप्ते कार्तिकमासे १०.१३७
सम्प्राप्ते फाल्गुन मासे १०.५७
सम्प्राप्ते श्रावणमासे १०.७७
सम्यग्ज्ञानार्थवक्ता १२.९९
स यत्फलमवाप्नोति ७.७४
स यां गतिमवाप्नोति ५.१६७
सरस्वती च हुङ्कारे ८.७७
सर्वं वा भूमि हरणाद् ८.११८
सर्वः सुगतिमाप्नोतु सर्वस्य १२.१४९
सर्वकाम समृद्धस्तु ६.२६७
सर्वज्ञाय नमस्तुभ्यं ७.११८
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं ८.११२
सर्वत्रावस्थितोऽनन्त! १२.१३२
सर्वदानानि पुण्यानि ८.१६
सर्वदानोग्रतपसां १२.८
सर्वदेव निकायेषु १०.१४६
सर्वदोषाश्रयं मद्यं १२.९
सर्वद्वन्द्वसहाधीरा ४.२
सर्वधातुसमायुक्तं १०.१८३
सर्वधान्यसमायुक्तं १०.१७०
सर्वपर्वसु यत्नेन ११.३५
सर्वपापविनिर्मुक्तः १०.३८
सर्वपाप विनिर्मुक्तः ११.२७
सर्वपाप विनिर्मुक्तः ३.८१
सर्वपाप विनिर्मुक्तः ५.९६
सर्वपापविषं हत्वा ६.१७४
सर्वप्रणत देहाय ४.५८
सर्वप्राणिषु कारुण्यं ७.८२
सर्वबाधाहरं नित्यं ५.२२६
सर्व बीजरसैश्चापि १०.१६९
सर्वभक्षसमाकीर्णं १०.१७२
सर्वभूतपतिं देवं (तु) ६.१९३
सर्वभूताभयं दत्वा ११.१०२
सर्वभूतेषु मैत्री च १२.७१
सर्वमन्त्रशरीराय ७.९८
सर्वमात्राऽधिकश्चाऽयं ७.४७
सर्व यज्ञ तपो दान ३.६७
सर्वयज्ञफलं प्राप्य ८.२९
सर्वरत्नादिगोश्वाद्यैः १०.१७१
सर्वरोगविनिर्मुक्तः ११.१८
सर्वरोगहरेणापि ८.८९
सर्वविद्यार्थवित्कोट्या ७.७९
सर्ववेलामतिक्रम्य १०.२०
सर्वव्रतेषु यद्धर्मः १०.१४३
सर्वशान्त्यधिकाराख्यं ६.४
सर्वशास्त्रेषु वेदेषु ११.९८
सर्वसस्यफलोपेतं ८.१११
सर्वस्वमपि यो दद्याच्छिवे ४.१९
सर्वाकारमशेषस्य १.१
सर्वातिशयरूपाभिः १०.६९
सर्वात्मने नमस्तुभ्यं ७.११६
सर्वामरनिकायेषु १०.१५५

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सर्वार्थसम्पदाधारो ६.१६
सर्वार्थ साधकं मन्त्रं ७.६५
सर्वालङ्कारसंयुक्तं १०.१९२
सर्वे भूता महारूपा: ६.२३५
सर्वेषां मणिपट्टानां ५.१४२
सर्वेषामेवतीर्थानां ११.९१
सर्वेषामेव पात्राणां ४.१२
सर्वेषामेव वर्णानां ११.१, १२.३७
सर्वैः परिवृतः श्रीमान् ५.११२
सर्वोकरणोपेतं प्रणि-१०.१७४
सर्वोपकरणोपेतां १०.२१५
सर्वोलिङ्गमयो लोकः ३.४८
स वराश्वसहस्रस्य १२.९४
स शिवः शाश्वतोदेवो ८.९२
स शूरः सात्विको धीमान् ११.९५
स समस्त कुलोपेतः ५.१३७
साक्षाद्गङ्गा च गोमूत्रे ८.८२
सागराणां क्षयं व्यन्ति ३.५९
सा गृहस्थैर्न सम्प्राप्ता ११.१२२
सारात्मकं समुद्धृत्य १२.१२०
साराय सारसाराय ७.९५
सितेन भस्मना स्नाप्य ५.२४
सिद्धगन्धर्वनमिता ६.४६
सिद्धिं कुर्वन्तु मे नित्यं ६.५७
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्तु ६.१६४
सिद्धिमाशु प्रयच्छन्ति ६.१९१
सिद्धैर्य्यक्षैश्च गन्धर्वैः ९.६
सिन्दूरारुण रक्ताङ्गः६.११५
सुकृष्णाक्षाः कृष्णनिभाः ६.६२
सुखाष्णेनाम्भसा ५.४३
सुगन्धानुलेपनात्पुण्यं ५.६०
सुदुर्लभं शिवज्ञानं १.३५
सुदुर्लभा शिवे भक्तिः १.३४
सुधाविलिप्तं यः कुर्यात् ४.४८
सुधूम्राक्षा धूम्रनिभाः ६.६८
सुनीलाक्षा नीलनिभाः ६.६४, ७४
सुपवित्रैर्महायानैः १०.१३५
सुपीताक्षाः पीतनिभाः ६.७०
सुभगैर्दिव्यगन्धैश्च ८.२६
सुभावात्तदवाप्तं हि ७.५६
सुमुक्ताक्षा मुक्तनिभाः ६.६६
सुरक्ताक्षा रक्तनिभाः ६.६०
सुरूपः सुभगः श्रीमान् ५.२०४
सुरूपा सुभगा नित्यं १०.१९९
सुवर्णरत्नतोयैस्तु २.६
सुवर्णवस्त्रसंयुक्तं १०.१८०
सुविचित्रैर्महायानैः १०.७९
सुविनीतां स्त्रियं दासीं ८.१०३
सुवीरो नाम यक्षेन्द्रो६.२०५
सुसूक्ष्माक्षाः सूक्ष्मनिभाः ६.७६
सुश्वेताक्षाः श्वेतनिभाः ६.५८
सुश्वेताक्षाः श्वेतनिभाः ६.७२
सूक्ष्माणामपि सूक्ष्माय ७.९०
सूक्ष्मेणापि प्रयोगेन ३.९०
सूर्यकोटि प्रतीकाशैः १०.४६
सूर्यकोटिप्रतीकाशैः ८.११३
सूर्यकोटिसम प्रख्यैः १०.७३
सोऽपि देशो भवेत्पूतः ७.७१
सोऽपि रुद्रत्वमाप्नोति ११.२४
सोऽपि शान्तात्मभावेन ६.१२१

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

सोऽपि शान्तात्मभावेन ६.२४
सोऽपीह वपनं कृत्वा ११.५१
सोमलोकादैन्द्रलोकं १०.११०
सौभाग्यं कान्तिमद्रूपं १.२४
सौम्याश्चैव तु ये केचित् ६.५५
स्तम्भनं परसैन्यस्य ६.३
स्तुतिजप्योपहारेण ५.१६८
स्तुति हेतु निधानाय ७.८७
स्थाणीश्वरं च विख्यातं १२.५८
स्थानेष्वेतेषु यः कुर्यात् १२.६९
स्थाप्य दक्षिणामूर्तौ ९.११
स्थाप्य पात्रे यथोक्ते १०.१६०
स्थावरं जङ्गमं चैव ३.६४
स्नानं वारुणमाग्नेयं ११.४३
स्नानं वै क्रियते भक्त्या १२.१८
स्नानकाले त्रिसन्ध्यं ५.८
स्नाननैवेद्यवस्त्राणि १२.३
स्नानमिक्षुरसेनापि ५.२२
स्नापयेत्तिलतैलेन ५.२१
स्नाप्य दध्ना सकृल्लिङ्गं ५.२०
स्फाटिकं निर्मलं लिङ्गं ३.३८
स्यादयं मन्त्रसंयुक्तं ७.४५
स्रग्विबन्धेषु तेष्वेव ५.९४
स्वकर्मवासनायोगात् १०.११६
स्वच्छन्दा सर्वगाभूत्वा १०.१९७
स्वच्छमौक्तिक सङ्काशैः १०.८७
स्वर्गं जलस्थानागयक्षा ६.२२५
स्वदेशे गूढमानन्त १२.१४३
स्वदेशे या नृपः कुर्यात् ११.१०५
स्वदेहान्निर्विशेषेण ११.५८
स्वभाव निर्मलाभोग ३.९६
स्वभाव निर्मलाभोग! ३.१३
स्वयं पतितपुष्पाणि ५.८९
स्वयं माल्योपहारेण २.१४
स्वरूपः सुभगः श्रीमान् ८.२२
स्वसंस्थ गोमयं ग्राह्यं ४.३३
स्वात्मन्यवस्थितः १२.३६
स्वामिना रक्ष्यमाणानां ११.११७
स्वानुभूतं स्वदृष्टं च ११.११३
स्वाश्रमादुत्तरे कुर्यात् ११.३
स्वेदबिन्दुपरीताङ्गं ११.७२
हरन्ति सर्वपापाश्च ११.२३
हविष्यभोजनं स्नानं १०.२१
हस्तेमूर्ध्न्युपवतीते वा १२.१०७
हाटकेश्वरदेवस्य ६.१६७
हारेण सुविचित्रेण ६.११४
हिताय सर्वमर्त्यानां १.८
हिमकुन्देन्दुतुल्याभः ६.१२२
हिमकुन्देन्दुवर्णाढ्यैः १०.६८
हिमशैलतनया देवी ६.३६
हीनवंशे च ये जाताः ३.८८
हेमपात्रं तु यो भक्त्या ५.५५
हेमपात्राणि यद्दत्वा ५.५३
हेमप्राकारसंयुक्ता ६.९८
हेमरूप्यं च हस्ताभ्यां ८.२५
हस्वबाहुर्महातेजाः ६.९९
हृदयान्नीलरुद्रश्च ७.५०
हृदये चैव गायत्री ३.२४
हृदिस्थं सर्वभूतेषु १२.१४२

*****

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

श्रीकृष्ण 'जुगनू'

राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले के आकोला गाँव में 2 अक्टूबर, 1964 को संत-कवि मोहनलालजी चौहान के घर जन्म। हिन्दी, अंग्रेजी और इतिहास में स्नातकोत्तर। राजस्थान की हीड़ गाथाओं पर पीएच. डी., पत्रकारिता में पी. जी. डिप्लोमा, बी. एड. और श्रव्य-दृश्य मीडिया दक्ष। सम्पूर्ण शिक्षा स्वयंपाठी स्तर पर। इतिहास-पुरातत्त्व, शिल्प-स्थापत्य, कला, शिक्षा, धर्म और संस्कृति जैसे विषयों के अध्ययन-अध्यापन, अनुसन्धान और लेखन में गहरी रुचि। इन विषयों पर 1978 ई. से लेकर आज तक सात हजार से अधिक लेखों, शोधलेखों का देश-विदेश की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन। कई शिलालेखों का सम्पादन और अनुवाद। देश-विदेश के ग्रन्थ भण्डारों में मौजूद शताधिक भारतीय ज्ञान-विज्ञान की संस्कृत पाण्डुलिपियों का पाठ सम्पादन और अनुवाद। कई पुस्तकों पर विश्व विद्यालयों में शोधकार्य सम्पन्न। काव्यपाठ आदि का 1983 से आकाशवाणी और दूरदर्शन से प्रसारण।

प्रकाशित पुस्तकें (मौलिक) : भलाभाई-बुराभाई, लिछमी पण म्हारी लिछमण कार (राजस्थानी काव्य संग्रह), कला की कालकथा, मन्दिर श्रीअम्बामाताजी उदयपुर, मेवाड़ का प्रारम्भिक इतिहास, वास्तु एवं शिला चयन, महाराणा प्रताप का युग, राजस्थान की ऐतिहासिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, राजस्थान के प्राचीन अभिलेख, रिश्ते में औरत (कहानी संग्रह) इत्यादि।

सम्पादन और अनुवाद : महाराणा प्रताप का दरबारी पण्डित चक्रपाणि मिश्र और उसका साहित्य, ज्योतिष रत्नमाला, वृक्षायुर्वेद, मनुष्यालय चन्द्रिका वास्तुसार मण्डनम्, आयतत्त्वम्, चित्रलक्षणम्, राजवल्लभ वास्तुशास्त्रम्, प्रासाद मण्डनम्, देवता मूर्ति प्रकरणम्-रूप मण्डनम्, वास्तु मण्डनम्, वास्तु मञ्जरी, कलानिधि, वास्तूद्धार धोरणी, मुहूर्त कल्पद्रुम, मुहूर्त दीपक, शिल्प शास्त्रम्, वास्तु विद्या, प्रमाण मञ्जरी, मयमतम्, शिल्पशास्त्रे आयुर्वेद, ज्योतिष वृत्तशतम् , योगगीता, कला विलास, विवेक विलास, वास्तु रत्नावली, एकलिङ्ग पुराण, अपराजित पृच्छा, राजमार्तण्ड, राजमृगांक, समराङ्गण सूत्रधार, बृहत्संहिता, आत्रेय तिलक इत्यादि 80 पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान : राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर से नवोदित प्रतिभा प्रोत्साहन पुरस्कार (1982 ई.), साहित्य मण्डल नाथद्वारा से हिंदी सेवी सम्मान (2003 ई.), महाराणा मेवाड़ फाउण्डेशन, उदयपुर से महाराणा कुम्भा सम्मान (2008 ई.), मीरा स्मृति संस्थान, चित्तौड़गढ़ (2009 ई.), त्रिवेदी ब्राह्मण मेवाड़ा समाज संस्थान, बड़ौदा (2011 ई.), भारतीय भाषा संसद, कोलकाता और जय स्मिता वास्तु प्रतिष्ठान, गोवा (2012 ई.) राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर द्वारा जगन्नाथ सम्राट ज्योतिष सम्मान (2013 ई.), राजस्थान के राज्यपाल द्वारा राज्यस्तरीय शिक्षक सम्मान (2013 ई.) आदि सम्मान।

निवास : 40 राजश्री कॉलोनी, विनायकनगर, उदयपुर – 313001

skjugnu@gmail.com

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रो. भँवर शर्मा

राजस्थान के उदयपुर नगर में शरदपूर्णिमा, 3 अक्टूबर, 1923 को प्रसिद्ध वशिष्ठ-कुल शिल्पी परिवार में जन्म। चित्रकला में स्नातकोत्तर और कई वर्षों पर अध्यापन, राजकीय महाविद्यालय बूँदी, नाथद्वारा, बाँसवाड़ा के प्राचार्य रहे। भारतीय विद्या पर गम्भीर अध्ययन और अध्यापन। शिल्प और स्थापत्य के विषयों की कुलोचित, जन्मजात प्रतिभा। व्यावहारिक और सैद्धान्ति पक्ष के सम्यक् जानकार। कई माध्यमों में चित्रों का सृजन, कई प्रदर्शनियों में भागीदारी और कला विषयक स्तरीय संगोष्ठियों में व्याख्यान। राजस्थान विश्वविद्यालय के सीनेट मेम्बर, एकेडेमिक कौंसिल के मेम्बर, फाइन आर्ट्स बोर्ड ऑफ स्टडीज के चेयरमैन, राजस्थान कला एकेडेमी के सदस्य, राजस्थान पब्लिक सर्विस कमिशन के चित्रकला व्याख्याता चयन में सब्जेक्ट एक्सपर्ट, राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट डिप्लोमा परीक्षा व विश्वविद्यालय में एम.ए. परीक्षा के परीक्षक। मेवाड़ के प्राचीन भित्ति चित्रों का अनुसंधान।

अंजता, एलोरा आदि से लेकर दक्षिण राजस्थान की कला विरासत पर दर्जनों शोधपत्रों का प्रकाशन। श्रीकृष्ण की यूरोपीय पृष्ठभूमि पर विस्तृत पुस्तक का प्रणयन। शिल्प और कला विषयक ग्रन्थों में श्रीकृष्ण 'जुगनू' के साथ चालुक्य सोमेश्वर कृत शिल्पशास्त्रे आयुर्वेदः, **मानसोल्लास अपरनाम अभिलषितार्थ-चिन्तामणि,** भोजदेवकृत **युक्तिकल्पतरु,** महाराणा-कुम्भाकृत **कामराजरतिसार,** भुवनदेवाचार्यकृत **अपराजितपृच्छा,** भोजराजकृत **राजमार्तण्ड** व **राजमृगाङ्क-आयुर्वेद** और **समराङ्गणसूत्रधार,** विश्वकर्मीय **ज्ञानप्रकाशदीपार्णव** का सम्पादन और हिन्दी अनुवाद।

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

प्रसिद्ध
र्षों पर
भारतीय
यों की
नकार।
विषयक
डेमिक
त कला
ख्याता
क्षा व
त्रों का

सत पर
क का
ालुक्य
तार्थ-
तसार,
गाङ्क-
म्पादन

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2 Equipment Heritage Foundation, Jalgaon

₹ 1800.00 (Set in 2 Vols.)

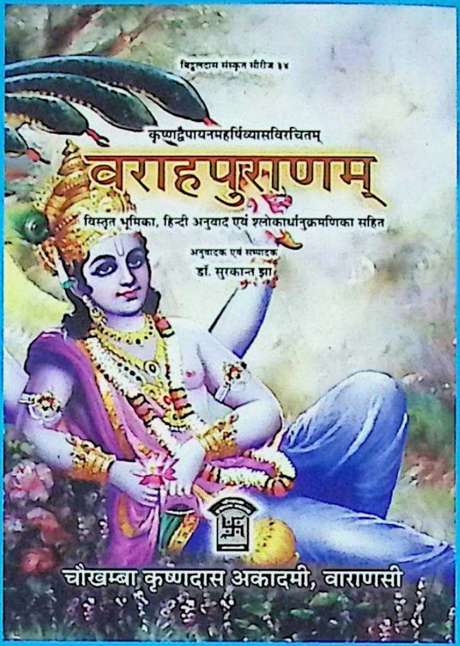

₹ 1250.00

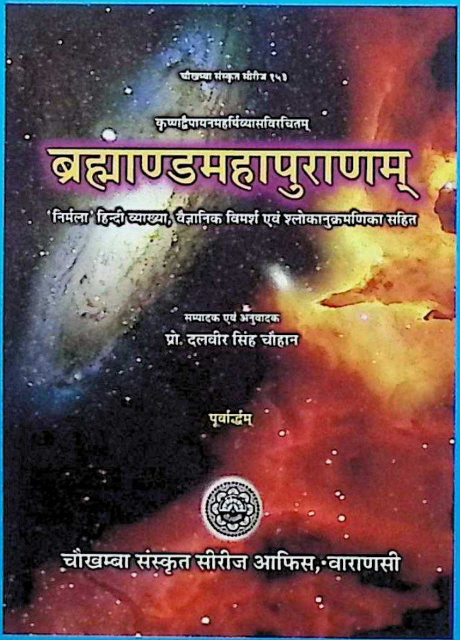

₹ 1600.00 (Set in 2 Vols.)

Also can be had from : **Chowkhamba Krishnadas Academy**, Varanasi.

ISBN : 978-81-7080-431-4 ₹ 375.00

CC-0. In Public Domain Sri Aurobindo Library, Pondicherry